ISSN 2321-4945
UGC CARE LISTED JOURNAL

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 74 अंक : 06

सितंबर, 2024

अमृत वर्ष की ओर अग्रसर...

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

UGC CARE LISTED JOURNAL
www.arpsguwahati.com

वर्ष : 74 अंक : 06 सितंबर, 2024

परामर्श मंडल

भारतभूषण महंत (असम) • **प्रो. आर. एस. सर्राजु** (तेलंगाना) • **प्रो. किरण हाजरिका** (पंजाब)
• **प्रो. प्रदीप के शर्मा** (सिक्किम) • **प्रो. एच. एन. वाघेला** (गुजरात) • **डॉ. रीतामणि वैश्य** (असम)

प्रधान संपादक
डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया

संपादक
प्रो. मोहन

कार्यकारी संपादक
रामनाथ प्रसाद

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature, Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :
प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32
फोन : 9101541395, 9101541380
ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : 100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा. लिमिटेड, इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

© सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

विषय सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ

हिंदी विभाग

	संपादकीय		*5*
1.	हिंदी साहित्य में ग्राम्य-जीवन	✍ डॉ. शैलजा	7
2.	हिमालयी क्षेत्र का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन	✍ डॉ. खीमानन्द बिनवाल	11
3.	'वरुणा का होना' एक संस्कृति की जीवंतता है	✍ डॉ. प्रवीण कुमार	17
4.	किसान जीवन की त्रासदी का आख्यान : 'ढलती साँझ का सूरज'	✍ प्रो. अंजु शर्मा थापा	23
5.	असम के शूरवीर महानायक लाचित बरफुकन	✍ डॉ. नवकांत शर्मा	27
6.	हिन्दी साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण	✍ प्रोफेसर कंचन शर्मा	30
7.	विद्यालयी प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के क्षेत्र में अनुसंधान की एक रूपरेखा	✍ डॉ. चंद्रशेखर पाण्डेय ✍ डॉ. पतंजलि मिश्र	34
8.	सांस्कृतिक राष्ट्रवाद : राष्ट्रीय एकता का आधार	✍ अविनाश जाटव ✍ कृति तिवारी	45
9.	शमशेर बहादुर सिंह के काव्य में प्रकृति	✍ पूजा कुशवाहा	51
10.	कृष्णा सोबती के उपन्यासों में स्त्री देह स्वतंत्रता, अस्मिता और संघर्ष	✍ सलमान	56
11.	कुबेरनाथ राय के निबंधों में लोक संस्कृति	✍ सुजाता कुमारी	60
12.	फणीश्वरनाथ रेणु के रिपोर्ताज में आंचलिकता	✍ ङयो मारचङ	65
13.	'किन्नर कथा' उपन्यास में चित्रित किन्नर जीवन	✍ सुरजीत कौर	70
14.	थर्ड जेंडर के दुख-दर्द को अभिव्यक्त करता उपन्यास 'नाला सोपारा'	✍ मन्नू देवी	73
15.	प्राचीन भारत के प्रशासन में लेखक वर्ग की भूमिका : एक ऐतिहासिक अध्ययन	✍ समीर देव ✍ प्रो. सुगम आनंद	76
16.	निराला के 'अप्सरा' और 'अलका' उपन्यासों में चित्रित आर्थिक समस्याओं का एक विश्लेषणात्म अध्ययन	✍ गजेन्द्र नाथ दास ✍ डॉ. कुसुम कुंज मालाकार	80
17.	विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन : मूलभूत साक्षरता और संख्यात्मकता कार्यक्रम के विशेष संदर्भ में	✍ श्रवन कुमार फगारिया ✍ डॉ. अंकुश शर्मा	85
.18.	'आजादी मेरा ब्रांड' में स्त्री और समाज	✍ पूनम कुमारी ✍ प्रो. सुशील कुमार शर्मा	90

অসমীয়া বিভাগ

19.	শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰিনাম ধৰ্মত মূল্যবোধৰ শিক্ষা	✍ ড° বন্দনা বৰুৱা	96
20.	মহিম বৰাৰ গল্প 'এখন নদীৰ মৃত্যু' ঃ এটি আলোচনা	✍ দীপক দাস	105
21.	দেউৰী ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰ ঃ এটি অধ্যয়ন	✍ পিংকুমনি দেউৰী ✍ ড° নিভা ৰাণী ফুকন	109
22.	মোপাছা চুটিগল্পত নাৰী জীৱনৰ প্ৰতিফলন	✍ জোনালী মালাকাৰ ✍ ড° বিৰিঞ্চি কুমাৰ দাস	115
23.	স্বাধীনতা সংগ্ৰামী তিৱা শ্বহীদ হেমৰাম পাতৰ ঃ এক ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়ন	✍ ড° মৌচুমী বৰদলৈ হাজৰিকা	120
24.	আহোম সম্প্ৰদায়ৰ মাজত প্ৰচলিত পৰম্পৰাগত পানীয় 'সাজ'ৰ প্ৰস্তুত প্ৰণালীৰ অধ্যয়ন	✍ ড° ইলোৰাধা শইকীয়া	126
25.	শৈলীবিজ্ঞানৰ তত্ত্বৰ আধাৰত 'সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ' উপন্যাসৰ এটি আলোচনা	✍ মিথুন দাস ✍ শিৱানী দাস	133
26.	অসমৰ খাদ্য সুৰক্ষা ব্যৱস্থা আৰু মহিলাৰ ওপৰত গুৰুত্ব	✍ ৰূপালী তালুকদাৰ ✍ ড° পৰাগ দত্ত	138
27.	পাৰিপাৰ্শ্বিক (Eco-Criticism) দৃষ্টিৰে প্ৰভাত গোস্বামীৰ উপন্যাস 'শুকুলা হাতীৰ খোজ'	✍ ৰেৱত মহন্ত	142
28.	উজনি অসমৰ মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত প্ৰচলিত লোকাচাৰ আৰু লোকবিশ্বাস	✍ গায়ত্ৰী খাৰঘৰীয়া	148
29.	সন্তোষ কুমাৰ কৰ্মকাৰৰ 'প্ৰভাতী সূৰ্যৰ দেশ' উপন্যাসত প্ৰতিফলিত উনবিংশ শতিকাৰ শৈক্ষিক দিশ আৰু সমাজ সংস্কাৰৰ চিত্ৰ	✍ সংগীতা দেৱী ✍ ড° প্ৰসন্ন কুমাৰ নাথ	154
30.	জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ গীতত চাৰিত্ৰিৰ মনোজগতৰ চিত্ৰণ	✍ জুমি বৰ্মন	162
31.	নগেন শইকীয়াৰ 'আমেৰিকাত দহদিন' ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন	✍ কস্তুৰী বৰা	168
32.	মনুস্মৃতি ঃ প্ৰসংগ এল জি বি টি কিউ +	✍ মিতালী কুমাৰী ✍ ড° ৰঞ্জন কলিতা	175
33.	বৃদ্ধ মনস্তত্ব আৰু শীলভদ্ৰৰ চুটিগল্প ঃ এটি অধ্যয়ন	✍ চুইটি বৰা	182
34.	মনুস্মৃতিৰ বিশেষ উদ্ধৃতিৰে ধৰ্মশাস্ত্ৰত মাতৃ-পত্নীৰ স্থান ঃ এক অধ্যয়ন	✍ গৌৰীস্মিতা বৰুৱা ✍ ড° বাগ্মিতা শাণ্ডিল্য	187
35.	মাধৱদেৱৰ নাটকত শিশুকৃষ্ণ ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন	✍ বিষ্ণুৰাম নাথ ✍ ড° গোবিন্দ প্ৰসাদ ভুঞা	195
36.	ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰাৰ 'স্বৰ্গাদপি' উপন্যাসত প্ৰতিফলিত অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসৰ প্ৰসংগ	✍ দীনেশ বৰা	208
37.	প্ৰাচীনত্বৰ আলোকত ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষা ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন	✍ ফেণ্ডী চুতীয়া ✍ ড° সংগীতা শইকীয়া	217

❑ ❑ ❑

संपादकीय

भाषा के बदलते आयाम

'शीतयुद्ध के पश्चात् हमारी दुनिया एक ध्रुवीय होती चली गई। मुक्त-पूंजी, मुक्त-मानव संसाधन और मुक्त प्रौद्योगिकी के सूत्र ने भूमंडलीकरण की रफ्तार को और भी तेज कर दिया। सोवियत संघ के विघटन को इसका प्रमाण माना गया और ग्लोबल विलेज को एक आदर्श स्लोगन बना दिया गया। इक्कीसवीं सदी को सूचना युग कहा गया। आज डिजिटल दुनिया की बात लगातार चल रही है। इस परिवेश में नई सामाजिक संरचना बन रही है। नए मानवीय संबंध, पहचान और अस्तित्व के नए सवाल उभर रहे हैं। धीरे-धीरे व्यक्ति नैतिक-सामाजिक नियमों को त्यागकर बंधनहीन जीवन-शैली को अपना रहा है। आवश्यकता आधारित और फास्टफूड प्रकृति के संबंध समाज में दिखाई दे रहे हैं। इसका असर परंपरा और नवीनता के द्वंद्व में दिखाई दे रहा है। नया मुक्त समाज नए भाषा-व्यवहार को जन्म दे रहा है। एक भाषा दूसरी भाषा में रम रही है। एक दूसरे के भीतर से गुजर रही है। उसी तरह ज्ञान भी निर्मित हो रहा है और गुजर रहा है। ज्ञान और उसके प्रसार में माध्यम का महत्व बढ़ गया है।

भाषा का अध्ययन व्याकरणिक और दार्शनिक प्रारूपों से आगे आकर संकेत विज्ञान, समाज विज्ञान, मनोविज्ञान, मानव विज्ञान आदि से जुड़ा है। संकेत विज्ञान रोलां बार्थ के मत से प्रभावित होकर भाषा विज्ञान के नियमों के अधीन माना जाने लगा। संस्कृति के सभी अवयव फिर वे खान-पान, वस्त्र-आभूषण फैशन, भाषा, रीति-रिवाज या मनोरंजन के साधन आदि कुछ भी हों, भाषा के नियमों में, भाषा की तरह समझे जाने लगे।

समाज में भाषा और भाषा में समाज का अध्ययन तेजी से हुआ। बहुभाषिकता, भाषा-वैविध्य, कोड-मिश्रण और कोड-परिवर्तन, समाज में यथार्थ और ज्ञान-निर्माण की योग्यता, भाषा-नियोजन आदि विषय सामने आए।

मनोविज्ञान मानव-व्यवहार के अध्ययन के लिए भाषा-व्यवहार का गंभीर और सूक्ष्म अध्ययन कर रहा है। मन, चेतना, आदत, निर्णय, बुद्धि, संप्रेषण, स्मृति, चिंतन और कल्पना, योग्यता आदि के संबंध में भाषा की भूमिका नए सिरे से समझी जा रही है। मानव विज्ञान ने भाषा को विशेष महत्व दिया। इसी क्षेत्र के विशिष्ट कार्यों और विद्वानों से भाषा के नए आयाम सामने आए।

विज्ञान के क्षेत्र से कई नए अध्ययनों ने भाषा की समझ का विस्तार किया है। न्यूरोलॉजी, बायोलॉजी और भौतिकी के नए अध्ययनों ने भाषा की मूल अवधारणा को ही नए सिरे से समझना शुरू किया है। विज्ञान के नए सिद्धांतों और आविष्कारों से उत्पन्न प्रौद्योगिकी में भाषा-माध्यम और भाषा-प्रसारण पर विशेष जोर दिया जा रहा है।

समाज भाषाविज्ञान, संज्ञानात्मक भाषाविज्ञान, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, संकेत विज्ञान, पाठविज्ञान, प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भाषा, संगणक भाषाविज्ञान, तथ्यांक-संग्रह भाषाविज्ञान आदि नए रूप उभर रहे हैं। सूचना माध्यमों में विस्तृत आँकड़ों को प्रस्तुत करने के नए और योग्य प्रारूप तैयार किए जा रहे हैं। एक ही ग्राफ या सारणी में कई सूचकांकों को प्रस्तुत करने की क्षमता एक महत्वपूर्ण क्षेत्र बन रही है।

संज्ञानात्मक भाषाविज्ञान नया आयाम है। मानव की संज्ञान-प्रक्रिया और उसके संग्रहण के माध्यम से भाषा की बौद्धिक प्रक्रिया का नया क्षेत्र अस्तित्व में आया है। चार क्षेत्रों जैसे-भाषाविज्ञान, मनोविज्ञान, समाजविज्ञान और दर्शनशास्त्र के विशेषज्ञों का सहयोग यहाँ दिखाई दे रहा है। यह क्षेत्र मानव-बुद्धि से आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (कृत्रिम मेधा) तक जाता है। हम कृत्रिम मेधा से निर्णय लेने की क्षमता विकसित करने में लंबे समय से कार्य कर रहे हैं।

भाषा के स्वरूप में भी बदलाव आया है। अब उसके प्रयोग में शुद्धता का भाव नहीं आता, बल्कि भाषा अब मिश्रित हो रही है। भाषा तकनीक की सुरंग (माध्यम) में परिवर्तित हो रही है। असल में माध्यम इतना जटिल है कि उससे भाषा भी प्रभावित हो रही है।

नए प्रतिमान में भाषा के तत्व और प्रयोग दोनों ही नए सिरे से समझे जा रहे हैं। एक तत्व के रूप में स्वन, स्वनिम, रूप, रूपिम, वाक्य, प्रोक्ति, लिपि आदि पर विचार किया जा रहा है, तो दूसरी ओर इसके प्रयोग में योग्यता और संप्रेषण की सफलता के प्रश्नों पर भी पुनर्विचार हो रहा है। असल में नए समाज की अर्थ-सरणियों को पुरानी समाज की अर्थ-सरणियों से कितना समझा और समझाया जा सकता है? यह एक चुनौती है। ❑

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

जन-सरोकार

हिंदी साहित्य में ग्राम-जीवन

डॉ. शैलजा

अिसस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
श्री गुरु नानक देव खालसा कॉलेज
देव नगर, नई दिल्ली-110005
9868617559
drshailjamohan@gmail.com

शोध सार :

साहित्य में ग्राम की अवधारणा आधुनिक युग से ही शुरू होती है। साहित्य में ग्राम पहले लोक के रूप में प्रयुक्त हुआ है, जिसे आदिकालीन साहित्य से लेकर भारतेन्दुयुगीन साहित्य में देखा जा सकता है। 'लोक' का दबाव आदिकालीन साहित्य में बहुत गहरा है। बुद्ध भी इसी लोक कल्याण के लिए बौद्ध धर्म लेकर आए और उन्होंने लोकभाषा या देशभाषा में ही अपनी बातें कहीं। कोई भी साहित्य तभी अपना प्रभाव बना सकता है जब वह जनता के बीच स्वीकार किया जाता है। आज के साहित्य में किसानों की चिंताएँ जिस रूप में हमारे सामने खड़ी हैं, उस पर गहराई से सोचने की जरूरत है।

बीज शब्द :

ग्राम, किसान, मुक्ति, साधना, लोकभाषा, कर्म, आंचलिक, पौराणिक आख्यान, बिडंबना।

साहित्य का विकास समाज के गरीब वर्ग को केंद्र में रखकर किया गया है। गरीब वर्ग समाज का वह हिस्सा है जिसका जीवन दुखों से युक्त है और विडंबनाओं में फँसा हुआ है। साहित्य के केंद्र में इसी कारण गाँव में रहे हैं और गाँव के गरीब वर्ग के लोगों की मुक्ति के लिए ही साहित्य में कभी साधना के द्वारा तो कभी किसी दूसरे तरीके से प्रयास किए गए हैं। आदिकालीन साहित्य से लेकर आधुनिक युग के साहित्य तक में इस तथ्य को रेखांकित किया जा सकता है। बुद्ध का हिंदी साहित्य पर जो प्रभाव पड़ा, उसमें मुक्ति की यह धारणा मूलतः ग्रामीण समाज के लोगों को लेकर थी। आदिकालीन साहित्य में जहाँ एक तरफ रासो काव्य की परंपरा मिलती है तो वहीं दूसरी तरफ सिद्धों और नाथों की परंपरा कम समृद्धशाली नहीं है।

साहित्य में ग्राम की अवधारणा आधुनिक युग से ही शुरू होती है। साहित्य में ग्राम पहले लोक के रूप में प्रयुक्त हुआ है जिसे आदिकालीन साहित्य से लेकर भारतेन्दुयुगीन साहित्य में देखा जा सकता है। 'लोक' का दबाव आदिकालीन साहित्य में बहुत गहरा है। बुद्ध भी इसी लोक कल्याण के लिए बौद्ध धर्म लेकर आए और उन्होंने लोकभाषा या देशभाषा में ही अपनी बातें कहीं। इसलिए हिंदी साहित्य में प्रारंभिक दौर में ग्राम को लोक के रूप में विचार करना जरूरी है। वे कौन-से ऐसे कारण रहे हैं, जिनके दबाव में देशभाषा का काव्य में प्रयोग किया जाने

लगा? यह शोध का विषय है। यदि इस पर गंभीरता से विचार किया जाए तो कुछ तथ्य सामने आ सकते हैं।

आदिकाल में प्राकृत की जगह अपभ्रंश का जो प्रयोग किया गया, उसके पीछे लोक का ही दबाव था। अपभ्रंश के लिए पहले देशभाषा का ही रूप प्रचलित था। आगे चल कर वह साहित्य के लिए प्रयुक्त की जाने लगी तो उसके लिए अपभ्रंश शब्द का व्यवहार होने लगा। विद्यापति ने देश भाषा के लिए कहा था – *''देसिल बअना सब जग मिट्ठा। तं तैंसन जंपओ अवहट्टा।''*[1] देशी भाषा ही सबसे अधिक मीठी लगती है। इससे पता चलता है कि साहित्य किस भाषा में और किस को केंद्र में रखकर विकसित हुआ है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिंदी साहित्य का इतिहास में बज्रयानी सिद्धों के संबंध में लिखा है कि *''बज्रयानी सिद्धों ने निम्न श्रेणी की प्राय: अशिक्षित जनता के बीच किस प्रकार के भावों के लिए जगह निकाली, यह दिखाया जा चुका है। उन्होंने बाह्यपूजा, जातिपाँति, तीर्थाटन इत्यादि के प्रति उपेक्षा बुद्धि का प्रचार किया, रहस्यदर्शी बनकर शास्त्रज्ञ विद्वानों का तिरस्कार करने और मनमाने रूपकों के द्वारा अटपटी बानी में पहेलियाँ बुझाने का रास्ता दिखाया, घट के भीतर चक्र नाड़ियाँ शून्य देश आदि मानकर साधना करने की बात फैलाई और 'नाद, बिंदु, सुरति, निरति' ऐसे शब्दों की उद्धरणी करना सिखाया।''*[2] इससे पता चलता है कि आदिकालीन साहित्य में निम्न श्रेणी की जनता को किस रूप में देखा गया। साथ ही यह भी पता चलता है कि देशी भाषा समाज के किस वर्ग में प्रचलित थी। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल इसके बारे में लिखते हैं– *''इतना अनुमान तो किया ही जा सकता है कि प्राकृत पड़े हुए पंडित ही उस समय कविता नहीं करते थे। जनसाधारण की बोली में गीत, दोहे आदि प्रचलित चले आते रहे होंगे, जिन्हें पंडित लोग गँवारू समझते रहे होंगे।''*[3] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल इस बात को साफ तौर से कहते हैं कि समाज के प्राकृत भाषा पढ़े लिखे लोग भले ही देशभाषा को गँवारू क्यों न समझते रहे हों, परंतु वह आम जनमानस में काफी प्रचलन में थी। कोई भी साहित्य तभी अपना प्रभाव बना सकता है, जब वह जनता के बीच स्वीकार किया जाता है। देशभाषा का काव्य इसी कारण अपना महत्तव स्थापित करने में सफल हो जाता है।

वह जनता के बीच जनता की भाषा में जनता की तकलीफों की बात करता था। भक्तिकालीन संत साहित्य के केंद्र में भी साधारण जनता ही है, जिसकी मुक्ति के लिए कबीर आदि संत कवि बहुत बेचैन दिखाई पड़ते हैं। कबीर के साहित्य में लोक की गरीब जनता की मुक्ति के प्रश्न को उच्च वर्ग के समानांतर रखकर प्रस्तुत किया गया है। कबीर की बानी समाज के निम्नवर्ग में यह भाव बहुत गहरे से भरती है कि मुक्ति सिर्फ वर्ण और जाति से नहीं होती बल्कि कर्म से होती है। वह कर्म पर बहुत अधिक जोर देते हैं। इसी कारण उनकी शिष्य–परंपरा में समाज के निम्न वर्ग के लोग ही हैं। कबीर सीधे सरल ढंग से जनता से बातचीत के लहजे में अपनी बात कहते हैं। शब्दों में कोई बाजीगरी नहीं है। जहाँ गए वहाँ की भाषा के कुछ शब्द अपनी कविता में जोड़ लिए। कविता यहाँ लोक से गहरे रूप में जुड़ी हुई दिखलाई देती है। कबीर कविता में गाँव की उस जनता को संबोधित करते हैं जो निरक्षर है। इसीलिए उनके यहाँ लोक में प्रचलित शब्दों का बहुत अधिक प्रयोग हुआ है–

''पंडित मिथ्या करहु विचारा, ना वह सृष्टि न सिरजनहारा। / थूल अस्थूल पवन नहिं पावक, रबि ससि धरनि न नीरा। / जोति सरूप काल नहिं तहँवा, बचन न आहि सरीरा।।''[4]

ऐसे ही अनेक दोहों और पदों में गाँवों में बोले जाने वाले शब्दों का प्रयोग हुआ है।

गोस्वामी तुलसीदास के 'श्रीरामचरितमानस' में छिटपुट रूप में गाँव के चित्र दिखाई पड़ते हैं। वह चाहे केवट प्रसंग हो या शबरी के जूठे बेर खाने का प्रसंग। तुलसी ऐसे दृश्यों का मार्मिक चित्रण करते हैं–

''पद कमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं। मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साँची कहौं। बरु तीर मारहु लखन पै जब लगि न पाय पखारिहौं॥ तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपाल पारु उतारिहौं।''[5] या फिर दूसरे प्रसंग में *''कंद मूल फल सुरस, अति दिए राम कहुं आनि। प्रेम सहित प्रभु खाए बारम्बार बखानि।''*[6] देख सकते हैं। तुलसीदास ने 'श्रीरामचरितमानस' के इन वर्णनों में अपना पूरा हृदय उड़ेल दिया है। केवट और शबरी प्रसंग पढ़ते हुए

साधारण गाँव के आदमी की आँखों में पानी आ जाता है। ठीक यही तथ्य सूरदास के ब्रज वर्णन में देखने को मिलता है। जब वह माखन चोरी से लेकर गोवर्धन पर्वत, कालिया नाग मर्दन, कुंज गलियों में कृष्ण-गोपियों के प्रेम का वर्णन करते हैं तो वह सहज ढंग से मानस में उतर जाता है।

सूरसागर में बसंत-लीला का गायन बहुत विस्तार से हुआ है। ब्रज में एक महीने तक होरी का उत्सव चलता है। सूरदास ने ब्रज में व्याप्त होरी के समस्त रूपों का वर्णन किया है। शुरू में वे बसंत-लीला की आध्यात्मिकता को संक्षेप में प्रस्तुत करते हैं। भक्तों के अनुसार वे वृंदावन, कृष्ण-राधा तथा बसंत-विहार को शाश्वत मानते हैं। नवल किशोर कृष्ण और किशोरी राधा होली खेलते हैं। दोनों एक दूसरे के चित्त को हर लेते हैं। सभी सुंदर गोपियाँ घेरा बना लेती हैं। एक गोपी हाथ में गुलाल लेती है। दूसरी चंदन लेती है और तीसरी रोली लेती है। सभी ऊपर उचक-उचक कर कृष्ण के ऊपर छिड़कती हैं। राधा-कृष्ण की जो ?ी को ब्रज की सभी स्त्रियाँ युग-युग जिएँ कहकर आशीर्वाद देती हैं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

''खेलत नवल किसोर किसोरी। / नंद-नंदन वृषभानु सुता चित, लेत परस्पर चोरी। /औरौ सखी-जाल बनि सोभित, सकल ललित तन गोरी। / तिनकी नख-शोभा देखत हीं, तरनिनाथ मति मोरी। / एक गुलाल अबीर लिए कर, इक चंदन इक रोरी। / उपरा उपरि छिरकि रस-रस भरि, की परिमिति फोरी। / देति असीस सकल ब्रज-जुवती, जुग-जुग अविचल जोरी। / सूरदास उपमा नहिं सूचत, जो कछु कहौं सुथोरी।।'' [7]

सूरदास के वर्णन में गाँव का चित्र सामने प्रस्तुत हो जाता है। भक्ति साहित्य में गाँव प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में खूब आया है। इसमें गाँव के साधारण आदमी से लेकर वहाँ के प्राकृतिक परिवेश, गाय-बैल आदि का चित्रण किया गया है। साहित्य में गाँव की उपस्थिति रीतिकालीन साहित्य में न के बराबर है। इसका कारण है - काव्य राज्याश्रय में रचा जा रहा था, लेकिन आधुनिक युग के साहित्य में लोक फिर केंद्र में आ जाता है।

भारतेन्दुयुगीन साहित्य में इस तथ्य को देखा जा सकता है। इस दौर के साहित्य में लोक के विभिन्न रूपों को साहित्य में व्यक्त किया गया है। चाहे वहाँ की भाषा हो, रीति-रिवाज हो या प्रकृति के विभिन्न रूप। भारतेंदु साहित्य को आमजन से जोड़ने के लिए गद्य को खड़ी बोली में लिखने की बात कर रहे थे और स्वयं रचकर इसका मानक भी प्रस्तुत कर रहे थे। भारतेंदु युग के कवि, निबंधकार, संपादक बालकृष्ण भट्ट ने शास्त्रीय विषयों पर कई महत्वपूर्ण निबंध लिखे हैं। इन निबंधों से उनके भाषा और साहित्य संबंधी दृष्टिकोण के बारे में मालूम होता है। हमारी मातृभाषा, हमारी भाषा क्या है?, भाषा कैसी होनी चाहिए?, भारतवर्ष की जातीय भाषा, हिंदी की वर्तमान दशा, गुन आगरी नागरी, शब्दों की यातना, देशी भाषा और देशी अक्षर, शब्दों की बनावट, सभ्यता और साहित्य, उपमा, रूपक, खड़ी और पड़ी बोली का विचार आदि निबंध इस दृष्टि से विशेष महत्त्व के हैं। भट्ट जी का एक महत्वपूर्ण निबंध है 'देशी भाषा और देशी अक्षर'। इस निबंध में भट्ट जी लिखते हैं- *''आजकल अखबारों में इस प्रसंग की बहुत चर्चा हो रही है कि देशी भाषा और देशी अक्षर बिहार और अन्य सूबों में कम से कम जारी किए जाएँ। कारण इसका यही जान पड़ता है कि आज कई वर्षों से गवर्नमेंट बंगाल इस उद्योग में प्रवृत्त हुई कि सूबे बिहार की संपूर्ण अदालतों और कचहरियों में देशी अक्षरों का प्रवेश हो और परदेशी अक्षर वहाँ से निकाले जाएँ।''* [8]

देशभाषा का दबाव इसलिए भी बढ़ रहा था, क्योंकि स्वतंत्रता के लिए जो आंदोलन चल रहा था, उसमें भी लोक की भागीदारी और लोकभाषा को लेकर बहस होने लगी थी। महात्मा गाँधी के आने के बाद तो यह प्रत्यक्ष रूप में दिखाई देता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र अपनी एक कविता 'हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान में कहते हैं - *''निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल। बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल॥''*[9] यह लोक का दबाव ही है कि साहित्य को लोकभाषा में प्रस्तुत करने की बात की जाने लगी थी। भारतेंदु खड़ी बोली हिंदी को आमजन की भाषा के रूप में देख-समझ रहे थे। इसीलिए उनका जोर भी बहुत अधिक था। वहीं द्विवेदी युग में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी साहित्य में ग्रामीण समाज के प्रश्नों को लेकर गंभीरता से विचार करते हैं। 'सरस्वती' पत्रिका की संपादकीय टिप्पणियाँ इस तथ्य को बयान करती हैं। वह

कांग्रेस के अधिवेशन में जो प्रस्ताव पास किए जा रहे थे, उन पर भी एक किसान के पक्ष में खड़े होकर सवाल करते हैं।

वहीं छायावादी काव्य में एक तरफ पौराणिक आख्यानों को लेकर कविताएँ रची गयीं तो दूसरी तरफ वहीं गाँव के किसानों को लेकर भी कविताएँ लिखी गयीं। निराला की 'बादल राग' कविता इसका बेहतरीन उदाहरण है। इस दौर के कथा-साहित्य में प्रेमचंद का आगमन होता है, जो साहित्य के केंद्र को ही बदल देते हैं। प्रेमचंद ने, कथा-साहित्य को जो राजा-महाराजाओं के आख्यान को केंद्र में रखकर रचे जा रहे थे, उसकी जगह गाँव के साधारण से किसान को कथा का केंद्र बनाया। प्रेमचंद के पात्रों में होरी, घीसू, माधव, हल्कू आदि हैं जो ठेठ ग्रामीण समाज से जुड़े हैं। प्रेमचंद के बाद रेणु के माध्यम से साहित्य में आंचलिक साहित्य लिखने की नई धारा का सूत्रपात हुआ। 'मैला आँचल' उपन्यास आंचलिक उपन्यासों में मील का पत्थर है। इसके बाद की पीढ़ी के कथाकारों ने साहित्य में गाँव को लेकर बहुत सा साहित्य रचा। सन् साठ के दशक के कहानीकारों और उपन्यासकारों में शिवप्रसाद सिंह, अमरकान्त, काशीनाथ सिंह आदि हैं। वहीं आगे यह परंपरा शिवमूर्ति, रामदरश मिश्र, विवेकी राय आदि ने बढ़ाई।

आज जब भूमंडलीकरण की नीतियों के कारण गाँवों की संरचना और वहाँ का जीवन यातनापूर्ण बनता जा रहा है तब साहित्य में गाँव के किसानों की आत्महत्याओं आदि को लेकर कथा-साहित्य में महत्वपूर्ण रचनाएँ लिखी गई हैं। इनमें संजीव की 'फाँस', सत्यनारायण पटेल की 'गाँव भीतर गाँव', रामधारी सिंह दिवाकर की 'दाखिल खारिज', शिवमूर्ति की 'आखिरी छलांग', 'कुच्ची का कानून' आदि रचनाएँ प्रमुख हैं।

अत: निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि आज के साहित्य में किसानों की चिंताएँ जिस रूप में हमारे सामने खड़ी हैं, उस पर गहराई से सोचने की जरूरत है। वर्तमान समय में साहित्य की पक्षधरता के सवाल पर यदि सोचा जाए तो आज उसकी बड़ी पक्षधरता किसानों के प्रति होनी चाहिए। इसका कारण किसानों की स्थिति है। वह आज किसानी जीवन छोड़ शहरों में पलायन कर रहे हैं और लाखों की संख्या में आत्महत्या करने को मजबूर हो चुके हैं। अब जरूरत है कि साहित्य का मूल्यांकन किसानी जीवन की विडंबनाओं को एक मानक रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है, तभी किसानों के प्रति साहित्य का दायित्व पूरा हो पाएगा। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. कीर्तिलता और अवहट्ट भाषा : संपादक-डॉ. शिव प्रसाद सिंह, छंद-1/19-22, प्रकाशक-वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, आवृत्ति 2009
2. हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ-23, प्रकरण 2, अपभ्रंश काव्य, प्रकाशक-नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, संशोधित और प्रवर्द्धित 15वाँ पुनर्मुद्रण, सम्वत 2022
3. हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ-33, प्रकरण 3, देशभाषा काव्य, प्रकाशक-नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, संशोधित और प्रवर्द्धित 15वाँ पुनर्मुद्रण, सम्वत 2022
4. कबीर वाङ्मय : खंड-2, सबद 169, पृष्ठ 212, संपादक-डॉ. जयदेव सिंह/वासुदेव सिंह, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण 1981.
5. श्रीरामचरितमानस : तुलसीदास, अयोध्याकांड, छंद-100, पृष्ठ-385, गीताप्रेस गोरखपुर, संवत-2068, सत्तानबेवाँ पुनर्मुद्रण
6. श्रीरामचरितमानस : तुलसीदास, अरण्यकांड, दोहा सं-34, पृष्ठ-611, गीताप्रेस गोरखपुर, संवत-2068, सत्तानबेवाँ पुनर्मुद्रण
7. सूर-पंचशतक : डॉ.नगेन्द्र (प्रधान संपादक) एवं डॉ. मनमोहन गौतम (संपादक एवं व्याख्याकार), पद संख्या-386- राग बसंत, पृष्ठ 289, सूर्य प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली, प्रथम संस्करण जनवरी 1979
8. हिंदी प्रदीप : संपादक-बालकृष्ण भट्ट, अगस्त 1880 में प्रकाशित निबंध- 'देशी भाषा और देशी अक्षर', पृष्ठ-18
9. https://hi.wikipedia.org/ निज भाषा, भारतेन्दु हरिश्चंद्र

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विरासत

हिमालयी क्षेत्र का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन
(हिन्दी यात्रा साहित्य के सन्दर्भ में)

डॉ. खीमानन्द बिनवाल

सहायक प्राध्यापक (अतिथि)
सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय
लक्ष्मण सिंह महर परिसर, पिथौरागढ़
उत्तराखण्ड-262502
6398551105
krnbinwal@gmail.com

शोध सार :

सुदूरवर्ती हिमालयी क्षेत्र पृथ्वी के उन स्थानों में से है जो विशुद्ध रूप में उपस्थित है। इस क्षेत्र का धार्मिक ऐतिहासिक महत्व रहा है। हिंदी यात्रा साहित्य हिमालय पर्वत मालाओं, देवदारु, चीड़ के वन, बुरुंश के पेड़ों की सुंदरता, जड़ी-बूटियों, देश देशांतर के मठ-मंदिरों, गुफाओं, खंडहरों जैसी रहस्यमय चीजों की तथ्यात्मक जानकारियों से भरा पड़ा है। यात्रा वृत्तांत सिर्फ यात्रा वर्णन ही नहीं अपितु इन क्षेत्रों का सांस्कृतिक लेखा-जोखा भी है, जो साहित्य निधि के साथ ही हिमालयी क्षेत्र की हमारी सामाजिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक समझ को भी समृद्ध करता है। अध्ययन हिंदी यात्रा साहित्य के संदर्भ में हिमालयी जीवन के चित्रण पर प्रकाश डालता है और ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में परिकल्पना प्रस्तुत करता है। अनुसंधान एक बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाता है, जो द्वितीयक स्रोत और उपयुक्त शोध पद्धतियों के माध्यम से स्थितियों का गंभीर विश्लेषण करने में मदद करेंगे। यह शोध पत्र हिंदी यात्रा साहित्य के विश्लेषण से हिमालयी जीवन के महत्वपूर्ण पहलुओं पर चर्चा को समृद्ध करने की कोशिश करता है।

बीज शब्द :

यात्रा वृत्तांत, हिमालयी क्षेत्र, लोक, ऐतिहासिक, पुरातत्व, सांस्कृतिक।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. हिमालय पौराणिक, ऐतिहासिक स्थल है। अध्ययन का उद्देश्य यात्रा साहित्य की आवश्यकता और यात्रा साहित्य की इतिहास लेखन में भूमिका को रेखांकित करना है।
2. अध्ययन का लक्ष्य हिन्दी यात्रा साहित्य के मूल्यांकन के माध्यम से हिमालयी जीवन की हमारी समझ के मौजूदा अंतराल को पाटना है।
3. अध्ययन का उद्देश्य हिमालयी क्षेत्र के ऐतिहासिक-पौराणिक महत्व और संस्कृति पर ध्यान केंद्रित करते हुए यात्रा विवरणों का विश्लेषण कर इच्छित उद्देश्यों को पूरा करना है।
4. अध्ययन का लक्ष्य हिंदी यात्रा साहित्य को देखने की अलग एवं नवीन दृष्टि प्रदान करना है।

शोध पद्धति :

सबसे पहले हिमालय भ्रमण करते हुए लिखे गए हिंदी यात्रा साहित्य की पुस्तकों का संदर्भ लिया जाएगा। सरकारी गजेटियर, विभिन्न पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों तथा जन-सूचना कार्यालय से संबंधित आकड़ों को एकत्रित किया जाएगा।

मध्य हिमालय की यात्राओं के बारे में अध्ययन करने हेतु हम इतिहास पर दृष्टि डालेंगे। यात्रा साहित्य इत्यादि का अध्ययन करने के लिए ऐतिहासिक पद्धति का उपयोग किया जाएगा।

किसी समाज का व्यापक अध्ययन करना समाजशास्त्रीय दृष्टि के अंतर्गत आता है, इसलिए शोधकार्य के लिए समाजशास्त्रीय पद्धति का सहारा लिया जायेगा।

मूल आलेख :

यात्रा शब्द 'या' धातु में त्रन् तथा टाप् (स्त्रीलिंग) प्रत्यय लगकर बनता है। 'या' का अर्थ है - 'जाना', 'विदा', 'तीर्थाटन' आदि। भारत वर्ष में यात्रा करने का इतिहास बहुत पुराना रहा है। आदि गुरु शंकराचार्य ने तीर्थाटन के लिए संपूर्ण भारत की यात्रा की। विनय पत्रिका के कुछ छंदों से स्पष्ट होता है कि तुलसीदास ने बदरीकाश्रम की यात्रा की थी। विदेशी यायावर हवेन्सांग ने भारतीय संस्कृति को जानने के उद्देश्य से यात्रा की। गौतम बुद्ध ने बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए यात्राएँ की। ब्रिटिश शासकों ने व्यापार में वृद्धि के उद्देश्य से भारत की यात्रा की थी। बीसवीं सदी में हिंदी साहित्य में गद्य विधा के विकास के साथ ही साथ यात्रा-साहित्य का भी उदय और विकास हुआ। लेखको ने भ्रमण/यात्रा के अनुभवों को सुव्यवस्थित ढंग से लेखनबद्ध करना शुरू किया। 'यात्रावृतांत' को हिन्दी साहित्य में एक स्वतंत्र गद्य विधा के रूप में स्वीकारा गया है। इसकी लेखन परम्परा का सूत्रपात गद्य विधा के जनक भारतेंदु हरिश्चंद्र से ही माना जाता है।

यात्रा जीवन का नितांत अति आवश्यक कर्म है। किसी स्थान और उसके महत्व की खोज यात्रा से ही संभव हुई है। प्रत्येक व्यक्ति के उद्देश्य हिमालयी क्षेत्र की यात्रा के अलग-अलग होते है। यथा - सांस्कृतिक, तीर्थयात्रा, पथारोहण, पर्यटन, पुरातात्विक यात्रा। काका कालेलकर ने यात्रा के उद्देश्य की भिन्नता में एक और अध्याय जोड़ते हुए उसे सैनिक या सीमा सुरक्षा से जोड़ा है। प्राचीन काल से आज में यात्राओं के ध्येय के साथ ही उसके तरीकों में भी बदलाव आया है। *'पूर्वजों की हिमालय यात्राएँ हमारे प्राचीन साहित्य में मिलती हैं और उत्तरोत्तर इनमें बढ़ोतरी होती जाती है। कब बसासतों हेतु स्थान ढूँढ़ने और बसने की, जानवरों को पालने और चराने की यात्राओं में तीर्थयात्रा जुड़ी होगी कहना कठिन है।'*[1]

यात्रा साहित्य सिर्फ एक साहित्य न होकर तत्कालीन समय का सच है, इतिहास है। जिसके माध्यम से हमें बहुत-सी महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त होती है। ह्वेन्सांग का यात्रा साहित्य आज इतिहास में महत्वपूर्ण योगदान देता है। यायवारों को इतिहासकार के रुप में भी देखना उचित है। एटकिंसन और राहुल सांकृत्यायन के सन्दर्भ से एकत्रित जानकारी से हिमालय की जातियों और उनके इतिहास को जानने का मौका भी मिलता है।

हिमालयी क्षेत्र की कुछ सीमाएँ अन्य देशों से मिलती है। यायावारों ने अपने यात्रा वृत्तांत में हिमालयी क्षेत्र में रहने वाले समुदायों, जातियों का तिब्बत, चीन और मध्य एशिया से संबंध, तिब्बत सीमा व्यापार, चीन आक्रमण का व्यापार पर प्रभाव को दर्शाया है। विश्व मानचित्र पर नेपाल से होते हुए तिब्बत तक के व्यापारिक मार्ग और ल्हासा का सटीक मानचित्र प्रस्तुत करने वाले नैन सिंह रावत की यात्रा डायरी उनके हिमालयी क्षेत्र के अन्वेषक होने का साक्ष्य है। देर से उजागर होने के कारण इस पर अभी तक शोध कार्य नहीं हो सका है। महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्यों को सामने लाने के लिए इसका गहन अध्ययन आवश्यक है। प्रो. उमा भट्ट के शब्दों में *'उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के एक यायावर अंवेषक की सृजनशीलता तथा भाषिक विकास की परंपरा दोनों ही दृष्टियों से पंडित नैन सिंह के यात्रा साहित्य का महत्व है। रूखे सर्वेक्षण कार्य को अपनी जिज्ञासु दृष्टि के कारण नैन सिंह ने मानवीय संवेदना से युक्त बना दिया था। इन डायरियों में केवल आंकड़े भर नहीं हैं, वरन उन स्थानों का प्राकृतिक और मानवीय जीवन साकार हो उठा है।'*[2]

लेखकों ने इन दुर्गम इलाकों की यात्रा कर इनके विषय में जानकारी दी है। उनमें हिंदी में साहित्य रचने

वाले या विदेशी पुस्तकों का हिंदी में अनुवाद करने वाले भी है। यायावारों ने संस्कृति और इतिहास से संबंधित कुछ नई स्थापनाएँ रखी है। राहुल सांकृत्यायन, विष्णु प्रभाकर, शिवप्रसाद डबराल, नित्यानन्द मिश्र, प्रो. राम सिंह, कृष्णनाथ आदि यायावरों ने पुरातत्व और इतिहास सम्मत महत्वपूर्ण अभिलेखों संबंधी कुछ महत्वपूर्ण जानकारियों का अपने यात्रा साहित्य में वर्णन किया है, प्रस्तुत शोध पत्र उनकी महत्ता का मूल्यांकन प्रस्तुत करने का प्रयत्न करेगा। राहुल सांकृत्यायन, चंद्र शेखर भट्ट, नंदकिशोर हटवाल जैसे यायावारो ने यात्रा के दौरान हिमालयी क्षेत्र में विशेष अवसरों पर लोक भाषा में गाए जाने वाले जागर, लोकगीत, चांचरी रिकॉर्ड या संकलित किए है। यात्रा साहित्य में धार्मिक स्थलों के पंडों द्वारा यात्रियों का लेखा-जोखा रखने का वर्णन, लेखक का व्यक्तियों, स्थानों का नाम और संख्याओं का बताना, आज एक सुरक्षित इतिहास नहीं तो क्या है?

अब तक हुए शोध कार्यों की समीक्षा से स्पष्ट है कि राहुल सांकृत्यायन के यात्रा साहित्य को लेकर बहुत ज्यादा शोध हुए है, जिनमें सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक पक्षों पर चर्चा की गई है। हिंदी साहित्य में हिमालयी क्षेत्रों पर यात्रा वृत्तांत तो बहुत लिखा गया है, पर उस पर शोध कार्य का अभाव ही रहा है। हिमालयी क्षेत्र पर लिखे यात्रा साहित्य के संदर्भ में मात्र एक शोध हुआ है, उसका दायरा राहुल सांकृत्यायन तक सीमित है। यहाँ अन्य यायावरों के यात्रा साहित्य का अभाव है। कुछ शोध कार्यों में देश-विदेश के विभिन्न क्षेत्रों पर लिखे गए यात्रा वृत्तांतों का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है। हिमालय की प्रकृति का मंत्र मुग्ध करने वाला चित्रांकन तो शोध कार्य में किया जा चुका है, अध्ययन में उसके दूसरे स्वरूप पर चर्चा नहीं हुई है। राहुल सांकृत्यायन ने हिमालयी क्षेत्रों के इतिहास से संबंधित नई स्थापनाएँ रखीं है, अध्ययन हिमालयी क्षेत्र से संबंधित यथासंभव संपूर्ण यात्रा वृत्तांतों का मूल्यांकन कर हिमालय की संस्कृति और ऐतिहासिकता को प्रकाश में लाने का प्रयास करेगा।

यात्रा साहित्य में ऐसे स्थानों, मंदिरों, ताम्र पत्रों आदि का जिक्र किया गया है, जिनके विषय में शोध किया जाना ऐतिहासिक दृष्टि से अति आवश्यक है। यशपाल जैन पांडुकेश्वर स्थित ताम्र पात्र के विषय में बताते है। हिंदी यात्रा साहित्य में मौजूद यह जानकारी ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष महत्व रखती है – *'यहाँ पर दो ताम्र-पत्र है, लेकिन इन्हें अभी तक कोई पढ़ नहीं सका।'* [3]

ऐसे ताम्र-पत्रों को पढ़ा जाना आवश्यक है। इनसे प्राप्त जानकारी क्षेत्र विशेष के इतिहास को सुदृढ़ और अधिक प्रामाणिक करने का कार्य करती है।

शिवप्रसाद डबराल अपनी पुस्तक 'यात्रादर्शन' के पृष्ठ संख्या 506 में लिखते हैं कि 'कत्यूरी नरेशों के राजप्रासाद, दुर्ग आदि अवशेष संभवत: शिलाओं एवं मोरेन से दबे पड़े हैं। जोशी मठ से 7 मील उत्तर में धौली तट पर तपोवन के खेतों में महत्त्वपूर्ण बस्ती के अवशेष, गढ़ी हुई चित्रित शिलाएं, आमलक, स्तंभअंश के अवशेष बिखरे हैं। यहाँ पर गुप्तकालीन तीन मंदिर और एक दसवीं शताब्दी का मन्दिर अब तक बचा है।' राजवंशों के समय के मंदिरों, शिलाओं, मूर्तियों के अवशेष तत्कालीन राजवंशावली व उसकी संस्कृति से हमें परिचित कराती है।

ऐसी कई वस्तुएँ जो इतिहास में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती थी, संरक्षण के अभाव में नष्ट हो गई हैं। काका कालेलकर ने अपने यात्रा साहित्य में घने जंगल में जहाँ मनुष्य का नाम-निशान नहीं था, जल प्रवाह के प्रपात की लीला के बीच एक कागज का टुकड़ा मिलने का वर्णन किया है। 'आगे चलकर एक पत्थर के नीचे दबा हुआ कागज का एक टुकड़ा मुझे मिला। उस पर अंग्रेजी में जो कुछ छपा था उसे ध्यान से देखा तो त्रिकोणमिति के कुछ एक एक कोष्ठक में लिखे हुए दिखाई दिये।' इससे उन्होंने प्राकृतिक हादसे से किसी यात्री की मृत्यु का अंदेशा लगाया। आगे वे लिखते हैं, 'यहाँ के 'लेण्डस्लिप' के स्मृति चिन्ह के रूप में कई दिनों तक मैंने कागज के उस टुकड़े को संभाल कर रखा था। परंतु बाद में उसका क्या हुआ, कुछ पता नहीं। *अगर कागज का वह टुकड़ा मुझसे बोला होता तो, कदाचित् मैंने उसे किसी पदार्थ संग्रहालय में रख दिया होता।'* [4]

यात्रा साहित्य में विद्वानों ने पुरातत्व के महत्व पर भी ध्यान केंद्रित किया गया है। शिवप्रसाद डबराल ने 'उत्तराखंड यात्रा-दर्शन' में श्री विशाल शर्मा उपाध्याय जी के विषय में आभार प्रकट करते हुए लिखा है, 'नारायण-कोटि के

निकट के खंडहरों के महत्व को जनता और सरकार के सम्मुख रखने का श्रेय आपको ही है। *आपकी प्रेरणा से ही काली मठ की मूर्तियों की सुंदरता और शिलालेखों का महत्व जनता के सम्मुख आया है।'*[5]

राहुल सांकृत्यायन, नित्यानन्द मिश्र, प्रो. राम सिंह आदि इतिहासकारों ने कुछ अप्रत्यक्ष जानकारी अवश्य दी है। राहुल ने किन्नौर में पाया कि यहाँ विभिन्न घाटियों में खनिजों की भरमार है और भविष्य में इसकी काफी सम्भावनाएँ है तो उन्होंने हिमाचल के प्रशासनिक अधिकारी को पत्र लिखकर अवगत करवाया और भूगर्भशास्त्री की मांग कर उसकी जांच करवाने की सलाह दी (लेखक द्वारा हिमाचल प्रदेश के प्रशासनिक अधिकारी एन.सी. मेहता को लिखे पत्र का जिक्र किया गया है।) *'वस्पा उपत्यका के किसी चश्में में मिट्टी के तेल की गंध आती बतलाई जाती है, किसी जगह सीसे के धातु पाषाण मिलते हैं। अबरख और कोई धातु पाषाण यहाँ से कुछ मील पर पूर्वणी में मिलते है। इनका नमूना मैं अगली डाक से आपके पास भेज रहा हूँ।...... यहाँ के लिए विशेष भूगर्भशास्त्री चाहिए।'*[6]

राहुल सांकृत्यायन के अनुसार रामदत्त त्रिपाठी ने द्वाराहाट के कत्यूरी राजाओं की वंशावली वहाँ के शिलालेखों के आधार पर ही निर्धारित की है, जिसमें चौदहवीं शताब्दी के राजा मानदेव का नाम महत्त्वपूर्ण है। राहुल सांकृत्यायन ने इस मनिया समूह के मंदिरों के बारे में पुरातात्त्विक सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार पहले इस समूह के अंतर्गत मंदिरों या उपाश्रयों की संख्या सात मानी गई थी, किंतु बाद में पुरातात्त्विक सर्वेक्षणों से यहाँ दो अन्य मंदिरों के आधारशिलाओं की भी वैज्ञानिक पुष्टि हुई है। इसलिए 'मनिया' समूह में अब नौ मंदिर सम्मिलित हैं। सांकृत्यायन जी ने द्वाराहाट के मनिया मंदिरों के बारे में लिखा है कि- *'अब हम द्वारा की बड़ी परिक्रमा पर निकले। मृत्युंजय, रतन देव होते मान्या मंदिर गए, जिसकी चहार दिवारी में एक जैन मूर्ति लगी है। द्वारा के विशाल कंकाल में बाजार को छोड़ जहां तहां खेतों में बसे लोगों के कुछ मकान हैं, एक छोर पर बदरी नाथ के मंदिर से कुछ ऊपर द्वारा का सबसे पुराना घर है, जो अब ढह रहा है। 1800 में यह गोरखा शासक का निवास स्थान था। बना तो उससे भी पहले था, मरम्मत कर देने पर शायद अब भी उसकी आयु, दो सौ साल तक आगे बढ़ाई जा सकती है। पुरातत्त्वविभाग ने इसे उपेक्षित कर रखा है।'*[7]

राहुल सांकृत्यायन ऐसे ऐतिहासिक मंदिरों के पुनर्निर्माण या उन्हें संरक्षित करने की बात अपने यात्रा साहित्य में कहते हैं।

केदारनाथ मंदिर के पास बनी आदिगुरु शंकराचार्य की समाधि के संबंध में यशपाल बताते हैं, किमदिर से कुछ ही फासले पर आादिगुरु शकराचाय की समाधि थी। उसे देखने गये। कहते हैं, केदारनाथ के मदिर का निर्माण शकराचार्यजी ने ही कराया था और यही पर उनके शरीर का लोप हुआ था। *दक्षिण के किसी साधन-संपन्न व्यक्ति ने वह समाधि बनवा दी है। समाधि के एक कोने पर निर्माण कराने वाले के नाम की तख्ती लगी है।'*[8]

वर्ष 2013 की दैवीय केदारनाथ आपदा में आदिगुरु शंकराचार्य की समाधि भी बह गई थी, साथ ही बह गया तख्ती पर लिखा इतिहास। वर्ष 2021 में समाधि का पुनर्निर्माण जरूर किया गया है, किंतु न कोई तख्ती साथ लगी है, न ही पुरानी तख्ती में लिखी जानकारी।

कुमाऊंनी अभिलेखों और ताम्रपत्रों के विशेष जानकार प्रो. राम सिंह ने अपनी पुस्तक 'राग भाग काली कुमाऊँ' में ताम्रपत्रों में प्रयुक्त स्थानीय आवासपरक शब्दों में पांथशालाओं जैसे- 'मड़', 'मड्या' या 'धरमघर' का प्रयोग किया है, जिनका संबंध रात्रिनिवास से संबंधित धर्मशाला से ही रहा था।

यात्रा साहित्य हिमालय क्षेत्र से जुड़ी रहस्यमय और अस्पष्ट घटनाओं, ऐतिहासिक आख्यानों और किंवदंतियों के महत्वपूर्ण साक्ष्य प्रदान करता है। राम सिंह ने चंपावत के 'कफलाङ' शिलालेख में शिवालय के निकट एक धर्मशाला के पुनर्निर्माण का उल्लेख करते हुए यह भी जानकारी दी है कि निर्माताओं द्वारा जीर्णशीर्ण मंदिर का पुनरोद्धार करते हुए यहाँ विद्यमान प्राचीन शिलालेख को तोड़कर उसके दो भाग कर दिए और उसके एक भाग को धर्मशाला की दीवार में उल्टा चुन दिया गया था। *उचित देखरेख के अभाव में शिलालेख की महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ भी समाप्त हो गईं थीं, जिससे कि जाना जा सके कि वह शिवालय और धर्मशाला किस काल की थी?*[9]

पुरातात्विक स्थानों का जीर्णोद्धार या पुनर्निर्माण इस तरह किया जाना चाहिए जिससे की उससे प्राप्त होने वाली जानकारी सुरक्षित रहे, नष्ट न हो। स्थल या वस्तु के महत्व को समझते हुए उस समय बरती जाने वाली जरूरी सावधानी की ओर यायावर ध्यान आकृष्ट कर रहा है।

'लक्ष्मण झूला से कुछ दूर चलने पर आती है गरुड़-चट्टी, जहाँ ऊँचाई से गिरता हुआ एक सुंदर प्रपात है। उसके जल में कुछ ऐसे रासायनिक तत्व है, जिनके कारण बहुत समय तक पानी में पड़ी रहने वाली वस्तु पत्थर की-सी हो जाती है।' [10]

यशपाल जैन 1954-55 की अपनी केदार-बदरी की यात्रा के दौरान गुप्तकाशी पहुंचे। वहाँ के पण्डों के बारे में वे लिखते है - *'हाथों में लंबी बहिया लेकर वे हर यात्री से उसका नाम और ठौर - ठिकाना पूछते है। इतने पीछे पड़ते है कि लोग तंग आ जाते हैं। हमें भी कई पण्डों ने घेर लिया, उन्हें भगाने की बहुतेरी कोशिश की, लेकिन वे कहा मानने वाले थे। आखिर हम लोगों के नाम पते लिखकर ही टले।'* [11]

धार्मिक स्थलों में पंडों द्वारा यात्रियों का नाम, ठौर-ठिकाना लिखे जाने का उल्लेख है, यह आज कैसे प्रासंगिक है?

यशपाल ने कश्मीर के तीर्थ स्थान मटन की यात्रा की। वे लिखते है - *'हम लोगों की बस जैसे ही वहाँ रुकी कि दर्जनों पंडों का एक साथ आक्रमण हो गया, उनके हाथ में लंबी-लंबी वहियां थी और वे यात्रियों को घेर कर पूछते थे कि कहाँ से आये हैं। पण्डों के प्रांत, जिले और शहर बटे हैं, हमारी पार्टी के एक साथी के बाबा कभी वहाँ आये थे। उनके हस्ताक्षर देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई।'* [12]

ऐसे ही प्रो. हरेंद्र सिंह असवाल द्वारा की गई त्रियुगी नारायण की यात्रा इसके महत्व को दर्शाती है। अपने यात्रा वृत्तांत में वे लिखते है कि 'मंदिर में जब आप पूजा करने जाते हैं तो पण्डित आपको पूछते हैं कि कहाँ से आये हैं। साथ ही वह आपके तीर्थ पुरोहितों के बारे में बताते हैं। आपके तीर्थ पुरोहित ही आपकी पूजा संपन्न करते हैं। साथ ही आपके तीर्थ खाते में आपका नाम दर्ज करते हैं। जब मैंने उनका पुराना खाता खोला तो उसमें मेरे पिताजी और उनके ताऊजी का नाम दर्ज था। संवत 2003 में वे वहाँ यात्रा पर गये थे। मैं संवत 2070 में वहाँ पहुंचा। मेरे पिताजी वहाँ आज से 76 साल पहले पैदल यात्रा कर पहुंचे थे।

जो लोग हमारे पुराणों को इतिहास नहीं, गल्प मानते हैं, उन्हें यह याद रखना चाहिए कि हमारे इतिहास ग्रंथ हमारे तीर्थ स्थलों पर रखे गये वे बही खाते हैं, जिनसे हमें तिथियों का ऐतिहासिक ज्ञान प्रमाण के साथ मिल सकता है। *ऐसे न जाने कितनी पोथियां तीर्थ पुरोहितों के पास संरक्षित हैं। उनका अध्ययन और उन पर शोध करने की जरूरत है।'* [13]

हिमालयी क्षेत्र की विशिष्ट समस्याओं के महत्त्वपूर्ण क्षेत्रीय और राष्ट्रव्यापी परिणाम हैं, जिनमें भाषा और संस्कृति में गिरावट भी शामिल हैं। डॉ. रमेश अपने यात्रा वृत्तांत 'मेरी मलाणा यात्रा' में एक क्षेत्र विशेष 'मलाणा' में अपनी संस्कृति को संरक्षित करने के लिए किए जाने वाले प्रयास के विषय में बताते है कि 'मलाणा में रहने वालों के लिए कानाशी भाषा को अनिवार्य कर दिया गया। त्योहारों के दौरान सबसे पहले बाणासुर को बलि दी जाती है। *बाहरी लोगों को गाँव में कुछ भी छूने की अनुमति नहीं है। इस गाँव से न किसी ने ज्यादा पढ़ाई की है और न ही कोई सरकारी नौकरी में है। यहाँ अपनी पारिस्थितिक संरक्षण के लिए अपने अलग नियम है, अलग लोकतांत्रिक व्यवस्था, न्यायिक प्रणाली है।'* [14]

नीति निर्माण हेतु प्रस्तावित अध्ययन की प्रासंगिकता :

यह शोध पत्र हिमालयी क्षेत्रों पर एक वैश्विक परिप्रेक्ष्य प्रदान करता है। शोध हिमालयी क्षेत्रों की ऐतिहासिक-सांस्कृतिक महत्ता की गहरी समझ को बढ़ावा देता है। बाहरी दुनिया से ज्यादा संपर्क न होने के कारण हिमालयी क्षेत्र के समाज में गहराई तक व्याप्त क्रियाकलापों का समावेश अब संस्कृति का रूप ले चुकी है। हिमालयी क्षेत्र का अध्ययन उसके सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण द्वारा संभव है।

नई शिक्षा नीति, 2020 का एक उद्देश्य विद्यार्थियों को भारतीय संस्कृति से जोड़ना भी है। अध्ययन लोगों को हिमालयी क्षेत्र की 'लोक संस्कृति' से जोड़ने में उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

शोध पत्र पूर्वजों से प्राप्त विरासत, अभिलेखों, ताम्र पत्रों, प्राचीन धरोहरों के अवशेषों की महत्ता को समझकर समाज में सांस्कृतिक संरक्षण के प्रयासों को बेहतर बनाने का समर्थन करता हैं। इसमें यायावर द्वारा बताए कुछ अवशेषों और तथ्यों को संरक्षित करने और उसका अध्ययन किए जाने की आवश्यकता को दर्शाया गया है। कुछ यायावरों ने अपने यात्रा साहित्य में लोकगीतों को समाहित किया है और कुछ गीतों को रिकॉर्ड करने की बात कही है। यह विचार हिमालयी लोक संस्कृति को संरक्षित करने की नीति में सहयोग कर समाज के लिए प्रासंगिक हो सकता है। अध्ययन मौजूदा ज्ञान में अंतर को पाटने और विद्वानों, नीति निर्माताओं और इस मनोरम क्षेत्र में रुचि रखने वाले लोगों के लिए एक मूल्यवान संसाधन प्रदान करने का प्रयास करता है।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत शोध पत्र हिमालयी क्षेत्र के लोगों के जीवन को आकार देने वाले इतिहास, भूगोल, समाज और संस्कृति के गहरे मूल्यांकन में योगदान देता है और मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। यायावर को यात्रा के दौरान मिलने वाले अभिलेखों, प्राचीन धरोहरों के अवशेषों, ताम्र पत्रों, किंवदंतियों आदि की जाँच से क्षेत्र की लोककथाओं और रहस्यमय पुरातत्वों के बारे में गहरी जानकारी मिलेगी। यात्रा साहित्य के अध्ययन से प्राप्त तथ्यों से उन तत्वों या स्थितियों की पहचान होगी, जो किसी संस्कृति के विनाश के कारक है। इसमें भाषा, इतिहास का संरक्षण न होना मुख्य है। अध्ययन यात्रा वृत्तांतों के विश्लेषण के माध्यम से हिमालयी क्षेत्र की संस्कृति, परंपराओं और जीवन के पहलुओं का विस्तृत चित्रण प्रस्तुत करेगा। यह ज्ञान आम जनता के बीच इन अद्वितीय क्षेत्रों की सांस्कृतिक विरासत के बारे में जागरूकता और समझ को बढ़ा सकता है। स्पष्ट है कि हिंदी यात्रा साहित्य हिमालयी क्षेत्रों के ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन में अपनी विशेष दृष्टि प्रदान करेगा। ❑

संदर्भ सूची :

1. शेखर पाठक, पहाड़ पत्रिका, 2000, पृष्ठ 7
2. शेखर पाठक, पंडितों का पंडित : नैन सिंह रावत की जीवनगाथा (उन्नीसवीं सदी के हिमालयी अन्वेषक), पृष्ठ 160
3. यशपाल जैन, उत्तराखण्ड के पथ पर, केदार-बदरी की यात्रा का सजीव वर्जन, सस्ता साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 1958, पृष्ठ 109
4. काका कालेलकर, हिमालय की यात्रा, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, अगस्त 1958, पृष्ठ 157-158
5. https://archive.org/details/in.ernet.dli.2015.309034, पृष्ठ 11
6. राहुल सांकृत्यायन, किन्नर देश में, इण्डिया पब्लिशर्स, 333 मोहतशिमगंज, प्रयाग, प्रथम संस्करण संवत् 2000, पृष्ठ 174
7. महापण्डित राहुल सांकृत्यायन, कुमाऊँ, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, संवत् 2015, पृष्ठ 343
8. यशपाल जैन, उत्तराखण्ड के पथ पर, केदार - बदरी की यात्रा का सजीव वर्जन), रास्ता साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 1958, पृष्ठ 68
9. राम सिंह, 'राग भाग काली कुमाऊँ', पृ. 361
10. यशपाल जैन, उत्तराखण्ड के पथ पर, सस्ता साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 1958, पृष्ठ 26
11. यशपाल जैन, उत्तराखण्ड के पथ पर, सस्ता साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 1958, पृष्ठ 50
12. यशपाल जैन, जय अमरनाथ, सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, दूसरी बार : 1956, पृष्ठ 17
13. यात्राएं जारी रहें, आलोकपर्व, ISSN : 2581-3145, वर्ष : 9, अंक : 9, सितंबर, 2022, पृष्ठ 22
14. मेरी मलाणा यात्रा, डॉ. रमेश बी., हिमांजलि पत्रिका, जनवरी - जून 2016, अंक 13, पृष्ठ 90-92

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

मंथन

'वरुणा का होना' एक संस्कृति की जीवंतता है

डॉ. प्रवीण कुमार

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक, मध्य प्रदेश-484887
9752916192
pravinkmr05@gmail.com

'वरुणा' नदी है, जो कि काशी में गंगा के साथ मिलती है। वरुणा काशी और बनारस को न केवल जोड़ती है, बल्कि उसे एक सांस्कृतिक स्वरूप प्रदान करती है। वरुणा है तो बनारस की संस्कृति है, अन्यथा वह लुप्त हो जाती। वंदना झा कृत यह काव्य संग्रह इसी संस्कृति को रेखांकित करता है, जिसमें मानव की अनगिनत संवेदना एक साथ एकीकृत होकर वरुणा में प्रवाहित होती है। गाँव, पहाड़, पठार से लेकर मैदानी इलाकों की धड़कन है। माँ- बाबूजी से लेकर सखी-सहेली, नगर-गाँव वासियों सहित भारतीय संस्कृति के उन्नत स्वरूप अध्यात्म की पराकाष्ठा माता जी, बाबा जी और माँ भारती के चरणों में निवेदित अभिलाषा की अभिव्यंजना है। एकदम निडर साहस की अभिमूर्ति उनकी संवेदना में है और जीवन-संघर्ष की सामाजिकता में भी, वैसे ही जैसे वरुणा बेप्रवाह बहती है और माँ गंगा में समाहित होती है। इस काव्य संग्रह में ऐसी ही धारा जीवन की बहती है-जन्म से लेकर मृत्यु तक, जो न जाने किन गलियों से निकल कर भूमंडलीकरण की चकाचौंध में भी अपनी पीठ तान कर खड़ी है।

शुरुआत करते हैं मानवीय सभ्यता की आदिम अवस्था से, जहाँ से विज्ञान की धारा नि:सृत होती है और निरंतर ऊष्मा पाकर जीवन को वैज्ञानिकता की ओर ले जाती है। 'आग' जोकि मानवीय सभ्यता-संस्कृति की आदि भी है और अंत भी। ज्ञान से लेकर विज्ञान तक 'आग' परिवर्तन की कथा का इतिहास है। मानवीय सभ्यता-संस्कृति के विकास में 'आग' की भूमिका है और उसका भविष्य भी 'आग' है। यूँ कह सकते हैं कि भारतीय सभ्यता-संस्कृति में 'माँ भारती' का श्रृंगार करना है तो भविष्य की आग, अपनी सभ्यता-संस्कृति और परंपराओं की महान प्रवाह की धारा की आग को उसकी गरमाहट को सिद्दत से महसूस करना होगा और उसे बचाना होगा। बिना परिवर्तन के न तो मशाल जल सकती है और न ही मशाल जले बिना परिवर्तन ही हो सकता है। इन दोनों ही भूमिका में, दोनों के इतिहास के बचाने बनाने में 'आग' की भूमिका है। 'माँ भारती' के इतिहास की कथा संवाद की रही है और संवाद ही सकारात्मक परिवर्तन का द्योतक है। बिना संवाद न तो हुए को ही खत्म किया जा सकता है और न ही मानवता का इतिहास ही लिखा जा सकता है। मानवीय इतिहास और क्या है? विचारों का संग्रह है, जो जीवन-संघर्ष के बीच

से चुनकर आया है, चहुँदिश प्रकाशमान है। लेकिन वह मानवीय सभ्यता-संस्कृति संकट में है। मानवता का क्षरण हो रहा है जैसे 'वृक्ष के हृदय' में डर पैदा हो गया है और उन्हें महसूस हो रहा है कि मानव तमाम जिंदगी की कहानी को रचते-बुनते हुए भी उसे एक दिन 'ठिठुरन भरी सर्दी में आग' के हवाले कर दिया जाएगा। इस डर को खत्म करना जरूरी है। 'डर' और 'आग' दोनों ही कविताओं को एक साथ जोड़कर देखा जाए तो यह सिद्दत के साथ महसूस होगा कि मानवता को बचाने, बनाने हेतु 'संवाद' का पथ तैयार किया जाना जरूरी है। इसी 'संवाद' से परिवर्तन होगा और यह परिवर्तन एक क्रांति के रूप में होगा। यह 'क्रांति' मार्क्स की तरह की नहीं होगी। उससे अलग और भिन्न भारतीय समाज के अनुरूप होगा। भारतीय समाज में मार्क्सवाद की जो स्थिति है; यह किसी से छुपी नहीं है, न ही उसकी चाह है। उसका सही आकलन करती है 'क्रांति' नामक कविता। संभवत: यह कविता जेएनयू में मार्क्सवाद की मानसिक स्थिति के आकलन की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है।

आज दलित, स्त्री, आदिवासी, किसान, मजदूरों की वास्तविक स्थिति क्या है और क्या हो सकती है? भारतीय मार्क्सवाद ने कभी भी वास्तविक रूप में इस दिशा में काम ही नहीं किया है। हकीकत तो यह है कि भारतीय मार्क्सवाद एक खास किस्म की मानसिकता बुर्जुआ और जातिवाद के दर-ओ-दीवार में है। इसलिए वह विफल है। यूटोपियन की स्थिति में है। यह सच्चाई है कि 'कोशिश' करने वालों की हार नहीं होती है। 'वंदना जी' एक स्त्री है और स्त्री रूप में जीना, मजबूती के साथ जीना, उनकी हर एक कोशिश में है। समाज में घटित यथार्थ से परिचित होते हुए भी अकेले जीने की कोशिश। यह सिर्फ उनका व्यक्तित्व ही नहीं, बल्कि कृतित्व भी है। सत्य, यथार्थ और संघर्ष के बीच जीवन-सौंदर्य को महसूस करना, उसे जीना और जीने की शक्ति पैदा करना वंदना जी की कविताओं की शक्ति है। समय के यथार्थ से परे होकर क्या जीवन की गतिशीलता को समझा जा सकता है? सन्नाटे को चीरकर सचेतन जीवन-सौंदर्य को स्थापित करती हैं उनकी कविताएँ। द्रष्टव्य हैं पंक्तियाँ :-

''पर क्या करेंगे और
क्या सोचेंगे आप जब
घटित होते यथार्थ को देख रहे हों
और समय को फिर भी
बेहतर बनाने की कोशिश में
बर्बाद होते हुए
आबाद करने की कोशिश में लगे हों।'' (पृ. 24)

इसी स्थिति में मनुष्य को क्या करना चाहिए। आप क्या करेंगे? वंदना जी कहती हैं :-

''तुम्हारे बगैर भी
दुनिया को देखना चाहती हूँ।'' (पृ. 25)

यह जो 'बगैर' शब्द है, यही शक्ति है, जो दुनिया को देखने की 'जिज्ञासा' पैदा करती है। ऐसी ही शक्ति से भरा-पड़ा है यह काव्य-संग्रह। यह कविता ही नहीं, साहित्य की सबसे बड़ी शक्ति है। मनुष्य की सबसे बड़ी ताकत है जिज्ञासा। बोध, शोध, अनुसंधान, अन्वेषण, उत्पाद, निर्माण आदि हेतु जिज्ञासा-बोध का होना अनिवार्य है। 'जिज्ञासा के अरण्य में' कविता में 'बुद्ध' (महामानव बुद्ध) से दु:ख, युद्ध, मृत्यु, अहंकार आदि में संलिप्त समाज के लिए संबोधि का आह्वान किया गया है। इस समाज को सांसारिक आसक्तियों से मुक्ति दिखाने हेतु बुद्ध का आह्वान भारतीय समाज को विश्व-गुरु भारत के मार्ग पर चलने का मार्ग प्रशस्त करना है ।

''दु:ख, युद्ध, मृत्यु, अहंकार
लिप्सा के घने जंगलों से
क्या आएंगे बुद्ध बार-बार
लालसा के गह्वर में भटकते समाज को
संबोधि देने
अपना सब कुछ त्याग कर'' (पृ. 27)

भारतीय समाज और राजनीति में मजदूरों एवं गरीबों की स्थिति की पोल खोलती है- यह कविता। इतना ही नहीं, 'क्रांति' के नाम पर 'लूट' की संस्कृति को उजागर करती है 'छिन्नमस्तिका' कविता। मंदिर - छिन्नमस्तिका मंदिर को लूटकर माँ के स्वर्ण जड़ित मुकुट ले जाना किस-सभ्यता-संस्कृति का परिचायक है। यह सवाल सबको करना ही चाहिए। आखिर मंदिर भारतीय सभ्यता-संस्कृति का प्रतीक है। क्या अपनी ही संस्कृति को खत्म कर देना क्रांति कही जा सकती है? संभवत: नहीं। यही

कारण है कि लेखिका ने स्पष्ट शब्दों में यह चेतावनी भी दे दी और सवाल भी उठाया कि 'हुई होगी कहीं क्रांति / पर उसे क्या?' आज भी जब जंगलों में लकड़ियों को तोड़ने के लिए उसे जाना ही पड़ता है। कोयला चुनना ही पड़ता है। पानी के लिए नदियों पर निर्भर रहना ही पड़ता है, तब जाकर उनकी भात पकती है। इस कविता में एक और सवाल है वह है बलि-प्रथा का। छिन्नमस्तिका के मंदिर में बलि देने की प्रथा? लेखिका जीवमात्र के प्रति कितनी संवेदनशील है, यह इससे भी पता चलता है कि वह दो टूक कहती हैं कि – ''छागरो की बलि से / माँ प्रसन्न नहीं होती / बहती रहती है शोणित की रेख / दामोदर में।'' वहीं दूसरे पल वह दार्शनिक मुद्रा में पहुँच जाती है और सवाल करती है आखिर 'माँ' यहीं क्यों छिन्नमस्तिका बनकर अवतरित हुई? लेखिका के दार्शनिक चिंतन की पुष्टि उनकी 'मेघालय में मोनोलिथ' कविता से भी होती है। 'मोनोलिथ' यथार्थ का दार्शनिक रूप भी है और दर्शन का यथार्थ भी। उदासी, सन्नाटा, अकेलापन आदि यह सब मानवीय चरित्र है और 'स्वयं' के साथ 'मोनोलिथ' में उसका मानवीयकरण भी है। लेकिन 'मृत्यु' सत्य है और अनिश्चित भी, क्योंकि कब होगी पता नहीं। इस दार्शनिक सत्यता से कोई कैसे दूर हो सकता है?

वर्तमान में औद्योगिक-कृत्रिम सभ्यता-संस्कृति ने व्यक्ति के जीवन में अकेलापन, अजनबीपन, उदासी, संत्रास आदि को काफी बारीक ढंग से उतारा है और वह जीवन का अंग बन गया है। संपूर्ण काव्य संग्रह में इस शब्द का प्रयोग काफी हुआ है। यूँ कह सकते हैं कि अभिव्यक्ति की सहजता में सहज प्रवाहित ये शब्द प्रवाहमान हैं। इससे कवयित्री की सांसारिक जटिलताओं-झंझावातों से मुक्त जीवन की परिकल्पना को समझा जा सकता है। समझिए इन पंक्तियों को :-

''वह कितनी बार रोई थी
पता नहीं
वह कितनी बार हँसी थी
पता नहीं
पर
उसकी उदासी से
एक संबंध सा था जैसे मेरा भी।''

(कैमियल के लिए पृ.125)

''मोनोलिथ
रात में जरूर उदास होता होगा
मैं भी हूँ उसे याद कर
न जाने क्यों
सन्नाटा बोलता है उसमें
अकेलापन खोलता है उसमें''

(मेघालय में मोनोलिथ, पृ. 127)

नदी मानवीय सभ्यता-संस्कृति का आधार है। वह सिर्फ प्राकृतिक संसाधन ही नहीं है, बल्कि हमारी जिंदगी का ऑक्सीजन भी है। वर्तमान में 'नदी को जानो' अभियान-अनुसंधान चल रहा है। क्यों? इसीलिए कि आज सिर्फ मानवीय जीवन ही संकट में नहीं है, बल्कि पूरी सृष्टि संकट में आ गई है। 'अनुभूतियों की देह' कविता नदी को अनुभूत करने की कविता है। यह 'देह से देश' तक की अनुभूति है, जिसमें 'नदी' बनने की चाह है। वस्तुतः देखा

जाए तो जीवन तो नदी ही है। नदी बहती है तो जिंदगी चलती है। नदी सूख जाती है तो जिंदगी संकट में होती है। इस संकट को महसूस करते हुए उसे एक अभियान के रूप में आकार देना वंदना की काव्य-संवेदना है। यह कविता मूक-बधिर, वंचित मानव की वाणी बनती है। यह संग्रह भी उन्हीं को समर्पित है। उन्हीं के शब्दों में :-

''सुन सको तो सुन लो
जो न कर सके प्रायश्चित
प्रार्थना से पहले
कर चुके जो प्रयाण
उनके हित मेरी वाणी एक अभियान।
जो न हो सकी सुघड़ ?
ऐसी अनगढ़ जीवितात्माओं को
मेरी वाणी एक प्रणाम
मृत्यु के नृत्यावर्तन में
मेरी वाणी एक प्रहार
जिनके मुख जिह्वा नहीं
उनके हित यह उपहार।'' (पृ. 37)

इसी प्रकार इस संसार में जितने भी उपेक्षित मानव हैं, सब की अभिव्यक्ति को लेकर वंदना जी चलती हैं। यूँ कह सकते हैं कि उपेक्षित मानव की सेवा ही उनका ध्येय है। ऐसी ही हैं स्त्रियाँ जो सब कुछ करती हैं, लेकिन अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए। 'ये लड़कियां' कविता वर्तमान स्त्री-विमर्श की कविता है, जिसमें 'स्त्री' दूसरों के लिए घर-दरवाजा सब कुछ बनाती है, परंतु अपने लिए न कोई घर बनाती है और न ही खिड़कियाँ-दरवान रखती है, जिसमें वह स्वत्रंत चेतना के साथ आ-जा सकती है। लड़कियों के हुनर को वह विश्वकर्मा से भी बढ़ कर बताती हैं, जोकि एक वास्तविकता है। वे माँ,-बाप, भाई-बहन, पति, पुत्री-पुत्र सखी-सहेलियों आदि सबके लिए घर बनाती हैं, परंतु अपने लिए वह अपना घर नहीं पाती हैं, और न ही बनाती हैं। फिर भी वह जिंदा रहती हैं।

''वास्तव में, दूसरों को बनाने और अपने को
हजार बार मारने के बाद भी
कैसे जीवित रहती है लडकियाँ''
(ये लड़कियां- पृ. 98)

याद कीजिए, 'कत्यायनी' की कविता 'सात भाइयों के बीच में चम्पा'। स्त्रियाँ कितनी जीवट और संघर्षशील होती हैं। वंदना जी उस संजीवनी की तलाश करती हैं, जो लड़कियों को जीवन जीने की शक्ति देती है। इसीलिए वे लिखती हैं –

''मैं खोजना चाहती हूँ
उस अन्त:सलिता अमृत को
जिससे ये जीवन-रस भरती हैं
कभी न मुरझातीं और टूटती हैं
ये लडकियाँ।'' (ये लड़कियां- पृ. 98)

यह अमृत भारतीय सभ्यता-संस्कृति की जीवन-शक्ति है। ईश्वरीय विधान की 'माँ भारती' और 'बाबा' की कृपा है, जो हर भारतीयों को अंतत: उनके दरबार में जाना होता है, जिसकी चर्चा वे 'लोकतंत्र में देवता' कविता में करती हैं। ''इस देश का प्रत्येक नागरिक अपनी आकांक्षाओं के/ परिपूरण हेतु / करता है याचना / प्रभु के दरबार में'' (पृ. 39)। यही प्रभु वह अमृत है, जो जीवन-रस प्रदान करता है। जिसके दु:ख से दु:ख की घड़ी में भी मनुष्य जीवन जीना चाहता है। 'जो दु:ख से घबरा जाये, वह नहीं हिन्द की नारी।' वंदना जी के काव्य संग्रह में 'माँ' और 'बाबा' का बारंबार जिक्र है। यही 'माँ' और 'बाबा' उनकी शक्ति हैं, जिनकी वे आराधना करती हैं और अदम अटूट शक्ति पाती हैं।

भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इस बढ़ती प्रवृत्ति को रोकने के लिए व्यक्तिगत स्तर से सामूहिक स्तर तक का प्रयास किया जा रहा है। वर्तमान भाजपा सरकार ने कांग्रेस की नीतियों को भ्रष्टाचारी बताकर सत्ता से बेदखल किया। भ्रष्टाचार की विभिन्न प्रवृत्तियों-मानसिकताओं को उजागर करती है 'निगमानंद के लिए' कविता। निगमानंद का संघर्ष सिर्फ पर्यावरण, गंगा शुद्धिकरण, वृक्षारोपण अभिमान तक ही सीमित नहीं है। इस भौतिकतावादी दुनिया में खत्म हो रही जिंदगी को बचाना उनका लक्ष्य रहा है, परंतु उनकी इस आवाज को सुनने वाला कोई नहीं है। शह और मात के खेल की राजनीति में मूक-बधिर लोगों की आवाज को, उनके संघर्ष को वंदना जी के इन शब्दों से समझा जा सकता है:-

''गंगा माँ का यह अदना सा सिपाही
अपनी पतली काया से
पर्वत ठेल रहा था।'' (वरुणा का होना : 21-2)
....
माँ गंगा का वह सचेत सारथी
अंजुलि में जल भर
कच्छप, वन-प्रांतर समेत
पूरी पृथ्वी को बचाने चला गया।''

हर आंदोलन कुछ प्रश्न छोड़ जाता है तो कुछ जवाब भी दे जाता है। निगमानंद के आंदोलन भी इसी तरह का है, जो भ्रष्टाचार, प्रदूषण, कालाधन, शह-मात की राजनीति, पर्यावरण-संकट-संरक्षण आदि से संबंधित ढेरों प्रश्नों को छोड़ गए। क्या हम अपनी पीढ़ी के बारे में सचेत हैं? वंदना जी का संघर्ष, चिंतन एवं आत्मीयता इसका गहरा बोध कराता है। बोध कराता है उन सामाजिक आंदोलनों का, जो जिंदगी को बचाने का हर संभव प्रयास करता है। इसीलिए बार-बार उनके काव्य में यह तथ्य उभर कर सामने आ रहा है कि वह कैसे और किस प्रकार उन जिंदगी को बचा लें। द्रष्टव्य हैं ये पंक्तियाँ :-

''पल्लव में गंगाजल भर सोच रही
कैसे सिक्त करूँ
उस आंदोलन को
उस आत्मा को'' (पृ. 22)

वंदना जी की कविता में भारतीय देशज आधुनिकता की सभ्यता-संस्कृति निर्मित होती है। सतत निरंतर व्यवस्थित जीवन की आकांक्षा की संवेदना पैदा करती हैं उनकी कविताएँ। अव्यवस्थित को व्यवस्थित कर बेहतर बनाने की चाह उत्पन्न करती है। भारतीय पुरुष की मानसिकता को उजागर करती है 'हाशिया' कविता। एक व्यवस्थित जीवन के सौंदर्य को स्थापित करती है :-

''कितना मुश्किल है
एक अव्यवस्थित मानसिकता को
व्यवस्थित करना
बचाने की कोशिश करना हाशिए को
और पृष्ठ के हिस्से में चले जाना।'' (हाशिया : 17)

यह 'हाशिया' कौन है? यह एक (भारतीय) नारी है, जो न केवल सोच बदलती है, बल्कि 'मानुष' को भी बचाती है। वह किसी भी रूप में हो सकती है। माँ, बहन, पत्नी, प्रेमिका, दोस्त, किसी भी रूप में। नदी, झरना, तालाब, प्रकृति, देवी भी। सभ्यता-संस्कृति को बचाने का काम तो नारी की ही है, पुरुष तो कम ही है। 'वरुणा' ने बनारस ही नहीं, भारतीय संस्कृति को बनाया है, बचाया है और आगे बढ़ाया है।

'बुद्ध' और 'शिव' वरुणा के दोनों कछार पर स्थित हैं। दोनों ही भारतीय संस्कृति-सभ्यता के मूल में हैं। क्या कोई भी भारतीय अपनी संस्कृति-सभ्यता के मूल से अपरिचित और भटक सकता है? 'सत्य' विप्लव और 'निगमानंद के लिए' कविताओं को इसी कड़ी में देखा जा सकता है ।

समग्रत: यह कहा जा सकता है कि यह पुस्तक भारतीय सभ्यता-संस्कृति की गोद से निकलती संवेदना की वह धारा है, जिसमें मानवीयता और मानव जीवन के संकट को बचा लेने का प्रयत्न है। 'वरुणा' की नि:सृत भारतीय संस्कृति की संवेदना की धारा से आप्लावित वंदना जी का चिंतन, संघर्ष और आंदोलन गाँव-गली से लेकर अखंड भारत और संपूर्ण वसुंधरा को मानवीयता से सींचने का प्रयत्न है। यह संपूर्ण प्रक्रिया सिर्फ काव्य संवेदना से ही नहीं, बल्कि व्यक्तिगत और सामूहिक प्रयास से सफल भी हो रही है।

देशज आधुनिकता से भूमंडलीकरण के दौर में और दौड़ को नापने का अथक प्रयास है उनके कृतित्व और व्यक्तित्व में। अव्यवस्थित को व्यवस्थित कर बेहतर बनाने की चाह एवं शक्ति उत्पन्न करता है उनका यह काव्य-संग्रह। इसमें लोकल से ग्लोबल तक वोकल होने की भावना को भी महसूस किया जा सकता है। उनकी प्रार्थना और आकांक्षा दोनों ही मानव को संपूर्ण होने की है, उसी पूर्णता की ओर ले जाने की है। इसीलिए वह उनकी आवाज भी बनती हैं, अनुभूति और अभिव्यक्ति भी हैं। पूर्ण कुछ होता नहीं, सब कुछ पूर्णता की प्रक्रिया है और पूर्णत्व की यात्रा है। वंदना जी की रचनात्मक यात्रा ऐसी ही है। ❑

संदर्भ :

1. वन्दना झा, वरूणा का होना,अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश, 2015, पृ. 24
2. वही, पृ. 25
3. वही, पृ. 27
4. वही, छिन्नमस्तिका
5. वही, कैमियल के लिए, पृ.125
6. वही, मेघालय में मोनोलिथ, पृ. 127
7. वही, पृ. 37
8. वही, ये लड़कियां पृ. 98
9. वही
10. वही, पृ. 39
11. वही, वरूणा का होना : 2 1–22
12. वही, पृ. 22
13. वही, हाशिया : 17

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

किसान जीवन की त्रासदी का आख्यान : 'ढलती साँझ का सूरज'

प्रो. अंजु शर्मा थापा

प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा निदेशालय
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू-180006
7006067831
anjuthappa68@gmail.com

शोध सार :

भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ की संस्कृति गाँव में बसी हुई है, किंतु आज किसान का जीवन ही अनेक कठनाइयों से ग्रस्त है। वर्तमान दौर ने किसानों के समक्ष अनेक सवाल खड़े किए हैं। वैश्विकरण तथा भूमंडलीकरण के प्रभाव ने किसानों को आत्महत्या के लिए विवश कर दिया है। सरकार द्वारा बनाई गई योजनाओं का लाभ भी किसान पूरी तरह से नहीं उठा पाते हैं। कृषि किसान के जीवन का मूल आर्थिक साधन है, जिससे वह अपना जीवन यापन करता है। अपनी आर्थिक अभावग्रस्तता के चलते जब उसे कृषि के लिए उचित साधन उपलब्ध नहीं हो पाते, तब वह फसल अच्छी होने की उम्मीद में बैंक या महजनों से कर्ज लेता है। किसान की विडंबना मात्र कर्ज तक सीमित नहीं, बल्कि फसल अच्छी न होने पर कर्ज न चुका पाने का भय तथा अपनी इज्जत-प्रतिष्ठा खो जाने के डर से वह प्राय: आत्महत्या का वरण करता है। मधु कांकरिया कृत 'ढलती साँझ का सूरज' उपन्यास किसान जीवन की इसी त्रासदी को व्यक्त है। इस उपन्यास में महाराष्ट्र के लाखों किसानों द्वारा की गई आत्महत्याओं का उल्लेख लेखिका ने यथार्थ रूप से किया है।

बीज शब्द : आत्महत्या, शेतकरी, बाजारबाद, कर्ज, प्रतिष्ठा।

मूल आलेख :

धरती और किसान का संबंध अटूट है। किसान का अपनी जमीन से सर्वाधिक लगाव होता है। कृषि किसान के लिए व्यापार न होकर उसकी रोजमर्रा की जिंदगी का एक बड़ा हिस्सा है। उसके लिए किसानी ही जीवन यापन करने का साधन है। भारतीय संस्कृति के यदि किसी को दर्शन करने हों तो उसके गाँव के परिवेश से किए जा सकते हैं। *"भारतीय जीवन तथा सभ्यता का मूल स्रोत कृषि है और उसका विस्तार ग्राम जीवन में ही परिलक्षित होता है।"*[1] ज्यों-ज्यों सभ्यता का विकास हुआ त्यों-त्यों गाँव की जीवन शैली में भी बदलाव आया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात गाँव की उन्नति के लिए कई प्रयास किए गए, परंतु गाँव का किसान फिर भी अभावग्रस्त जीवन यापन करने के लिए विवश रहा। अभावों की सीमा जब बढ़ जाती है तो उसके पास आत्महत्या का विकल्प ही शेष रहता है और वह आत्महत्या कर लेता है।

''अन्नदाता अन्य दशा को प्राप्त हो रहा है। कृषि प्रधान देश में 'कृषि' जानलेवा क्यों है? एक समय था वह अपनी काली जमीन को 'माता' कहता था। आज ऐसा क्या हुआ है। वह किसान को ही लील रही है?... किसान आत्महत्या कर रहा है।''[2] गाँव में रहने वाला किसान प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से कृषि से जुड़ा है, जिससे उसका जीवन सरलता से व्यतीत होता है। परंतु आधुनिकीकरण एवं उदारीकरण ने किसान जीवन को झकझोर दिया है। नए-नए साधनों से किसान के व्यवसाय समाप्त हो गए तथा कर्ज लेकर जब वह कर्ज नहीं चुका पाता तो आत्महत्या का वरण कर लेता है।

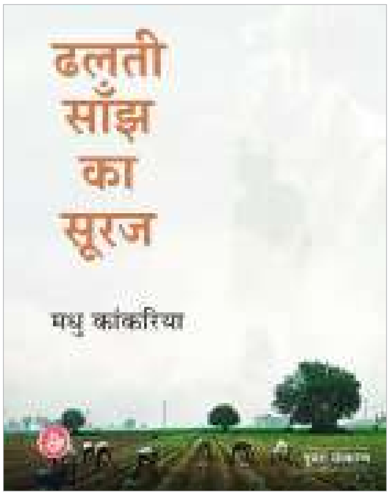

हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाओं में किसान जीवन की विविध छवियों का प्रामाणिक अंकन समय-समय पर हुआ है। प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं के माध्यम से किसान को साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उनका उपन्यास 'गोदान' इसका सशक्त प्रमाण है। उनके पश्चात भी हिंदी साहित्य में कई रचनाकारों ने अपनी लेखनी का माध्यम किसान जीवन को बनाया है, जैसे वीरेन्द्र जैन कृत 'पार' उपन्यास, मिथिलेश्वर कृत 'युद्धस्थल', विवेकी राय कृत 'नामिग्रामम', पंकज सूवीर कृत 'अकाल में उत्सव' आदि उल्लेखनीय हैं। इसी परिधि में देखा जाए तो मधु कांकरिया कृत 'ढलती साँझ का सूरज' भी किसान त्रासदी पर लिखा गया उपन्यास है। इस उपन्यास में महाराष्ट्र के लाखों किसानों द्वारा की गई आत्महत्याओं का उल्लेख लेखिका ने यथार्थ रूप से किया है। वे स्वयं उन क्षेत्रों में जाकर किसानों के परिवारों से मिलकर तथा उन किसानों के परिवारों को करीब से देखकर उनसे की गई बातचीत को उपन्यास में शब्दबद्ध करती हैं। उपन्यास का पात्र अविनाश जो स्विट्जरलैंड से जब अपनी माँ से मिलने भारत पहुँचता है तो भारत में हो रही किसान आत्महत्याओं के विभिन्न कारणों की खोज तथा उनका समाधान करने हेतु भारत में ही रुक जाता है।

इक्कीसवीं सदी के दौर ने किसानों के समक्ष अनेक सवाल खड़े किए हैं। वैश्विकरण तथा भूमंडलीकरण के प्रभाव ने किसानों को आत्महत्या के लिए विवश कर दिया है। सरकार द्वारा बनाई गई योजनाओं का लाभ भी किसान पूरी तरह से नहीं उठा पाते हैं। कर्जे की नोंक पर टँगे जीवन और व्यवस्था से हारे किसानों द्वारा आत्महत्या का उल्लेख करते हुए लेखिका का कहना है कि *''असफलता से किसान नहीं डरता, वह हिम्मत हार जाता है, जब वह अपनी क्षमता पर विश्वास खो देता है। जब उसे लगता है कि अब वह किसी काम का नहीं रह गया है।''*[3] अत: इस उपन्यास में लेखिका किसान जीवन की उस त्रासदी से पर्दा हटाती नजर आती हैं, जो इसके लिए जिम्मेवार है।

किसान को आर्थिक सहायता देने के लिए बैंक ने कई योजनाएँ बनाई हैं, परंतु जब बैंक से ऋण लेने की बात आती है तो किसान कई परेशानरियों का सामना करता है। लेखिका बाला साहब के माध्यम से किसानों को बैंक में आने वाली कठनाइयों का उल्लेख करती हैं कि *''भोले-भाले किसान डरते हैं वहाँ के वातारण को देखकर। कोई हिम्मत कर घुस भी गया तो इन सरकारी बैंकों में तो वहाँ की जटिल कानूनी प्रक्रिया से गुजरना हरेक के बस में नहीं होता। फिर वहाँ कर्जा जितना चाहो उतना मिलता नहीं और जो मिलता है उस पर भी 'क्यों चाहिए?' की तलवार। तो आधे-अधूरे कर्ज से काम बनता नहीं। सूदखोरों के पास जब जाना ही है तो पूरा ही क्यों न उनसे ही लिया जाए?''*[4] बैंक से यदि किसान कर्ज लेता भी है तो चुकाने में असमर्थ रहता है, तब बाला साहब अविनाश से बैंक वालों के निर्दयी व्यवहार का चित्रण करते हुए कहता है कि *''इन मल्टीनेशनल्स ने बैंकों में गुंडे पाल रखे हैं किसानों से वसूली के लिए, इन गुंडों ने किसान की कमजोर कड़ी पकड़ ली है। वह है उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा। बस उसी को तार-तार कर देते हैं ये। घर के बाहर नोटिस चिपका देना, खुले आम धमकाना इनके हथियार हैं।... अरुणगिरी*

भी इसी प्रकार फँसे थे इनके जाल में।''[5] बैंक तथा मल्टीनेशल्स कंपनी पहले तो किसान को सब्जभाग दिखाकर उन्हें अच्छी फसल होने का लालच देकर कर्ज लेने के लिए प्रेरित करते हैं तथा बाद में कर्ज न चुका पाने पर किसान की प्रतिष्ठा भंग करने में कोई प्रयास नहीं छोड़ते, जिसके कारण किसान आत्महत्या कर लेता है। अरुणगिरि की बात करते हुए बाला साहब कहते हैं, *''उनकी नाउम्मीदी, अवसाद और हताशा इस कदर बढ़ गई थी कि एक सुबह अपने ही खेत में कीटनाशक पी लिया।''*[6] बैंक द्वारा कर्ज का नोटिस दिलीप उद्राल की भी आत्महत्या का कारण बनता है। उस पर साढ़े लाख का कर्जा था, जो उसने मेधा बैंक प्राइवेट लिमिटेड से लिया था, उन पर 13 प्रतिशत ब्याज भी। जब फसल अच्छी नहीं हुई तो वह कर्ज नहीं उतार पाया तथा इज्जत मान प्रतिष्ठा खो जाने के भय से आत्महत्या कर लेता है। बाला साहब अविनाश को बताता है कि *''पाँच एकड़ जमीन थी दिलीप उद्राव जी के पास।.... एक दिन सब खत्म हो गया। वे हार गए। अपने हालात के मारे उन्होंने हारकर अंतिम उपाय के रूप में मौत को चुन लिया और खोमोश हो गए।''*[7]

किसानी किसान का जीवन है, पर जब वही नहीं रहती तो किसान का जीवन संकट में पड़ जाता है। उपन्यास का पात्र काशी विश्वेश्वर राव, जो 'प्रोगेसिव फार्मर ऑफ द इयर' अवार्ड से सम्मानित हो चुका था, उसकी आत्महत्या का कारण भी कर्ज ही बनता है, जो उसने बैंक और सोसाइटी से लिया था, *''उस पर बैंक का लोन था, कुछ सोसाइटी का भी कर्जा था। बड़ा जीवट बाला बन्दा था। उसने भी एक दिन अचानक कर ली आत्महत्या।''*[8] खेती किसान की जीवन शैली है, परंतु वह जमीन का कर्ज तथा जमीन खो देने के भय से ग्रस्त होकर आत्महत्या करना उचित समझता है।

किसान की जमीन उसके लिए कवच के समान है। यदि सुरक्षा का साधन चला जाए तो किसान का जीना दुष्कर हो जाता है। ऐसे में प्राय: सरकार की विवशता के चलते किसान को सहयोग न मिलना उसे और भी तनाव में डाल देता है। उपन्यास में कामथड़ी गाँव के कदंव की आत्महत्या का प्रसंग मामू द्वारा अविनाश को बताया जाता है, जिससे सरकार के जटिल व्यवहार का उल्लेख मिलता है तथा मुआवजा न मिलने के कारण वह अपने प्राणों की भेंट चढ़ा देता है। मामू कहते हैं, *''पिछले सप्ताह तो मेरे कूँ बोल रहा था कि कलेक्टर के ऑफिस गया था। मुआवजे के लिए लेकिन सिवाय जलील होने के कुछ हाथ न लगा।''*[9] शोभा के पति द्वारा कीटनाशक पी लेने से आत्महत्या करने पर सरकार कर्ज माफ करने से कतराती है, क्योंकि जमीन और कर्ज दिलीप के पिता के नाम पर थे। इसी प्रकार बाबुलतारा गाँव के आनंद कामड़े की आत्महत्या पर भी उसके परिवार को कुछ नहीं मिलता तथा अनंतपुर जिले की सुधामणि एक औरत जो किसान थी, उसकी आत्महत्या पर भी उसकी बेटी को कुछ नहीं दिया गया। *''क्योंकि वह औरत थी।''*[10] अत: सुधामणि एक औरत थी, इसलिए उसे कोई किसान नहीं मानता। एक औरत किसान की पत्नी हो सकती है, परंतु खुद किसान नहीं।

उपन्यास में लेखिका खाद्य पदार्थों की कीमतों में बढ़ोतरी तथा मंडी में फसल के कम दाम के माध्यम से भी किसानों की व्यथा को सामने लाती हैं। खाद्य पदार्थों की कीमतों में बढ़ोतरी से किसान को कोई लाभ नहीं होता तो वह विवशतापूर्ण किसानी से मजदूरी की ओर उन्मुख होता है। गोविंद जी किसान से मजदूर बनने का कारण बताते हुए अविनाश से कहते हैं कि *''कई शेतकरी (किसान) मजदूर बन गए। मजदूरी मिलती भी है तो घर से दूर बहुत दूर... । आप ही देखिए प्रति एकड़ बीज का खर्चा है छह हजार रुपये। स्प्रे का खर्च आठ हजार रुपये। तीन हजार खाद का खर्च।''*[11] फसल की लागत में बढ़ोतरी किसान जीवन को कर्ज की ओर उन्मुख करती है। मंडी में फसल के कम रेट मिलने से किसान की दयनीय स्थिति हो जाती है तथा वह कर्ज चुका पाने में असमर्थ रहता है। मामू का इस विषय में कहना है कि, *''समर्थन मूल्य तो आज तक घोषित हुए नहीं और मंडी में जो रेट खुले वे बेहद कम थे। दो बार मंडी गया कदंब, पर औने-पौने में बेचने की हिम्मत न हुई।''*[12]

स्पष्ट है मंडियों में कम कीमत पर किसान से फसल लेकर उन्हें आर्थिक रूप से ऊपर उठने ही नहीं दिया जाता।

ऐसे में उनकी आर्थिक स्थिति कैसे सुधर सकती है इस बात पर भी लेखिका पाठक वर्ग का ध्यान आकर्षित करती हैं। वे गोविद जी के माध्यम से किसानों की आत्महत्या के कारणों से अविनाश को परिचित करवाती हैं कि *''जेनेटिकली मॉडिफाइड कपास के बीज महँगी खाद और कीटनाशक को इस्तेमाल करने के भारी ब्याज पर कर्जा लेने वाला शेतकरी व्यापारियों, महाजनों, कंपनियों और बैंकों के खुले जबड़ों में फँस जाता है, जो बुआई के पहले उनके सर पर खड़े रहते हैं और फसल कटाई के बाद उन पर टूट पड़ते हैं।''*[13] इस प्रकार किसान की आत्महत्या के पीछे उपरोक्त सब कारण विद्यमान हैं। सरकार द्वारा इन आत्महत्याओं के प्रति कुछ न कर पाने की पीड़ा भी उपन्यास में चित्रित हुई है। मामू कहते हैं कि *''सच्चाई तो यह है कि यह आत्महत्या नहीं, राज्य द्वारा की गई हत्या है। आज सरकार, व्यवस्था, बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ, बैंक, न्यायालय, सूदखौर, साहूकार सभी शामिल हैं किसान को उजाड़ने में।''*[14] यहाँ लेखिका किसानों की आत्महत्या के विविध कारकों का उल्लेख करती हैं, वहीं उसके समाधान की ओर भी संकेत करती हैं। अविनाश द्वारा कामथड़ी गाँव में सूखे तालाब को चौड़ा करके वर्षा का पानी इकट्ठा करने से उस गाँव की फसल उगाने की क्षमता बढ़ती है। वही गाँव में सड़क बनवाना तथा नहर बनवाना आदि को उपयुक्त मानती हैं। सिंचाई के उपरांत साधनों का अभाव, सड़कें न होना आदि कारण हैं, जिनके अभाव में किसान को खेती करने में कई समस्याओं को झेलना पड़ता है, परंतु असली कारण लागत मूल्य के हिसाब से किसानों को फसलों के दाम नहीं मिलना, फसलों पर यथोचित सब्सिडी का न मिलना, बहुराष्ट्रीय कपंनियों की लूट तथा बाजारवाद का दबाव भी है, जिस पर बात करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष :

अत: उपन्यास में किसान आत्महत्याओं की यथार्थ अभिव्यक्ति करते हुए लेखिका ने किसान द्वारा लिया गया कर्ज, जो वे बैंक या महाजनों से लेने के बाद चुका नहीं पाते हैं, उसे किसान आत्महत्या का कारण बताया है। यदि उनकी फसलों की लागत के अनुसार ही उन्हें मुनाफा भी मिल जाए तो उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार आएगा तथा आत्महत्या की प्रवृत्ति में कमी आएगी। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. डॉ. कुट्टे धनाजी सुभाष, हिंदी उपन्यासों में चित्रित कृषक जीवन, भूमिका से
2. डॉ. कुट्टे धनाजी सुभाष, हिंदी उपन्यासों में चित्रित कृषक जीवन, भूमिका से
3. मधु कांकरिया, ढलती साँझ का सूरज पृ. 62
4. वही, पृ. 62
5. वही, पृ. 60
6. वही, पृ. 62
7. वही, पृ. 53
8. वही, पृ. 56
9. वही, पृ. 132
10. वही, पृ. 53
11. वही, पृ. 66
12. वही, पृ. 132
13. वही, पृ. 87
14. वही, पृ. 134

सहायक ग्रंथ :

1. डॉ. शेख मोहसीन शेख रशीद, बीसवीं सदी के अंतिम दशक के उपन्यासों में ग्राम जीवन, पराग प्रकाशन, कानपुर, 2015
2. शुभ्रा सिंह, प्रेमचंद साहित्य में हाशिए का समाज, अनामिका पब्लिशर्स, 2014

पत्रिका :

1. सं. आशुतोष कुमार, संजीव कुमार, आलोचना, अप्रैल जून 2022, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

प्रेरणा

असम के शूरवीर महानायक लाचित बरफुकन

डॉ. नवकांत शर्मा

सहायक अध्यापक, हिंदी विभाग
गीतानगर कॉलेज, गुवाहाटी (असम)
8638281052

सार संक्षिप :

प्राचीन काल से ही असम रहस्यमय भौगोलिक अवस्थिति, देशप्रेम और सांस्कृतिक वैभव के लिए सुप्रसिद्ध है। विविध जाति-जनजातियों की महामिलन भूमि असम को प्राचीन काल में प्राग्ज्योतिषपुर और कामरूप नाम से भी ख्याति मिली थी। परवर्ती समय में आहोम राजवंश के शासन के समय से इस भूखंड को असम नाम से जाना गया। आर्य और आर्येतर संस्कृतियों के सम्मिश्रण से बनी असमीया जाति अपने स्वाभिमान और पराक्रम के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है। महाभारत के समय में प्राग्ज्योतिषपुर अधिपति भगदत्त ने विराट समर कुशलता का परिचय दिया था तो मुगल शासनकाल के समय आहोम सेनापति लाचित बरफूकन ने भी देश रक्षा के लिए अदम्य साहस का परिचय दिया। इन्होंने पराक्रमी मुगल सेना को परास्त कर उनके विजय रथ को रोका और पूर्वोत्तर भारत को राजनैतिक अतिक्रमण से बचाया था। प्रस्तुत शोधालेख में लाचित बरफुकन की वीरता तथा समकालीन राजनीतिक परिस्थितियों पर चर्चा की जाएगी।

बीज शब्द :

देशप्रेम, वीरता, शराईघाट, रणनीति, स्वाभिमान।

0.1 भूमिका :

अदम्य साहस, विराट पराक्रम, उदात्त देशप्रेम और निपुण समर कुशलता से आक्रमणकारी मुगलों के धूल चटाने वाले महावीर लाचित बरफूकन असम के शूरवीर हैं। आहोम राज शासन की एक संकटपूर्ण घड़ी में वीर लाचित के कंधे पर असम की रक्षा करने तथा शत्रुओं को परास्त करने की जिम्मेदारी सौंपी गई थी। सन 1671 की निर्णयक लड़ाई में महापराक्रमी मुगल फौज को परास्त कर अपनी जन्म भूमि की रक्षा की थी। इसलिए वे असमीया जाति के लिए गर्व और प्रेरणा के स्रोत हैं। लाचित बरफुकन की वीरता, त्याग और स्वदेशप्रेम चिरस्मरणीय रहेगा।

02. विश्लेषण एवं निर्वचन :

02.1 जन्म, वंश परिचय और शिक्षा-दीक्षा :

इतिहास को बदलने वाले, जाति को दिशा देने वाले और लोगों में देश प्रेम जगाने वाले लाचित बरफुकन का जन्म 24 नवंबर, 1622 को गढ़गांव में हुआ था।

आहोम राज्य के वरिष्ठ कार्यवाहक मोमाई तामुली बरबरुवा के सर्व कनिष्ठ पुत्र के रूप में लाचित का जन्म हुआ था। लाचित को प्राथमिक शिक्षा घर में ही प्राप्त हुई थी। आहोम शास्त्र, हिंदू दंडनीति, अर्थशास्त्र के अतिरिक्त अस्त्र शिक्षा और समर कला का ज्ञान भी बचपन में ही प्राप्त हुआ था। इसके अलावा आहोम रीति-रिवाज और परंपरा की भी शिक्षा प्राप्त हुई थी।

02.2 लाचित को बरफुकन का सम्मान :

प्रथमावस्था में लाचित को आहोम प्रशासन में तामुली, घोड़ा बरुवा, दुलीया बरुवा, शिमलुगुरीया फुकन, दोला काषरीया बरुवा आदि पदों पर नियुक्ति मिली थी। उनकी कर्म निपुणता, ईमानदारी और शक्तिशाली व्यक्तित्व ने तत्कालीन शासक स्वर्गदेव चक्रध्वज सिंह का ध्यानाकर्षित किया था। सन 1667 में स्वर्गदेव ने लाचित को बरफुकन यानी मुख्य सेनापति के रूप में नियुक्ति प्रदान की थी।

02.3 युद्ध की तैयारी, देश से मामा बड़ा नहीं :

बरफुकन नियुक्त होने के तुरंत बाद लाचित बरफुकन ने मुगलों द्वारा अधिकृत इलाकों को मुक्त करने के लिए कदम उठाया। 20 अगस्त, 1667 को आहोम सेना ने दो वर्गों में विभाजित होकर बाहबारी, काजलीगढ़ आदि पर अधिकार जमाया। इसके बाद 2 नवंबर, 1667 में आहोम सेना ने इटाखुलि और गुवाहाटी किले को अपने अधिकार में लिया। जब दिसंबर, 1667 को मुगल सम्राट औरंगजेब को इस बात का पता चला, तब उसने राजा रामसिंह के नेतृत्व में विशाल फौज भेजी। लाचित ने अपने इलाके को सुरक्षित रखने के लिए अभेद्य रणनीति बनाई। उन्होंने मुगलों के संभाव्य आक्रमण को नाकाम करने के लिए गुवाहाटी, अमीनगांव के पास एक गढ़ (किला) निर्माण की जिम्मेदारी

अपने मामा को दी। पर रात को निर्माण कार्य धीमी गति से होने के कारण लाचित को बड़ा क्रोध आया और अपने मामा के सिर को काट डाला और कहा, 'देश से मामा बड़ा नहीं।' लाचित की यह उक्ति सबके लिए बड़ी प्रेरणादायक है।

02.4 शराईघाट का निर्णायक युद्ध और अपराजित लाचित बरफुकन :

सन 1671 में मुगल सेनापति रामसिंह के साथ आहोम सेनापति लाचित बरफुकन के नेतृत्व में शराईघाट में भीषण लड़ाई हुई। थलसेना, नौसेना, घुड़सवार गोलंदाज सेनाओं ने बड़ी बहादुरी से लड़ाई लड़ी और आहोम पक्ष को विजय प्राप्त हुआ। युद्ध के बीच चक्रध्वज सिंह का निधन हुआ। फिर भी लाचित ने अपने देश को शत्रुओं से बचाकर नया इतिहास रच डाला। साथ ही मुगल के राजनीतिक और सामरिक अतिक्रमण का भी मजबूती के साथ प्रतिरोध किया। खुद रामसिंह ने भी प्रशंसा करते हुए कहा था, 'धन्य राजा, धन्य मंत्री, धन्य सेनापति धन्य देश।'

0.3 स्थापनाएँ :

(क) महावीर लाचित बरफुकन ने मुगलों के राजनीतिक और धार्मिक अतिक्रमण को बहादुरी से रोका था।

(ख) मुगलों का दक्षिण-पूर्व एशिया अभियान का स्वप्न साकार हो नहीं पाया।

(ग) देशप्रेम, त्याग, वीरता और रणनीति का नया आदर्श स्तंभ सबके सामने प्रस्तुत हुआ।

(घ) नई पीढ़ी को स्वदेशप्रेम और समर कुशलता के लिए प्रेरणा मिली।

(ङ) राष्ट्रीय स्तर पर भी लाचित बरफुकन की प्रासंगिकता उन्मोचित हुई।

04. उपसंहार :

स्वाभिमानी लोगों और जाति के लिए अपने अस्तित्व और स्वतंत्रता का महत्व बहुत ज्यादा है। भारत वर्ष के इतिहास के पन्नों में स्वाभिमानी जातियों के पराक्रम की कहानी स्वर्णाक्षरों में दर्ज है। राजपूतों के लिए महाराणा प्रताप और मराठाओं के लिए छत्रपति शिवाजी महाराज का जो सम्मान और स्थान है, असमीया लोगों के लिए भी लाचित बरफुकन का वही सम्मान और स्थान है। लाचित बरफुकन ने यह भी साबित किया था कि सिर्फ शस्त्रबल और विशाल सेना से ही विजय प्राप्त नहीं होती। कुशल रणनीति, भौगोलिक ज्ञान, अतुलनीय वीरता और सच्चे देशप्रेम से ही जीत हासिल करना संभव है। राष्ट्रीय स्तर पर लाचित बरफुकन की वीरता, दूरदर्शिता और स्वदेशप्रेम के बारे में और अधिक चर्चा होनी जरूरी है। लाचित बरफुकन नयी पीढ़ी के लिए आदर्श और प्रेरणा हैं। अतः इस महान शूरवीर के जीवन और कर्मों पर शोध-कार्य होना चाहिए, क्योंकि महावीर लाचित बरफुकन की समस्त जीवन परिक्रमा ही हमारे लिए प्रेरणास्पद और अतुलनीय है। ❑

ग्रंथ सूची :

1. भूयाँ, सूर्यकुमार : बुरंजीर वाणी
2. अहमद, जैसमिन आरा : अजेय वीर लाचित बरफूकन
3. शर्मा, कन्दर्प (संपा) : कामरूप ज्योति
4. बरा, ध्रुवज्योति : अन्वेषण
5. दले, बसंतकुमार (संपा) : असमर जनगोष्ठी एटि परिचय
6. शर्मा, नवीन चंद्र : भारतर उत्तर-पूर्वांचलर लोक-संस्कृति
7. गगै, लीला : असमर संस्कृति

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

चिंतन

हिन्दी साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण

प्रो. कंचन शर्मा

हिंदी विभाग, मणिपुर केंद्रीय विश्वविद्यालय
संप्रति - विजिटिंग प्रोफेसर
(आई.सी.सी.आर., हिन्दी चेयर)
भारत विद्या विभाग
सोफिया विश्वविद्यालय, बुल्गारिया
91-9434308852

साहित्य के साथ प्रकृति और पर्यावरण का संबंध अन्योन्याश्रित है । सांख्य दर्शन प्रकृति के 25 तत्वों का उल्लेख करता है और शैव दर्शन 36 तत्वों का जिनमें पुरुष, प्रकृति, बुद्धि, अहंकार के साथ *पंच-इंद्रिय, पंच कर्मेन्द्रिय, पंच तन्मात्राएं एवम् पंचभूत*[1] को दोनों दर्शन समान रूप से स्वीकार करता है । अर्थात् *'प्राकृतिक - प्रकृति' और 'मानव - प्रकृति' से इस जगत का निर्माण होता है ।*[2] दूसरी तरफ पर्यावरण के वायुमंडल, स्थलमंडल (मिट्टी, चट्टानें), जलमंडल (जल) और जीवमंडल (जीव-जन्तु एवम् अन्य जैविक घटक) मूल तत्व हैं। अर्थात् *हमारे चारों ओर का आवरण, जिनमें पृथ्वी पर मौजूद जीवित और निर्जीव दोनों प्रकार के जीव-जन्तु शामिल हैं*[3] पर्यावरण का निर्माण करते हैं। अत: स्पष्ट है कि साहित्य-सृजन विश्व की किसी भाषा में प्रकृति और पर्यावरण को दरकिनार कर संभव नहीं है। प्रेमचंद जब कहते हैं - *'साहित्य में प्रभाव उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि वह जीवन की सच्चाइयों का दर्पण हो। फिर आप उसे जिस चोखटे में चाहे लगा सकते हैं - चिड़े की कहानी और गुलोबुलबुल की दास्तान भी उसके लिए उपयुक्त हो सकती है। और फिर हम जीवन में जो कुछ देखते हैं, या जो कुछ हम पर गुजरती है, वही अनुभव और वही चोटें कल्पना में पहुंचकर सहित्य सृजन की प्रेरणा करती हैं।'*[4] - तो साहित्य के उद्देश्य के साथ प्रेमचंद अप्रत्यक्ष रूप से साहित्य-प्रकृति और पर्यावरण के सूक्ष्म संबंध की ओर भी संकेत कर रहे हैं ।

'मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगम: शाश्वती समा: ।
यत्क्रौंचमिथुनादेकम् अवधी: काममोहितम् ॥'

प्रकृति (तमसा नदी के किनारे स्निग्ध, स्वच्छ, निर्मल वातावरण में क्रौंच पक्षी का प्रेममग्न होना) और पर्यावरण (व्याघ्र द्वारा रमणीय वातावरण में काममग्न पक्षी युग्म का वध / प्राकृतिक संतुलन में बाधा देना) की इस घटना से उत्पन्न पीड़ा से ही महर्षि वाल्मिकी के मुख से यह श्लोक फूटा था और फिर महान ग्रंथ 'रामायण' की रचना हुई। कहने का आशय यह कि वाल्मिकी, वेदव्यास से चलकर चन्दवरदाई, विद्यापति, कबीर, तुलसीदास, रहीम, बिहारी, भारतेन्दु हरिश्चंद्र, सोहनलाल द्विवेदी, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरि औध', राम वृक्ष बेणीपुरी, महावीर प्रसाद द्विवेदी, हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्रेमचंद, प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी, भवानीप्रसाद मिश्र, केदारनाथ अग्रवाल, हरिवंशराय 'बच्चन', दिनकर, अज्ञेय, शमशेर, मुक्तिबोध

आदि हिन्दी का शायद ही कोई रचनाकार होगा, जिनकी रचना प्रकृति से विरत हो। छायावाद में तो प्रकृति के सूक्ष्म सौन्दर्य की अभिव्यक्ति ने *''छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है।''*[5] की परिभाषा ही बना दी। प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, उत्तर-आधुनिकतावाद और समकालीन दौर तक प्रकृति और पर्यावरण हिन्दी साहित्य का अभिन्न अंग हैं। भवानीप्रसाद मिश्र, केदारनाथ अग्रवाल ही नहीं अज्ञेय और शमशेर ने भी प्रकृति का मानवीकरण अपनी रचनाओं में किया है। अतः प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और उत्तर-आधुनिकतावाद तक प्रकृति और पर्यावरण साहित्य-सृजन के महत्वपूर्ण अंग बने रहते हैं।

महत्वपूर्ण बात यह है की आधुनिककाल में सत्तर के दशक के बाद से 'प्रकृति-चित्रण' का स्वरूप हिंदी साहित्य में बदलता है और 'पर्यावरण चिंता और चिंतन' का विषय बनकर समकालीन हिन्दी साहित्य लेखन में 'पर्यावरण विमर्श' को जन्म देता है। 290 वर्ष पहले 18 वीं शती के आरंभ में 'बिश्नोई आन्दोलन' ने जिस 'पर्यावरण-संरक्षण' की बिगुल बजाई थी, वह 1973 में 'चिपको आंदोलन' के रूप में फिर सामने आयी। आधुनिक दौर में विकास के गणित ने प्रकृति का अंधाधुन शोषण किया है अपनी अस्मिता की लड़ाई के साथ प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा के निमित्त 'जल, जंगल, जमीन' के संरक्षण और दोहन के विरुद्ध 'हिन्दी साहित्य' में 'आदिवासी साहित्य' का स्वर भी विकसित हुआ। महुआ माजी का 'मरंग गोड़ा निलकंठ हुआ', ग्रेस कुजूर का 'कलम को तीर होने दो', निर्मला पुतुल का 'नगाड़े की तरह बजते शब्द' जैसी रचनाएँ सामने आई। निर्मला पुतुल लिखती है - ''हक की बात न करो मेरी बहन, मत मांगो पिता की संपत्ती पर अधिकार / जिक्र मत करो पत्थरों और जंगलों की अवैध कटाई का / सूदखोरों और ग्रामीण डाक्टरों के लूट की चर्चा ना करो / बहन / भरी पंचायत में डायन करार कर दण्डित की जाओगी ...''[6]

समकालीन साहित्य में पर्यावरण चिंता और चिंतन एक प्रमुख विषय के रूप में उभरा है। संजीव की 'रह गई दिशाएं इसी पार', 'सावधान नीचे आग है' एस आर हरनोट का 'हिडिंबा', नासिरा शर्मा का 'कुइयाँजान' कुसुम कुमार का 'मीठी नीम', भगवतीशरण मिश्र का 'लक्ष्मण रेखा' आदि महत्वपूर्ण उपन्यास हैं। अप्पिको आंदोलन, साइलेंट वैली आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन का प्रभाव न केवल सामाजिक स्तर पर बल्कि साहित्यिक स्तर पर भी पड़ा। भवानीप्रसाद मिश्र लिखते हैं -

कहीं नहीं बचे हरे वृक्ष ,
न ठीक सागर बचे हैं, न नदियां ,
पहाड़ उदास है और झरने लगभग चुप
आसमान में चक्कर काटते, पक्षियों के दल नजर नहीं आते
क्योंकि वे बनाते थे जिनपर घोंसले
वे वृक्ष कट चुके हैं या सूख चुके हैं
क्या जाने अधूरे और बंजर हम
अब किस बात के लिए रुके हैं
ऊबते क्यों नहीं इस तरंगहीनता
और रूखेपन से
उठते क्यों नहीं यों
कि भर दें फिर से धरती को
ठीक निर्झरों, नदियों, पहाडों
और वनों से॥

वन-वनस्पति का हमारे पारिस्थितिकी तंत्र में महत्वपूण स्थान है। औद्योगिकरण, महानगरों के जाल, कोयला, यूरेनियम जैसे खनिजों का उत्खनन जंगल को लीलते जा रहे हैं, जैविक संतुलन बिगड़ रहा है। ऑक्सीजन का कोष प्रभावित हो रहा है और दूषित भी । 2013 में आई 'केदारनाथ विपदा' के पीछे जंगलों की कटाई और पहाड़ पर घनी इमारतों का बेइंतेहा निर्माण भी एक बड़ा कारण माना गया। मंदिर के ठीक

पीछे स्थित छह किलोमीटर लम्बा चौराबाड़ी ग्लेशियर से पर्यावरण प्रदूषण के कारण 2004 में ही हिमस्खलन शुरू हो गया था, जो 2013 में 'केदारनाथ-प्रलय' का एक कारक भी बना। इस पर 2 अगस्त 2004 को दैनिक जागरण देहरादून में लक्ष्मीप्रसाद पंत की एक रिपोर्ट भी छपी थी : "अब केदारनाथ खतरे में, बम की तरह फटेगा चौराबाड़ी ग्लेशियर!" (from bhaskar.com-d) हिन्दी साहित्य में इस भयावह घटना की साक्षी डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' की दो कृति है, 2014 में प्रकाशित 'केदारनाथ आपदा की सच्ची कहानियां', इस कहानी संग्रह में कुल 21 कहानियां हैं, जो उस भयावह प्रलय के निजी अनुभव को रूपांतरित करके लेखक ने लिखी है। दूसरी पुस्तक है 'प्रलय के बीच' जो 2015 में प्रकाशित हुई है। यह डायरी, संस्मरण एवम् रिपोर्ताज का सम्मिलित रूप लिए हुए हैं। रमेश पोखरियाल 'निशंक' जी की यह कृति फणीस्वरनाथ 'रेणु' की 'ऋणजल-घनजल'(बिहार के बाढ़ और सूखे पर लिखी गई है) का भी स्मरण कराती है।

जंगल और जमीन के बाद प्रकृति और मनुष्य जीवन का महत्वपूर्ण जीवनदायीनि घटक है 'जल'। ऋषियों ने जल को 'अमृत' कहा है तो कवि केदारनाथ अग्रवाल ने नदी को सांस्कतिक चेतना की अभिव्यक्ति, जो भविष्य की भूमि की ओर संचरण करती है। समकालीन कविता में नदियों पर बहुत लिखा गया नागार्जुन, केदारनाथ सिंह, विनोद कुमार शुक्ल, राजेन्द्र उपाध्याय जैसे नाम उल्लेखनीय हैं। इसी प्रसंग में उल्लेखनीय हैं, गंगा को प्रदूषणमुक्त कराने के लिए उत्तराखंड में रमेश पोखरियाल 'निशंक' द्वारा चलाया गया 'स्पर्श गंगा अभियान' और 2021 में प्रकाशित खंडकाव्य 'मैं गंगा बोल रही हूँ'। 'हिन्दी साहित्य' और 'पर्यावरण चिंता-चिंतन' में 'निशंक' जी की यह कृति अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इस खंडकाव्य में कुल पंद्रह सर्ग हैं, जिनमें गंगा जी के धरती पर अवतरण से लेकर उनके गंगा सागर में मिल जाने तक की यात्रा का वर्णन है। भगीरथ की अथक तपस्या और प्रयास का वर्णन है। गंगा का मानवीकरण करते हुए जल प्रदूषण की भयावहता को सामने रखती है यह कृति और गंगा की संघर्ष-गाथा का वर्णन भी करती है। अंतिम पंद्रहवें सर्ग में माँ गंगे! अपनी पीड़ा व्यक्त करती है, जो हम मनुष्यों के कारण वे झेल रही हैं –

किन्तु वही दूषित कर जाते
माँ जो मुझको कहते हैं ।
कूड़ा-करकट बांध पोटली,
मुझमें बहने देते हैं॥
* * * * *
आज बहुत ही मैं उदास हूँ
मानव तुझसे निराश हूँ॥ [7]

'गंगा' जीवन का आधार है, इसमें उद्योगों के अवशिष्ट, लाशें, कूड़े जब फेंके जाते हैं, तब प्रदूषण बढ़ता है। नदियों पर बने बांध और जलवायु – प्रदूषण, वर्षा को भी प्रभावित करते हैं। न ठीक से बारिश होती है और न नदियों का जल ही स्वच्छ रह पाता है। माँ गंगा अपनी चिंता प्रकट करते हुए मानव को सचेत भी करती हैं–

तप्त धरा के कारण यूं ही,
जल-संचय नहीं हो पाता।
रहता है जितना भी मुझमें
है वह प्रदूषित हो जाता॥
नहीं संभल पाए यदि इस क्षण,
तो निश्चित ही दुर्गति है।
आनेवाली पीढ़ी का तो
जीवन नाश ही नियति है॥' [8]

मनुष्य ने विकास के नाम पर सृष्टि को आज विभिन्न प्रकार से प्रदूषित किया है, प्राकृतिक संपदा का दोहन फिया है। आज ओजोन लेयर में छेद जल-संकट, ग्लेशियर स्खलन, और ग्लोबल वार्मिंग अति चिंता का विषय बने हुए हैं। इस सृष्टि के जीव-जन्तु, पेड़-पौधे, हवा-मिट्टी मनुष्यों द्वारा नहीं बनाए गए, परंतु मनुष्य का जीवन इनसे और इनपर निर्भर है। मनुष्य यदि अपने आचरण से, कर्म-कृत्य से इन्हें नुकसान पहुंचता है तो स्वयं अपने जीवन के अस्तित्व को संकट में डालता है 'रामचरितमानस' के 'किष्किंधाकाण्ड' में स्वयं श्री राम के मुख से गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहलवाया है –

'छिति, जल, पावक, गगन, समीरा।

पञ्च-रचित अति अधम सरीरा॥''[9]

अर्थात हमारा शरीर भूमि, जल, अग्नि, आकाश, वायु इन पंचतत्त्वों से बना है। इस मानस-कथन का प्रसंग तो अलग है ध्वन्यार्थ यह है कि हमारा शरीर जिन पंचतत्त्वों से बना है उन्हीं पंचतत्त्वों से पर्यावरण भी निर्मित है। यदि कोई भी तत्त्व कमजोर य असंतुलित हुआ तो हमारा शरीर प्रभावित होगा। डॉ 'निशंक' के शब्दों में –

'हे मानव! जग जाओ अब तुम,
दुर्वृत्तियों का सुधार करो ।
सन्मार्ग पर आरूढ़ हो कर,
माँ गंगा का उद्धार करो॥[10]

'साहित्य अपने काल का प्रतिबिंब होता है।'[11] पंचतंत्र की कहानियाँ हों कि लोकगीत, आयुर्वेद हो कि दर्शनशास्त्र, हिन्दी साहित्य प्रकृति की रागात्मक संवेदना से अपनी यात्रा प्रारंभ कर समकालीन दौर में अपने सभी रूपों में जीवन की आलोचना करते हुए 'पर्यावरण चिंता', 'पर्यावरण चिंतन' और 'पर्यावरण विमर्श' के साथ समाज के प्रति अपने दायित्वों का न्यायपूर्ण निर्वहन करती है। ❑

संदर्भ :

1. शैव दर्शन : पंचभूत – आकाश, वायु, तेज (अग्नि), आप (जल), भूमि
2. प्राकृतिक प्रकृति – पंचभूत। ... मानव प्रकृति – मन, बुद्धि, अहंकार
3. www.geeksforgeeks.org>ho
4. प्रेमचंद – 'साहित्य का उद्देश्य'
5. डॉ. नगेंद्र
6. निर्मला पुतुल – नगाड़े की तरह बजते शब्द, पृ.-24
7. रमेश पोखरियाल 'निशंक' – मैं गंगा बोल रही हूँ – पृ.-189
8. वही – पृ.-191
9. गोस्वामी तुलसीदास – रामचरितमानस – किष्किंधाकांड – Pg-760
10. रमेश पोखरियाल 'निशंक' 'मैं गंगा बोल रही हूँ -पृ.-192
11. प्रेमचंद – 'साहित्य का उद्देश्य'

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

शिक्षा-दीक्षा

विद्यालयी प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के क्षेत्र में अनुसंधान की एक रूपरेखा

डॉ. चंद्रशेखर पाण्डेय

असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग
महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा, महाराष्ट्र-442001
87985532623
yogeshchandra.p@gmail.com

डॉ. पतंजलि मिश्र

एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षा-शास्त्र विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश-211002
8005381938
patanjali8@gmail.com

शोध सारांश :

यह शोध आलेख विद्यालयी प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के क्षेत्र में अनुसंधान की एक रूपरेखा प्रस्तावित करता है । प्रच्छन्न पाठ्यचर्या से तात्पर्य उन अनकहे, अनौपचारिक और अंतर्निहित संदेशों से है, जो विद्यार्थियों को उनकी शिक्षा के दौरान प्रदान किए जाते हैं। इस अध्ययन में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के संप्रत्यय के बारे में शैक्षिक अध्ययनों का एक विश्लेषण किया गया है। इस विश्लेषण के आधार पर प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के क्षेत्र में प्रयुक्त होने वाली विधियों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के भावी अध्ययनों में किस प्रकार के शोध प्रश्न पूछे जा सकते हैं उनका वर्णन किया गया है। तत्पश्चात यह अध्ययन संक्षेप में इस क्षेत्र में संभावित अनुसंधानों के लिए शोध प्रणालियों पर विमर्श प्रस्तुत करता है साथ ही साथ विभिन्न मात्रात्मक एवं गुणात्मक उपागमों हेतु उपयुक्त शोध अभिकल्पों एवं आँकड़ा संग्रहण तकनीकों पर विवरण प्रस्तुत किया गया है।

मुख्य शब्द :

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या, विद्यालय, अनुसंधान, अभिकल्प, आँकड़ा संग्रहण।

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या :

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या से तात्पर्य उन अनकहे, अनौपचारिक और अंतर्निहित संदेशों से है, जो विद्यार्थियों को उनकी शिक्षा के दौरान प्रदान किए जाते हैं। ये संदेश अक्सर विद्यार्थियों द्वारा विकसित मूल्यों, विश्वासों और दृष्टिकोणों को प्रभावित करते हैं और उनके व्यक्तिगत एवं सामाजिक विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकते हैं।

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की अवधारणा को पहली बार फिलिप जैक्सन ने अपनी पुस्तक 'लाइफ इन क्लासरूम' (1968) में प्रस्तुत किया था, जहाँ उन्होंने तर्क दिया कि विद्यालय न केवल अकादमिक विषयों को पढ़ाते हैं, बल्कि सामाजिक मानदंडों, मूल्यों और अपेक्षाओं को भी सिखाते हैं। इसके बाद ही इस अवधारणा का शिक्षकों और विद्वानों द्वारा व्यापक रूप से चर्चा और अध्ययन किया गया है।

एनीऑन (1980) के अनुसार, विद्यालयों का प्रच्छन्न पाठ्यचर्या अक्सर उस

समाज के प्रमुख सांस्कृतिक मूल्यों और मानदंडों को दर्शाती है, जिसमें वे स्थित हैं। अपने अध्ययन में एनीऑन ने पाया कि काम-काजी वर्ग के विद्यालयों की पाठ्यचर्या में आज्ञाकारिता और अनुरूपता पर जोर देने की प्रवृत्ति होती है, जबकि अधिक समृद्ध क्षेत्रों के विद्यालयों में रचनात्मकता और स्वतंत्रता पर जोर दिया जाता है।

इसके अलावा, प्रच्छन्न पाठ्यचर्या लैंगिक रूढ़िवादिता और पूर्वाग्रहों को भी सुदृढ़ कर सकती है। लैराबी और मर्फी (2017) का तर्क है कि पाठ्यपुस्तकों, शिक्षक व्यवहार और कक्षा की गतिविधियों में दिए गए सूक्ष्म संदेशों के माध्यम से कक्षा में लिंग भूमिकाएँ और अपेक्षाएँ अक्सर प्रबल होती हैं। ये संदेश समाज में लैंगिक असमानताओं को स्थायी बनाने में योगदान दे सकते हैं।

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू भावनात्मक बुद्धि और सामाजिक कौशल का विकास है। जोन्स और जोन्स (2016) के अनुसार, विद्यालय न केवल अकादमिक विषयों को पढ़ाने के लिए जिम्मेदार हैं, बल्कि विद्यार्थियों को जीवन में सफलता के लिए आवश्यक सामाजिक और भावनात्मक कौशल विकसित करने में मदद करने के लिए भी जिम्मेदार हैं। इन कौशलों में संचार, सहयोग, समस्या समाधान और संघर्ष समाधान शामिल हैं।

निष्कर्षत: प्रच्छन्न पाठ्यचर्या विद्यार्थियों के मूल्यों, विश्वासों और दृष्टिकोणों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षकों और नीति निर्माताओं को उन अंतर्निहित संदेशों के बारे में पता होना चाहिए, जो विद्यार्थियों को दिए जा रहे हैं और एक ऐसे पाठ्यचर्या की योजना बनानी चाहिए, जो समावेशी एवं न्यायसंगत हो तथा आवश्यक सामाजिक एवं भावनात्मक कौशल के विकास को बढ़ावा देती हो।

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का तात्पर्य विद्यालयों द्वारा बताए गए अनकहे और निहित संदेशों से है, जो औपचारिक शैक्षणिक पाठ्यचर्या का हिस्सा नहीं हैं। इन निहित संदेशों में सामाजिक मानदंड, मूल्य और अपेक्षाएँ शामिल हो सकती हैं, जो विद्यार्थियों के दृष्टिकोण और व्यवहार को प्रभावित करती हैं (जैक्सन, 1968)। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की अवधारणा का शिक्षकों और विद्वानों द्वारा व्यापक रूप से अध्ययन और चर्चा की गई है, और विद्यार्थियों के मूल्यों और विश्वासों को आकार देने में इसे एक महत्वपूर्ण कारक पाया गया है।

विभिन्न क्षेत्रों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया गया है, जिसमें से एक सामाजिक वर्ग के संदर्भ में है (एनीऑन 1980)। लैंगिक रूढ़िवादिता और पूर्वाग्रह एक अन्य क्षेत्र है, जिसमें प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया गया है (लैराबी और मर्फी 2017)। इन क्षेत्रों के अलावा, नस्ल और जातीयता, धर्म और यौनिकता के मुद्दों के संबंध में भी प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया गया है। इन अध्ययनों में पाया गया है कि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या इन पहचानों से संबंधित रूढ़िवादिता और पूर्वाग्रहों को सुदृढ़ कर सकते हैं, जो की समाज में प्रणालीगत असमानताओं में योगदान कर सकते हैं।

अत: प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की अवधारणा उन निहित संदेशों को समझने के महत्व पर प्रकाश डालती है, जो विद्यालयों में विद्यार्थियों को दिए जा रहे हैं। शिक्षकों और नीति निर्माताओं को इन संदेशों के बारे में पता होना चाहिए और एक ऐसे पाठ्यचर्या की योजना बनानी चाहिए, जो समावेशी, न्यायसंगत हो और आवश्यक सामाजिक एवं भावनात्मक कौशल के विकास को बढ़ावा देता हो।

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के अध्ययन की प्रासंगिकता :

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक, ऐतिहासिक और शैक्षणिक संदर्भों सहित कई अलग-अलग संदर्भों में प्रासंगिक है।

सामाजिक प्रासंगिकता : प्रच्छन्न पाठ्यचर्या सामाजिक संदर्भ में प्रासंगिक है, क्योंकि यह विद्यार्थियों के मूल्यों, विश्वासों और दृष्टिकोणों के विकास को प्रभावित कर सकता है। एनीऑन (1980) के अनुसार, प्रच्छन्न पाठ्यचर्या उस समाज के प्रमुख सांस्कृतिक मूल्यों और मानदंडों को प्रतिबिंबित करती है, जिसमें वे स्थित हैं। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करके, शिक्षक पूर्वाग्रहों और असमानताओं की पहचान कर उन्हें संबोधित कर सकते हैं, जो विद्यार्थियों के सामाजिक और भावनात्मक विकास को प्रभावित कर सकते हैं।

सांस्कृतिक प्रासंगिकता : प्रच्छन्न पाठ्यचर्या सांस्कृतिक संदर्भ में प्रासंगिक है, क्योंकि यह सांस्कृतिक रूढ़ियों और पूर्वाग्रहों को प्रतिबिंबित और सुदृढ़ कर सकती है। उदाहरण के लिए, लैराबी और मर्फी (2017) का तर्क है कि पाठ्यपुस्तकों, शिक्षक व्यवहार और कक्षा की गतिविधियों में दिए गए सूक्ष्म संदेशों के माध्यम से कक्षा में लिंग भूमिकाएँ और अपेक्षाएँ अक्सर प्रबल होती हैं। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करके शिक्षक सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों की पहचान कर सकते हैं एवं उन्हें संबोधित कर सकते हैं और अधिक समावेशी एवं विविध पाठ्यचर्या को बढ़ावा देने के लिए कार्य कर सकते हैं।

राजनीतिक प्रासंगिकता : प्रच्छन्न पाठ्यचर्या राजनीतिक संदर्भ में प्रासंगिक है, क्योंकि यह विद्यार्थियों के नागरिक और राजनीतिक मूल्यों के विकास को प्रभावित कर सकती है। उदाहरण के लिए, प्रच्छन्न पाठ्यचर्या विद्यार्थियों के राजनीतिक संदर्भ और भागीदारी की समझ को प्रभावित कर सकती है। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करके शिक्षक पूर्वाग्रहों और असमानताओं की पहचान कर उन्हें संबोधित कर सकते हैं, जो विद्यार्थियों के नागरिक और राजनीतिक विकास को प्रभावित कर सकते हैं।

आर्थिक प्रासंगिकता : प्रच्छन्न पाठ्यचर्या आर्थिक संदर्भ में प्रासंगिक है, क्योंकि यह विद्यार्थियों के आर्थिक मूल्यों और विश्वासों के विकास को प्रभावित कर सकता है। उदाहरण के लिए, प्रच्छन्न पाठ्यचर्या सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को प्रतिबिंबित और सुदृढ़ कर सकती है। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करके, शिक्षक पूर्वाग्रहों और असमानताओं की पहचान कर सकते हैं और उन्हें संबोधित कर सकते हैं, जो विद्यार्थियों के आर्थिक विकास को प्रभावित कर सकते हैं।

ऐतिहासिक प्रासंगिकता : प्रच्छन्न पाठ्यचर्या ऐतिहासिक संदर्भ में भी प्रासंगिक है, क्योंकि यह ऐतिहासिक पूर्वाग्रहों और असमानताओं को प्रतिबिंबित और मजबूत कर सकती है। उदाहरण के लिए, प्रच्छन्न पाठ्यचर्या नस्ल और जातीयता से संबंधित ऐतिहासिक रूढ़ियों को प्रतिबिंबित और सुदृढ़ कर सकती है। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करके, शिक्षक इतिहास में निहित पूर्वाग्रहों और असमानताओं की पहचान कर सकते हैं और उन्हें संबोधित कर सकते हैं।

अकादमिक प्रासंगिकता : प्रच्छन्न पाठ्यचर्या अकादमिक संदर्भ में प्रासंगिक है, क्योंकि यह विद्यार्थियों के शैक्षणिक कौशल और ज्ञान के विकास को प्रभावित कर सकती है। उदाहरण के लिए, प्रच्छन्न पाठ्यचर्या शैक्षणिक विषयों में विद्यार्थियों की समझ और समाज में उनके स्थान को प्रभावित कर सकता है। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करके, शिक्षक उन पूर्वाग्रहों और असमानताओं की पहचान कर सकते हैं और उन्हें संबोधित कर सकते हैं, जो विद्यार्थियों के शैक्षणिक विकास को प्रभावित कर सकते हैं।

इस प्रकार प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक, ऐतिहासिक और शैक्षणिक संदर्भों सहित कई अलग-अलग संदर्भों में प्रासंगिक है। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करके, शिक्षक पूर्वाग्रहों और असमानताओं की पहचान कर उन्हें संबोधित कर सकते हैं, जो विद्यार्थियों के विकास को प्रभावित कर सकते हैं तथा अधिक समावेशी एवं न्यायसंगत पाठ्यचर्या को बढ़ावा देने के लिए कार्य कर सकते हैं।

इस अध्ययन का उद्देश्य प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के क्षेत्र में अध्ययन हेतु एक सामान्य परिप्रेक्ष्य प्रस्तावित करना है, जिससे इस दिशा में संभावित शोध विमर्श हो सके।

साहित्य समीक्षा :

एनीऑन (1980) ने संयुक्त राज्य अमेरिका में विभिन्न प्रकार के विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि पाठ्यचर्या समाज के प्रमुख सामाजिक और आर्थिक मूल्यों को दर्शाती है। मैकनील और वालेंजुएला (2001) ने संयुक्त राज्य अमेरिका में उच्च गरीबी वाले विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि यह सामाजिक असमानताओं को मजबूत करती है और विद्यार्थियों की प्रेरणा और जुड़ाव को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। चुआ और इब्राहिम (2009) ने मलेशिया के माध्यमिक विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि यह लिंग और जातीय रूढ़िवादिता को कायम रखने में सहायक है और सामाजिक

असमानताओं को मजबूत करती है। लियू (2010) ने चीनी विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि यह सत्तावादी और सामूहिक मूल्यों को मजबूत करती है और विद्यार्थियों की रचनात्मकता और महत्वपूर्ण सोच को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। रामचंद्रन (1999) ने भारतीय विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि इसने लिंग और जाति के रूढ़िवादों को कायम रखा और सामाजिक असमानताओं को मजबूत किया। पाल और घोष (2012) ने भारतीय प्राथमिक विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या ने पारंपरिक मूल्यों को सुदृढ़ किया और महत्वपूर्ण सोच और रचनात्मकता को हतोत्साहित किया।

गोपालन और सेन (2015) ने भारतीय उच्च शिक्षा में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या अनुरूपता की संस्कृति को कायम रखा और स्वतंत्र सोच और रचनात्मकता को हतोत्साहित किया। नायर और पॉल (2018) ने भारतीय इंजीनियरिंग कॉलेजों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या अनुपालन और अनुरूपता की संस्कृति को मजबूत किया और महत्वपूर्ण सोच एवं नवाचार को हतोत्साहित किया।

रीड व अन्य ने (2009) ने स्कॉटिश माध्यमिक विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि इसने लैंगिक रूढ़िवादिता को कायम रखा और सामाजिक असमानताओं को प्रबल किया। उन्होंने विद्यालय की नीतियों और प्रथाओं की एक श्रृंखला का विश्लेषण किया, जैसे कि ड्रेस कोड, कक्षा की बातचीत और पाठ्यचर्या सामग्री, और पाया कि ये अक्सर पारंपरिक लिंग भूमिकाओं और अपेक्षाओं को प्रबल करते हैं। उदाहरण के लिए, उन्होंने पाया कि लड़कों की उनकी शैक्षणिक उपलब्धियों के लिए प्रशंसा की जाने की अधिक संभावना है, जबकि लड़कियों की उनके सामाजिक कौशल और उपस्थिति के लिए प्रशंसा की जाती है। अध्ययन ने प्रच्छन्न पाठ्यचर्या में लैंगिक पूर्वाग्रह को संबोधित करने के लिए स्कॉटिश विद्यालयों में अधिक जागरूकता और हस्तक्षेप की आवश्यकता पर प्रकाश डाला।

कोर्नबेक व अन्य ने (2011) ने डेनिश विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या पर एक अध्ययन किया और पाया कि इसका विद्यार्थियों की प्रेरणा और जुड़ाव पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा तथा सामाजिक पदानुक्रम कायम रहा। शोधकर्ताओं ने विद्यालयी जीवन के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण किया, जैसे शिक्षक-विद्यार्थी की बातचीत, कक्षा प्रबंधन और पाठ्येतर गतिविधियाँ। उन्होंने पाया कि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या ने अक्सर इस विचार को मजबूत किया कि कुछ विद्यार्थी उनकी शैक्षणिक उपलब्धियों या सामाजिक पृष्ठभूमि के आधार पर दूसरों की तुलना में अधिक मूल्यवान थे। अध्ययन ने सिफारिश की कि नीति निर्माता और प्रशासक विद्यालय के विद्यार्थियों की प्रेरणा और जुड़ाव पर प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के प्रभाव के बारे में अधिक जागरूक हों और अधिक समावेशी एवं सहायक शिक्षण वातावरण बनाने के लिए काम करें।

इंग्लैंड व अन्य ने (2017) ने स्वीडिश विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि यह राष्ट्रीय पाठ्यचर्या से निकटता से संबंधित था और पारंपरिक मूल्यों और मानदंडों को सुदृढ़ करता था। शोधकर्ताओं ने राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में बताए गए मूल्यों और मानदंडों का विश्लेषण किया और उनकी तुलना कक्षा में शिक्षकों की प्रथाओं से की। उन्होंने पाया कि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या ने अक्सर पारंपरिक लैंगिक भूमिकाओं को सुदृढ़ किया, अधिकारियों के अनुरूपता और आज्ञाकारिता पर जोर दिया और सामाजिक न्याय और विविधता के मुद्दों की उपेक्षा की। अध्ययन ने राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में बताए गए मूल्यों और मानदंडों के बारे में और अधिक महत्वपूर्ण चिंतन और चर्चा की आवश्यकता पर प्रकाश डाला और उन्हें मजबूत करने में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की भूमिका पर प्रकाश डाला।

विटेली और मकेला (2015) ने फिनिश विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि इसने सत्ता के मूल्यों के साथ अनुरूपता और अनुपालन के महत्व पर बल दिया और पारंपरिक मूल्यों को सुदृढ़ किया। शोधकर्ताओं ने माध्यमिक विद्यालयों में फिनिश विद्यार्थियों

के अनुभवों का विश्लेषण किया और पाया कि वे अक्सर अपनी राय या विचार व्यक्त करने के बजाय शिक्षकों और साथियों की अपेक्षाओं के अनुरूप दबाव महसूस करते थे। अध्ययन ने सुझाव दिया कि फिनिश विद्यालयों को अधिक समावेशी और विविध सीखने के माहौल को बढ़ावा देना चाहिए, जो विद्यार्थियों की महत्वपूर्ण सोच और रचनात्मकता को बढ़ावा दे ।

लोपेज व अन्य ने (2017) ने पुर्तगाली विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया और पाया कि इसने लैंगिक रूढ़िवादिता को कायम रखा और सामाजिक पदानुक्रम को मजबूत किया। शोधकर्ताओं ने विद्यालयी जीवन के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण किया, जैसे शिक्षक-विद्यार्थी की बातचीत, कक्षा प्रबंधन और पाठ्येतर गतिविधियाँ। उन्होंने पाया कि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या ने अक्सर पारंपरिक लिंग भूमिकाओं को मजबूत किया, जिसमें लड़कियों को निरापद और विनम्र होने के लिए प्रोत्साहित किया गया, जबकि लड़कों को मुखर और प्रतिस्पर्धी होने के लिए प्रोत्साहित किया गया। अध्ययन ने सिफारिश की कि पुर्तगाली विद्यालय, विद्यार्थियों के दृष्टिकोण और विश्वासों पर प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के प्रभाव के बारे में अधिक जागरूक हों और अधिक लिंग-समावेशी शिक्षण अधिगम का माहौल बनाने के लिए कार्य करें।

तालिका 1 : विभिन्न अध्ययनों में प्रयुक्त शोध विधियों का सर्वेक्षण और सारांश :-

अध्ययन	अनुसंधान क्रिया विधि	आँकड़ा संग्रह तकनीक	मुख्य निष्कर्ष
जैक्सन (1968)	नृवंश विज्ञान	प्रतिभागी अवलोकन और साक्षात्कार	इन्होंने विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की पहचान की, जिसमें विद्यार्थियों के लिए मूल्यों, मानदंडों और दृष्टिकोणों की अभिव्यक्ति शामिल थी।
एप्पल (1979)	आलोचनात्मक नृवंश विज्ञान	साक्षात्कार और दस्तावेज विश्लेषण	इन्होंने तर्क दिया कि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या ने विद्यार्थियों को उनकी सामाजिक स्थिति को स्वीकार करने और प्रमुख सामाजिक मानदंडों के अनुरूप शिक्षा देकर सामाजिक असमानता को कायम रखा।
एनयाँन (1980)	पाठ्यचर्या का मार्क्सवादी विश्लेषण	दस्तावेज विश्लेषण और कक्षा अवलोकन	इनके अध्ययन में यह पाया गया कि विभिन्न विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या ने विद्यार्थियों को उनके सामाजिक वर्ग के आधार पर समाज में विभिन्न सामाजिक पदों के लिए तैयार करने का काम किया।
रीड व अन्य (2009)	आलोचनात्मक नीति विश्लेषण	दस्तावेज विश्लेषण, साक्षात्कार, फोकस समूह और कक्षा अवलोकन	इन्होंने सामाजिक असमानता के पुनरुत्पादन सहित प्रच्छन्न पाठ्यचर्या को बनाए रखने में विद्यालय की नीतियों और प्रथाओं की भूमिका की जांच की।
इंग्लैंड व अन्य (2017)	आलोचनात्मक डिस्कोर्स विश्लेषण	दस्तावेज विश्लेषण, साक्षात्कार और कक्षा अवलोकन	इन विद्वानों ने विशेष रूप से लिंग और कामुकता के संबंध में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के निर्माण और निरंतरता में भाषा और डिस्कोर्स की भूमिका की जाँच की।
कोर्नबेक व अन्य (2011)	आलोचनात्मक नृवंश विज्ञान	साक्षात्कार, दस्तावेज विश्लेषण और कक्षा अवलोकन	इन्होंने विशेष रूप सेबहुसांस्कृतिक शिक्षा के संदर्भ में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या और विद्यार्थियों की सामाजिक पहचान के बीच संबंधों की जाँच की।

विटाली मकेला (2015)	मिश्रित-शोध अनुसंधान	सर्वेक्षण, साक्षात्कार और दस्तावेज विश्लेषण	इनके द्वारा रूप से विद्यार्थियों की डिजिटल साक्षरता और ऑनलाइन समाजीकरण के संबंध में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या में डिजिटल मीडिया की भूमिका की जाँच की गई।
लोप्स व अन्य (2017)	आलोचनात्मक डिस्कोर्स विश्लेषण	दस्तावेज विश्लेषण, साक्षात्कार और कक्षा अवलोकन	इनके द्वारा विशेष रूप से लिंग मानदंडों और रूढ़ियों के पुनरुत्पादन के संबंध में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या में लिंग की भूमिका की जाँच की गई।

तालिका 1 के अध्ययनों से पता चलता है कि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का यूरोपीय विद्यालयों में विद्यार्थियों के सीखने के अनुभवों पर व्यापक और शक्तिशाली प्रभाव है, जिसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पक्ष हो सकते हैं। अध्ययन विद्यार्थियों के मूल्यों, विश्वासों और दृष्टिकोणों पर प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के प्रभाव को पहचानने और संबोधित करने के महत्व पर भी प्रकाश डालते हैं। ये अध्ययन विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या पर शोध की आवश्यकता तथा पाठ्यचर्या प्रारूप एवं कार्यान्वयन में पूर्वाग्रहों तथा असमानताओं को दूर करने के महत्व पर प्रकाश डालते हैं। भारत में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के महत्व और विद्यार्थियों के मूल्यों, विश्वासों और दृष्टिकोणों के विकास पर इसके प्रभाव को पहचानने की आवश्यकता बढ़ रही है। भविष्य के अनुसंधान को अधिक समावेशी और विविध पाठ्यचर्या को बढ़ावा देने के लिए विकासशील रणनीतियों पर ध्यान देना चाहिए, जो विद्यार्थियों की समीक्षात्मक चिंतन की क्षमता और रचनात्मकता के विकास का समर्थन करता है।

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करने के लिए उपयोग की जाने वाली शोध पद्धतियां और तकनीकें :

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करने के लिए सबसे उपयुक्त शोध पद्धति और तकनीक विशिष्ट शोध प्रश्न और संदर्भ पर निर्भर करती है। हालाँकि, आमतौर पर उपयोग की जाने वाली कुछ पद्धतियां और तकनीक इसप्रकार हैं:-

नृवंशविज्ञान : नृवंशविज्ञान अनुसंधान में व्यापक फील्डवर्क और प्रतिभागियों के व्यवहारों का अवलोकन तथा एक विशेष परिस्थितिगत अध्ययन, जैसे कि एक विद्यालय के वातावरण में बातचीत शामिल है। यह कार्यप्रणाली उन सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं की खोज के लिए उपयोगी है, जो प्रच्छन्न पाठ्यचर्या को आकार देती हैं और विद्यार्थियों के अनुभवों पर इसका प्रभाव पड़ता है।

आलोचनात्मक संवाद विश्लेषण : आलोचनात्मक डिस्कोर्स विश्लेषण (क्रिटिकल डिस्कोर्स एनालिसिस) एक गुणात्मक शोध पद्धति है। यह जाँच करती है कि सामाजिक संबंधों और शक्ति की गतिशीलता को आकार देने के लिए भाषा और संचार प्रथाओं का उपयोग कैसे किया जाता है। यह उन तरीकों का अध्ययन करने के लिए उपयोगी हो सकता है, जिनमें प्रच्छन्न पाठ्यचर्या को सुदृढ़ करने या चुनौती देने के लिए विद्यालयों में भाषा का उपयोग किया जाता है।

नीति विश्लेषण : नीति विश्लेषण में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या पर उनके प्रभाव सहित शैक्षणिक संस्थानों की नीतियों और प्रथाओं की जाँच करना शामिल है। यह पद्धति यह समझने के लिए उपयोगी है कि कैसे संस्थागत कारक प्रच्छन्न पाठ्यचर्या को आकार देते हैं, जैसे संसाधनों का आवंटन, शिक्षक प्रशिक्षण और पाठ्यचर्या विकास।

मिश्रित-पद्धतिअनुसंधान : मिश्रित-पद्धति अनुसंधान में मात्रात्मक और गुणात्मक आँकड़ा संग्रह और विश्लेषण तकनीकों- दोनों का उपयोग शामिल है। यह उपागम कई दृष्टिकोणों से प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करने के लिए उपयोगी हो सकता है और घटना की अधिक व्यापक समझ प्रदान कर सकता है।

दस्तावेज विश्लेषण : दस्तावेज विश्लेषण में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के अंतर्गत आने वाले मूल्यों, मानदंडों और विश्वासों को उजागर करने के लिए विद्यालय नीतियों, पाठ्यचर्या दिशा-निर्देशों और पाठ्य-पुस्तकों जैसे आधिकारिक दस्तावेजों की जाँच करना शामिल है। यह

पद्धति उन तरीकों का अध्ययन करने के लिए उपयोगी हो सकती है, जिनमें शैक्षणिक संस्थान सांस्कृतिक संदेशों को प्रसारित करने और सामाजिक मानदंडों को सुदृढ़ करने के लिए लिखित सामग्री का उपयोग करते हैं।

अंततः प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करने के लिए सबसे उपयुक्त शोध पद्धति और तकनीक विशिष्ट शोध प्रश्न, संदर्भ और उपलब्ध संसाधनों पर निर्भर करेगी। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या और विद्यार्थियों पर इसके प्रभावों की अधिक संपूर्ण समझ हासिल करने के लिए शोधकर्ता विधियों और तकनीकों के संयोजन का उपयोग करना चुन सकते हैं।

आँकड़ा संग्रह तकनीक :

साक्षात्कार : विद्यार्थियों , शिक्षकों और अन्य शैक्षिक हितधारकों के साथ साक्षात्कार, प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की उनकी धारणाओं और शैक्षिक अनुभव को प्रभावित करने के तरीकों की अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकता है।

सर्वेक्षण : प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के बारे में विद्यार्थियों के दृष्टिकोण और विश्वासों के साथ-साथ उनके अनुभवों पर मात्रात्मक आँकड़ा एकत्र करने के लिए सर्वेक्षणों का उपयोग किया जा सकता है।

अवलोकन : अवलोकन आँकड़ा इस बारे में जानकारी का एक समृद्ध स्रोत प्रदान कर सकता है कि दैनिक कक्षा और विद्यालय की गतिविधियों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या को कैसे लागू किया जाता है।

फोकस समूह : फोकस समूहों का उपयोग व्यक्तिगत साक्षात्कारों की तुलना में अधिक इंटरैक्टिव और गतिशील तरीके से विद्यार्थियों और शिक्षकों के दृष्टिकोण और अनुभवों का पता लगाने के लिए किया जा सकता है।

दस्तावेज विश्लेषण : दस्तावेज विश्लेषण का उपयोग विद्यालय की नीतियों, पाठ्यचर्या दिशा-निर्देशों और पाठ्य-पुस्तकों जैसे आधिकारिक दस्तावेजों की जाँच करने के लिए किया जा सकता है ताकि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के अंतर्गत आने वाले मूल्यों, मानदंडों और विश्वासों को उजागर किया जा सके।

आँकड़ा संग्रह तकनीकों का चुनाव अनुसंधान प्रश्न और संदर्भ के साथ-साथ उपलब्ध संसाधनों और समय पर निर्भर करेगा। अक्सर इन तकनीकों के संयोजन का उपयोग कई स्रोतों और दृष्टिकोणों से आँकड़ा एकत्र करने के लिए किया जाएगा, जो प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की अधिक व्यापक समझ प्रदान करेगा।

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के अध्ययन हेतु संभावित शोध प्रश्न:

विद्यार्थियों पर प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए कुछ संभावित शोध प्रश्न निम्न हो सकते हैं :-

1. विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या जाति, वर्ग और लिंग जैसे कारकों के आधार पर सामाजिक असमानताओं के पुनरुत्पादन में कैसे योगदान करती है और इसका विद्यार्थियों के शैक्षिक अनुभवों और परिणामों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

2. प्रच्छन्न पाठ्यचर्या विद्यार्थियों के बीच महत्वपूर्ण सोच, रचनात्मकता और समस्या सुलझाने के कौशल के विकास को किस तरह से बढ़ावा देती है या बाधित करती है?

3. विभिन्न सांस्कृतिक और भाषायी पृष्ठभूमि कैसे उन तरीकों को प्रभावित करती हैं, जिससे विद्यार्थी विद्यालयों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अनुभव और व्याख्या करते हैं और शैक्षिक समानता और सामाजिक न्याय के लिए इसके निहितार्थ क्या हैं?

4. प्रच्छन्न पाठ्यचर्या और विद्यार्थियों की पहचान और अपनेपन की भावना के बीच क्या संबंध है और ये कारक अकादमिक प्रेरणा और उपलब्धि को कैसे प्रभावित करते हैं?

5. शिक्षक के विश्वास और अभ्यास कक्षाओं में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के निर्माण और हस्तांतरण में कैसे योगदान करते हैं और इनका विद्यार्थियों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

6. विज्ञान, गणित और सामाजिक अध्ययन जैसे विभिन्न विषय क्षेत्रों की प्रच्छन्न पाठ्यचर्या कैसी है और अध्ययन के इन क्षेत्रों के बारे में विद्यार्थियों की समझ और उनके प्रति दृष्टिकोण में कैसे योगदान करती है?

7. किस तरह से प्रच्छन्न पाठ्यचर्या विद्यार्थियों के सामाजिक और भावनात्मक कौशल, जैसे सहानुभूति,

सहयोग और संचार के विकास में योगदान देती है और इन कौशलों को औपचारिक पाठ्यचर्या में बेहतर समन्वय और एकीकरण कैसे किया जा सकता है?

8. प्रच्छन्न पाठ्यचर्या और विद्यार्थियों पर इसके प्रभावों को आकार देने में सहकर्मी संबंधों और पाठ्येतर गतिविधियों सहित विद्यालयी संस्कृति की क्या भूमिका है?

9. विद्यालय और शिक्षक प्रच्छन्न पाठ्यचर्या को अधिक स्पष्ट और इरादतन बनाने के लिए कैसे काम कर सकते हैं, और ऐसा करने के क्या लाभ और चुनौतियाँ हैं?

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या पर शोध हेतु प्रस्तावित ये शोध प्रश्न सामाजिक असमानताओं, संज्ञानात्मक कौशल, सांस्कृतिक धारणाओं, पहचान और भावनात्मक विकास को आकार देने में इसकी भूमिका को संबोधित करते हुए स्कूलों में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के बहुआयामी प्रभावों पर प्रकाश डालते हैं। नस्ल, वर्ग, लिंग और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के आधार पर अंतर्निहित शैक्षिक प्रथाएँ छात्र के अनुभवों को कैसे प्रभावित करती हैं, इसकी खोज करके, ये प्रश्न शैक्षिक वातावरण के भीतर सामाजिक मानदंडों के पुनरोत्पादन और शैक्षणिक और सामाजिक परिणामों पर उनके प्रभावों को समझने की कोशिश करते हैं। वे आलोचनात्मक सोच, रचनात्मकता और सामाजिक-भावनात्मक कौशल के विकास पर शिक्षक की मान्यताओं, स्कूली संस्कृति और विषय-विशिष्ट पाठ्यचर्या के प्रभाव की भी जाँच करते हैं। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की इस व्यापक जाँच का उद्देश्य शैक्षिक समानता, पहचान निर्माण और छात्र भागीदारी पर इसके व्यापक प्रभाव को प्रकट करना है, जो सोद्देश्य और पारदर्शी शैक्षिक प्रथाओं की आवश्यकता को उजागर करता है।

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के अध्ययन के लिए उपयुक्त शोध विधियाँ :

प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के अध्ययन के लिए मात्रात्मक तथा गुणात्मक शोध उपागमों का प्रयोग किया गया है। शैक्षिक परिदृश्य में प्रच्छन्न पाठ्यक्रम का अध्ययन करने के लिए मात्रात्मक अनुसंधान विधियाँ संरचित और सांख्यिकीय रूप से सुदृढ़ विश्लेषण प्रदान करती हैं।

सहसंबंधात्मक अभिकल्प : चरों के बीच संबंधों की जाँच करता है, जिसमें सर्वेक्षण, प्रदर्शन डेटा संग्रह, और कक्षा अवलोकन शामिल हैं और आँकड़ा का विश्लेषण वर्णनात्मक सांख्यिकी और सहसंबंध विश्लेषण के माध्यम से किया जाता है (क्रेसवेल, 2014)।

अर्ध-प्रायोगिक अभिकल्प या क्षेत्र प्रयोग विधि: प्रयोगात्मक और नियंत्रण समूहों की तुलना करता है और डेटा का विश्लेषण वर्णनात्मक और अनुमानिक सांख्यिकी के माध्यम से करता है (कोठारी, 2004)।

सर्वेक्षण अनुसंधान अभिकल्प : मानकीकृत सर्वेक्षण उपकरणों के माध्यम से अभिवृत्तियों, विश्वासों और व्यवहारों को मापता है तथा उप-समूहों के बीच अंतरों को मापने के लिए अनुमानिक सांख्यिकी का उपयोग करता है (न्यूमन, 2013)।

तालिका 2 : प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के अध्ययन के लिए एक मात्रात्मक विधि अनुसंधान प्रारूप :

अध्ययन अभिकल्प	विवरण	आँकड़ा संग्रह तकनीक	आँकड़ा विश्लेषण तकनीक
सहसंबंधात्मक अभिकल्प	इस अभिकल्प में आँकड़ों के पैटर्न और प्रवृत्तियों की पहचान करने के उद्देश्य से दो या दो से अधिक चर के बीच संबंधों की जाँच की जाती है।	1. विद्यार्थियों और शिक्षकों के साथ सर्वेक्षण 2. विद्यार्थी प्रदर्शन आँकड़ों का संग्रहण 3. कक्षाओं का अवलोकन।	1. सर्वेक्षण और प्रदर्शन आँकड़ों की वर्णनात्मक सांख्यिकी 2. चर के बीच संबंध को मापने के लिए सहसंबंध विश्लेषण।

अर्ध-प्रायोगिक अभिकल्प (क्षेत्र प्रयोग विधि)	इस अभिकल्प में विभिन्न समूहों में होने वाले किसी भी अंतर को मापने के उद्देश्य से ऐसे दो या दो से अधिक समूहों से आँकड़े एकत्र किए जाते हैं, जो कुछ मायने में समान या सुमेलित, लेकिन दूसरों में भिन्न होते हैं।	1. प्रयोगात्मक और नियंत्रण समूहों में विद्यार्थियों के साथ सर्वेक्षण।	1. दोनों समूहों के लिए सर्वेक्षण और प्रदर्शन आँकड़ा के वर्णनात्मक सांख्यिकी 2. समूहों के बीच अंतर को मापने के लिए अनुमानिक विश्लेषण।
सर्वेक्षण अनुसंधान अभिकल्प	इस अभिकल्प में अभिवृत्ति, विश्वास और व्यवहार को मापने के उद्देश्य से मानकीकृत सर्वेक्षण उपकरणों के माध्यम से प्रतिभागियों के एक बड़े प्रतिदर्श से आँकड़ा एकत्रित किया जाता है।	1. विद्यार्थियों और शिक्षकों के साथ सर्वेक्षण 2. विद्यालय नीतियों और पाठ्यचर्या दिशानिर्देशों का विश्लेषण।	1. सर्वेक्षण आँकड़ा का वर्णनात्मक सांख्यिकी 2. समूहों या उपसमूहों के बीच अंतर को मापने के लिए अनुमानिक विश्लेषण।

तालिका 2 : प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के अध्ययन के लिए एक गुणात्मक अनुसंधान अभिकल्प :

अध्ययन अभिकल्प	विवरण	आँकड़ा संग्रह तकनीक	आँकड़ा विश्लेषण तकनीक
घटनाक्रियाविज्ञान अभिकल्प	विद्यार्थी और शिक्षक अपने विद्यालय में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की व्याख्या कैसे करते हैं और अर्थ कैसे निकालते हैं यह समझने के उद्देश्य से इस डिजाइन में जीवित अनुभवों की खोज की जाती है।	1. विद्यार्थियों और शिक्षकों के साथ गहन साक्षात्कार 2. विद्यार्थियों और शिक्षकों के साथ फोकस समूह 3. अन्य महवपूर्ण दस्तावेजों का विश्लेषण ।	1. साक्षात्कार और फोकस समूह प्रतिलेखों का विषयगत गुणात्मक विश्लेषण 2. व्याख्यात्मक घटना संबंधी विश्लेषण।
आधारभूत सिद्धांत अभिकल्प	विद्यालय में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या कैसे संचालित होती है यह समझने के उद्देश्य से इस डिजाइन में एकत्रित आँकड़ों के आधार पर एक सिद्धांत या घटना की व्याख्या की जाती है।	1. कक्षाओं का अवलोकन 2.विद्यार्थियों, शिक्षकों और प्रशासकों के साथ साक्षात्कार 3. विद्यालय की नीतियों और पाठ्यचर्या दिशा-निर्देशों का विश्लेषण।	1. श्रेणियों और विषयों को विकसित करने के लिए आँकड़ों का लगातार तुलनात्मक विश्लेषण 2. एक सिद्धांत का विकास या प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की व्याख्या।
नृवंश विज्ञान अभिकल्प	इस अभिकल्प में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या को आकार देने वाले सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभावों को समझने के उद्देश्य से विद्यालय की संस्कृति और संदर्भ में खुद को निमग्न किया जाता है। संस्कृति को एक तत्व के रूप में समझने की कोशिश की जाती है ।	1. कक्षाओं और विद्यालय की गतिविधियों में प्रतिभागियों का अवलोकन 2. विद्यार्थियों, शिक्षकों और प्रशासकों के साथ साक्षात्कार 3. विद्यालय के दस्तावेजों और कलाकृतियों का विश्लेषण।	1. फील्ड नोट्स और साक्षात्कार प्रतिलेखों का विषयगत विश्लेषण 2. प्रच्छन्न पाठ्यचर्या पर सांस्कृतिक और सामाजिक प्रभावों का व्याख्यात्मक विश्लेषण।

व्यष्टि अध्ययन अभिकल्प	इस अभिकल्प में एक विशेष स्कूल या स्कूलों के समूह का गहराई से अध्ययन करना शामिल है। इसमें यह समझने के उद्देश्य से कि किसी विद्यालयी संदर्भ में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या कैसे संचालित होती है। इस डिजाइन में एक विशेष विद्यालय या विद्यालयों के समूह का गहराई से अध्ययन किया जाता है।	1.विद्यार्थियों, शिक्षकों और प्रशासकों के साथ साक्षात्कार 2. कक्षाओं और विद्यालय की गतिविधियों का अवलोकन 3. विद्यालय के दस्तावेजों और कलाकृतियों का विश्लेषण।	1. साक्षात्कार प्रतिलेखों और अवलोकन टिप्पणियों का विषयगत विश्लेषण 2. पैटर्न और विषयों की पहचान करने के लिए अलग अलग केसों का तुलनात्मक विश्लेषण भी किया जा सकता है।
नैरेटिव अभिकल्प	इस डिजाइन में विद्यार्थियों और शिक्षकों से प्रच्छन्न पाठ्यचर्या को अभिव्यक्त करने वाली घटनाओं, कहानियों, व्यक्तिगत दस्तावेजों और आख्यानों को एकत्र किया जाता है।	1. विद्यार्थियों और शिक्षकों के साथ गहन साक्षात्कार 2. व्यक्तिगत आख्यानों और कहानियों का विश्लेषण।	1. विषयों और प्रतिमानों की पहचान करने के लिए वर्णनात्मक विश्लेषण 2. अनुभवों को आकार देने में प्रच्छन्न पाठ्यचर्या की भूमिका का व्याख्यात्मक विश्लेषण।

उपरोक्त तालिकाएँ प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन करने के लिए एक सामान्य संदर्श प्रस्तुत करती है। यह संदर्श निर्वचनात्मक प्रतिमान पर आधारित है, जिसके अंतर्गत विभिन्न सिद्धांत प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के मूल तत्व की व्याख्या करने के लिए वर्णित हैं।

तालिका शैक्षिक परिवेश में छिपे हुए पाठ्यचर्या का अध्ययन करने के लिए गुणात्मक अनुसंधान दृष्टिकोण की एक रूपरेखा प्रस्तुत करती है। यह पाँच अलग-अलग दृष्टिकोणों को रेखांकित करती है: प्रघटनाशास्त्रीय, आधारभूत सिद्धांत, नृजातीय उपागम, व्यष्टि अध्ययन और आख्यानात्मक दृष्टिकोण। प्रत्येक दृष्टिकोण के लिए आंकड़ा, विशिष्ट संग्रह और विश्लेषण तकनीकों का विवरण दिया गया है, जो प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के विभिन्न पहलुओं की खोज के लिए उपयुक्त है। प्रघटनाशास्त्रीय उपागम विद्यार्थियों व शिक्षकों के जीवंत अनुभवों को केंद्र में रख कर गहन साक्षात्कार और फोकस समूहों के माध्यम से छिपे हुए पाठ्यचर्या की उनकी व्याख्याओं पर केंद्रित है। आधारभूत सिद्धांत उपागम का उद्देश्य विभिन्न घटनाओं के अवलोकन, साक्षात्कारों और नीति-विश्लेषणों के आधार पर एक कार्यकारी सिद्धांत विकसित करना है। नृजातीय दृष्टिकोण स्कूल के वातावरण में निमग्न होकर और स्कूल से संबंधित विभिन्न दस्तावेजों और गतिविधियों का विश्लेषण करके छिपे हुए पाठ्यचर्या पर सांस्कृतिक तत्वों और सामाजिक प्रभावों का पता लगाता है। व्यष्टि अध्ययन उपागम विशिष्ट स्कूलों का एक गहन अध्ययन प्रदान करता है ताकि यह पता लगाया जा सके कि प्रच्छन्न पाठ्यचर्या विशेष संदर्भों में कैसे काम करती है। अंत में वर्णनात्मक दृष्टिकोण वर्णनात्मक और व्याख्यात्मक विश्लेषण विधियों का उपयोग करके व्यक्तिगत अनुभवों पर प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के प्रभाव को समझने के लिए व्यक्तिगत आख्यानों और कहानियों को एकत्र करता है। यह गुणात्मक शोध संदर्श शोधकर्ताओं को प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के जटिल और अक्सर सूक्ष्म प्रभावों की जाँच करने के लिए सबसे उपयुक्त गुणात्मक विधि का चयन करने में सहायता करता है।

निष्कर्ष :

यह आलेख प्रच्छन्न पाठ्यचर्या के अध्ययन के लिए एक एकीकृत संदर्श को प्रायोजित करता है। प्रच्छन्न पाठ्यचर्या विद्यार्थियों के मूल्यों, अभिवृत्तियों, कौशलों और सामाजिक जीवन में सफलता के लिए आवश्यक ज्ञान के विकास को प्रभावित करती है। इसके अध्ययन के लिए भारतीय परिप्रेक्ष्य में एकीकृत संदर्शों को प्रस्तावित करने वाले अध्ययनों की आवश्यकता है। इस दिशा में यह

अध्ययन इस क्षेत्र में किस प्रकार के शोध किए जा सकते हैं और उनकी शोध विधियाँ क्या हो सकती हैं, इसका विवरण प्रस्तुत करता है। यह अध्ययन मात्रात्मक एवं गुणात्मक विधियों के प्रयोग और उनकी सार्थकता को रेखांकित करता है। इस दिशा में अन्य शोधों में विभिन्न प्रकार की शोध विधियों का प्रयोग कर के प्रच्छन्न पाठ्यचर्या का अध्ययन किया जा सकता है और इसके बारे में महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि विकसित की जा सकती है। ❑

संदर्भ सूची :

Anyon, J. (1980). Social class and the hidden curriculum of work. Journal of Education, 162(1), 67-92.

Bryman, A. (2016). *Social research methods* (5th ed.). Oxford University Press.

Chua, Y. P., & Ibrahim, N. A. (2009). The hidden curriculum in secondary schools: Implications for educational equity. Educational Research for Policy and Practice, 8(2), 107-121.

Creswell, J. W. (2014). *Research design: Qualitative, quantitative, and mixed methods approaches* (4th ed.). SAGE Publications.

Englund, T., Öhman, J., & Bergqvist, K. (2017). Hidden curriculum and national curriculum: A comparison of the values and norms conveyed in the Swedish curriculum and in teachers' practices. Education Inquiry, 8(4), 363-381.

Gopalan, S., & Sen, R. (2015). The hidden curriculum in higher education: A study of undergraduate engineering in India. Higher Education, 70(3), 395-410.

Jackson, P. W. (1968). Life in classrooms. Holt, Rinehart and Winston.

Jones, S. M., & Jones, R. J. (2016). Emotionally intelligent schools: From dialogue to action. Corwin Press.

Jones, S. M., & Jones, R. J. (2016). Emotionally intelligent schools: From dialogue to action. Corwin Press.

Jones, S. M., & Jones, R. J. (2016). Emotionally intelligent schools: From dialogue to action. Corwin Press.

Kornbeck, J., Lund, H. H., & Christensen, M. (2011). The hidden curriculum in Danish schools. Scandinavian Journal of Educational Research, 55(2), 129-146.

Kothari, C. R. (2004). *Research methodology: Methods and techniques* (2nd ed.). New Age International.

Larrabee, A. K., & Murphy, P. K. (2017). Gender and education. In Handbook of Research on the Education of School Leaders (pp. 261-272). Routledge.

Larrabee, A. K., & Murphy, P. K. (2017). Gender and education. In Handbook of Research on the Education of School Leaders (pp. 261-272). Routledge.

Larrabee, A. K., & Murphy, P. K. (2017). Gender and education. In Handbook of Research on the Education of School Leaders (pp. 261-272). Routledge.

Liu, M. (2010). The hidden curriculum in Chinese schools. International Education Studies, 3(2), 3-9.

Lopes, A. F., Nogueira, J., & Martins, C. (2017). Hidden curriculum in schools: A Portuguese perspective. Journal of Education and Human Development, 6(1), 90-103.

McNeil, L. M., & Valenzuela, A. (2001). The harmful impact of the TAAS system of testing in Texas: Beneath the accountability rhetoric. Harvard Educational Review, 71(3), 385-416.

Nayar, S., & Paul, S. (2018). The hidden curriculum in engineering education: A case study of India. Higher Education for the Future, 5(2), 11-26.

Neuman, W. L. (2013). *Social research methods: Qualitative and quantitative approaches* (7th ed.). Pearson Education.

Pal, S., & Ghosh, R. (2012). The hidden curriculum in primary schools in India. Journal of Curriculum Studies, 44(4), 509-529.

Ramachandran, R. (1999). The hidden curriculum in Indian schools. The Journal of Educational Issues, 1(1), 45-55.

Reid, K., Radford, J., & Shaw, S. (2009). The hidden curriculum of gender in Scottish secondary schools. Gender and Education, 21(3), 333-348.

Viteli, J., & Mäkelä, T. (2015). The hidden curriculum in Finnish schools: The perspective of the student. European Journal of Education, 50(1), 91-103.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

समन्वय

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद : राष्ट्रीय एकता का आधार

सारांश :

पश्चिम की राष्ट्र राज्य की अवधारणा के विपरीत सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एक विराट सांस्कृतिक एवं भावनात्मक अवधारणा है। संस्कृति में वे समस्त चीजें सम्मिलित हैं, जो हमें समाज के सदस्य के नाते उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त होती हैं। जब समाज के समक्ष ये विचार या आदर्श रहता है कि वह भूमि विशेष को मातृभूमि से जोड़कर देखता है, तब वह राष्ट्र कहलाता है। भारत में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की शुरुआत प्राचीन काल से ही पाई जाती है, किंतु इसकी आधुनिक पृष्ठभूमि को तैयार करने का श्रेय तत्कालीन धर्म सुधारकों, समाज सुधारकों, दार्शनिकों, साहित्यकारों, विद्वानों, संतों को जाता है। भले ही भारतवर्ष एक राजनीतिक इकाई के रूप में अस्तित्व में नहीं रहा हो, लेकिन एक सांस्कृतिक इकाई के रूप में हमेशा विद्यमान रहा है। इसके सांस्कृतिक कारण निश्चित तौर पर भारत की एक भौगोलिक छवि प्रस्तुत करते हैं, इसलिए वर्तमान भारत का अस्तित्व इससे पृथक नहीं हो सकता। प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय संस्कृति और राष्ट्र की संकल्पना का वर्णन किया गया है और इसके द्वारा उद्भव हुए सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का विश्लेषण किया गया है।

संकेत शब्द : संस्कृति, राष्ट्रवाद, भारत।

अविनाश जाटव
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
डी.एस.बी. परिसर
कुमाऊँ विश्वविद्यालय
नैनीताल-263001
8445578388
avinashjatav1996@gmail.com

कृति तिवारी
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
डी.एस.बी. परिसर
कुमाऊँ विश्वविद्यालय
नैनीताल-263001
7455966311
kriti78@gmail.com

प्रस्तावना :

किसी राष्ट्र के लिए प्रथम अपरिहार्य वस्तु एक भूखंड है, जो यथासंभव किन्हीं प्राकृतिक सीमाओं से आबद्ध हो तथा एक राष्ट्र के रहने और वृद्धि एवं समृद्धि के लिए आधार रूप में काम दे। द्वितीय आवश्यकता है, उस विशिष्ट भू-प्रदेश में रहने वाले समाज की, जो उसके प्रति मातृभूमि के रूप में प्रेम एवं पूज्य भाव विकसित करता है। राष्ट्र का आधार जाति व पंथ नहीं है। इसका आधार धर्म, संस्कृति और सर्वव्यापक परमात्मा व आत्मा पर विश्वास है। राष्ट्र का सच्चा आधार आचार-विचार है, जिसे संस्कृति का नाम दिया है और धर्म, जिसे आचरण का नाम दिया है। जब किसी जनसमूह की समान संस्कृति हो, समान धर्म हो, तब वह एक राष्ट्र कहलाता है।

भारतीय संस्कृति का वैशिष्ट्य उसके लचीलेपन और अनुकूलन की अद्भुत क्षमता में है। भारतीय संस्कृति की सनातनता वस्तुत: उसकी परिवर्तनशीलता में है, जो देश, काल और परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन-परिवर्द्धन की क्षमता रखता है।

भारतीय संस्कृति जड़ होने के बजाय सदैव जीवंत और प्राणवान रही है। इसलिए तो आज हजारों- हजार वर्षों बाद भी वह अपने अस्तित्व को अक्षुण्ण बनाए हुए है। भारतीयता और उसकी राष्ट्रीयता की संकल्पना वस्तुत: सांस्कृतिक चेतना से संयुक्त है, जिससे मानवता का समावेश होता है।[1]

भारत का राष्ट्रवाद मूलत: सांस्कृतिक राष्ट्रवाद ही है, मनुष्य व बाकी प्राणियों के बीच भेद का मूल संस्कृति है। संस्कृति आत्मपरक सत्यशोधक आंतरिक रसमयता का प्रवाह है। भारत का वैशिष्ट्य ही भारत की सनातन संस्कृति है, इसलिए राष्ट्र का प्राण संस्कृति है। राष्ट्रवाद के अनेक रूप हो सकते हैं, पर उसकी आत्मा सांस्कृतिक वैशिष्ट्य है, राष्ट्रवाद को संस्कृति से न जोड़ने का अर्थ होगा एक आधारविहीन ऐसे दर्शन व जीवन मूल्य की परिकल्पना, जिसकी न कोई अस्मिता है, न अपना कोई वैशिष्ट्य और न कोई ऐसा व्यक्तित्व, जो प्रेरणा दे सके तथा जिस पर श्रद्धा की जा सके। राष्ट्रवाद और संस्कृति कुल मिलाकर एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और दोनो एक-दूसरे के पूरक भी। संस्कृति जहाँ राष्ट्र के अंतर्मुखी पक्ष को सुदृढ़ करती है, वहीं राष्ट्रवाद उसके बहिर्मुखी पक्ष को दृढ़ता प्रदान करता है। राष्ट्रीयता मूल रूप से एक सांस्कृतिक धारणा है, जो विचारों व आदर्शों की एकता का मुख्य तत्व है, संस्कृति की एकता में सामान्य रीतियाँ और व्यवहार, सामान्य परंपराए व साहित्य शामिल हैं। संस्कृति की एकता जीवन को एक विशिष्ट दृष्टिकोण देती है, जिसमें जीवन के मानदंड, कर्तव्य और निषेध मौजूद हैं। *राष्ट्र एक भू-सांस्कृतिक भावात्मक अवधारणा भी है। भू-सांस्कृतिक लगाव के द्वारा ही राष्ट्रों के जन्म और मरण के कारण उत्पन्न होते हैं। संक्षेप में, यदि राजनीतिक राष्ट्रवाद राजनीतिक स्वायत्तता की प्राप्ति पर केंद्रित है, तो सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एक राष्ट्र की नींव पर केंद्रित है। यहाँ राष्ट्र का दृष्टिकोण कोई राजनीतिक संगठन नहीं, बल्कि एक नैतिक समुदाय है। इस प्रकार, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद राष्टर की पहचान, इतिहास और नियति का एक दृष्टिकोण प्रदान करता है। बढ़ती आधुनिकता के परिणामस्वरूप होने वाली सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक उथल-पुथल के समय इस दृष्टि को स्पष्ट और अभिव्यक्त करने की आवश्यकता सबसे अधिक तीव्रता से महसूस की जाती है।*[2]

भारत जिस सांस्कृतिक राष्ट्रवाद पर आस्था रखता है, वह मानव-मानव के बीच असहिष्णुता प्रधान भेद को मान्यता नहीं देता। मानव एकत्व प्रधान में आस्था रखने वाले इस राष्ट्रवाद में हर उस विविधता व अनेकता के लिए स्थान और सम्मान है, जिसका मूल लक्ष्य इन चिंतन की जड़ों को मजबूत बनाना है। इस सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को ही भारत में भारतीयता से संबोधित किया जाता है। भारतीय मनीषा जिस राष्ट्र व राष्ट्रवाद से अपने को जोड़ती है, वह न तो राजनीतिक प्रधान है व न ही राजतंत्र प्रधान, वह केवल संस्कृति प्रधान है। भारत की प्रतिपादित सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की संकल्पना का अंतर्राष्ट्रीय चेतना से न कभी विरोध था, न ही कभी हो सकता है। यह राष्ट्रवाद तो सकल ब्रह्मांड की मंगल कामना से प्रस्तुत है। भारतीय मनीषा ने राष्ट्र, राष्ट्रभाव व राष्ट्रवाद को सदैव उस अंत:प्रेरित भावनात्मक चेतना से जोड़ा है, जो सत्य की खोज पर आश्रित है। भारतीय चेतना ने राष्ट्र के उद्भव को सांस्कृतिक दृष्टि से ही अधिक देखा है, क्योंकि भारतीय संस्कृति ही एक ऐसी संस्कृति है, जो मानव ही नहीं, बल्कि सृष्टि की विविधता को परम एकत्व में देखने की सामर्थ्य रखती है।

भारतीय राष्ट्रवाद प्रेम के असीम विस्तार से ओत-प्रोत है और समन्वय को मान्यता देकर समस्त जगत के कल्याण की कामना करता है। इस राष्ट्रवाद का उदय किसी संकट का सामना करने के लिए नहीं, बल्कि उस तप व ओज से हुआ है, जहाँ समस्त वसुधा को एक ही कुटुंब मानने की प्रेरणा का निर्झर बहता है। संस्कृति राष्ट्र की आत्मा होती है। संस्कृति के बिना राष्ट्र का अस्तित्व नहीं है। राष्ट्र और संस्कृति अविभाज्य हैं। संस्कृति राष्ट्र को ऊर्जा प्रदान करती है। हमारा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद हमें जीवन और नैतिकता के मूल्य सिखाता है। भारत एकमात्र देश है, जो अनेकता में एकता बनाए रखने की क्षमता रखता है।

भारत का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद :

प्राय: 'राष्ट्र' को 'नेशन' और 'राष्ट्रवाद' को 'नेशनलिज्म' से जोड़ा जाता है, जो तर्कसंगत नहीं है। ये विचारधारा पश्चिमी देशों से उभरकर आई है, जहाँ न तो परंपरा होती है और न ही संस्कृति। *पंडित दीनदयाल उपाध्याय का मानना है कि भारत में सभी मानव जाति को एक-दूसरे से परस्पर जोड़े रखने की संस्कृति है, जिसे सांस्कृतिक राष्ट्रवाद कहा जाता है।*[3]

भारतीय राष्ट्रवाद की आधारशिला भारत की सनातन संस्कृति न केवल भारतवासियों को एकजुट रखने में सामर्थ्यवान है, अपितु इस सार्वभौम संस्कृति में विश्व के समस्त राष्ट्रों को एकसूत्र में पिरोने का तत्व भी समाया हुआ है। भारतीय संस्कृति के चार मूलभूत सिद्धांत वैश्विक शांति का मार्ग प्रशस्त करने में पूरी तरह सक्षम हैं। ये सिद्धांत हैं- 'वसुधैव कुटुम्बकम'-अर्थात संपूर्ण विश्व एक परिवार की तरह है, 'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति'- अर्थात भारतीय मनीषियों की यह उद्घोषणा है कि सत्य एक है, विद्वान इसे अलग-अलग तरीकों से कहते हैं, 'सर्वेभवन्तु सुखिन:' -अर्थात समस्त प्राणियों का भला हो तथा 'यत्पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे'-अर्थात जो पिंड में है वहीं ब्रह्मांड में है, आत्मा और परमात्मा में कोई भेद नहीं है। भारतीय संस्कृति का यह वैचारिक आधार इतना ठोस एवं समन्वय है कि यह भारत समेत संपूर्ण विश्व को जोड़ने का सामर्थ्य रखता है। भारत में राष्ट्रवाद उतना ही पुराना है, जितना इसका सभ्यतागत इतिहास वैदिक काल से है। नि:संदेह, इस राष्ट्रवाद की कल्पना शायद ही आधुनिक घटक के बराबर की जा सकती है, यहाँ तक कि यह विकास की एक घटना है। ऋग्वेद ने 'भारतवर्ष' के भौगोलिक अस्तित्व को 'सप्त सिंधु' के रूप में परिभाषित किया है, जो सात प्रमुख नदियों को समाहित करने वाली भूमि है। विष्णु पुराण 'भारतवर्ष' की भौगोलिक स्थिति को इस प्रकार परिभाषित करता है :-

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।

वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्तति: ।।

इसका अर्थ है कि समुद्र के उत्तर में और हिमालय के दक्षिण में जो देश है, उसे भारत कहते हैं तथा उसकी संतानों (नागरिकों) को भारती कहते हैं।

यजुर्वेद के अनुसार 'राष्ट्र' एक निश्चित क्षेत्र में रहने वाले लोग हैं, जो निर्णायक शक्ति के रूप में ईश्वर या प्रकृति की प्रधानता को स्वीकार करते हैं, ज्ञान की प्रधानता को स्वीकार करते हैं और सीखने वाले व्यक्ति का सम्मान करते हैं और अपने देश की विदेशी आक्रमण, आंतरिक या राष्ट्रीय या प्राकृतिक आपदाओं से रक्षा करने के लिए अच्छी तरह से सुसज्जित हैं।

अथर्ववेद में भी 'राष्ट्र' शब्द का समावेश है। भारत के आरंभिक संतों के लिए संपूर्ण ब्रह्मांड एक जीवित इकाई थी; लेकिन संतों की तपस्या और प्रयासों के कारण एक स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण हुआ, जिसे बाद में 'भारत खंड' कहा गया। अथर्ववेद की शुरुआत परिवार के मुखिया 'गृह पति' से हुई। उसके बाद के चरण थे 'आह्वनीय', 'सभ्य', 'सामित्य' और 'आमंत्रणेय'। प्रत्येक की इकाई में पिछले वाले की तुलना में व्यक्तियों की संख्या अधिक थी। इसी क्रम में राष्ट्र का विकास हुआ।[4]

विश्व निर्माण के प्रारंभ में जब मनुष्यों का योगदान शुरू हुआ तो भारतीय आत्मवेत्ता ऋषियों (जो ऋषि अपने आपको परमात्मा एवं विश्व के संदर्भ में भली-भाँति जानते थे) के विचार और कार्य अपने तक ही सीमित नहीं थे, बल्कि एकात्म भाव से सबको देखते थे, जो स्वयं को विश्व का महत्वपूर्ण अंश मानते थे, जिनकी दृष्टि में पूरा विश्व एक इकाई था और जो आवश्यकता और पूर्ति के बीच संतुलन बनाए रखने के पक्षधर थे। उनके दृढ़ विश्वास के साथ अखंड तपस्या और प्रयत्न का ही सार्थक परिणाम था कि स्वस्थ और सुंदर राष्ट्र का निर्माण हुआ। *भारत के मनीषियों ने माँ और मातृभूमि दोनों को स्वर्ग से भी महान माना है। इसी भावभूमि में हमने 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' की संकल्पना को आत्मसात किया है। भारत की सनातन संस्कृति और उसकी अविच्छिन्न परंपरा के अनेक ऐसे मूल्य हैं, जिस पर आज हम गौरवान्वित होते हैं। हमारे देवऋषि, राजऋषि और महापुरुषों ने जो हमें ज्ञान-विज्ञान और चिंतन-दर्शन की धरोहर सौंपी है, उस पर हम गौरवान्वित हो रहे हैं। युगों-युगों से भारतीय मनीषा ने सत्य का साक्षात्कार कर अमूल्य धरोहर हमें उपलब्ध कराया है। उसी का परिणाम है कि भारतीय जनमानस में एक गहरी अंतर्दृष्टि विकसित हुई है।*[5]

पूरे भारत में अविश्वसनीय सांस्कृतिक विविधता पाई जा सकती है। लगभग हर राज्य ने अपनी अनूठी सांस्कृतिक जगह बनाई है, और दक्षिण, उत्तर और पूर्वोत्तर सभी की अपनी विशिष्ट संस्कृतियाँ हैं। भारत की संस्कृति पूरे विश्व पर सबसे विविध और विशिष्ट में से एक है। हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म और सिख धर्म सहित दुनिया की कुछ सबसे पुरानी सभ्यताएँ भारत में पाई जाती हैं।[6]

भारत एक भौगोलिक सीमा में निर्मित राज्य मात्रा नहीं है, अपितु एक सांस्कृतिक अधिष्ठान पर खड़ा एक गौरवशाली राष्ट्र है, जिसका इतिहास वैभवशाली रहा है।

राष्ट्र एक सांस्कृतिक इकाई है, जबकि देश से भौगोलिक सीमा का बोध होता है। *भारत की सांस्कृतिक विरासत उसे एक राष्ट्र के रूप में पहचान देती है। भारत के लोग इस भूमि के प्रति रागात्मक भाव से जुड़े हैं। भारत-भूमि मिट्टी का लोथ-मात्र न होकर माँ भारती के रूप में जीवंत और मूर्तिमान है। इसलिए हम उसकी वंदना और अर्चना करते हैं।*[7]

राजा राममोहन राय, स्वामी विवेकानंद, श्री रामकृष्ण परमहंस, महर्षि दयानंद सरस्वती, श्री अरविंद आदि महापुरुषों ने भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल पक्षों को उभार कर और विकृतियों को नकारकर पुनः देश में नवजीवन का संचार किया। इस काल की सर्वाधिक प्रेरक पुस्तक ऐतिहासिक तथ्य स्मरणीय श्रीमद्भगवद्गीता रही। *अतः बंकिमचंद्र चटर्जी, स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, पं. दीनदयाल उपाध्याय, गोलवलकर तथा अन्य मनीषियों ने गीता से प्रेरणा लेकर जनजागरण अभियान चलाया था। इस सांस्कृतिक जागरण का एक फल यह भी हुआ कि पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान और जीवन मूल्यों के अन्ध अनुकरण से मुक्त होकर भारतीय प्रबुद्ध चित्त ने भारतीय और पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान आदि के समन्वय पर बल दिया। इस प्रकार सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के प्रमुख घटक बुद्धिजीवी और कलाकार हैं, जो राष्ट्र के बारे में अपने दृष्टिकोण को व्यापक समुदाय तक पहुँचाना चाहते हैं।*[8] राज्य की सीमाओं को पार कर उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण के समुद्र तट तक राष्ट्र की भावना हजारों साल पहले विकसित हुई। भारतवर्ष की एकता और अखंडता आक्रांताओं के बार-बार आक्रमण के बावजूद कभी खंडित नहीं हुई। यह इस कारण संभव हो पाया, क्योंकि इस राष्ट्र में राजनीतिक एकता से कहीं अधिक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक एकता थी। भारत पूरे विश्व में अकेला भू-सांस्कृतिक राष्ट्र है। दुनिया के जिन देशों की एकता राजनीतिक कारणों से थी, वे टूटकर अलग-अलग हो गए।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद ऐतिहासिक अभिलेखों और साहित्य में वृद्धि का कारण बनता है, क्योंकि बुद्धिजीवी संस्कृति को प्रगति के लिए स्थान प्रदान करते हैं और लोगों के जीवन में एक जीवित सिद्धांत के रूप में राष्ट्र की अवधारणा को उत्पादित करते हैं। यह माना गया है कि भारतीयता मुख्य रूप से भाषायी, साहित्यिक और सौंदर्य संबंधी संदर्भों में मौजूद है। भारतीय संस्कृति और परंपरा जिन मूल्यों और आदर्शों की वकालत करती हैं, वे दुनिया के ऊँचे मानदंड हैं। किसी भी देश के विकास के पीछे जरूरी है, वहाँ की अपनी धरती से निकले विचारों पर खड़ा हुआ एक मजबूत ढाँचे का अस्तित्व। *दुनिया के शेष देशों की स्थिति पर विचार करने के बजाय यदि भारत पर विचार किया जाए तो हम पाएँगे कि धर्मगुरु कहलाने वाले भारत की आत्मा का मूल तत्व धर्म है, राष्ट्र है, जिसका एक भावात्मक स्वरूप है। बाहरी तौर पर यह देश भूमि, जनता और राजव्यवस्था का समुच्चय है, किंतु आंतरिक स्वरूप में यह दिव्य चेतना है। चेतना का यह आत्म साक्षात्कार युगों-युगों से सामूहिक चिंतन का प्रतिफल है। इसे ही भारत में हम अपनी संस्कृति कहते हैं। धर्म यहाँ बंधनकारी नहीं है। यहाँ सारे पंथ अनुशासन देते हैं, भारत का धर्म आत्मानुशासन देता है। यह बंधन में नहीं डालता, बल्कि मुक्त करता है। यह निरंतर धारा ऋग्वेद से लेकर उपनिषद, महाभारत तथा रामायण तक ही नहीं, आज भी जनमानस में मुक्ति का संदेश देती है। गौतम बुद्ध और शंकराचार्य आदि ने अपनी-अपनी बातों में इसी सत्य का अन्वेषण किया।*[9]

संस्कृति का अर्थ सम्यक कृति है। इस प्रकार संपूर्ण जीवन में कर्म तथा सत्यम्, शिवम् एवं सुन्दरम् के समन्वय से युक्त प्राचीन परंपराओं का संस्कार शब्द सामूहिक रूप में भारतीय संस्कृति है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद भारतीय राष्ट्रीय जीवन मूल्यों का गुलदस्ता है। यह मजहबी राज्यों की कल्पना से पृथक स्वाभाविक लोकतांत्रिक अवधारणा है। यह किसी के विरुद्ध नहीं है, सबके साथ और सब में समाहित है। राष्ट्र एक भावनात्मक शक्ति है, वह प्रेरणा का स्रोत है, वह युग-युग से मानव के हृदय में है, वह स्वाहा होकर भी जागृत है। इसका एक ही कारण है कि एक राष्ट्र के हृदय में संस्कृति की अमर आत्मा का निवास है। देश *की सीमा घटती-बढ़ती है, परंतु सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का कभी भी अपक्षय नहीं होता है। वह सूक्ष्म से सूक्ष्म है, विराट से विराट है, प्रत्येक के जीवन में श्रद्धा और निष्ठा के रूप में सदा-सदा के लिए उपस्थित है, जो देश और काल की सीमाओं से परे है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद आमतौर पर राष्ट्रीय आत्म-पुष्टि का रूप लेता है; यह एक ऐसा माध्यम है, जिससे लोग राष्ट्रीय गौरव और स्वाभिमान को सुदृढ़*

करके अपनी स्वयं की पहचान की स्पष्ट समझ प्राप्त कर सकते हैं। [10]

भारत देश मूलत: संस्कृति प्रधान देश है। इस संस्कृति का जादू है कि विश्व के नक्शे से यूनान, रोम और मिस्र मिट गए, पर भारत का अस्तित्व बना रहा। हर समय में यहाँ की संस्कृति बार-बार अपने मूल स्वरूप की ओर दौड़ती रही। कोई बाह्य शक्ति इसको प्रभावित करने की चाहे जितनी कोशिश कर ले हम अपनी जड़ों से विस्मृत नहीं होते। यहाँ भारतीयता का अर्थ है भारत की समग्र परंपरा, भारत का सामाजिक सांस्कृतिक इतिहास, भारतवर्ष की पुरातन पृष्ठभूमि, भारत की कला, भारत का साहित्य एवं दर्शन। इन सब में एक ऐसी भावना व्याप्त है, जो भारतवर्ष के प्राचीन दर्शन एवं भारत के आध्यात्म को जीवन से जोड़ती है। *भारत मात्र भौगोलिक तथा राजनीतिक इकाई नहीं है, बल्कि मनुष्य की मनुष्यता का मौलिक प्रमाण है। एक तरह से, भारत की पहचान उसके सांस्कृतिक आदर्शों और आध्यात्मिक मानदंडों से परिभाषित होती है, जो सबसे अद्वितीय और सार्वभौमिक हैं। भारत में मौजूद लोगों के बीच अपार विविधताएँ और मतभेद किसी भी तरह से एक राष्ट्र के रूप में इसकी यात्रा को बाधित नहीं कर पाए हैं।* [11]

इस प्रकार भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही राष्ट्रवाद के दो अभिन्न अंग बताए गए हैं - समान भूमि तथा समान सांस्कृतिक जीवन। भारतवर्ष में भूमि के प्रति जन के अटूट संबंध की अवधारणा को महत्व दिया गया है। राष्ट्र का आधारभूत तत्व भौगोलिक तथा सांस्कृतिक एकता को माना गया है। भारतवर्ष का शरीर इसकी भूमि तथा संस्कृति इसकी आत्मा है। राष्ट्र उन व्यक्तियों से बनता है, जो एकत्रित होकर एक निश्चित भू-भाग में स्थापित हों, साथ ही जो बुद्धि विवेक को महत्व देते हों, विद्वानों का आदर करते हों और बाहरी आक्रमण तथा आंतरिक प्राकृतिक प्रकोपों से सुरक्षा प्रदान करने में समर्थ हों। भारतीय राष्ट्रवाद की नींव सांस्कृतिक अधिष्ठान पर खड़े होने के कारण मानवता और आत्मीयता से संयुक्त है। भारतीय संस्कृति शाश्वत मूल्यों की प्रतिष्ठापक है। वह जीवन जीने की एक ऐसी दृष्टि प्रदान करती है, जिसमें सनातनता के साथ-साथ शाश्वतता भी है। *वास्तव में राष्ट्रवाद के पहले 'सांस्कृतिक' शब्द जोड़ने की महत्ता यही है कि वह हमें किसी भी प्रकार के अवमूल्यन से बचाए रखता है। राष्ट्र और समाज-जीवन के मूल्यों को स्खलित होने से रोकने के लिए सांस्कृतिक परंपरा के शाश्वत मूल्य हमें शक्ति प्रदान करते हैं। यही कारण है कि हम राष्ट्रवाद, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के समुन्नयन की संकल्पना के साथ आगे बढ़ना चाहते हैं।* [12]

भारत एक विशेष भू-भाग में बसे देश होने के साथ-साथ राष्ट्र की संज्ञा से अनुप्राणित एक जीवंत इकाई है। भारत के लोग इस भूमि को माँ के रूप में भक्ति भाव के साथ पूजते हैं। बंधुत्व भाव से जीवन यापन करने वाले यहाँ के लोग न केवल आत्मीयता के साथ सहिष्णुता और सह अस्तित्व के भाव-बोध से जुड़े हैं, अपितु सांस्कृतिक विरासत और धरोहर के प्रति गौरवान्वित होते हैं। सही मायने में यही राष्ट्रीयता की अनुभूति कराता है। *राष्ट्र वर्ग विशेष के समूहों का समुच्चय-मात्रा नहीं है। सांस्कृतिक चेतना से स्पंदित भारत का समाज-जीवन एक राष्ट्र के रूप में अपनी एक अलग पहचान बनाए हुए है। यह जोड़-तोड़कर बलपूर्वक बनाया हुआ देश नहीं है। सांस्कृतिक सूत्र में बंधा राष्ट्र भारत को विश्व में एक अलग पहचान देता है। इसलिए इसकी सारी व्यवस्थाएँ उसकी आत्मा के अनुरूप होनी चाहिए।* [13]

राष्ट्र का दूसरा सबसे महत्वपूर्ण तत्व समान सांस्कृतिक जीवन मूल्यों को माना गया है। इसमें प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के महत्वपूर्ण पहलुओं धर्म, आध्यात्म, अर्थ, राजनीति, भाषा और साहित्य सभी का मंथन किया गया है। जीवन में धर्म को सर्वोपरि महत्व दिया गया है। धर्म न तो रिलीजन है और न ही मजहब। धर्म का सही मायने में अर्थ कर्तव्य बताया गया है। यह सदैव सकारात्मक तथा मानव के कल्याण के लिए होता है। धर्म व्यक्ति के संपूर्ण चारित्रिक विकास तथा समाज व्यवस्था के लिए है। राष्ट्र के निर्माण में इसकी प्रबल भूमिका है।

कुल मिलाकर भारत राष्ट्र तथा राष्ट्रवाद मूल रूप में सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक, सामूहिक तथा विवेकपूर्ण सनातन धर्म पर आधारित है। इसकी प्रमुखता सांस्कृतिक तथा सामाजिक है, न कि आर्थिक और राजनीतिक। सांस्कृतिक जीवन की यह विचारधारा प्राचीन काल से वर्तमान तक भारतीयों के मनोभाव को विभिन्न क्षेत्र में अभिव्यक्त करती आ रही है। यह सदैव भारतीय जीवन में प्रेरणा और स्फूर्ति के जागरण के साथ संघर्ष, त्याग तथा

बलिदान के लिए प्रेरित करती है। अस्तु भारतीय ज्ञान परंपरा सिद्ध करती है कि मनुष्य में विविधता एवं अनेकता होते हुए भी सबमें आंतरिक एकरूपता का भाव होता है। मानव की सोच इस एकात्म भाव पर बनती है और वह अपनी पहचान उसी परमात्मा के एक रूप में समझता है, तब भारतवर्ष में एकात्मक राष्ट्र भाव की रचना होती है। जब मनुष्य समाज का आधार इस विश्वास पर होता है कि हम अकेले नहीं है, सृष्टि की सभी वस्तुएँ हमसे जुड़ी हुई हैं, हम सब भी उस पर निर्भर हैं और वह भी हम पर निर्भर है तो एक भिन्न प्रकार की सामाजिक संरचना का विकास होता है, जिसे सांस्कृतिक राष्ट्रवाद कहना चाहिए।

निष्कर्ष : किसी राष्ट्र की पहचान उसकी संस्कृति एवं संस्कृति की पहचान वहाँ के लोगों के जीवन मूल्यों के व्यवहार की सत्यता से होती है। यह सत्य है कि जीवन में जब सत्य एवं धर्म के संस्कार मजबूत होते हैं, तब जीवन आत्मगौरव एवं विश्वास से भर जाता है। यही आत्मगौरव और विश्वास का भाव, जब मातृभूमि के साथ संबद्ध होता है, तब राष्ट्र भाव जागृत होता है। भारतभूमि पर जागृत इस भाव संपन्नता के व्यवहार से मातृभूमि का मस्तक ऊँचा होता है। सत्य तो यह है कि हम प्राचीन काल से ही सांस्कृतिक रूप से एक राष्ट्र के रूप में रहते आ रहे हैं। राजनीतिक इकाई के रूप में भले ही स्वतंत्रता की लड़ाई के समय एक राष्ट्र की कल्पना की गई, किंतु अपने संस्कारों से हम एक राष्ट्र के रूप में प्राचीन काल से ही बंधे पाए जाते हैं। राजा राममोहन राय, स्वामी विवेकानंद, श्री अरविंद, रामकृष्ण परमहंस जैसे धर्म संस्थापकों का उदाहरण हमारे पास उपलब्ध है। इन भारतीय मनीषियों ने यह महसूस किया कि भारतीय मानस की आत्म विस्मृति केवल राष्ट्रवाद के मंत्र से ही पुन: उठेगी। राष्ट्रीयता केवल राजनीतिक नहीं है, अपितु यह विश्वास है, एक आस्था है, एक धर्म है, एक संस्कृति है, यही हमारी राष्ट्रीयता है। राष्ट्र की उत्पत्ति इसी धर्म, संस्कृति, आस्था के साथ हुई है। राष्ट्र की परिभाषा, सांस्कृतिक तथा दार्शनिक रूप से भारत में ही तृप्त होती है।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद राष्ट्र के लिए केवल राजनीतिक एकता और संप्रभुता को स्वीकार नहीं करता, बल्कि सांस्कृतिक एकता को उसका प्राण तत्व मानता है। इसके अनुसार सांस्कृतिक विभिन्नता राष्ट्र के अस्तित्व के लिए कोई खतरा नहीं है। बहुत सारे विद्वान भारतवर्ष को एक राष्ट्र के रूप में उसके अस्तित्व के पीछे उसकी दैवीय शक्ति को मानते हैं, किंतु यह दैवीय शक्ति कुछ और नहीं, बल्कि इसके सांस्कृतिक मूल्य ही हैं, जो भारत को अखंड राष्ट्र के रूप में पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक बनाए हुए हैं। ❑

संदर्भ सूची :

1. भगत, अरुण कुमार, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के समुन्नयन के संकल्प के साथ संपन्न हुआ 'भारत बोध', मीडिया नवचिंतन, 2017, पृष्ठ–13
2. Woods, Eric Taylor, Cultural nationalism, Sage Publications Ltd. New Delhi, 2016, Page-1
3. दास, पवन कुमार, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और राष्ट्र निर्माण में संस्कृति की भूमिका पर पंडित दीनदयाल उपाध्याय के विचार, शिक्षण संशोधन, 2020, पृष्ठ– 121
4. Moha, Atanu & Pattnayak, D.D, Cultural Nationalism in Indian Perspective, The Indian Journal of Political Science, Vol. 75, No. 1, 2014, Page- 62
5. भगत, अरुण कुमार, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के समुन्नयन के संकल्प के साथ संपन्न हुआ 'भारत बोध', मीडिया नवचिंतन, 2017, पृष्ठ–11
6. Raina, Asif Rashid & Singh, Anoop, Impact of Buddhist thoughts on Cultural Nationalism of India, Sprin Journal of Arts, Humanities and Social Sciences, Vol.02(1), 2023, Page- 5
7. भगत, अरुण कुमार, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के समुन्नयन के संकल्प के साथ संपन्न हुआ 'भारत बोध', मीडिया नवचिंतन, 2017, पृष्ठ–11
8. Woods, Eric Taylor, Cultural nationalism, Sage Publications Ltd. New Delhi, 2016, Page-1
9. Raina, Asif Rashid & Singh, Anoop, Impact of Buddhist thoughts on Cultural Nationalism of India, Sprin Journal of Arts, Humanities and Social Sciences, Vol.02(1), 2023, Page- 3
10. Abhinandan, Netajee, Nationalism: The Vivekananda Way, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies, 2021, Page- 16132
11. Abhinandan, Netajee, Nationalism: The Vivekananda Way, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies, 2021, Page- 16133
12. भगत, अरुण कुमार, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के समुन्नयन के संकल्प के साथ संपन्न हुआ 'भारत बोध', मीडिया नवचिंतन, 2017, पृष्ठ–12
13. भगत, अरुण कुमार, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के समुन्नयन के संकल्प के साथ संपन्न हुआ 'भारत बोध', मीडिया नवचिंतन, 2017, पृष्ठ–13

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

सौंदर्य बोध

शमशेर बहादुर सिंह के काव्य में प्रकृति

पूजा कुशवाहा

शोधार्थी, हिंदी विभाग
लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी
जालंधर-दिल्ली जी.टी. रोड
फगवाड़ा, पंजाब-144411
9140836100
poojakushwaha5593@gmail.com

प्रस्तावना :

शमशेर बहादुर सिंह हिंदी काव्य जगत में एक अद्वितीय नक्षत्र के समान हैं। इनका जन्म 13 जनवरी, 1911 को उत्तर प्रदेश के देहरादून जिले के एक छोटे से गाँव में हुआ था। उनका साहित्यिक जीवन हिंदी कविता के छायावादी और प्रगतिशील युग के बीच का संधि बिंदु है। उनकी कविताओं में प्रकृति का सुंदर और सजीव चित्रण मिलता है। इनकी कविताओं में छायावादी प्रभाव के साथ-साथ प्रगतिशील चेतना भी मिलती है।

हिंदी साहित्य में शमशेर बहादुर सिंह का नाम प्रमुख कवियों में गिना जाता है। उनकी कविताएँ प्रकृति, मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक मुद्दों को गहराई से छूती हैं। उनके काव्य में प्रकृति केवल एक बाहरी वस्तु नहीं, बल्कि एक जीवंत सत्ता के रूप में उभरती है, जो मनुष्य के मनोभावों, विचारों और अनुभूतियों से गहरे से जुड़ी होती है। शमशेर बहादुर सिंह की काव्य रचनाओं में प्रकृति का महत्व विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है। इस शोध पत्र में हम शमशेर बहादुर सिंह की काव्य रचनाओं में प्रकृति के विभिन्न आयामों का विश्लेषण करेंगे।

बीज शब्द : प्रकृति, पर्यावरण, मानव, जीवंतता, संवेदना, विचार, मानवीकरण, दार्शनिक, आध्यात्मिक, भावना, शैली, प्रवाहशीलता, प्रतीक, मनोरम, शांत।

मूल आलेख : शमशेर बहादुर सिंह की कविताओं में प्रकृति का चित्रण उनके व्यक्तित्व और उनके संवेदनशील हृदय को प्रकट करता है। वे प्रकृति के विभिन्न रूपों और उनके प्रभावों को बड़ी कुशलता से अपनी कविताओं में पिरोते हैं। उनकी कविताओं में प्रकृति केवल दृश्यात्मक सुंदरता नहीं है, बल्कि एक गहरी अनुभूति और संवेदनाओं का स्रोत भी है।

शमशेर की कविता में प्रकृति :

इस विभिन्न रूपा प्रकृति के अलग-अलग रंग शमशेर पर गहरा प्रभाव डालते रहे हैं। शायद इसलिए वे प्राय: रंगों और गतियों में ही प्राकृतिक रूपों को ढलता हुआ देखते हैं।

'उदिता' की भूमिका में शमशेर लिखते हैं, *''शामों की झुरमुट में, जब पच्छिम के मैले होते हुए लाल पीले बैगनी रंग हर चीज को लपेट कर अपने गढ़े मिले-जुले*

धुंधलके में खोने से लगते हैं आपने क्या उस वक्त भी ध्यान दिया है कि कैसे हर चीज एक खामोश राग में डूबने लगती है..... ?''[1]

शमशेर की कविताओं में प्राकृतिक दृश्यों का विस्तारपूर्ण चित्रण मिलता है। उनकी कविताओं में धूप, नदियाँ, पेड़, फूल और जंगलों का बहुत ही सूक्ष्म और सजीव वर्णन है। ये दृश्य न केवल उनकी कविताओं को सुंदर बनाते हैं, बल्कि उनमें एक विशेष प्रकार की संवेदनशीलता और गहराई भी भरते हैं।

''पारदर्शी धूप के पर्दे
मुस्कराते
मौन आँगन में
माँ सा कोमल बहुत पीला नभ''[2]
''चाँदनी की उँगलियाँ चंचल क्रोशिये से बन रही थीं
चपल फेन-झालर बेल, मानो।
पक्तियों में टूटती-गिरती चाँदनी में लोटती लहरें
बिजलियों-सी कौंदती लहरें।''[3]

शमशेर की कविताओं में प्रकृति और मानव जीवन के बीच के संबंध को बड़े गहरे और सूक्ष्म रूप में प्रस्तुत किया गया है। वे प्रकृति को मानव जीवन का अभिन्न अंग मानते हैं और उसकी विभिन्न अवस्थाओं और घटनाओं को मानव अनुभवों और भावनाओं से जोड़ते हैं।

''धुन रही थीं सर
व्यर्थ व्याकुल मत्त लहरें वहीं आ-आकर
जहाँ मैं खड़ा था मौन ;
समय के आघात से पोली, दीवारें
जिस तरह घहरें
एक के बाद एक, सहसा''[4]

शमशेर की कविताओं में प्रकृति को प्रेम और सौंदर्य का प्रतीक माना गया है। इनकी कविताओं में हवा, झरने, फूल, लहर आदि का वर्णन इस प्रकार किया गया है कि वे प्रेम की अभिव्यक्ति का माध्यम बन जाते हैं, जिस प्रकार नि:स्वार्थ भाव से प्रकृति मनुष्य को अपने प्रेम का उपहार देती है वैसे प्रेम के आग्राही हैं –

''तुम मुझसे प्रेम करो जैसे मछलियाँ लहरों से करती हैं''[5]

शमशेर बहादुर सिंह के काव्य में प्रकृति का चित्रण केवल प्राकृतिक सुंदरता को दर्शाने के लिए नहीं है, बल्कि यह कवि के भावनात्मक और दार्शनिक विचारों का एक महत्वपूर्ण माध्यम है।

शमशेर के काव्य में प्रकृति आंतरिक भावनाओं, जैसे उदासी, खुशी, एकांत, और प्रेम, को व्यक्त करने का एक माध्यम बन जाती है–

''नम गई पृथ्वी बिछाकर फूल के सुख
सीप-सी रंगीन लहरों के हृदय में, डोल
चमकीले पलों में,
हास्य के अनमोल मोती, रोल
तट की रेत, अपने आप कैसे टूटते हैं :
बुलबुलों में, सहज-इंगित मुद्रिकाओं के नगीने
भाव-अनुरंजित, न जाने सहज कैसे हवा के उन्मुक्त
उर में फूटते हैं!
(मौन मानव। बोल को तरसा करेगा क्या?)''[6]

शमशेर की कविताओं में प्रकृति और प्रेम का गहरा संबंध देखने को मिलता है। वे प्रकृति के माध्यम से प्रेम की भावनाओं को व्यक्त करते हैं। उनकी कविताओं में प्रेम की कोमलता और गहराई को प्रकृति की सुंदरता और व्यापकता के माध्यम से व्यक्त किया गया है :-

''तुम छोटा-सा हो ताल, घिरा फैलाव,/
लहर हलकी-सी,
जिसके सीने पर ठहर शाम/
कुछ अपना देख रही है उसके अंदर,
वह अँधियाला...''[7]

शमशेर बहादुर सिंह की कविताओं में प्रकृति का अत्यंत सुंदर और सजीव चित्रण मिलता है। उनकी कविताओं में प्रकृति केवल एक सजावट या पृष्ठभूमि के रूप में नहीं है, बल्कि यह कविता के मूल तत्व के रूप में उपस्थित होती है। वे प्रकृति के विभिन्न रूपों को अपनी कविताओं में बहुत ही प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करते हैं। उनकी कविता 'उषा' में सूर्योदय का सुंदर वर्णन द्रष्टव्य है:-

''नील जल में या किसी की
गौर झिलमिल देह
जैसे हिल रही हो।
और...

जादू टूटता है इस उषा का अब
सूर्योदय हो रहा है।'' [8]

शमशेर बहादुर सिंह की कविताओं में प्रकृति और मानवीय भावनाओं का गहरा संबंध दिखता है। वे प्रकृति के माध्यम से मानव भावनाओं को व्यक्त करते हैं-

''निंदिया सतावे मोहें सँझहीं से सजनी''[9]

शमशेर की कविताओं में प्रकृति का दार्शनिक दृष्टिकोण भी मिलता है। वे प्रकृति के माध्यम से जीवन और मृत्यु, सुख और दु:ख, स्थायित्व और परिवर्तनशीलता जैसे दार्शनिक विषयों पर विचार करते हैं :-

''कैसी अजब बात है कि पहाड़ घूम रहे हैं
और कोई झरना बहुत जियादा शोर मचा रहा है
मैं किसी बहुत प्राचीन गूँज में डूब गया हूँ
और यह दुनिया उसी की एक दीर्घ अनुगूँज/
बनती जा रही है।''[10]

शमशेर की कविताओं में प्रकृति का एक रूप दर्शन और आध्यात्मिकता से भी जुड़ा हुआ है। वे प्रकृति के माध्यम से जीवन के गहरे अर्थ और सत्य की खोज करते हैं। शमशेर प्रकृति के माध्यम से जीवन की अस्थिरता और परिवर्तनशीलता का दार्शनिक चित्रण करते हैं :-

''यकायक एक बहुत छोटी-सी नाव में अपने-आपको नहीं पाता हूँ और वहाँ रंगीन बर्फ का बहता हुआ कोई टापू है

मैं विस्मय से एकाएक देख रहा हूँ कि यह नया लोक इस अपार मृत्युलोक में कहाँ से प्रकट हो गया!''[11]

प्रकृति बिंबों को शमशेर की कविता में देखा जा सकता है, जो जीवन के साधारण से कार्य व्यापार को असाधारण अर्थ प्रदान करते हैं। ये बिंब केवल रोमानी नहीं, बल्कि ये जीवन के यथार्थ से रूबरू कराने वाले हैं। उषा, सूर्यास्त, गीली मुलायम लटें, एक पीली शाम, सागर तट, आदि अनेक ऐसी कविताएँ हैं। इनकी 'एक नीला आईना बेठोस' शीर्षक कविता में प्रकृति बिंब का उदात्त चित्रण देखिए :-

''एक नीला आइना
बेठोस सी यह चाँदनी
और अन्दर चल रहा हूँ मैं
उसी के महातल के मौन में
मौन में इतिहास का कन किरन जीवित, एक बस''[12]

3. प्रकृति और सामाजिक संदर्भ :

शमशेर अपने समय की सामाजिक संघर्ष और असमानताओं को भी प्रकृति के माध्यम से व्यक्त करते हैं। प्राकृतिक आपदाएँ और कठिन परिस्थितियाँ समाज की समस्याओं और संघर्षों को प्रतीकात्मक रूप में दर्शाती हैं।

''य शाम है कि आसमान खेत है पके हुए अनाज का। लपक उठीं लहू-भरी दराँतियाँ, कि आग है :

धुआँ-धुआँ सुलग रहा गवालियार के मजूर का हृदय।'' [13]

पर्यावरण और मानव जीवन का संबंध :

शमशेर के काव्य में प्रकृति और मानव जीवन के बीच गहरा संबंध दिखाया गया है। पर्यावरण का विनाश और प्राकृतिक संसाधनों का अति उपयोग उनके काव्य में मानव जीवन के अस्तित्व के लिए खतरे के रूप में प्रकट होता है। शमशेर की कविताओं में प्रकृति का सौंदर्य और विनाश का द्वैत भी दिखाई देता है। वे प्रकृति की सुंदरता को एक ओर देखते हैं और दूसरी ओर उसके विनाशकारी पहलुओं को भी चित्रित करते हैं।

''बड़ी जबरदस्त बाढ़ आई है,
न जाने कितने मन बोरे गेहूं के बह गए ... ''[14]

शमशेर की काव्यदृष्टि आधुनिकतावादी है, जिसमें वे प्रकृति को एक जीवंत और संवेदनशील इकाई के रूप में देखते हैं। उनकी कविताओं में प्रकृति की हर छोटी-बड़ी चीज, चाहे वह पेड़-पौधे हों, नदी-सागर हों या आकाश-धरती हों, एक विशेष अर्थ और संवेदना से जुड़ी होती हैं।

प्रकृति का प्रतीकात्मक प्रयोग :

शमशेर की कविताओं में प्रकृति का प्रतीकात्मक प्रयोग अत्यधिक महत्वपूर्ण है। वे प्रकृति के माध्यम से मानवीय भावनाओं, विचारों और स्थितियों को अभिव्यक्त करते हैं। 'चांदनी' का प्रयोग शांति और सौंदर्य के प्रतीक के रूप में किया गया है। इसी तरह, 'झरना' कविता में बहते पानी का चित्रण मानवीय जीवन की अस्थिरता और प्रवाहशीलता को दर्शाता है।

प्रकृति और मानवीय संवेदनाएं :

शमशेर की कविताओं में प्रकृति और मानवीय संवेदनाओं का गहरा संबंध है। वे प्राकृतिक दृश्यों के माध्यम से मानव मन की गहराइयों को उद्घाटित करते हैं। उदाहरण के लिए, उनकी कविता 'बादल' में बादलों का चित्रण न केवल प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन करता है, बल्कि मानव जीवन की अस्थिरता और अनिश्चितता को भी प्रतीकात्मक रूप से दर्शाता है।

प्रकृति का मानवीकरण :

शमशेर की कविताओं में प्रकृति का मानवीकरण भी महत्वपूर्ण है। वे पेड़-पौधों, नदी-नालों और अन्य प्राकृतिक तत्वों को जीवंत और संवेदनशील रूप में प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार, प्रकृति उनके लिए एक मित्र, एक साथी और एक शिक्षक के रूप में उपस्थित होती है। उनकी कविता 'पेड़' में पेड़ को एक जीवंत और संवेदनशील इकाई के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो जीवन के संघर्ष और सहनशीलता का प्रतीक है।

प्रकृति और दर्शन :

शमशेर की कविताओं में प्रकृति का दार्शनिक दृष्टिकोण भी महत्वपूर्ण है। वे प्रकृति के माध्यम से जीवन और मृत्यु, स्थिरता और परिवर्तन, और आत्मा और ब्रह्मांड के गूढ़ रहस्यों को प्रस्तुत करते हैं। 'नदी' कविता में नदी का बहाव जीवन के प्रवाह और अनिश्चितता का दार्शनिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

उनकी कविताओं में गहरी भावुकता और सौंदर्यबोध की झलक मिलती है। उनके काव्य में प्रकृति का चित्रण अद्वितीय है, जिसमें प्रकृति की सजीव और विस्तृत तस्वीरें उकेरी गई हैं। शमशेर की कविताएँ प्रकृति के विविध रंगों और भावनाओं को इतने सजीव और संवेदनशील तरीके से प्रस्तुत करती हैं कि पाठक स्वयं को उस प्राकृतिक वातावरण का हिस्सा महसूस करने लगता है।

प्रकृति के विविध रूप :

शमशेर की कविताओं में प्रकृति के विभिन्न रूपों का वर्णन मिलता है- जैसे कि पेड़, पौधे, फूल, नदियाँ, पहाड़, आकाश, सूरज, चाँद, तारे आदि। इन सभी प्राकृतिक तत्वों का वर्णन उन्होंने बड़े ही संवेदनशील और सूक्ष्म ढंग से किया है। उनकी रचनाओं में प्रकृति का वर्णन न केवल उसकी सुंदरता और शक्ति को प्रकट करता है, बल्कि वह मानवीय भावनाओं और जीवन के विविध पहलुओं का प्रतीक भी बनता है।

प्राकृतिक दृश्यों का सजीव चित्रण :

शमशेर की कविताओं में प्राकृतिक दृश्यों का सजीव चित्रण उनकी गहरी संवेदनशीलता को दर्शाता है। उनकी कविता में चाँदनी रात का वर्णन इतना जीवंत है कि पाठक स्वयं को उस वातावरण में महसूस करने लगता है। शमशेर की एक अन्य कविता 'वन्य जीवन' में जंगल का वर्णन किया गया है। इस कविता में उन्होंने जंगल के विभिन्न जीवों, पेड़-पौधों और उनके आपसी संबंधों का सजीव चित्रण किया है।

शमशेर की कविताओं में पहाड़ों का भी विशेष स्थान है। उनकी कविता में पहाड़ों की सुंदरता, उनकी विशालता और उनकी प्राकृतिक महिमा का वर्णन बड़े ही संवेदनशील तरीके से किया गया है।

शमशेर की कविताओं में प्रकृति का चित्रण मानवीय जीवन और भावनाओं के साथ गहरे रूप में जुड़ा हुआ है। उनकी कविताओं में प्रकृति और मानव जीवन का अटूट संबंध उभरकर सामने आता है। वे प्रकृति के माध्यम से मानव जीवन की विभिन्न अवस्थाओं और भावनाओं को व्यक्त करते हैं।

शमशेर की कविताओं में प्रकृति के विभिन्न तत्वों का प्रतीकात्मक अर्थ भी है। जैसे, सूरज का उदय नए जीवन की शुरुआत का प्रतीक हो सकता है, जबकि चाँदनी रात शांति और सुकून का प्रतीक हो सकती है।

शमशेर की कविताओं में प्रकृति का चित्रण मानवीय संवेदनाओं और भावनाओं को उभारने का एक साधन भी है। उनकी कविताओं में प्रकृति के माध्यम से मानव हृदय की गहराइयों और उसकी संवेदनशीलता का अन्वेषण किया गया है।

प्रकृति और मानव जीवन का संबंध :

शमशेर की कविताओं में प्रकृति के विभिन्न तत्वों का प्रतीकात्मक अर्थ भी है, जो उनकी कविताओं को और अधिक गहराई प्रदान करता है। प्रकृति के माध्यम से वे

जीवन की जटिलताओं, संघर्षों और उसकी अनंत संभावनाओं को उजागर करते हैं।

शमशेर की कविताओं में प्रकृति और मानव जीवन का गहरा संबंध उभरकर आता है। प्रकृति के विभिन्न तत्व उनके लिए मानवीय जीवन की अवस्थाओं और भावनाओं का प्रतीक बनते हैं। सूरज का उदय नये जीवन की शुरुआत का संकेत है, जबकि चाँदनी रात शांति और सुकून का प्रतीक है। जंगल और पहाड़ों का वर्णन जीवन की विभिन्न कठिनाइयों और उनकी सुंदरता का प्रतीक है।

शमशेर बहादुर सिंह के काव्य में प्रकृति का चित्रण केवल एक सजावटी तत्व नहीं है, बल्कि यह उनके भावनात्मक और दार्शनिक विचारों को गहराई से प्रकट करने का एक सशक्त माध्यम है। प्रकृति के माध्यम से वे जीवन के विभिन्न पहलुओं, आंतरिक भावनाओं, सामाजिक संघर्षों और दार्शनिक सत्य की खोज को बड़े ही संवेदनशील और गहन रूप से व्यक्त करते हैं। इस प्रकार, शमशेर के काव्य में प्रकृति का चित्रण उनके काव्य की गहराई और व्यापकता को उजागर करता है। शमशेर बहादुर सिंह हिंदी साहित्य के एक प्रमुख कवि हैं, जिनकी काव्य शैली में प्रकृति का चित्रण महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

इन विशिष्टताओं के माध्यम से शमशेर बहादुर सिंह ने अपनी कविताओं में प्रकृति को एक महत्वपूर्ण शमशेर की कविताओं में प्रकृति का सूक्ष्म और संवेदनशील दृष्टिकोण से वर्णन मिलता है। वे प्रकृति की छोटी-छोटी और साधारण चीजों में भी सुंदरता और गहराई देखते हैं।

निष्कर्ष :

शमशेर की कविताओं में प्रकृति का चित्रण मानवीय संवेदनाओं और भावनाओं को उभारने का एक महत्वपूर्ण साधन है। उनकी कविताओं में प्रकृति और मानवीय अनुभवों का मिश्रण पाठकों को न केवल प्राकृतिक सौंदर्य का अनुभव कराता है, बल्कि उन्हें अपनी आंतरिक संवेदनाओं और भावनाओं से भी जोड़ता है। यह संवेदनशीलता और गहराई उनकी कविताओं को एक विशिष्ट पहचान देती है और उन्हें हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करती है।

शमशेर की कविताओं का यह प्रकृति चित्रण न केवल उनके काव्यकला की विशिष्टता को दर्शाता है, बल्कि हिंदी साहित्य में प्रकृति के प्रति एक नई दृष्टि और संवेदना का विकास भी करता है। उनकी कविताओं में प्रकृति के इस अद्वितीय चित्रण का अध्ययन साहित्यिक और दार्शनिक दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनकी रचनाओं में प्रकृति एक सजीव और सक्रिय तत्व है, जो न केवल सौंदर्य और शक्ति का प्रतीक है, बल्कि मानवीय संवेदनाओं और जीवन के विभिन्न पहलुओं का भी प्रतीक है। शमशेर की कविताओं में प्रकृति का यह विशिष्ट और गहरा चित्रण उन्हें हिंदी साहित्य में एक अद्वितीय स्थान प्रदान करता है, जो हमेशा उनकी काव्य रचनाओं की महिमा और उनके संवेदनशील दृष्टिकोण को उजागर करेगा। ❑

संदर्भ सूची :

1. https://raj-bhasha-hindi.blogspot.com/2010/11/blog-post_26.html
2. प्रतिनिधि कविताएँ, सं. नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, ग्यारहवाँ सं., पृ. 131
3. वही, पृ. 49
4 .वही, पृ. 49
5. वही, पृ. 110
6. वही, पृ. 55
7. वही, पृ. 17
8. https://www.hindwi.org/kavita/usha-shamsher-bahadur-singh-kavita
9. वही. पृ.113
10. वही. पृ. 160
11. वही. पृ. 160
12. कुछ कविताएँ, पृ.21
14. वही, पृ. 80

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

कृष्णा सोबती के उपन्यासों में स्त्री देह
स्वतंत्रता, अस्मिता और संघर्ष

सलमान

शोधार्थी, हिंदी विभाग
तमिलनाडु केंद्रीय विश्वविद्यालय
तिरुवारुर, पिन-610005
8285166282
khan8285166282@gmail.com

कृष्णा सोबती भारतीय साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखती हैं, जिन्होंने अपने उपन्यासों में स्त्री जीवन के विभिन्न पहलुओं को बड़े ही गहन और विश्लेषणात्मक ढंग से उकेरा है। उनके लेखन में स्त्री पात्रों की पीड़ा, संघर्ष, आत्मस्वीकृति और मुक्ति की प्रबल अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। सोबती ने पितृ सत्तात्मक समाज में स्त्री की स्थिति और उसकी अस्मिता को बेहद मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया है। उनके उपन्यासों में स्त्री देह और उसकी स्वतंत्रता को सिर्फ शारीरिक नहीं, बल्कि अस्तित्व के प्रश्न के रूप में चित्रित किया गया है। 'डार से बिछुड़ी', 'मित्रों मरजानी' और 'सूरजमुखी अंधेरे के' जैसे उपन्यासों में उन्होंने स्त्री के भीतर और बाहर के संघर्ष को गहराई से उभारा है, जो समाज की रूढ़ियों और पितृ सत्ता से टकराता हुआ दिखाई देता है ।

कृष्णा सोबती ने समाज में स्त्री की दशा और दिशा का बेहद सहजता से अपने उपन्यासों में वर्णन किया है। स्त्री अस्मिता और स्त्री देह के प्रश्नों को कृष्णा सोबती ने जिस बेबाकी, गहराई और मार्मिकता से उकेरा है, अन्यत्र किसी और लेखिका के लेखन में वह देखने को नहीं मिलता है। कृष्णा सोबती के लेखन में स्त्री अपनी पूरी एंद्रियता और मनोभावों के साथ उपस्थित होती है। उसकी पीड़ा से उपजता हुआ शोक मन को आंदोलित और विचलित कर देता है। इन स्त्रियों के प्रश्नों से मन भीतर तक जख्मी और उद्वेलित हो जाता है। 'डार से बिछुड़ी' हुई पाशों से जब लेखिका परिचय कराती हैं, तब पाशों को अपने करीब बैठा हुआ पाठक अनुभूत करता है। 'पाशों' हमारे समाज की वह स्त्री है, जिसे पल-पल गढ़ा है हम लोगों ने। उसकी किशोरावस्था में कसी गई फब्तियों से गुजरते हुए लगता है कि एक स्त्री को सामान्य जीव की तरह हमारा समाज और परिवार बर्दाश्त नहीं कर सकता है। स्त्री को उसी की देह के भीतर कैद कर देने की प्रवृत्ति तानाशाही को जन्म देता है। 'पाशों' को कभी नानी के द्वारा फब्तियाँ सुनने को मिलती –*"रब्ब तुझे सँभाले, अरी कपड़ा नीचे रखा कर!"*[1] तो कभी मामियों के द्वारा आँखें तरेर कर कहा जाता – *"पसार छूने लगी –न शर्म, न हया! अरी ओढ़नी अब तेरे गले तक से उठने लगी... ।"*[2] पाशों के माध्यम से लेखिका उस पूरी स्त्री जाति की स्थिति को रेखांकित कर देती हैं, जिसकी देह ही उसके शोषण का प्रमुख कारण बन गई है।

पाशों ही की देह क्या कभी उसकी रही है? कभी वह दीवान की तो कभी बरकत की, तो कभी मँझले की बनके रह गई। कभी किसी ने पाशों के मन की पाशों की देह की नहीं सुनी की वह क्या चाहती है। दीवान जोकि उसके पिता की उम्र का है, पाशों कहती है –*''जिनकी बैठक में रात-भर टिकी थी, वह तो किसी के बेटे-से नहीं दीखते थे। पका-पका चेहरा ... ।''*[3] ऐसे आदमी जो किसी का बेटा नहीं, बाप-सा दिखता था उससे उसकी सास संबंध बनाने को कहती है –*''पली-पलाई है री मालन, मेरे बेटे को खुश करना सीख।''*[4] पुरुष की खुशी के बारे में सबने सोचा, लेकिन स्त्री की खुशी किसमें है यह हमारा पितृ सत्तात्मक समाज कभी नहीं सोच पाया। वह अपनी इच्छा के विरुद्ध हमेशा बलात्कृत होती रही है। 'बरकत' रूपी पुरुष, जिसके भीतर पौरुषत्व नहीं, पशुत्व ने जन्म ले रखा है, वह कहता है– *''तेरा तो नाम-चाम सब मेरा है री पगली!''*[5] और फिर वह अपनी पशुता पर उतरता है, जिसका वर्णन पाशों करती है – *''हाथ बढ़ा मेरा पल्ला खींच लिया । दुपट्टा छोड़ हाथ पकड़ लिया, हाथ छोड़ मुझे अपनी ओर खींच लिया, तो भी न काँपी, न चिल्लाई ; ऐसी पड़ी रही कि पानी की मार से गली-गलाई काठ होऊँ।''*[6] स्त्री विद्रोह नहीं कर सकती, वह अपने मन की नहीं कह सकती, उसको जैसा कहा जाता है वह वही करती है, यदि वह अपनी आवाज उठाने की कोशिश करती है तो उसके साथ शारीरिक हिंसा की जाती है। पाशों के साथ मँझला भी यही करता है वह कहता – *''अब कुछ भी कहा तो खैर नहीं तेर ! रात-ही-रात जिंदा गाड़ आऊँगा। समझी!''*[7] कृष्णा सोबती ने पाशों के चरित्र को बड़ी नाजुकता के साथ गढ़ा है। पाशों के माध्यम से स्त्री देह पर शोषण के निशान को बड़ी बारीकी से सोबती उकेरती हैं। पाशों के जीवन में –*''एक लड़ाई थी, जिसे उसने लगातार अपने भीतर और बाहर लड़ा, और जिसके लिए कोई भी समयांतराल कोई मायने नहीं रखता। यही कारण है कि पाशों यहाँ अपनी धरती और संस्कृति, दोनों का प्रतिरूप बन गई है।''*[8]

सोबती के उपन्यासों की स्त्रियाँ समाज की रूढ़ियों और पितृ सत्तात्मक ढाँचे से सिर्फ संघर्षरत ही नहीं रहतीं, बल्कि उससे वह टकराती हुई भी दिखाई देती हैं। जिस देह की जकड़न को और उस पर होने वाले अत्याचारों को 'डार से बिछुड़ी' की पाशों झेलती है उसके खिलाफ मुक्त रूप में अपनी आवाज को 'मित्रों मरजानी' की नायिका सुमित्रावंती उर्फ 'मित्रों' उठाती है। स्त्री देह के स्वाधिकार को मित्रों हासिल करती है और तथाकथित पितृ सत्तात्मक परिवेश के खिलाफ लड़ाई लड़ती है। पाशों अपनी इच्छाओं एवं अपने तन और मन की बातों को कभी अभिव्यक्त नहीं कर पाई, किंतु मित्रों के रूप में उसने अपनी इच्छाओं को सबके सामने रखा।

पाशों का ही एक पैरालल चरित्र मित्रों के रूप में कृष्णा सोबती गढ़ती हैं। जिन स्तनों के उभार को लेकर पाशों को सामाजिक ताने सुनने पड़े और तमाम बंदीशों में रहना पड़ा, उन स्तनों के प्रति आसक्त होकर मित्रों कहती है –''सच कहना, जिठानी सुहागवन्ती, क्या ऐसी छातियाँ किसी और की भी हैं?.....''[9] मित्रों अपनी देह को अपनी हीनता और शोषण का प्रतीक न मानकर आत्मविश्वास

और शक्ति का प्रतीक मानती है, वह कहती है–''जब तक मित्रों के पास यह इलाही ताकत है, मित्रों मरती नहीं।''[10] मित्रों के लिए देह संस्कार और परंपरा नैतिकता की परिधि से बाहर हैं, उसके लिए देह उसकी अस्मिता और उसके अस्तित्व का प्रश्न बनकर उभरती है। वह, सुहागवन्ती जो कि परंपरा पोषित संस्कारों और रूढ़ियों की प्रतिनिधि बनकर उपन्यास में उभरकर आती है, उसके नैतिकता भरे उपदेशों को खारिज कर देती है और कहती है –*''ठोंक-पीट मुझे अपने सबक दोगी तो मैं भी मुंडी हिला लूँगी, जिठानी, पर जो हौंस इस तन व्यापी है.... ।''*[11]

'डार से बिछुड़ी' की 'पाशों' सामाजिक बंधनों में बँधी एक आत्मपीड़ित स्त्री के रूप में उभरती है, जो सामाजिक ताने-बाने में फँसी उसका पालन करने को मजबूर है, वहीं मित्रों स्वयं के लिए खड़ी एक आत्मनिर्भर और आत्मविश्वासी अपने अस्तित्व और अस्मिता के प्रति जागृत अपने को देह के बंधन से मुक्त स्त्री के रूप में प्रस्तुत करती है। वह पितृ सत्ता के बंधनों को चुनौती देते हुए कहती है–*''सच तो यूँ, जेठ जी, कि दीन-दुनिया बिसरा मैं मनुक्ख की जात से हँस-खेल लेती हूँ। झूठ यूँ कि खसम का दिया राजपाट छोड़े मैं कोठे पर तो नहीं जा बैठी?''*[12] मित्रों अपने अधिकारों की पहचान करती है और समाज की रूढ़ियों को ललकारती है। पाशों का संघर्ष आंतरिक है, जबकि मित्रों का संघर्ष बाहरी सामाजिक संरचनाओं से है। इन दोनों पात्रों के माध्यम से कृष्णा सोबती स्त्री पहचान, अस्मिता, और स्वतंत्रता की खोज का एक गहरा विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं ।

स्त्री देह और मुक्ति के प्रश्न को संदर्भित करके कृष्णा सोबती ने 'सूरजमुखी अंधेरे के' नामक एक मनोवैज्ञानिक उपन्यास लिखा। यह उपन्यास 'डार से बिछुड़ी' और 'मित्रों मरजानी' की एक अगली कड़ी के रूप में प्रस्तुत होता है। इस उपन्यास की नायिका रतिका उर्फ 'रत्ती', 'पाशों' और 'मित्रों' के समय से आगे की स्त्री है। जहाँ पाशों की देह विभिन्न पुरुषों द्वारा उसकी मर्जी के खिलाफ भोगी जा रही थी, जिसमें पाशों क्षण-प्रतिक्षण बलात्कृत महसूस करती रही, जबकि मित्रों अपनी देह और इच्छाओं के प्रति सजग एवं सचेत रहती है। जहाँ पाशों के पास अपने देह के प्रति अधिकार नहीं था, वहीं मित्रों के पास यह था। मित्रों इसलिए अपनी देह और काम-वासना के प्रति आसक्त रहती है। वह सिर्फ आसक्त ही नहीं रहती, बल्कि उसको सहजता के साथ स्वीकारती और अभिव्यक्त करने की क्षमता भी रखती है। किंतु रत्ती का चरित्र मित्रों से एक कदम बढ़ाकर कृष्णा सोबती ने चरित्रार्थ किया है। रत्ती समस्त पुरुषार्थ को चुनौती देते हुए प्रस्तुत होती है। वह कहना चाहती है क्या कोई पुरुष, मुझे एक संपूर्ण स्त्री बना सकता है? इसलिए वह अनेक पुरुषों के साथ संबंध में रहती है। लेकिन दीवाकर को छोड़कर कोई पुरुष उसको वह सुख, वह आनंद नहीं दे पाता, जिसे पाकर रत्ती संपूर्ण स्त्री बन जाए। पुरुष द्वारा स्त्री के अंतर्मन को नहीं छू पाने पर उसका पुरुषार्थ आहत हो जाता है, तब वह उसको विभिन्न उपमाओं से शोभित कर अपमानित करता है। रत्ती को रोहित द्वारा इन्हीं तथाकथित उपमाओं से सुसज्जित किया जाता है, वह कहता है –*''कौन चाहेगा तुम्हें? तुम एक ठंडी और मनहूस लड़की!''*[13] बार-बार स्त्री के स्त्रीत्व को चुनौती मिलती है। राजन द्वारा भी रत्ती को कहा जाता है–*''मुझे हमेशा से शक था, तुम औरत हो भी कि नहीं!''*[14] पितृ सत्ता के द्वारा स्त्री को ऑब्जेक्टीफाई करके देखने की प्रवृत्ति के खिलाफ ही रत्ती जैसी प्रतिरोधी स्त्री पात्र का सृजन कृष्णा सोबती ने किया है। रत्ती को बार-बार ठंडी और मनहूस औरत का खिताब दिया जाता है, रत्ती उसको चुनौती देती है, रत्ती की ठंडी को तोड़ने की, उसके जीवन के अंधेरे को दूर करने की, जहाँ सूरजमुखी अंधेरे के नहीं उजाले के साथ खिले, उसकी मनहूसियत को दूर करने की, रत्ती चुनौती देती है पितृ सत्ता के पुरुषार्थ को। पाशों और मित्रों से आगे बढ़कर, रत्ती अपनी देह को केवल इच्छाओं का साधन नहीं मानती, बल्कि आत्म-स्वीकृति और मुक्ति की खोज का माध्यम बनाती है। रत्ती का संघर्ष बाहरी समाज से ही नहीं, बल्कि अपने भीतर की स्वतंत्रता और यौनिकता की स्वीकृति से भी है, जो स्त्री के अस्तित्व की नई संभावनाओं को सामने लाता है।

कृष्णा सोबती के उपन्यासों में स्त्री देह का प्रश्न शारीरिकता तक सीमित न होकर स्त्री के अस्तित्व और अस्मिता से जुड़ा हुआ है। उनके पात्र जैसे 'डार से बिछुड़ी' की पाशों, 'मित्रों मरजानी' की मित्रों, और 'सूरजमुखी अंधेरे के' की रत्ती- पितृ सत्तात्मक समाज में स्त्री की देह

को शोषित रूप में दर्शाते हैं। पाशों एक आत्मपीड़ित स्त्री है, जो अपनी देह और इच्छाओं पर अधिकार नहीं रख पाती, जबकि मित्रों अपनी देह को शक्ति का प्रतीक मानकर पितृ सत्ता के बंधनों को चुनौती देती है। रत्ती का चरित्र उससे एक कदम आगे बढ़कर स्त्री की आंतरिक स्वतंत्रता और यौनिकता की स्वीकृति को प्रस्तुत करता है। रत्ती न केवल समाज के पुरुषार्थ को चुनौती देती है, बल्कि अपने अस्तित्व की गहराइयों में मुक्ति की तलाश करती है। सोबती ने इन पात्रों के माध्यम से स्त्री की देह पर होने वाले अत्याचारों, उसकी इच्छाओं और मुक्ति की संभावनाओं को बड़ी गहराई से उकेरा है। उनकी रचनाओं में स्त्री देह एक संघर्ष का केंद्र है, जो समाज की रूढ़िवादी सोच से टकराते हुए अपनी अस्मिता और स्वतंत्रता की खोज करती है। इस प्रकार, सोबती के उपन्यास स्त्री के अस्तित्व, उसकी पहचान और स्वतंत्रता के लिए एक महत्वपूर्ण विमर्श प्रस्तुत करते हैं। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. डार से बिछुड़ी, कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण –2014, पृष्ठ संख्या–16
2. वही, पृष्ठ संख्या–17
3. वही, पृष्ठ संख्या–44
4. वही, पृष्ठ संख्या–44
5. वही, पृष्ठ संख्या–75
6. वही, पृष्ठ संख्या–75
7. वही, पृष्ठ संख्या–86
8. वही, बलर्ब
9. मित्रों मरजानी, कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण –2015, पृष्ठ संख्या–19
10. वही, पृष्ठ संख्या–19
11. वही, पृष्ठ संख्या–20
12. वही, पृष्ठ संख्या–36
13. सूरजमुखी अंधेरे के, कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2015, पृष्ठ संख्या–74
14. वही, पृष्ठ संख्या–102

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

लोक-रंग

कुबेरनाथ राय के निबंधों में लोक संस्कृति
(असम के विशेष संदर्भ में)

सुजाता कुमारी

शोधार्थी, हिंदी विभाग
तमिलनाडु केंद्रीय विश्वविद्यालय
तिरुवारुर-610005, तमिलनाडु
9540472864
Sweetysujju1@gmail.com

आधुनिक हिंदी निबंध के विस्तृत आकाश में कुबेरनाथ राय उस ध्रुवतारे की तरह हैं, जिनकी रोशनी से संपूर्ण निबंध साहित्य प्रकाशमान है। उन्होंने हजारीप्रसाद द्विवेदी की चलाई हुई अविरल परंपरा को न सिर्फ गतिमान किया, बल्कि उसमें नित-नए परिवर्तन भी किए। वे लंबे समय तक अध्यापन कार्य के लिए 'असम' में रहे। वहाँ रहने के कारण उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से असम की संस्कृति को समझा और उसका सटीक वर्णन अपने निबंधों में किया। किसी कविता के बिंब की तरह उन्होंने असम की संस्कृति को इस रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जैसे उसके सामने कोई चित्र बन रहा हो। निबंध में इस तरह का प्रयोग इस युग में अन्यत्र कम ही मिलता है।

कुबेरनाथ राय ने अपने लगभग निबंधों में असम की प्रकृति और संस्कृति का वर्णन किया है। उन्होंने असम के बाह्य रूपों का नहीं, बल्कि उसके आंतरिक रूपों (खान-पान, पर्व-त्योहार, रहन-सहन, लोक गीत, लोक नृत्य, लोक शिल्प, विभिन्न जातियों द्वारा किए जाने वाला कार्य आदि) का वर्णन अपने निबंधों में किया है। कुबेरनाथ राय के संदर्भ में उदयभानु पांडेय लिखते हैं कि *"उनसे मिलकर ऐसा लगा कि वे माटी में पूरी तरह से घुल-मिल गए थे तथा असमीया जीवन-साहित्य संस्कृति का जो विधेयक उज्ज्वल रूप है, अपनी समस्त गरिमा से प्रस्फुटित हुआ।"*[1] तीन दशकों तक असम में रहने के कारण उन्होंने वहाँ की माटी-पानी को बेहतर रूप में समझ लिया था ।

कुबेरनाथ राय असम के सांस्कृतिक इतिहास को खंगालकर पाठक के सामने प्रस्तुत करते हैं। असम आर्यों की नहीं, अनार्यों की धरती थी, बावजूद इसके महाभारत के समय से ही भारत के साथ यह बहुत ही गहराई से जुड़ा हुआ था। मणिपुर की रानी चित्रांगदा से जब अर्जुन ने शादी की थी, उससे जो पुत्र पैदा हुआ उसका नाम 'बभ्रुवाहन' था, जो बहुत ही परमवीर था। लेकिन फिर भी आर्य लोग असम के लोगों के लिए लंबे समय तक 'असुर' शब्द का प्रयोग करते रहे। इस संदर्भ में कुबेरनाथ राय लिखते हैं कि *"यूँ तो असुर बाद में आर्य सभ्यता में ही अंतर्भुक्त हो गए, परंतु एक समय में असम में इन्हीं असुरों का प्राबल्य था।*

नरकासुर, बाणासुर के अलावा शंबारासुर, घटकासुर, रत्नासुर आदि।''[2] उक्त कथन से यह स्पष्ट होता है कि लंबे समय तक असम पर असुरों का जोर रहा, किंतु आर्यों के प्रभाव के कारण उनका सम्मिश्रण उन्हीं आर्यों में हो गया, जिसके खिलाफ वे लड़ रहे थे।

असमीया लोगों पर लंबे समय तक शैव और शाक्त साधना का प्रभाव भी रहा। वर्तमान में भी इसके साक्ष्य छिट-पुट रूप में दिख जाते हैं। गुवाहाटी के नीलाचल पर्वत पर मौजूद 'कामाख्या मंदिर' अभी भी शाक्त आराधना के लिए प्रसिद्ध है। इसके अलावा उमानंद नामक स्थान भी शाक्त आराधना के लिए प्रसिद्ध है। कुबेरनाथ राय लिखते हैं कि *''उमानंद इस क्षेत्र के देवता कामाख्या का भैरव है। हरेक शक्ति पीठ की तरह कामाख्या का भी एक भैरव है और वह है-उमानंद।''*[3] इससे यह साबित होता है कि शाक्त आराधना आरंभ से ही असम में मौजूद थी, जो अभी भी चल रही है।

असमीया लोगों पर धार्मिक क्षेत्र में 'शंकरदेव' का प्रभाव है। उनका आविर्भाव 1449 ई. में हुआ था। उनका जीवन 120 वर्षों का रहा। उन्होंने संपूर्ण उत्तर भारत में तीर्थाटन किया था। लोक में यह भी प्रचलित है कि कबीर से भी उनका संबंध हुआ था। उनके द्वारा जिस वैष्णव धर्म का प्रसार किया गया, वह संपूर्ण असमीया लोगों का धर्म है। शंकरदेव का योगदान असमीया साहित्य और धर्म दोनों ही क्षेत्रों में है। इन्हीं शंकरदेव और उनके शिष्यों ने असमीया संस्कृति में 'नाम-गीत' को भी प्रचलित किया। इन भक्तिमूलक गीतों के संदर्भ में कुबेरनाथ राय लिखते हैं कि *''असमीया भाषा में लोक-गीतों के लिए 'नाम' की संज्ञा चलती है। यह भी लोक संस्कृति पर असमीया नाम कीर्तन प्रधान धर्म का ही प्रभाव है। हम इन्हें नाम गीत भी कह सकते हैं। कृष्ण-लीला का संदर्भ अनेक नाम लीलाओं में पाया जाता है। 'बिया नाम' अर्थात विवाह गीत, वृंदावन नाम, गोरखीया नाम (गोपनीत) नाव खेलार गीत, बारहमासी गीत, यालिता गीत, जुनागीत और बेवेलिया गीत में कृष्ण की लीलाओं का बार-बार उल्लेख हुआ है। समस्त भारत में विवाह के अवसर पर नारी कंठ में 'मंगलाचार' गाने की प्रथा है। असम के 'मंगलगीत' में कृष्ण-रुक्मिणी तथा उषा-अनिरुद्ध से संबंधित गीत खूब चालू हैं।''*[4] उन्होंने इस प्रकार के कृष्ण-लीला से संबंधित उल्लेख कई स्थानों पर किया है।

असम के गाँव अर्थ की दृष्टि से बहुत अधिक संपन्न नहीं हैं, लेकिन संस्कृति के मामले में वे बहुत समृद्ध हैं। यहाँ के गाँव में अभी भी परिवार की संरचना संयुक्त रूप में ही है। यहाँ अतिथियों का सम्मान खूब किया जाता है। असम के गाँव प्रकृति से ढँके हुए हैं, जहाँ घर के समक्ष ही तमाम तरह के पेड़ मौजूद रहते हैं। ऐसे ही एक गाँव 'जापारकुची' का वर्णन कुबेरनाथ राय अपने निबंध में करते हैं। वे लिखते हैं कि *''ऊपर से देखने पर यह (जापार कुची) बहुत ही साधारण गाँव है। पाँच-छह अलग-अलग बसे पुरवों या बस्तियों की संज्ञा मात्र है। प्रत्येक टोला या पुरवा ताल, बाँस नारिकल, सुपारी के सघन कुलों से घिरा है। प्रत्येक घर की पृष्ठभूमि में पुष्करिणी है और उसके पीछे नीम, नारिकल, कटहल की सघन बस्ती है। प्रत्येक गृह के बरामदे में चाहे वह ब्राह्मण गृह हो या शूद्र गृह, करघा यंत्र लगा है। भीतर एक ओर देवी स्थापित है। प्रत्येक गृह के उठान के सम्मुख उठान भूमि में तरह-तरह के फूलों विशेषकर कनेर, रक्त जवा, श्वेत मालती, शेफाली मल्लिका और गेंदे की क्यारियाँ सजी हैं। यत्र-तत्र अशोक स्थल पदम और नागकेश्व भी हैं। केले गाँछ, ढेकिया पासो और सेहुँड़ के पौधे हैं। किसी भी असमीया को इस गाँव में कोई विशेषता दिखाई नहीं देगी, क्योंकि असम प्रदेश के प्रत्येक गाँव ही ऐसे होते हैं।''*[5] असम के प्रत्येक गाँव प्रकृति के सुघड़ रूपों से भरपूर हैं। कहीं आसमान में नारियल के पेड़ लहलहाते हैं तो कहीं सेफाली की कलियाँ अपने धुन में मुस्कुराती है।

असम के लगभग गाँव इसी तरह प्रकृति की गोद में विहार करते हैं। यहाँ के गाँवों में घर में बुने वस्त्र को पहनने की परंपरा ही प्रचलित है। इसलिए यहाँ हर घर में 'हथकरघा' यंत्र मौजूद रहता है। ग्रामीण स्त्रियाँ इसी से वस्त्र बनाती हैं, लेकिन जैसे-जैसे समाज आधुनिकता की ओर बढ़ रहा है, वस्त्र बुनने की नई मशीनें बन बाजार में आ गई हैं, तब से हथकरघा का यह काम धीमा पड़ गया है। कुबेरनाथ राय इस संबंध में लिखते हैं कि *''असम में*

उन्होंने असम के गाँवों की प्राकृतिक छवि, पारंपरिक वस्त्र बुनाई की प्रक्रिया और तांबुल की सामाजिक-सांस्कृतिक महत्ता का गहन अध्ययन किया है। वे असमीया लोक गीतों, त्योहारों और नृत्यों की उपस्थिति और महत्व को भी प्रमुखता से दिखाते हैं, जो असम की सांस्कृतिक विविधता और लोक जीवन की विशिष्टता को स्पष्ट करते हैं। कुबेरनाथ राय का लेखन असम की सांस्कृतिक धरोहर को एक नया दृष्टिकोण और महत्व प्रदान करता है और उनके निबंध असम की लोक संस्कृति की जटिलताओं और सुंदरताओं को समझने में पाठकों के लिए एक अमूल्य स्रोत साबित होते हैं।

वस्त्र बुनना, सूत कातना तथा अन्य गृह शिल्प प्रत्येक गृह कला के लिए सीखना वैसे ही अनिवार्य है, जैसे पाक विद्या। आज का गुवाहाटी का वस्त्र मार्केट जालंधर के सिख व्यापारियों द्वारा भेजे गए नकली रेशम के वस्त्रों से भर गया है। नकली रेशम की चादर-मेखेला, जो असमीया नारी की पोशाक है, स्थानीय हस्त शिल्प के तैयार असली माल के एक तिहाई में मिल जाता है। कम दाम एक बड़ा प्रलोभन है, पर इस प्रलोभन द्वारा असमीया स्वालंबन एक विशेष दिक संकट के दौर से गुजर रहा है।''[6] आधुनिकता के प्रवेश के कारण हस्तशिल्पियों को कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है।

लोक में पान-तांबुल का विशेष महत्व है। इसका प्रयोग पूजा-पाठ में तो होता ही है, असम के गाँवों में अतिथियों को भी पान खिलाकर उनका सम्मान किया जाता है। ऐसी प्रथा के आरंभकर्ता कुबेरनाथ राय 'ऑस्ट्रिकों' को मानते हैं। कई क्षेत्रों में पान-तांबुल एक-दूसरे के पर्यायवाची के रूप में सामने आते हैं। लेखक इसको स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि *''हिंदी क्षेत्र में सुधारी के लिए पूरा शब्द है तांबुल फल और उधर असम प्रदेश में इस तांबुल फल का असमीया रूपांतर 'तामोल' या 'तामुल' सिर्फ सुपारी के लिए ही चलता है। पान के पत्ते के लिए यहाँ 'पान' शब्द प्रचलित है, तांबुल नहीं।''*[7]

तांबुल की लोकप्रियता इसी से विख्यात है कि वहाँ के शहर गुवाहाटी का नामकरण भी तांबुल से संबंधित है। कुबेरनाथ राय लिखते हैं कि *''इन्होंने अपने प्रधान नगर का नाम गुवाहाटी रखा है। यह 'गुवाक' शब्द से बना है। गुवाहाटी अर्थात गुवाक 'तामोल या सुपारी' की हाट। 'गुवाक' शब्द देशज होते हुए भी संस्कृत कोशों और ग्रंथों में तमोल के रूप में स्वीकृत हो चुका है।''*[8] इस तांबुल का प्रयोग असम के लोक गीतों में भी मिलते हैं। कई उक्तियाँ भी इससे जुड़ी मिलती हैं। बिहू पर्व जो गीत गाए जाते हैं, उसमें भी तांबुल शब्द का प्रयोग मिलता है। कुबेरनाथ राय ने अपने निबंध में एक उदाहरण प्रस्तुत किया है। *''थुरियाई-थुरियाई तामोल काटीछिला, तार माईनते दिछिला लवंग बोलै आहिम बुलि कापोर धुईदि छिला, मन ते लगाइला रंग।''*[9] अर्थात (तुमने सुपारी काटी, लपेट-लपेट कर पान का बीड़ा बनाया, उसमें लवंग दिया। मेरे पास आओगी यही सोचकर तुमने वस्त्र धुलाया था। ये बातें मेरे मन को अनुरंजित कर देती हैं।)

असम के ग्रामीण क्षेत्र लोक की दृष्टि से अत्यंत संपन्न हैं। वहाँ के कुछ क्षेत्रों में मछली को खूब महत्ता प्राप्त है। वे अष्ट मंगला से लेकर श्राद्ध के तेरहवीं तक में मछली का भोज रखते हैं। मछली के बगैर उनकी खुशी अधूरी रहती है। वहाँ मछली से संबंधित कई कथाएँ भी मौजूद हैं। असम की कई जनजाति जैसे - खासी, बोड़ो, कछारी, जयंतिया मछली को देवता रूप में मानती हैं। उनकी लोक कथाओं में कई ऐसे नायक-नायिकाओं का वर्णन है, जिनका स्वरूप मछली के रूप में प्रस्तुत किया गया है। खासी जनजाति के लोग अपना संबंध 'मत्स्यवंश से जोड़ते हैं। इन सब बातों से असम के लोक का संबंध ऑस्ट्रिकों से निकट का प्रतीत होता है।

असमीया लोक संस्कृति में त्योहारों का अत्यंत महत्व है। असम में प्रचलित एक उत्सव है, जिसका नाम है - 'बिहू'। यह बिहू एक वर्ष में तीन बार आता है। पहला-रंगाली बिहू, दूसरा-कंगाली बिहू और तीसरा-भोगाली बिहू। इनमें सबसे महत्वपूर्ण भोगाली बिहू (माघ बिहू) है, क्योंकि यह फसल से संबंधित उत्सव है। यह उत्सव लगभग एक माह तक चलता है और इसमें असमीया लोग दिल खोलकर खूब नाचते गाते हैं। कुबेरनाथ राय इस संदर्भ में लिखते हैं कि *''मैंने जीवन के 26 वर्षों को असम देश में भोगा है। सुख और दुख, उल्लास और यंत्रणा, सम्मान और ग्लानि का समानपूर्वक भोग करते हुए मैं व्यग्रतापूर्वक असमीया लोगों के माघ बिहू की प्रतीक्षा प्रति सवत्सर करता रहता था। यह मधुमय अग्नि के उत्सव स्वाद पुनः प्राप्ति के लिए, असमीया लोग इसे भोगाली बिहू (माघ बिहू) भी कहते हैं। ... उस समय प्रतीत होता है, सारी असमीया जाति एक साथ अग्नि वंदना को उठ खड़ी हुई है। ... लोग ढोल, ताल, मजीरा लेकर एक साथ अग्नि परिक्रमा करने करने लगते हैं और इस भस्मी को एक-दूसरे की ललाट पर लगाते हुए तथा योग्य प्रणाम, आशीर्वाद का आदान-प्रदान होता है।''*[10]

असम का लोक अपने नृत्य और गीतों के कारण समृद्ध रहा है। शंकरदेव ने जब वैष्णव धर्म का प्रसार किया तो उसमें नृत्य और गीत को भी उन्होंने प्रमुखता दी। इसलिए विभिन्न उत्सवों में नृत्य-गीत साथ चलते हैं। नलबाड़ी क्षेत्र में रास-लीला अत्यंत प्रसिद्ध था, जो किसी न किसी पौराणिक घटना को आधार बनाकर किया जाता था। इस क्षेत्र में ढोल, मंजीरा, ताल, तानपुरा, झाल आदि वाद्य काफी प्रसिद्ध थे। कुबेरनाथ राय लिखते हैं कि *''पाठक जी बताते हैं कि तीस वर्ष पूर्व तक जापारकुची में बड़े ही कुशल 'पातवादक' या 'ढुलिया' रहते थे। असम में ढोल का अर्थ है, नगाड़ा। पातवादक के बंधे हुए ताल, तानपुरा पर आधारित ध्वनि छंद या पैटर्न है और उसी के साथ मेल मिलाकर चलते हुए देशी लोक नृत्य चलता है। नलबाड़ी में ढुलिया एक विशेष ताल पर गाते हैं, जो अत्यंत 'तेज' और 'द्रुत' रहता है। इसे 'गुरु घाट' कहते हैं। दूसरा यंत्र है श्रीखोल। यह एक तरह का कीर्तनिया ढोलक है। आकृति मृदंग जैसी होती है। इसका प्रयोग कीर्तन तथा सँवरिया (श्री शंकरदेव द्वारा विरचित 'भाओना' संज्ञा की नृत्य नाटिकाएँ) दोनों में होता है। भँवरिया अभिनय में एक बायन होता है, जो ग्रीक कोरस की तरह सूत्रधार का कार्य करता है और घटनाओं की व्याख्या भी करता चलता है।''*[11] वर्तमान में इस कला का लोप हो रहा है, क्योंकि नई पीढ़ी इसे परिश्रम करके नहीं सीखती। आज के समय

में ताल-मान-पुरा जैसे शब्दों का अर्थ बताने वालों का भी अभाव है।

कुबेरनाथ राय अपने निबंधों में बेहद महीन जानकारी देते चलते हैं। वाद्य यंत्र के पश्चात वे उस क्षेत्र में होने वाले लोक-नृत्यों की चर्चा करते हुए लिखते हैं कि *"ढुलिया नाच के अलावा इस अंचल में दो नृत्य और भी चलते हैं - मुखोश नृत्य (मुखनाच) तथा पुतुल नाच या कठपुतली नृत्य। मुखोश नृत्य में कागज के मुखौटा लगाकर केशी, चातुर केश और देन गण तथा गोप गणों का पार्ट किया जाता है, पर कृष्ण बनने वाला मुखोश ग्रहण नहीं करता। इसके अलावा एक नटुआ व्याख्याता भी रहता है, जिसे सूत्रधार कहते हैं। मुखोश नृत्य तथा पुतुल नृत्य दोनों ही रामायण, महाभारत के थीमों पर ही बने हैं।"*[12]

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि कुबेरनाथ राय के निबंध असम की लोक संस्कृति की गहराई और विविधता को उजागर करने में अत्यंत प्रभावी हैं। उनके लेखन में असम के लोक जीवन, परंपराओं, और सांस्कृतिक पहलुओं का समग्र और सूक्ष्म वर्णन मिलता है। वे न केवल असम की बाहरी छवि को, बल्कि उसकी आंतरिक संस्कृति जैसे खान-पान, पर्व-त्योहार, रहन-सहन, लोक गीत और लोक नृत्य का भी यथार्थपूर्ण चित्र प्रस्तुत करते हैं। उनके वर्णन में असम की प्राकृतिक सौंदर्यता, पारंपरिक शिल्प और सामाजिक संरचनाओं की विशेषताएँ भी साफ झलकती हैं। उदाहरण के तौर पर उन्होंने असम के गाँवों की प्राकृतिक छवि, पारंपरिक वस्त्र बुनाई की प्रक्रिया और तांबुल की सामाजिक-सांस्कृतिक महत्ता का गहन अध्ययन किया है। वे असमीया लोक गीतों, त्योहारों और नृत्यों की उपस्थिति और महत्व को भी प्रमुखता से दिखाते हैं, जो असम की सांस्कृतिक विविधता और लोक जीवन की विशिष्टता को स्पष्ट करते हैं।

कुबेरनाथ राय का लेखन असम की सांस्कृतिक धरोहर को एक नया दृष्टिकोण और महत्व प्रदान करता है और उनके निबंध असम की लोक संस्कृति की जटिलताओं और सुंदरताओं को समझने में पाठकों के लिए एक अमूल्य स्रोत साबित होते हैं। उनके लेखन से यह भी स्पष्ट होता है कि आधुनिकता के आगमन के बावजूद पारंपरिक सांस्कृतिक तत्वों की महत्वपूर्ण भूमिका और संरक्षण आवश्यक है। ❑

संदर्भ सूची :

1. निवेदिता, कुबेरनाथ राय विशेषांक, 1996, पृ. सं- 21
2. किरातनदी में चंद्रमधु, कुबेरनाथ राय, पृ. सं- 143
3. निषाद बाँसुरी, कुबेरनाथ राय, पृ. सं.- 222
4. वाणी का क्षीरसागर, कुबेरनाथ राय, पृ. सं.- 19
5. वाणी का क्षीरसागर, कुबेरनाथ राय, पृ. सं. - 20
6. निषाद बाँसुरी, कुबेरनाथ राय, पृ. सं.- 194
7. निषाद बाँसुरी, कुबेरनाथ राय, पृ.सं.- 187
8. निषाद बाँसुरी, कुबेरनाथ राय, पृ. सं.- 187
9. विषाद योग, कुबेरनाथ राय, पृ. सं.- 189-190
10. गंधमादन, कुबेरनाथ राय, पृष्ठ संख्या- 158-159
11. निषाद बाँसुरी, कुबेरनाथ राय, पृ.सं.- 228
12. निषाद बाँसुरी, कुबेरनाथ राय, पृ.सं.- 228-229

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

ग्राम्य जीवन

फणीश्वरनाथ रेणु के रिपोर्ताज में आंचलिकता

ङ्यो मारचङ

शोधार्थी, हिंदी विभाग
मणिपुर विश्वविद्यालय
कांचीपुर, इंफाल-795003
8118988662
nemmarchang@gmail.com

सारांश :

फणीश्वरनाथ रेणु हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध रचनाकार हैं, जिन्होंने हिंदी साहित्य में शुद्ध आंचलिकता का बीज बोया है। हिंदी साहित्य में आंचलिक या आंचलिकता का सूत्रपात रेणु से पूर्व प्रारंभ हो चुका था, परंतु आंचलिकता को एक व्यवस्थित रूप देने वाले रेणु ही थे। सही मायने में आंचलिकता को स्थापित करने का श्रेय फणीश्वरनाथ रेणु को ही जाता है। सन 1954 में 'मैला आंचल' के प्रकाशन के बाद रेणु को आंचलिक उपन्यासों के वास्तविक जन्मदाता, आंचलिक प्रवृत्तियों को स्थापित करने वाला लेखक, शुद्ध आंचलिक रचनाकार आदि नामों से सम्मानित भी किया गया। रेणु की इस आंचलिकता का जादू उनके उपन्यासों में ही नहीं, बल्कि साहित्य के अन्य विधाओं में भी देखने को मिलता है। विशेषतया उनके रिपोर्ताजों में अत्यधिक रूप में प्रयोग किया गया है। रेणु के अधिकांशत: रिपोर्ताजों में आंचलिकता का तत्व या झलक पूर्ण रूप से देखने को मिलते हैं। इसलिए यह कहना गलत नहीं होगा कि उनके रिपोर्ताज लेखन का आधार या बुनियाद में आंचलिकता का सार सभी कृतियों में दिखाई देता है। फणीशवरनाथ रेणु जी ने आंचलिकता को केवल परिवेश के रूप में ही नहीं स्वीकारा है, बल्कि जिस मिट्टी में उनका जन्म हुआ है उन्हीं की विशेषताओं को आधार बनाकर प्रस्तुत किया है। लोक कथा, लोक गाथा, मुहावरों और लोकोक्तियों की सभी विशेषताओं को अपने लेखन में निहित करने में वे शत-प्रतिशत सफल हुए हैं।

बीज शब्द :

परिवेश, आंचलिकता, रिपोर्ताज, लोक कथा, लोक गीत, लोक नाट्य, ग्रामीण भाषा, क्षेत्रीय बोली, मुहावरें और लोकोक्तियाँ।

मूल आलेख :

'अंचल' प्रांत या भू-भाग के अर्थ में प्रयोग होने वाला शब्द है। अनेक अंचलों का अपना विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र होता है, जिसमें ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, भाषिक अथवा स्थानीय समस्याओं से निर्मित इसका अलग रूप होता है। इसी को दर्शाने के लिए आंचलिक रचनाओं का निर्माण हुआ है। आंचलिक रचनाओं में रचनाकार एक विशेष क्षेत्र की अपनी

भाषा, संस्कृति, रहन-सहन, वेशभूषा, पर्व, त्योहार आदि को स्थापित करते हैं।

''मनुष्य को उसके संपूर्ण परिवेश के साथ उसकी शक्ति और सीमा में देखने का प्रयास उसे संपूर्ण प्राकृतिक व सामाजिक परिवेश में एक कलात्मक सच्चाई के साथ प्रस्तुत करना यही आंचलिकता है।''[1] जिससे हमें यह ज्ञात होता है कि आंचलिकता को लेखन में लाने के लिए रचनाकार को क्षेत्र विशेष की ऐतिहासिक, भौगोलिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक विशिष्टता की जानकारी होना आवश्यक है। साथ ही, लोक से जुड़े सभी लोक गीत, कथाओं अथवा गाथाओं से भी परिचित होना एक रचनाकार को जितना महत्वपूर्ण होता है, उतना ही किसी क्षेत्र की संस्कृति, रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा, पर्व-त्योहार आदि को करीब से जानना।

हिंदी साहित्य में आंचलिकता की परंपरा को प्रेमचंद युग से ही प्रारंभ माना जाता है। प्रेमचंद के पूर्व कथा साहित्य में आंचलिकता के बीज अवश्य मिलते थे, किंतु उनको पूर्ण रूप से आंचलिकता का नाम नहीं दिया जा सकता। वास्तविक रूप में आंचलिकता की परंपरा का विकास प्रेमचंद युगीन अथवा प्रेमचंदोत्तर युगीन रचानाकरों ने किया है। इन्हीं रचनाकारों ने आंचलिकता की परंपरा को भी आगे बढ़ाया है। इसके अंतर्गत प्रेमचंद, बाबू शिवपूजन सहाय, जयशंकर प्रसाद, वृंदावनलाल वर्मा, रांगेय राघव, शिवप्रसाद मिश्र, बाबा नागार्जुन, श्री बलवंत सिंह, श्री उदयशंकर भट्ट, अमृतलाल नगर, शिव प्रसाद सिंह, राजेंद्र अवस्थी आदि हैं, जिन्होंने अपनी आंचलिक कृतियों से हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। इसमें से रेणु एक प्रतिष्ठित आंचलिक रचनाकार थे, जिन्होंने आंचलिकता को परिवेश के रूप में ही नहीं स्वीकारा, बल्कि उससे आजीवन जुड़े रहे। रेणु को अपनी मातृभूमि से बेहद प्रेम और गर्व था। *''उनकी मान्यता थी 'अपना' देश फिर 'अपना' देश !.....पर भूमि कैसी भी हो, आखिर पर भूमि है।''*[2] उन्हें अपने देश से बहुत प्रेम है और अपने भूमि से अत्यधिक लगाव है, जो उनकी सभी रचानाओं में निहित दिखाई देता है। रेणु की अधिकांश रचनाओं में आंचलिकता भरपूर दिखाई भी देती है। 'मैला आंचल' को हिंदी साहित्य जगत का प्रथम व्यवस्थित आंचलिक रचना के रूप में स्वीकारा गया है और रेणु को भी हिंदी साहित्य में प्रथम आंचलिक रचनाकार के नाम से स्थापित किया गया है। डॉ. शंभूनारायण का यह कहाना है कि *''हिंदी में आंचलिकता को प्रवृत्ति के रूप में स्थापित करने वाले उपन्यासकार फणीश्वरनाथ रेणु हैं।''*[3] रेणु की अधिकांश कहानियों, उपन्यासों, संस्मरणों में एक बड़ी विशेषता यह है कि वह सभी रचनाओं को आंचल और ग्रामीण जीवन से जोड़ते हैं। जैसे कि 'मैला आंचल' हो या 'पंचलाइट' या 'पहलवान की ढोलक' या 'लाल पान की बेगम'- इन सब में आंचलिकता का विशेष पुट देखने को मिलता है। इसी तरह रेणु ने साहित्य की अन्य गद्य विधाओं जैसे कि रिपोर्ताज में भी कुछ-न-कुछ अपने गाँव या ग्रामीण जीवन को आधार बनाकर लिखा है।

हिंदी साहित्य कोश के अनुसार, *''रिपोर्ट के कलात्मक और साहित्यिक रूप को ही रिपोर्ताज कहते हैं।''*[4] रिपोर्ताज में मात्र तथ्यात्मकता ही नहीं, बल्कि तथ्यों के साथ कलात्मकता भी संयोजित रहता है, जिससे रचना में रोचकता आती है। गुलाबराय ने सही अर्थों में रिपोर्ताज को परिभाषित करते हुए लिखा है- *''रिपोर्ट की भाँति यह घटना या घटनाओं का वर्णन तो अवश्य होता है, किंतु उसमें लेखक*

के हृदय का निजी उत्साह रहता है, जो वस्तुगत सत्य पर बिना किसी प्रकार का आवरण डाले उसको प्रभावमय बना देता है।''[5] जैसा की मैंने पहले यह उल्लेख किया है, फणीश्वरनाथ रेणु ने अपने कई रिपोर्ताज में आंचलिकता को बढ़ावा देते हुए गाँव एवं ग्रामीण क्षेत्रों को लेखन का आधार बनाया है। उन्होंने लोक एवं लोक जीवन से संबंधित सभी अंशों को अपने रिपोर्ताज में स्थान दिया है। रेणु की सबसे पहला रिपोर्ताज 'बिदापत नाच' है, जिसमें आंचलिकता और ग्रामीण प्रवृत्तियों का उन्होंने प्रयोग किया है और इस रिपोर्ताज में आंचलिकता का समावेश किया है। लोक कथा, लोक गीत, लोकोक्तियाँ और मुहावरों का प्रयोग करके उन्होंने अपनी रचनाओं को और भी आकर्षक और रोचक बनाया है।

''बाप रे !....बाप रे कोन दुर्गति नहीं भेल। सात साल हम सूद चुकाओल, तबहूँ उरिन नहीं भेलौं। कोल्हुक बरद सन खटलौं रात-दिन करज बाढ़त हि गेल। थारी बेंच पटवारी के देलियेन्ह, लोटा बेंच चौकीदारी। बकरी बेंच सिपाही के देलियेन्ह, फाटक नाथ गिरधारी।''[6] (बाप रे, मेरी कौन दुर्गति नहीं हुई। सात वर्षों तक मैं सूद चुकाता रहा, तब भी ऋण से मुक्त नहीं हुआ। कोल्हू के बैल की तरह रात-दिन मेहनत की, पर कर्ज बढ़ता ही गया। थाली बेचकर पटवारी को दी और लोटा बेचकर चौकीदारी में दे दिया। एक बकरी थी, जिसे बेचकर रुपए सिपाही को दे दिए और अब 'फाटकनाथ गिरधारी' यानी पूरी तरह कंगाल हुआ फिर रहा हूँ।) यह अंश 'बिदापत नाच' से लिया गया है, जहाँ बिकटा महोदय अपनी करुण कथा को लोक नृत्य और लोक गीत से व्यक्त कर रहे हैं। रेणु ने यहाँ लोक कथा, लोक नृत्य और लोक गीत का प्रयोग करते हुए अपने पूर्णिया जिले के अंचल की जीवन एवं समस्याओं का चित्रण बहुत प्रभावोत्पादक ढंग से किया है। उन्होंने 'बिदापत नाच' को अपने एक रिपोर्ताज का लोक नृत्य का रूप देते हुए अंचल के अज्ञात जीवन, उनके अपरिचित जीवन की समस्याओं, कष्टों, असंतोषों को अभिव्यक्त किया है। इस रिपोर्ताज में रेणु ने हास-विलास भरे माहौल में अंचल की जीवन यथार्थ, अनुभूतियों, संघर्षों को शहरी अभिजात्य के सामने प्रस्तुत किया है। रेणु स्वयं लिखते हैं कि *''आंतरिकता-शून्य उपदेशों का असर उलटा होता है। जन-जीवन के दु:ख से परे रहने वाले साहित्यकार की कटाई हुई रचनाओं का प्रभाव जन-जीवन पर नहीं पड़ सकता। जीवन के क्षेत्र में कुंठा, अव्यवस्था और घुटन महसूस करने वाले लेखकों से नव-निर्माण से रागात्मक संबंध स्थापित करने की आशा करना, हिमाकत के सिवा और कुछ नहीं।''*[7] रेणु के यही सिद्धांत उनके रिपोर्ताज 'बितापद नाच' में हम देख सकते हैं। उन्होंने अपने क्षेत्र के लोक नृत्य को नाटकीयतापूर्ण एवं हास-उल्लास भरे रूप के साथ लोक-कलाकारों की पीड़ा को भी अभिव्यक्त किया है। *'''तड़ाक-तड़ाक' बिकटा महोदय की पीट जो होने लगी। दर्शकों की मंडली मचल पड़ी। अपभ्रंश मैथिली में 'बिकटा' कह रहा है कि मुझे पीटकर बेकार समय बर्बाद किया जा रहा है। जमींदार के जूते खाते-खाते मेरी पीठ की चमड़ी मोटी हो गई है।''*[8]

यह सामान्य प्रस्तुति हम रेणु के 'ऋणजल धनजल' में 'पंछी की लाश' रिपोर्ताज में पाते हैं। इस रिपोर्ताज में रेणु ने 'सावन-भादो' नमक ग्रामीण गीत को एक नव विवाहित स्त्री की करुण वाणी के रूप में प्रयोग किया है। यहाँ रेणु ने कथा व गीत का समन्वय किया है, जो इस प्रकार द्रष्टव्य है- *''कासी फूटल कसामल रे दैबा बाबा मोरा सुधियो न लेल, बाबा भेल निरमोहिया रे दैबा भैया के भेजियो न देल, भैया भेल कचहरिया रे दैबा, भउजी बिसरि कइसे गेल ... ?''*[9] अर्थात नवविवाहित बेटी अपने मायके वालों को संदेश भेज रही है कि अब तो कास का फूल भी फूलना समाप्त हो गया है यानी वर्षा ऋतु का समापन हो गया है। पिछली बार बाबूजी स्वयं लेने आए थे। इस बार बाबा ने भी याद नहीं किया, लगता है बाबा हमसे नाराज हो गए हैं। भैया हमेशा कचहरी में व्यस्त हैं, लेकिन मेरी प्यारी भाभी आप मुझे कैसे भूल गईं? इस लोक गीत से हमें यह पता चलता है कि औरत का विवाह के बाद कोई असली घर नहीं होता है। उसकी ससुराल वाले उससे यह अपेक्षा रखते हैं कि घर के कामों में ही वह व्यस्त रहे और मायके वाले भी भूल जाते हैं कि उनकी भी एक बेटी है। इस समाज में हो रही स्त्रियों की दुर्गति को फणीश्वरनाथ रेणु ने इस रिपोर्ताज में चित्रित करते हुए लोगों के हृदय को भी स्पर्श किया है।

फणीश्वरनाथ रेणु ने विशेषत: अपना रचना संसार

लोक जीवन की परिधि के इर्द-गिर्द में ही रचा हुआ है। इस संदर्भ में डॉ. लोठार लुट्से द्वारा पूछे गए भाषा प्रयोग के संबंध में रेणु जी ने उत्तर देते हुए स्पष्ट किया है कि "देखिए यों जब साधारण जनता की बात कहनी हो, जब वे लोग बोलते हैं, मैथिली में बोलते हैं, मगही में बोलते हैं। मुझे लिखना पड़ता है उसको हिंदी में। तो अगर मैं उसको शुद्ध व्याकरण सम्मत और पंडीताऊ भाषा में लिखता हूँ तो यह तो खुद कान में कैसे लगेगा की यह एक गाँव का आदमी किस तरह से बोलता, इतना शुद्ध बोलता है और बिल्कुल वैसा या अशुद्ध लिखने से यह उपन्यास चल नहीं सकता है। तो बीच का कहीं एक रास्ता तैयार करना होगा....।"[10] रेणु की यह मान्यता थी की भाषा मनुष्य जीवन को व्यक्त करने का एक जरिया है। इसलिए उन्होंने अपनी सभी रचनाओं में आंचलिक भाषाओं का प्रयोग करने में संकोच नहीं किया, क्योंकि उनको पता था कि आंचलिक भाषा ही है, जो जीवन के सबसे निकट है और कृत्रिमता से भी दूर। इसी को ध्यान में रखते हुए रेणु ने अपने अधिकतर रिपोर्ताज में उपेक्षित क्षेत्रीय बोलियों को स्थान दिया है, जिसका उदाहरण प्रस्तुत है बिजली ऑफिस के 'वाचमैन साहेब' ने पच्छिम की ओर मुँह करके ब्लॉक नम्बर एक के नीचे जमी दूसरी मंडली के किसी सदस्य से ठेठ मगही में पूछा- *"का हो! पनियां आ रहलौ है?"*[11] यह कथन 'कुत्ते की आवाज' रिपोर्ताज से है, जहाँ साफ-साफ नजर आ रहा है कि पाठ में संवाद ठेठ मगही भाषा में ही वार्तालाप किए जा रहे हैं। इसी तरह रेणु ने अपने ऐसे कई रिपोर्ताज में मैथिली, मगही, अवधी और भोजपुरी बोलियों को सहज रूप से प्रयोग किया है। रेणु ने आंचलिक चित्रण के लिए अनिवार्य शर्त के रूप में जनपदीय व उपेक्षित क्षेत्रीय भाषाओं को अपनी रचनाओं में स्वीकृति दी है और इसी भाषा को अपने रचना का आधार स्तंभ बनाया है।

रेणु ने रिपेर्ताज में शब्द-प्रयोग हो या वाक्य-रचना या बिंब-विधान, सभी में आंचलिकता की विशेषताओं को चित्रित किया है। उन्होंने मनुष्यों के साथ-साथ पशु-पक्षियों की आवाज, कुत्तों का सामूहिक रुदन, पक्षियों का चहचहाना, वाद्य-यंत्रों एवं मशीनों की आवाज, प्राकृतिक क्रियाओं की आवाजें आदि की ध्वनियों का बिंब प्रस्तुत करते हुए अपने लेखन में स्थानीय रंग (लोकल कलर) दिया है। 'जो बोले सो निहाल' रिपोर्ताज शीर्षक में रेणु ने भयानक बाढ़ आने से जीव-जंतुओं के कष्टों एवं शंका को विचारपूर्वक अभिव्यक्त किया है, जिसके लिए यह संदर्भ देखने योग्य है - एक कुत्ते ने रोना शुरू किया। किंतु कल के रुदन से आज का रोना भिन्न है। कल वे आशंका और आतंक को सूँघ रहे थे और, आज मौत को बहुत करीब देखकर रो रहे हैं...मुझे फिर टेप-रिकॉर्डर की जरूरत ...असल में इस रुदन को जिसने सुना है, वही समझ सकते हैं- *"ओं-य-य-हूँ-ऊँ-ऊँ-ऊँ-हाँ-हाँ-हाँ-य-ह...हूँ-ओं-आ-आ..."*[12]

"लेखन में किसी विशेष क्षेत्र के वैचित्य वेशभूषा, बोली तथा रीति-रिवाजों को उभारने के प्रयास को स्थानीय रंग (लोकल कलर) की संज्ञा दी गई है।"[13] यह लोकल कलर रेणु ने अपनह रचनाओं में मुहावरों एवं लोकोक्तियों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। यह कहना गलत नहीं होगा कि मुहावरे और लोकोक्तियाँ भाषा की संजीवनी शक्ति हैं और इनके प्रयोग से रचना में रोचकता एवं पाठकों के हृदय में भी स्पर्श व प्रभावोत्पादकता उत्पन्न हुआ है। यही कारण है कि रेणु ने अपने रिपोर्ताज में मुहावरों और लोकोक्तियों को स्थान देते हुए अंचल के परिवेश, वेशभूषा, रीति रिवाज, लोक जीवन में समस्या और उनकी स्थितियों की वास्तविकता को चित्रित करने की कोशिश की है और सफलतापूर्वक प्राप्त भी किया है। *उदाहरणस्वरूप यह संदर्भ देखने योग्य है-"नई दुलहीन और पुरानी गाड़ी के नखरे!"*[14] जब राजगिर-नालंदा की यात्रा करते समय उनकी गाड़ी खराब हो गई थी तो इस पर व्यंग्य करते हुए उन्होंने यह लोकोक्ति प्रयोग किया है। इसी तरह रेणु ने अपने अन्य रिपोर्ताज में मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग अन्य जगह भी किया है। जैसे कि - *"दादी अम्मा तीरथ से आई झूठ बोलने का ठेका ले आई"*[15], "मूर्खों की सहित किसी काम की नहीं" [16], "हमें मुर्गा बना-बनाकर" [17], "...उसके पीछे हाथ धोकर पड़ने की क्या जरूरत?"[18], "बुढ़ापे में फिर से 'खुरपी' पकड़नी पड़ी है...[19]", "मारे लाठी के" [20], "कोल्हू के बेल" [21], "यह तो मेरे लिए बाएँ हाथ का खेल है।" [22]

फणीश्वरनाथ रेणु ने अपने रिपोर्ताज में आंचलिक जीवन के साथ-साथ उनमें समाहित भाषा, रहन-सहन और क्रियाकलापों को चित्रित करके यह साबित किया है कि इनकी रचनाओं का आधार स्तंभ आंचलिकता ही है । रेणु के लिए उचित ही कहा गया है कि "लोक मानस और लोक चेतना की सफल और ईमानदार अभिव्यक्ति लोक भाषा के माध्यम से ही हो सकती है। अछूते अंचलों के बहुआयामी जीवन-संदर्भों की संश्लिष्ट और सतरंगी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में अभिजात साहित्यिक भाषा को अक्षम पाकर ही 'रेणु' को जनभाषा का दामन पकड़ना पड़ा था। जनभाषा के शब्दों की असीम अर्थवत्ता, मुहावरों के गहरे अर्थ-संकेत, लोकोक्तियों तथा कहावतों की गंभीर व्यंजकता तथा संप्रेषणीयता और लोक गीतों की संगीतात्मकता एवं ध्वनी बिंबों की ध्वन्यात्मकता से समन्वित 'रेणु' की अभिनव भाषा-संरचना संपूर्ण हिंदी साहित्य में अपनी तरह की अकेली है।"[23] उन्होंने लोक भाषा की शैली को अपना कर अपने भाषा को चमत्कृत करते हुए उसमें रोचकता, सार्थकता और व्यंजकता लाई है। साथ ही, पारंपरिक साहित्यिक भाषा को भी एक ताजगी एवं संजीदगी रूप देते हुए हिंदी साहित्य की भाषा को भी समृद्ध किया है। अत: हम यह कह सकते हैं कि रेणु ने अपने रिपोर्ताज में अपने और अन्य अंचलों का परिवेश, लोक जीवन, लोक संस्कृति, लोक भाषाओं को चित्रित करने में शत-प्रतिशत सफलता प्राप्त किया है। ❑

संदर्भ सूची :

1. डॉ. हरिशंकर दुबे, फणीश्वरनाथ रेणु : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृष्ठ-143
2. डॉ. हरिशंकर दुबे, फणीश्वरनाथ रेणु : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृष्ठ-154
3. डॉ. हरिशंकर दुबे, फणीश्वरनाथ रेणु : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृष्ठ-156
4. Hindisarang.com/reportaj-sahity/
5. डॉ. दिवेन्द्र कुमार गुप्त, गद्य की विविध विधाएं, पृष्ठ-65
6. संपा, भारत यायावर, रेणु रचनावली-4, पृष्ठ-24-25
7. रागिनी वर्मा, फणीश्वरनाथ रेणु और उनका कथासाहित्य, पृष्ठ-81
8. संपा. भारत यायावर, रेणु रचनावली-4, पृष्ठ-24
9. फणीश्वरनाथ रेणु, ऋणजल धनजल, पृष्ठ-44-45
10. डॉ. आनंदमोहन उपाध्याय, फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का लोकतात्विक अध्ययन, पृष्ठ-220
11. फणीश्वरनाथ रेणु ऋणजल धनजल, पृष्ठ-27
12. फणीश्वरनाथ रेणु ऋणजल धनजल, पृष्ठ-42
13. डॉ. आनंदमोहन उपाध्याय, फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का लोकतात्विक अध्ययन, पृष्ठ-319
14. संपा. भारत यायावर, रेणु रचनावली-4, पृष्ठ-87
15. संपा. भारत यायावर, रेणु रचनावली-4, पृष्ठ-86
16. वही, पृष्ठ-88
17. वही, पृष्ठ-88
18. वही, पृष्ठ-89
19. वही, पृष्ठ/67
20. वही, पृष्ठ-76
21. वही, पृष्ठ-76
22. वही, पृष्ठ-78
23. डॉ. रामप्रकाश राय, फणीश्वरनाथ रेणु के कथा साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन, पृष्ठ-163-164

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

'किन्नर कथा' उपन्यास में चित्रित किन्नर जीवन

सुरजीत कौर

शोधार्थी, हिंदी विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय
जम्मू-180006
8118988662
skour1635@gmail.com

जुड़ाव जब सकारात्मक हो तभी एक आदर्श समाज की कल्पना की जा सकती है। किन्नर या हिजड़ा समुदाय भी हमारे इसी समाज का एक अंग है, जिसे सर्वोचय न्यायालय ने सन 2014 में तृतीय लिंग के रूप में मान्यता दी है। इस तृतीय लिंग को समाज विविध नामों से पुकारता है, जिनमें से प्रमुख हैं- हिजड़ा, किन्नर, उभयलिंगी, ख्वाजासरा, पावैता, कोती आदि। महाभारत काल में 'शिखंडी' और 'नृहन्नला' के द्वारा अनंत काल से चले आने वाले इनके अस्तित्व का पता चलता है। किंतु समाज को इनके साथ जुड़ाव कभी भी अधिक नहीं रहा है। किन्नर समाज के विषय में लोग पूर्वाग्रह और भ्रांतियों से युक्त हैं, जिसे तोड़ना बहुत आवश्यक है। हमारी संवेदनहीनता के कारण ही ये लोग बदतर जीवन जीने के लिए बाध्य हैं। वस्तुतः मुख्यधारा के समाज और किन्नर समाज के बीच एक बहुत बड़ी दीवार उपस्थित है। इनकी एक अलग ही दुनिया है, जहाँ ये अपनी अस्मिता, उन्नति, सभ्य समाज में स्थापना हेतु न केवल सपने देखते हैं, बल्कि अपने सपनों को धरातल पर लाने का सजग प्रयास भी करते हैं। सभ्य समाज से निरादृत, बहिष्कृत एवं तिरस्कृत यह वर्ग दो वक्त की रोटी का मोहताज होने के साथ ही अकेलेपन एवं अजनबीपन की पीड़ा को झेलने के लिए भी बाध्य है। समाज इन्हें प्रतिपल ठोकर तो मारता ही है, साथ ही भद्दी गाली और उपहास उड़ाकर पुरस्कृत भी करता है। ऐसे तथाकथित सभ्य एवं महान लोगों से अपमानित होकर इन्होंने अपने लिए एक अलग समाज की व्यवस्था कर ली है, जहाँ यह उन्मुक्त रूप से जीवन जीने की चेष्टा करते हैं।

किन्नरों का समाज भी आम परिवारों की तरह होता है, जहाँ प्रत्येक घर या घराने का एक मुखिया होता है, जिसे 'नायक' कहते हैं। नायक के नीचे गुरु होते हैं और फिर चेले। गुरु का दर्जा माता-पिता के बराबर ही होता है। प्रत्येक किन्नर अपनी कमाई का एक हिस्सा अपने गुरु को देता है। उम्रदराज उस्ताद का काम पैसे का हिसाब-किताब रखना होता है। *''गुरु के नीचे काम करने वाले सभी चेले घराने की बहुएँ कहलाते हैं। हालाँकि घराने के अंदर भाई, बहन, बुआ, चाची, दादा-दादी का अपना स्थान है। जो किन्नर पुरुष की तरह रहता है, उसे भाई कहा जाता है। ऐसे ही महिला प्रवृत्ति की किन्नरों को बहन का ओहदा दिया जाता है।''*[1]

माना जाता है कि देश में किन्नरों के लगभग 500 धाम हैं, जहाँ उनके नायक/

गुरु बसते हैं। बुचरा और उनकी तीन बहनों के आधार पर इनकी चार शाखाएँ हैं– बुचरा, नीलिमा, मनसा और हंसा। बुचरा की शाखा में पैदाइशी, नीलिमा की शाखा में जबरन बनाए गए, मनसा शाखा में इच्छा से बने और हंसा में उन्हें स्थान दिया जाता है, जो शारीरिक कमी के कारण किन्नर बनते हैं।

हिंदी कथा-साहित्य में इन पर अधिक मात्रा में लेखन कार्य नहीं हुआ है, लेकिन जितना भी हुआ है उन सभी से इनको सम्मान की दरकार रही है। यह लोग भी अपनी मूलभूत आवश्यकताओं, अधिकारों और आम आदमी की तरह जीवन यापन करने की आकांक्षा रखते हैं। उसी कड़ी में 'किन्नर कथा' किन्नर समाज की पीड़ा की पैरवी में लिखा गया उपन्यास प्रबुद्ध पाठक वर्ग का ध्यान आकर्षित करता है और किन्नरों को अपने सम्मान और अधिकारों के प्रति जागरूक करता है।'किन्नरा कथा' के माध्यम से किन्नरों की आह और वेदना की उपस्थिति दर्ज की गई है, जो अपने ही परिवार और समाज से निरंतर दुखों की पीड़ा झेलते रहते हैं। मानव समाज अपने चरम विकास के युग में प्रवेश करके स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहा है, किंतु समाज का यह वर्ग इस मुख्यधारा से जुड़ नहीं पा रहा है, इसके मूल में अनेक कारण विद्यमान हैं। इस उपन्यास में रानी आभा सिंह की कोख से दो जुड़वा बच्चियाँ जन्म लेती हैं, दोनों में से एक शिशु का जननांग अविकसित था। जब आभा को इस सत्य का पता चलता है तो उस पर दुखों का पहाड़ टूट पड़ता है। वह जानती है कि राजा का व्यवहार बहुत गुस्सैल है। वह कभी भी इस बच्ची को अपनी संतान के रूप में स्वीकार नहीं करेंगे। इसी कारण वह निरंजना से इस सत्य को छिपाने के लिए कहती है। आभा राजा से चार वर्ष तक इस सत्य को छुपाए रखती है, लेकिन एक दिन राजा को अकस्मात ही इस घटना का पता चल जाता है और वह क्रोधित होकर कहते हैं– ''हे भगवान! हमारी सन्तान हिजड़ा! वीर बुंदेला खानदान में हिजड़ा ने जन्म लिया और उसे कानों-कान खबर नहीं, इतना बड़ा धोखा, इतना बड़ा विश्वासघात...।'' इसी कारण वह अपनी ही बेटी सोना को मरवाने की योजना अपने दीवान पंचम सिंह के साथ बनाते हैं ताकि समाज में उन्हें अपमानित न होना पड़े। इस संदर्भ में उनका कहना है– *''क्या कहेगा समाज? थूकेंगे लोग उस पर, हँसेंगे उसके वंश पर कि एक हिजड़ा पैदा किया है, ठाकुर जगतसिंह ने।''*[2] इसी कारण वह अपनी पुत्री को दीवान पंचम सिंह को सौंप देते हैं ताकि वह उससे छुटकारा पा सकें।

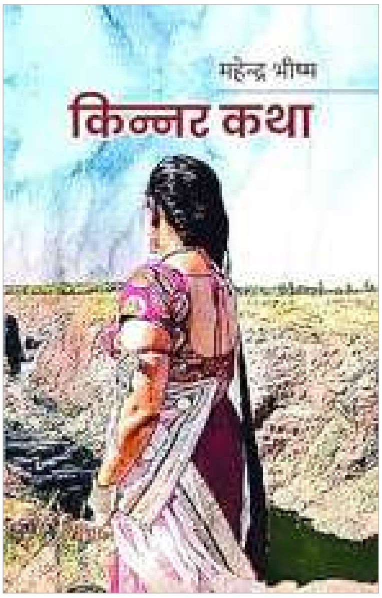

उपन्यास की अन्य किन्नर पात्र तारा को भी इसी कारण घर-परिवार से दूर होना पड़ता है। तारा के माता-पिता उसे दूर नहीं करना चाहते, पर तारा का भाई उसे बिल्कुल बर्दाशत नहीं कर पाता। तारा के स्त्रैण स्वभाव के कारण सभी उसका मजाक उड़ाते। तारा स्कूल में लड़कियों से तो बोल लेता, पर लड़कों से नहीं बोल पाता। जब परिवारों वालों ने उसकी जाँच करवाई तो पता चला कि वह किन्नर है। इस कारण उसके परिवार वालों का रवैया बदल जाता है। *''उसके बड़े भाई को यह कतई मंजूर नहीं था।... उसे वह फूटी आँखों भी नहीं सुहाता था। बड़े भाई का बस चलता तो वह उसे गोली से उड़ा देता या नदी नाले में डुबा देता।''*[3]

प्रत्येक किन्नर का अपना अतीत होता है, स्वयं का झेला संघर्ष होता है। परिवार से विस्थापन का दंश सर्वप्रथम उन्हें ही भुगतना पड़ता है। उपन्यास की पात्र किन्नर तारा को हमेशा अपने परिवार वालों की याद आती रहती है। वह उन्हें भूल नहीं पाता। तारा को जब पता चलता है कि उसकी माँ की मृत्यु हो गई तो वह माँ के अंतिम दर्शन करना चाहता है, पर बड़े भाई और भतीजे ने उसे माँ की चिता के पास फटकने भी नहीं दिया। तारा का भतीजा उसे धमकाते हुए कहता है– *''तू हिजड़ा है, हिजड़ा, हमारा तेरे से कोई नाता नहीं, तू हमारा कुछ नहीं लगता, भाग जा यहाँ*

से, क्यों हमारी नाक कटाने पर तुला है, हिजड़ा कहीं का।''[4]

प्रत्येक किन्नर को अपने परिवार के सदस्य से मिलने की तड़प रहती है। एक किन्नर के लिए यह बहुत सुखद बात होती है कि जब उसके बिछुड़े परिवार से लोग स्नेह से उसका हाल-चाल पूछते या अपने यहाँ आमंत्रित करते हैं। अपना घर, लोग, किसे प्रिय नहीं होता। उपन्यास की पात्र तारा को उसके परिवार वाले उसे घर पर बुलाते हैं तो तारा की खुशी का ठिकाना नहीं रहता। वह पूरे रास्ते अपने परिवार वालों के बारे में सोचता रहता है। वह बहुत खुश होता है, लेकिन वहाँ पर पहुँचकर तारा को पता चलता है कि वह उसे बाबूजी की बीमारी का बहाना बनाकर इसलिए बुलाते हैं ताकि मनीष और चंदा के विषय में सच्चाई जान ले। तारा के सामने बालकृष्ण चंदा के लिए गलत शब्द का इस्तेमाल करता है। इस पर तारा भड़क उठता है। वह मेरी बेटी है, उसने उसको पाला है, इसी विषय में तारा का कहना है- *''मनीष उसे चाहता है, प्रेम करता है उससे, चंदा की चाहत भी उसके प्रति है। उन दोनों के बीच... आत्मा से जुड़े हैं दोनों।''*[5]

दूसरी तरफ मनीष को इन बातों से कोई फर्क नहीं पड़ता कि कोई भी उनके बारे में क्या कहता है। मनीष चंदा से प्रेम करता है। वह जिस भी रूप में है, उसे स्वीकार्य है, पर उसके परिवार वाले नहीं चाहते कि वह चंदा को अपनाए। समाज के भय से वे कहते हैं कि एक किन्नर से मनीष का विवाह नहीं कर सकते। वहीं दूसरी ओर मनीष का कथन है- *''चंदा के बिना मैं अधूरा हूँ, मेरा जीवन निस्सार है। मैं उसे अपना बनाना चाहता हूँ।''*[6]

वहीं, तारा भी यह चाहता है कि डेरे के दो किन्नरों रेखा व दीपिका की तरह चंदा का भी ऑपरेशन करवा दिया जाए ताकि वह एक संपूर्ण स्त्री बन जाएगी और मनीष से विवाह करा दिया जाए। नकली किन्नरों के कारण ही असली किन्नरों का जीवन संकट में पड़ गया है और अपने अस्तित्व को बचाए रखने की चिंता उन्हें सताने लगी है। 'किन्नर कथा' उपन्यास में नकली किन्नरों के कारण असली किन्नरों का वजूद खतरे में पड़ जाता है। उपन्यास की पात्र नगीना क्रोधित होकर कहती है- *''आज साला कोई नामर्द... रंडुवे, तीन-तीन बच्चों का बाप बन बैठे हैं और साड़ी पहनकर सारा हक मारने पर तुले हैं, ... इनको, बहुत शौक है हिजड़ा बनने का, जाओ सालों बहुचर माई अगले जन्म में तुम सभी की मुराद पूरी कर दे, तब जानेंगे ये साले कि हिजड़ा होने का क्या दर्द होता है?''*[7]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हमारे समाज के एक अभिन्न अंग किन्नर समुदाय पर लिखा गया यह उपन्यास कहीं-न-कहीं हमारे समाज को किन्नरों की पीड़ा, दुख-दर्द, जीवन जीने की विभीषिका और भयंकर त्रासद स्थिति से अवगत कराना चाहता है। 'किन्नर कथा' उपन्यास में एक किन्नर होने का दर्द क्या होता है? उस नारकीय जीवन में व्याप्त घृणा, अपमान, घुटन और इससे बाहर निकलने की बेचैनी क्या होती है? इसका चित्रण किया गया है। इन सबसे मुक्ति की कामना करता यह समाज आज अपने सम्मान और अधिकारों की माँग के लिए अपनी झोली फैलाए खड़ा है, जिसे हमारे समर्थन की आवश्यकता है। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. सं. फीरोज खान, वाङ्मय (त्रैमासिक हिंदी पत्रिका), खंड-एक, प्र.वर्ष 2020, पृ. 2
2. महेन्द्र भीष्म, किन्नर कथा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 24
3. वही, पृ. 33
4. वही, पृ. 50
5. वही, पृ. 51
6. वही, पृ. 113
7. वही, पृ. 118

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

थर्ड जेंडर के दुख-दर्द को अभिव्यक्त करता उपन्यास 'नाला सोपारा'

मन्नू देवी

शोधार्थी, हिंदी विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय
जम्मू-180006
8492024365
mannudevi865@gmail.Com

भारतीय समाज प्रारंभ से ही अपनी मूल संरचना में दो वर्गों स्त्री और पुरुष में बँटा हुआ है। लिंग के आधार पर ही यह वर्ग निर्धारित होता है। इसके साथ ही समाज में एक और महत्वपूर्ण वर्ग है, जिसे समाज 'थर्ड जेंडर', किन्नर या हिजड़े के रूप में जानता और पहचानता है। किन्नर दो शब्दों के योग से बना है 'किम'+'नर' - किन्नर, जिसका अर्थ हिजड़ा या नपुंसक होता है। हमेशा से समाज में यह वर्ग विद्यमान रहा है, किंतु इस वर्ग का यह दुर्भाग्य है कि सदैव इसकी उपेक्षा की गई और इसे हिराकत से देखा गया है। इसकी उपेक्षा का प्रमुख कारण है कि यह वर्ग न स्त्री है और न ही पुरुष है। इन दोनों वर्गों से यह भिन्न है। इसी कारण समाज के साथ-साथ इनके परिवार वाले भी इनको त्याग देते हैं। यह वर्ग पूरा जीवन समाज में रहते तो हैं, परंतु समाज से इतर बहिष्कृत होकर इन्हें जीवन यापन करना पड़ता है। अपनी मूलभूत सुविधाओं और आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु इन्हें जीवन भर संघर्ष करना पड़ता है।

इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक में भी इनके जीवन में कोई खास परिवर्तन नहीं दिखता है, क्योंकि आज भी माता-पिता और समाज ऐसे जन्मजात जननांग दोषी बच्चे को कलंक मानकर अपने परिवार और कुटुंब से बहिष्कृत करने के लिए तैयार रहते हैं। ऐसे बच्चों को लावारिस फेंक दिया जाता है या किन्नर बिरादरी को दे दिया जाता है। चित्रा मुद्गल का 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा' एक लोकप्रिय उपन्यास है। यह उपन्यास जननांग दोषी समुदाय की मर्मांतक पीड़ा, उनके साथ होने वाले अमानुषिक कार्य-व्यवहारों, परिवार-कुटुंब से तिरस्कृत किए गए तथा हाशिए से परे रहने वालों की दर्दनाक स्थितियों का यथार्थ उद्घाटित करता है।

एक जनांग दोषी बच्चे को अपने ही परिवार में कैसे उपेक्षा तथा तिरस्कार मिलता है, परिवार के द्वारा त्याग दिए जाने पर कैसे उसका संघर्ष शुरू होता है तथा समाज में कैसी अमानवीय यातनाओं से गुजरता है, इसकी दु:खद सच्चाइयों को इस उपन्यास में अभिव्यक्त किया है। उपन्यास की मुख्य कथा विनोद शाह उर्फ विमली की त्रासदी से जुड़ी है। इसी के माध्यम से लेखिका ने थर्ड जेंडर लोगों की नाना समस्याओं पर प्रकाश डाला है। विनोद पढ़ने में अव्वल, खेल-कूद में अद्वितीय, माता-पिता का आज्ञाकारी बेटा है, किंतु वह जन्म से लिंग दोषी होता है। विनोद के

माता-पिता पढ़े-लिखे होते हैं, परंतु अपने ही बेटे के प्रति संवेदहीन तथा क्रूर हो उससे अपना नाता तोड़ किन्नर बिरादरी को सौंप देते हैं। लिंग दोष होने के कारण ही उसे परिवार से दूर होना पड़ता है। वह अपनी पीड़ा को माँ के लिए लिखे पत्र में अभिव्यक्त करते हुए कहता है - *''तुने मेरी बा, तुने और पप्पा ने मिलकर मुझे कसाइयों के हाथ मासूम बकरी सा सौंप दिया। मेरी सुरक्षा के लिए कोई कानूनी कार्रवाई क्यों नहीं की? मनसुख भाई जैसे पुलिस अधीक्षक पप्पा के गहरे दोस्त के होते हुए? वो अपने आप मुझे बचाने के लिए तो आ नहीं सकते थे? मेरे आंगिक दोष की बात पप्पा ने उनसे बाँटी जो नहीं होगी। वरना वह मुझे बचाने जरूर आ जाते। क्यों वह अनर्थ हो जाने दिया तूने, जिसके लिए मैं दोषी नहीं था।... क्या सामान्य लोगों की तरह जीवन जीने का अधिकार न होता मेरा?''*[1]

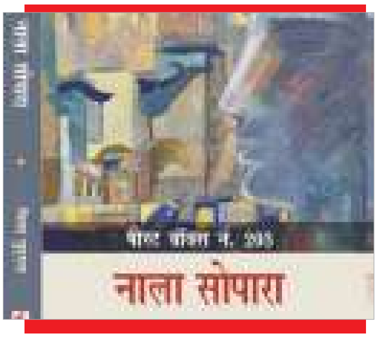

विनोद रिश्तों के लिए तड़पता है, अपनों के प्यार के लिए तरसता है। वह अपनी पीड़ा को एक पत्र में अभिव्यक्त करता है, जिसे पढ़ते समय आँखें नम हो जाती हैं -*''अपने इस दीकरे को तुम लोगों ने स्वयं घर से खदेड़ उन हाथों में सौंप दिया, जिन्होंने अपने मानसिक अनुकूल को ही अपनी नियति मान लिया और हाशिये के उस नरक की शर्तों को अपने जीवन का पर्याय।... क्यों नहीं तोड़ने की कोशिश की उन लोगों ने उन शर्तों को कि नहीं जिएंगे हम उस तरह से, जिस तरह वह जिलाए रखने की साजिश रच रहे हैं। अपने मनोरंजन और खिलंदड़ेपन के रस को जीने के लिए।''*[2]

विनोद एक व्यक्ति नहीं, बल्कि किन्नर समुदाय का प्रतिनिधि है। विनोद की मानसिक पीड़ा को पढ़ते समय ऐसा लगता है कि वह किन्नर होकर पैदा होने की पीड़ा, घर-परिवार और समाज से तिरस्कृत होने का दंश झेलता है। इतना ही नहीं, वह किन्नर समुदाय के कायदे-कानून नहीं अपना पाता। वह कहता है - *''उनके लात, घूंसे, थप्पड़ और कानों में गरम तेल सी टपकती किसी भी संबंध को न बखशने वाली अश्लील गालियों के बावजूद न मैं मटक-मटक कर ताली पीटने को राजी हुआ, न सलमें-सितारे वाली साड़ियां लपेट लिपिस्टिक लगा कानों में बुंदे लटकाने को।''*[3]

विनोद को चंपाबाई मुंबई से लेकर सरदार तुलसीबाई के डेरे पर छोड़ती है। विनोद उसी डेरे पर निर्भर रहता है। डेरे का कानून तोड़ने पर उसे यातनाएँ मिलती हैं। दिल्ली से अलीगढ़ भागने पर सरदार तितलीबाई ने उसे निर्ममता से मारा-पीटा था। सिर में टाँके आए थे तथा दो दाँत भी छिल गए थे। तब से वह डेरा में रहकर ही अधूरी शिक्षा पूरी करना चाहता है। वह पहले तो उमंग सोसाइटी में गाड़ियाँ धोने का काम करता है और किन्नर पूनम की सहायता और विधायक जी की कृपा से एनआईटी बेसिक कंप्यूटर प्रोग्राम में उसका दाखिला होता है। उसके पश्चात वह विधायक के सारे काम संभालता है।

विनोद विधायक और उसके सहायक तिवारी मे संपर्क में रहकर स्वाभिमानी बनता है। वेतनभोगी बनकर अपने अधूरे सपनों को पूरा करना चाहता है। वह थर्ड जेंडर लोगों को परंपरागत पेशों से मुक्ति दिलाने के लिए संघर्ष करता है। साथ ही वह लिंग दोषी लोगों के साथ हो रहे अन्याय का प्रतिरोध करना आवश्यक मानता है। वह शिक्षा और जनजागृति के द्वारा लोगों की मानसिकता बदलने का प्रयास करता है। वह ऐसे कानून भी बनाने की माँग करता है, जिससे माँ-बाप अपने बच्चों के साथ अलग होने में दोष पर भेदभाव न करें और उन्हें अधिकारों से वंचित न करें। वह पूनम जोशी से कहता है - *''सोच बदलेगी, तभी जब अभिभावक अपने लिंग दोषी बच्चों को कलंक मान किन्नरों के हवाले नहीं करेंगे। उन्हें घूरे में नहीं फेंकेंगे। ट्रांसजेंडर के खाँचे में नहीं ढालेंगे।''*[4]

लेखिका ने इस उपन्यास में राजनीति तथा व्यवस्था के चरित्र का भी उद्घाटन किया है। चुनाव के समय विधायक किन्नरों को वोट बैंक बनाना चाहते हैं, जिसके लिए वह विनोद का उपयोग करता है। विनोद निहित राजनीति से अपरिचित होता है। वह किन्नर के सम्मान के लिए सरकार से अपील करते हुए कहता है -*''लिंग दोषी बिरादरी की घर वापसी को वह सुनिश्चित करे।''*[5]

विनोद भरी सभा में भाषण देते हुए अपने आक्रोश को व्यक्त करते हुए कहता है कि किन्नर को अवमानना को झेलने से इनकार करना चाहिए। जिल्लत की जिंदगी जीने से अच्छा है – *''कुली बनिए। मिस्त्री बनिए, ईंट, गारा ढोइए, जो चाहे, सो कीजिए। पाएँगे मेहनत के कौर की तृप्ति।''*[6]

विनोद किन्नर समुदाय को जागरूक करता है और मुख्यधारा से जुड़ने के लिए वह शिक्षा को आवश्यक मानता है। वह लोगों को जागरूक करते हुए कहता है – *''जननांग विकलांगता बहुत बड़ा दोष है, लेकिन इतना बड़ा भी नहीं कि तुम मान लो कि तुम धड़ का मात्र निचला हिस्सा भर हो। मस्तिष्क नहीं हो, दिल नहीं हो, धड़कन नहीं हो, आँख नहीं हो, तुम्हारे हाथ-पैर नहीं हैं। हैं, हैं, हैं, सब ऐसा ही है, जैसे औरों के हैं। यौन सुख लेने-देने से वंचित हो तुम, वात्सल्य सुख से नहीं! सोचो।''*[7]

विनोद अपने भाषण में लिंग दोषी बिरादरी के पुनर्वास हेतु माता-पिता, परिवार, समाज, सरकार, मीडिया, नेता और बुद्धिजीवियों से अनुरोध करता है कि ससम्मान उनकी वापिसी हो। साथ ही लिंग दोषी समुदाय को भी शपथ लेने की आवश्यकता है कि वे किसी नवजात को उसके माता-पिता से अलग नहीं करेंगे।

विधायक अपने फार्म हाउस पर भतीजे के जन्मदिन के अवसर पर महफिल सजाता है और पूनम जोशी जो सुंदर काया, रेशमी बाल, नृत्य करते शरीर वाली है, वह पार्टी समारोह में नृत्य करती है। अपनी नृत्य कला से सभी को आकर्षित करती है। अमेरिका से आया विधायक का भतीजा तथा उसके साथी पूनम को निर्वस्त्र करते हैं, उसके गुप्तांग का चित्र लेते हैं, उससे अमानवीय तथा क्रूरता से अपना शारीरिक संबंध बनाते हैं। नई सदी की पशुता तथा क्रूरता का यह कड़वा यथार्थ लेखिका ने प्रस्तुत किया है *''वह उनकी एक दिली ख्वाहिश पूरा कर दे। हिजड़ों का गुप्तांग नहीं देखा है उन्होंने। कैसा होता है उनका गुप्तांग?''*[8]

अस्पताल में मृत्यु से लड़ रही पूनम की स्थिति से विनोद विचलित होता है। परंतु इसी समय उसे यह सूचना मिलती है कि माँ का स्वास्थ्य बिगड़ रहा है। विनोद किन्नर विचार-विमर्श में भागीदारी ले रहा था, जिससे वह मुँह नहीं मोड़ना चाहता था। साथ ही वह पूनम के अपराधियों को सजा दिलवाने का प्रण लेता है। वह किसी भी परिस्थिति में दोषी को क्षमा नहीं करता है। लेकिन विडंबना कि वह स्वयं ही साजिश का शिकार हो जाता है। वह माँ तक भी नहीं पहुँच पाता है – *''मुम्बई 27 दिसम्बर। कुर्ला, कालीना कम्पलेक्स से लगी हुई मिठी नदी में पुलिस ने एक किन्नर की फूली लाश बरामद की है। शव की शिनाख्त नहीं हो पाई है। सिर बुरी तरह कुचला हुआ है।''*[9]

उपन्यास में नायक की दर्दनाक मृत्यु रहस्य बन जाती है। परंतु स्पष्ट होता है कि उसकी मौत का जिम्मेदार समाज, व्यवस्था, सत्ता, राजनीति और अपराध जगत के लोग हैं। विनोद उर्फ बिन्नी का संघर्ष लिंगविहीन को सम्मान से जीवन-यापन करने क प्रेरणा देता है।

निष्कर्ष :

प्रश्नोत्तर रूप में उपन्यास का कथानक गठा हुआ है तथा स्वयं भोगी व्यक्ति अपने जख्मों और यातनाओं को गहरी संवेदना के माध्यम से शब्दबद्ध करता जाता है। किन्नर समुदाय के प्रत्येक सदस्य को पूर्ण मनुष्य का सम्मान दिलवाना इस कथाकृति का प्रयोजन है। ❑

संदर्भ :

1. चित्रा मुद्गल, नाला सोपारा, पृ. 11
2. वही, पृ. 50
3. वही, पृ. 9
4. वही, पृ. 112
5. वही, पृ. 186
6. वही, पृ. 187
7. वही, पृ. 50
8. वही, पृ. 203
9. वही, पृ. 224

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

अतीत-भान

प्राचीन भारत के प्रशासन में लेखक वर्ग की भूमिका : एक ऐतिहासिक अध्ययन

समीर देव
शोधार्थी, इतिहास एवं संस्कृति विभाग
डॉ. भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय
आगरा-282002
8171592401
devsameer709@gmail.com

प्रो. सुगम आनंद
शोध निर्देशक, वरिष्ठ आचार्य
इतिहास एवं संस्कृति विभाग
डॉ. भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय
आगरा-282002
9319105821

शोध-सार :

किसी भी देश या साम्राज्य की शासन पद्धति चाहे राजतंत्रात्मक हो या गणतंत्रात्मक अथवा लोकतंत्रात्मक हो, लेकिन इन सभी शासन पद्धतियों में एक उभयनिष्ठता है, वह है प्रशासनिक व्यवस्था, जिसके बिना शासन-व्यवस्था जैसे मानो बिना पंख के पंछी। सुसंगठित, व्यवस्थित व उद्देश्योन्मुख प्रशासन का निर्माण बौद्धिक क्षमता युक्त व लेखन प्रणाली में सिद्धहस्त लेखक वर्ग के द्वारा ही होता है। इस वर्ग को विभिन्न कालखंड में रचित धर्म ग्रंथों व धर्मोतर साहित्य में विभिन्न नामों जैसे लिपिकार, रज्जुक, लेखाकार, करणिक, पुस्तपाल, कायस्थ से जाना गया है। यह लेखक वर्ग विभिन्न प्रकार के लेखन कौशल और ज्ञान के माध्यम से प्रशासनिक कार्यों को समृद्ध करता है। लेखक वर्ग मौर्य काल से ही प्रशासनिक दस्तावेजों, नीतियों और प्रक्रियाओं के लेखन में अपनी विशेषज्ञता का उपयोग करके सरकारी काम-काज में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। उनका योगदान प्रशासनिक प्रक्रियाओं को सुचारू और पारदर्शी बनाने में सहायक होता है, जिससे कि सार्वजनिक निष्पादन में अच्छी गुणवत्ता और न्याय सुनिश्चित हो सके। इस शोध पत्र में इन्हीं प्रशिक्षित लेखक वर्ग के उदय के साथ-साथ प्रशासन में इनके योगदान की चर्चा साहित्यिक व अभिलेखीय साक्ष्य के आधार पर की गई है।

कूट शब्द :

साम्राज्य प्रशासन, लेखक वर्ग, कायस्थ।

मूल आलेख :

भारतीय ज्ञान प्रणाली प्रारंभ से ही समृद्ध व विविधताओं से परिपूर्ण होने के साथ-साथ विश्व पटल पर अनुकरणीय व प्रशंसनीय रही है। *''भारतीय ज्ञान प्रणाली में लेखन कला का महत्व प्रारंभिक रूप से मिलता है, चाहे वह पाषाण काल हो या सिंधु सभ्यता काल।''*[1] इसी लेखन परंपरा के बदौलत हम अपने उत्कृष्ट इतिहास को जान पाए हैं। *''इस लेखन कला से सुशोभित व्यक्ति के लिए धर्मशास्त्रों व अन्य साहित्य में लेखक, लिपिकार, लेखाकार, करण, करणिक, पुस्तपाल तथा कालांतर में कायस्थ जैसे शब्दों का प्रयोग किया गया।''*[2] इन प्रशिक्षित लेखक वर्ग के उदय

की ऐतिहासिकता पर नजर डालें तो पाते हैं कि इनका उदय कोई आकस्मिक घटना नहीं थी, बल्कि धीरे-धीरे व निरंतर हुआ। सर्वविदित है कि वैदिक काल में शिक्षा धार्मिक तथा श्रुति-स्मृति परंपरा पर आधारित थी, इसीलिए लिपि व लेखक वर्ग का इस काल में उल्लेख नहीं मिलता है। उत्तर वैदिक काल में लौकिक शिक्षा, तकनीकी विकास के कारण क्षेत्रीय विस्तार की भावना का तत्व उभरा व राष्ट्र की अवधारणा विकसित हुई, जो छठी शताब्दी ईसा पूर्व में अपने चरम पर थी। छठी शताब्दी ईसा पूर्व में साम्राज्य विस्तार की बढ़ती भावना व उनकी बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं की आपूर्ति हेतु कृषि, व्यापार-वाणिज्य, उद्योग-धंधों का व्यापक स्तर पर विकास हुआ, जिससे लेन-देन, नाप-तौल, गणना, भू राजस्व आदि से संबंधित दस्तावेजों का संकलन व उन्हें सुरक्षित रखना जटिल हो गया। इन दस्तावेजों को व्यवस्थित रूप देने के लिए लौकिक ज्ञान से भलीभाँति परचित लोगों की नियुक्ति आवश्यक हुई, जिससे प्रशिक्षित लेखक वर्ग का उदय हुआ। परवर्ती कालों में यह वर्ग निरंतर महत्ता हासिल कर एक विशिष्ट वर्ग बन गया। इस वर्ग का उल्लेख न केवल धर्मोंतर साहित्य में, बल्कि महाभारत, स्मृति पुराण जैसे धार्मिक साहित्य में भी मिलता है।

मौर्य काल में लेखक वर्ग, *''जिसे इस काल में लिपिकार, लेखाकार, करणिक कहा गया''*[3], की जानकारी अशोक के ब्रह्मगिरि शिलालेख व कौटिल्य के अर्थशास्त्र में मिलती है। *''ब्राह्मी लिपि में उत्कीर्ण ब्रह्मगिरि शिलालेख पर लेखक चपड़ ने खरोष्ठी लिपि में अपने हस्ताक्षर किए हैं।''*[4] चपड़ का उत्तर-पश्चिमी भारत से जाकर दक्षिण भारत में अपनी सेवा देना प्रशिक्षित लेखक वर्ग की महत्ता को नि:संकोच स्पष्ट करता है। *''कौटिल्य ने प्रशिक्षित लेखक के गुण बताते हुए कहा है कि लेखक सर्वगुण संपन्न होना चाहिए, उसे अपने राजा को ध्यानपूर्वक सुनना चाहिए व उसके द्वारा प्रदत्त आदेश को सारगर्भित कर संक्षेप में लिखना चाहिए, उसका लेखन सुंदर व आशुलिपिक हो तथा किसी भी दस्तावेज को पढ़ने की क्षमता रखता हो, साथ ही अर्थशास्त्र में प्रमुख पदाधिकारी के वेतन भुगतान का उल्लेख किया गया है, जिसमें स्पष्ट रूप से लेखक वर्ग का वेतन भी उल्लिखित है, जो कि 500 फणम प्रतिवर्ष था।''*[5] इससे प्रशिक्षित लेखक वर्ग की प्रशासन में उपयोगिता स्पष्ट होती है। इस वर्ग का प्रधान कार्य केवल लेखकीय ही नहीं होता था, बल्कि वह लेखाकरण, गणना, आय-व्यय और भू-कर के भी अधिकारी होते थे।

इस काल में लेखक वर्ग ने दरबारी कार्य के अतिरिक्त अपने व्यक्तिगत स्तर पर भी कार्य किया। धनी वर्ग यथा बैंकर, व्यापारी, शिल्पकार आदि की जानकरी गुप्त कालीन विशाखदत्त की मुद्राराक्षस में मिलती है। *''मुद्राराक्षस में मौर्य कालीन सकटदास नामक लेखक का वर्णन है, जो अपनी मजदूरी लेकर अपने ग्राहक का पत्र व उसके दस्तावेज तैयार करता था। सकटदास के द्वारा लिखे गए पत्र चाणक्य के पास भी थे, जिसकी उसने बिना पहचान बताए प्रशंसा की है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह गैर ब्राह्मण वर्ण का था।''*[6] इससे स्पष्ट होता है कि जब ब्राह्मण अपने धार्मिक साहित्य पढ़ने में व्यस्त थे तो उस समय दस्तावेज लेखन के धर्मनिरपेक्ष ज्ञान पर एक कार्यकारी वर्ग का एकाधिकार था, जो संभवत: गैर-ब्राह्मण से था।

मौर्य काल के पतन तथा गुप्त काल के उदय के मध्य का काल भारतीय राजनीति व समाज में विदेशी हस्तक्षेप के कारण एक बड़े उथल-पुथल का काल रहा था। मौर्य साम्राज्य के विघटन से नवोदित विदेशी राज्य ने समाज में आमूलचूल परिवर्तन किए और प्रशासनिक व सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ता प्रदान की। जहाँ तक लेखकों का सवाल है, वे धीरे-धीरे एक प्रभावी वर्ग के रूप में उभरे। अशोक के शिलालेखों में केवल एक ही लेखक का उल्लेख मिलता है, जबकि मौर्योत्तर शिलालेखों में अभिलेख लिखने वाले लेखकों का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है, जो इसकी समाज में बढ़ती प्रतिष्ठा का द्योतक है, जिसे हम उदाहरण के माध्यम से समझ सकते हैं- जैसे, *''मिनांडर कालीन शिनकोट अभिलेख पर लेखक विस्पिला का नाम उत्कीर्ण है''*[7], *''कुर्रम ताम्रपत्र अभिलेख पर लेखक महिपति का नाम उल्लेखित है।''*[8] इसी प्रकार *''कलिंग के महामेघवाहन वंश के शासक श्रीसात के गुंटुपल्ली अभिलेख पर उत्कीर्ण लेखक कुला-गोमस को शाही लेखक व संदेश संग्रहाक बताया गया है''*[9], जो उसके व लेखक वर्ग की साम्राज्य में बढ़ती प्रतिष्ठा को दर्शाता है। ऐसे और भी अन्य अभिलेखीय उदाहरण हैं, जो लेखक वर्ग की

समाज व प्रशासन में बढ़ती विश्वसनीयता व प्रभावशाली स्थिति को दर्शाते हैं।

मौर्योत्तर काल में आर्थिक गतिविधियाँ अधिक होने के कारण धनी वर्ग ने अपने हितों की पूर्ति हेतु व्यक्तिगत लेखक नियुक्त किए, जिससे लेखक दरबार के साथ-साथ समाज के धनाढ्य वर्ग से भी जुड़ गया। इस कारण उसकी आर्थिक समृद्धि को गति मिली। इस समृद्ध व प्रतिष्ठित लेखक वर्ग द्वारा धार्मिक व सामाजिक कार्य किए गए, उदाहरणस्वरूप बौद्ध भिक्षुओं को गुहा दान में दी गई, जिसकी जानकारी पश्चिमी भारत से प्राप्त गुहालेख से मिलती है, जैसे- *''कुड़ा गुहालेख में वर्णित है कि शिवभूति, जो महाभोज मण्ड़व स्कंदपालित का लेखक था''*[10] एक समृद्ध परिवार से था। यह अभिलेख बताता है कि शिवभूति का स्तर अपने भाइयों की तुलना में उच्च था, क्योंकि इस लेख में शिवभूति के भाइयों को महाभोज का सेवक कहा गया है, *''नासिक बौद्ध गुहालेख में लेखक शिवमित्र का पुत्र रामम्नक द्वारा गुहा दान में दिए जाने का उल्लेख मिलता है''*[11], *''प्राकृत भाषा में उत्कीर्ण अमरावती अभिलेख में लेघक पद का प्रयोग हुआ है, जो उसके लेखक कन्हा को इंगित करता है, जिसने बौद्ध विहारों को दान दिया''* [12] , *''सांची स्तूप से मिला लेख लेखक मुलागिरी द्वारा दिए गए दान का उल्लेख करता है।''*[13] इसके अतिरिक्त *''सांची का एक अन्य अभिलेख, जो राजलिपिकार गौपति के पुत्र सुबाहित द्वारा दिए गए दान का उल्लेख करता है''*[14], *''मथुरा से प्राप्त भगवान बुद्ध की मूर्ति पर उत्कीर्ण लेख से ज्ञात होता है कि इस मूर्ति को एक महिला द्वारा निर्मित कराया गया, जो कायस्थ की पत्नी थी''*[15], इस लेख में लेखकों के लिए सर्वप्रथम कायस्थ शब्द का प्रयोग किया गया, जो बाद में पेशेवर नाम बन गया। एक और *''अभिलेख 171-172 ई. पूर्व में मथुरा से ही मिला है, जिस पर कायस्थ श्रमण का नाम उत्कीर्ण है।''* [16] उक्त अभिलेखों के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि प्रथम शताब्दी ई.पू. के लगभग लेखक वर्ग ने न सिर्फ प्रशासनिक इकाइयों में, बल्कि सामाजिक व धार्मिक क्षेत्र में भी विशेष अवदान दिए व अपने पेशे को सम्माननीय बनाया।

गुप्त काल में लेखक वर्ग ने अपनी योग्यता के आधार पर राजस्व प्रशासन, न्याय प्रशासन, व्यापार-वाणिज्य, जिला प्रशासन, नगर प्रशासन व अन्य राजकीय पदों पर स्थान प्राप्ता किया। *''गुप्तकालीन दामोदर ताम्रपत्र के अनुसार नगर प्रशासन की समिति में एक लेखक का सदस्य होना अनिवार्य था, जिसे प्रथम कायस्थ कहा गया।''*[17] *''इस काल में मंदिरों व ब्राह्मणों को भूदान वृहद स्तर पर किया गया''*[18] जिस कारण उससे संबंधित दस्तावेजों को संकलित व सुरक्षित रखने के लिए के लिए लेखक वर्ग की बड़े पैमाने पर नियुक्ति की गई। इसके अतिरिक्त *''शूद्रक द्वारा रचित मृच्छकटिकम में कायस्थ वर्ग ने मुख्य न्यायाधीश के अधीनस्थ के रूप में कार्य किया, जिसका कार्य साक्ष्यों की जाँच करना, दस्तावेज संग्रहण करना, न्यायिक प्रक्रिया सुचारू रूप से संचालित करना, मुख्य न्यायाधीश व गवाह के बीच मध्यस्थता का काम करना, मुख्य न्यायाधीश के आदेश को लिखना था।''*[19]

गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद राजनीतिक अस्थिरता के कारण व्यापार-वाणिज्य में गिरावट आई। *''जिसके फलस्वरूप व्यापारी वर्ग की आर्थिक शक्ति व सामाजिक प्रतिष्ठा का ह्रास हुआ, लेकिन लेखक वर्ग पर ना तो आर्थिक और ना ही सामाजिक दबाव देखा गया, क्योंकि गुप्त साम्राज्य के पतन से उत्पन्न हुए सामंती राज्यों के दरबार में उन्हें विभिन्न स्तर पर सेवा करने का अवसर मिला।''*[20] यहाँ तक कि उनकी प्रतिभाओं का प्रयोग ग्रामीण स्तर पर व्यापक रूप से होने के कारण उनका कद प्रशासन में अपेक्षाकृत बढ़ गया। ग्राम प्रशासन के मामले में राजा लेखक वर्ग पर आश्रित हो गया। *''लेखक वर्ग ने ग्राम स्तर पर विभिन्न पदों पर भूमिका निभाई, जैसे- ग्राम-कायस्थ जो कि गाँव का पटवारी था''*[21], जिसका गाँव में ग्राम प्रमुख के बाद दूसरा स्थान था। लेखक के रूप में राजकीय दस्तावेजों को लिखना व संकलित करना, राजस्व अधिकारी व गणनाकार की भूमिका निभाने के कारण इनके पास शाही साम्राज्य के लेन-देन की गोपनीय सूचना होती थी, मुख्य न्यायाधीश के अधीनस्थ के रूप में कार्य करना जिससे उनके पास न्यायिक शक्तियाँ भी थीं। इस प्रकार इन कार्यो से कायस्थों को शासन कला का अच्छा ज्ञान मिला और परिणामस्वरूप उनमें से अधिक महत्वाकांक्षी

और बुद्धिमान लोग धीरे-धीरे प्रतिष्ठित हो गए और उनमें से कुछ विभिन्न राजाओं के अधीन प्रधानमंत्री भी बने। गुप्तोत्तर काल के नीतिविद शुक्राचार्य के अनुसार लेखक को विभिन्न देशों और उनकी भाषा का ज्ञान होना चाहिए तथा बिना किसी हिचकिचाहट के लिख सकें। *''मत्स्य पुराण में भी लेखक वर्ग की विशेषता की चर्चा की गई है। उसके अनुसार वह व्यक्ति जो विभिन्न देशों की भाषाओं व उनके शास्त्रों का ज्ञान रखता हो, जिसमें शब्द चातुर्यता हो, बौद्धिक तत्परता हो, जो अपने विचारों को संक्षेप में व प्रभावी रूप से लिख सके, जो धनलोलुप प्रवृत्ति का ना हो व राजा का वफादार हो ऐसा व्यक्ति लेखक पद प्राप्त करने योग्य है।''*[22] *''गुप्त व गुप्तोत्तर काल में लेखक को दिविर भी कहा गया, जो लेखा अधिकारी था''*[23], *जिसका सर्वप्रथम उल्लेख हो उच्चकल्प वंश के शासक जयनाथ के कोह ताम्रलेख (496-97ई.) में मिलता है, जिसमें दिविर सर्ववाध को भू अनुदान किए जाने का उल्लेख है।''*[24] लेखकों के लिए इस शब्द का प्रयोग सौराष्ट्र के मैत्रक वंश के अभिलेखों में व्यापक रूप से प्रयोग किया गया है।

उपर्युक्त उपलब्ध साक्ष्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाए तो यह ज्ञात होता है कि लेखक वर्ग का उदय छठी शताब्दी ईसा पूर्व में हुए सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप हुआ था, जिसके बाद इस वर्ग ने उत्तरोत्तर स्थापित होने वाले राजवंशों के प्रशासनिक कार्यों, नीतियों व प्रक्रियों के लेखन में अपनी विशेषज्ञता का परिचय देते हुए सरकारी काम-काज में सराहनीय भूमिका निभाई। इसी बौद्धिक प्रखरता व कलमकारी के बल पर इसने विभिन्न राजवंशों के महत्वपूर्ण पदों यथा-प्रधानमंत्री, कोषाध्यक्ष, नगराध्यक्ष, संधि-विग्रहिक आदि पर विशेष अवदान दिया। कालांतर में यह वर्ग सुसंगठित व सुदृढ़ होता गया और एक जाति का रूप धारण कर लिया। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. प्राचीन भारत का इतिहास, झा श्रीमाली, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली 2009, पेज 96
2. हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, पी.वी.काणे, भंडारकर ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट पुणे, वॉल्यूम 2:1, 1941, पेज नं. 76-77
3. द कायस्थ : अ स्टडी इन द फॉरमेशन एंड अर्ली हिस्ट्री ऑफ कास्ट, चित्रलेखा गुप्ता, के.पी.बागची, कोलकाता, 1996, पेज 15-16
4. इनस्क्रिप्शन का अशोक, यूसेन, हल्च, क्लरेनडॉन प्रेस, ऑक्सफोर्ड, 1925, पेज 176
5. कौटिल्यास अर्थशास्त्र, आर.पी.कंगाले, यूनिवर्सिटी ऑफ बॉम्बे, द्वितीय संस्करण, 1969 वॉल्यूम 3, पेज 151-158
6. मुद्राराक्षस ऑफ विशाखदत्त, एम.आर.काले, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 1965, पेज 42
7. सिलेक्टेड इनस्क्रिप्शन बेयरिंग ओन इंडियन हिस्ट्री एंड सिविलाइजेशन (फ्रॉम 6बी.सी. 6ए.डी.), डी.सी. सरकार, कोलकाता, 1965, द्वितीय संस्करण, वॉल्यूम1, पेज 157-58
8. उपर्युक्त, पेज 148-49
9. सम एपीग्राफिक और मनुस्क्रिप्ट रिकॉर्ड्स,जनरल ऑफ असिएंट इंडियन हिस्ट्री, डी.सी.सरकार, कोलकाता, 1970, वॉल्यूम 3, पेज 32
10. इनस्क्रिप्शन फ्रॉम द केव टेंपल ऑफ वेस्टर्न इंडिया, वर्गिस और इंदिराजी, दिल्ली, 1976, वॉल्यूम 4
11. एपीग्राफी इंडिका, कोलकाता, 1907-08, वॉल्यूम 3, पेज 89
12. एपीग्राफी इंडिका, कोलकाता, 1909-10, वॉल्यूम 10, पेज 154
13. एपीग्राफी इंडिका, कोलकाता, 1909-10, वॉल्यूम 10, पेज 30
14. एपीग्राफी इंडिका, कोलकाता, 1893, वॉल्यूम 2, पेज102
15. जनरल ऑफ एपीग्राफिकल सोसाइटी ऑफ इंडिया, मैसूर, 1981, वॉल्यूम 3, पेज 9-10
16. वही, वॉल्यूम 7, पेज सं, 9-10
17. एपीग्राफी इंडिका,कोलकाता, 1919-20, वॉल्यूम15, पेज 130
18. प्राचीन भारत का इतिहास झा श्रीमाली, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली, 2009, पेज 380
19. मृच्छकटिकम ऑफ शूद्रक, एम.आर.काले, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1965, पेज 317.
20. स्टडीज इन द सोसाइटी एंड एडमिनिस्ट्रेशन का असिएंट और मेडिएवल इंडिया, डी.सी. सरकार, कोलकाता, 1967, पेज 160
21. वही,पृष्ठ संख्या 162.
22. द सैक्रेड बुक्स ऑफ आर्यंस, डॉ. सत्यव्रत शास्त्रीओरिएंटल पब्लिशर्स, दिल्ली, 1972, पेज 25
23. जे.असिएंट हिस्ट्री ऑफ सौराष्ट्र, कोंकण इंस्टिट्यूट ऑफ आर्ट एंड साइंस, विरजी कृष्णकुमारी, बॉम्बे, 1952, पेज 233
24. कॉर्पस इनस्क्रिप्शनम इंडिकेरम, वॉल्यूम 3,1981, नं. 27

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

निराला के 'अप्सरा' और 'अलका' उपन्यासों में चित्रित आर्थिक समस्याओं का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

गजेन्द्र नाथ दास
शोधार्थी, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय
गुवाहाटी, असम-781001
9954823258
gajendranathdas@gnauk,cin

डॉ. कुसुम कुंज मालाकार
शोधं निर्देशक एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष
कॉटन विश्वविद्यालय
गुवाहाटी, असम-781001
9864023568

अर्थ के बिना मनुष्य का जीवन जीना दुश्वार होता है। इसलिए कोई मनुष्य चाहे पुरुष हो या नारी- इसका महत्व अस्वीकार नहीं कर सकता। इस महत्व को अनुभव करके लोग अपने-अपने सामर्थ्य के अनुसार उपार्जन करते रहते हैं, लेकिन देखा जाता है कि उपार्जन के इस क्षेत्र को प्राचीन काल से खासकर पुरुष ने ही संभाल रखा है। नारी को इस क्षेत्र से वंचित रखा जाता है, जिसके कारण नारी स्वावलंबनहीन होकर रह जाती है। पुरुषों पर अवलंबित होना पड़ता है। अवलंबन का अन्य एक अर्थ होता है पराधीनता। इस पराधीनता के कारण समाज में नारी समस्या का उद्‌भव होता है। निराला ने अपने उपन्यासों में नारी की इन समस्याओं पर बखूबी विचार-विश्लेषण किया है। आपके इस विचार-विश्लेषण में सर्वदा नारी की आर्थिक समस्या से मुक्ति का स्वर विराजमान है।

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' अपने उपन्यासों में नारी की विभिन्न समस्याओं को उठाते हैं। इन समस्याओं में से प्रमुख है आर्थिक समस्या। भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य में नारी की इन समस्याओं को उच्च, मध्य और निम्न वर्ग के चरित्र के माध्यम से अंकित किया है। रानी, राजकुमारी, किसानी औरत, दासी, बांदी, वेश्या आदि एक-एक वर्ग की नारी पात्र है। निराला अपने युगीन परिस्थिति को आधार भूमि बनाकर समाज में इन नारी वर्ग की आर्थिक स्थिति, उनके साथ हुई आर्थिक विषमता, आर्थिक समस्या के विभिन्न कारण, उपार्जन के स्रोत, उपार्जनकारी नारी की समस्या आदि पर विचार किया। आपका उद्देश्य था नारियों को आर्थिक समस्या से मुक्त करना। लेकिन प्राचीन काल से चलती रही आर्थिक समस्या से नारी आज भी मुक्त नहीं है, इसलिए निराला द्वारा उठाई गई नारी समस्या और इनसे मुक्त होने का सुझाव आदि का अध्ययन करना आज प्रासंगिक हो गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में निराला के उपन्यासों में चित्रित नारियों का आर्थिक समस्या के संदर्भ में विचार किया जाएगा।

अर्थ भौतिक सुखों का साधन होता है। उसे प्राप्त करने के लिए लोग श्रम करते हैं। एक प्रकार से कहा जाए तो श्रमहीनता का अर्थ है अर्थहीनता। निराला नारी की श्रमहीनता को उनकी समस्याओं का जड़ मानते थे। इसलिए आपके उपन्यासों के अधिकतर नारी पात्रों को उपार्जनकारी के रूप में देखा जाता है। उपार्जन-क्षमता

के आधार पर इन नारी पात्रों की आर्थिक स्थिति भिन्न-भिन्न है। आर्थिक स्थिति के आधार पर निराला के नारी पात्रों को तीन वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

(i) उत्तम वर्ग

(ii) मध्यम वर्ग और

(iii) निम्न वर्ग

(i) उत्तम वर्ग : 'अप्सरा' उपन्यास में चित्रित सर्वेश्वरी एक उत्तम वर्ग की नारी है। वह प्रख्यात नर्तकी है। इस पेशे से वह विशाल संपत्ति की अधिकारिणी बनती है। निराला लिखते हैं, *''इस तरह सर्वेश्वरी ने अपार संपत्ति एकत्र कर ली थी। उसने कलकत्ता के बहुबाजार में अपना एक आलीशान मकान बनवा लिया था और व्यवसाय की वृद्धि के लिए, उपार्जन की सुविधा के विचार से प्रायः वहीं रहती थी। सिर्फ बुढ़वा मुगल के दिनों तवायफों तथा रईसों पर अपने नाम की मुहर मार्जित कर लेने के विचार से काशी-आवास करती थी। वहाँ भी उसकी एक कोठी थी।''*[1] नर्तकी पेशा को निराला कला के रूप में अभिहीत करते हुए उसी में ही नर्तकियों की मुक्ति समझते थे। इस उपन्यास में सर्वेश्वरी पुत्री कनक से कहती है, *''हमारी जैसी स्थिति है, इस पर ठहर कर भी हम लोक में वैसी ही विभूति, वैसा ही ऐश्वर्य, वैसा ही सम्मान, अपनी कला के प्रदर्शन से प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही लोग जिस आत्मा को अपने सर्वस्व त्याग कर प्राप्त करते हैं, उसे भी हम लोग अपनी कला के उत्कर्ष के द्वारा, उसी में प्राप्त करते हैं— उसी में लीन होना हमारी मुक्ति है।''*[2] 'चोटी की पकड़' उपन्यास में एजाज भी एक नर्तकी है। वह राजा राजेन्द्र प्रताप से हर महीने दो हजार तनख्वाह लेती है। वह आर्थिक स्थिति में सबल नारी है। उसी तरह 'निरूपमा' में निरूपमा एक जमींदार होने के नाते आर्थिक स्थिति में सबल नारी है।

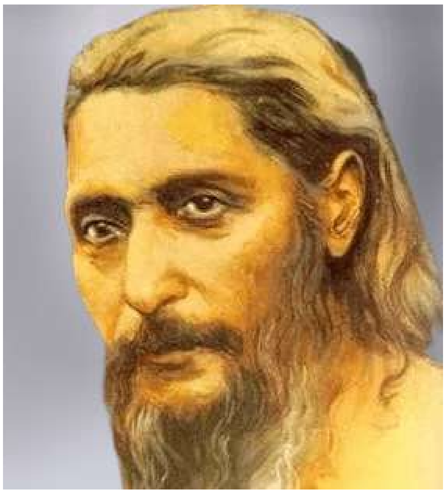

(ii) मध्यम वर्ग : उपार्जन के क्षेत्र में मध्यम वर्ग की नारियों में आती हैं — 'अप्सरा' उपन्यास में चित्रित अंग्रेज महिला कैथरिन, 'प्रभावती' में विद्या, 'अलका' में सावित्री। कैथरिन कतक को घर जाकर पढ़ाती है। पढ़ाना ही उसकी पेशा है। 'प्रभावती' में उल्लेखित विद्या नर्तकी है, लेकिन उसका उपार्जन अप्सरा की सर्वेश्वरी से कम है। उसी तरह तारा (अप्सरा), मिस दुबे (निरूपमा) आदि नारी का उपार्जन मध्यम है।

(iii) निम्न वर्ग : उपार्जन के क्षेत्र में निम्न वर्ग में आती हैं - मनहारिन (अलका), मालिकवा की माँ, किसानी औरतें (निरूपमा), मुन्ना बाँदी, बुआ, (चोटी की पकड़) मनोहर की माँ (काले कारनामे), चमेली (चमेली) आदि नारी। 'अलका' में चित्रित मनहारिन घरेलू उपयोग के साधारण सामान लेकर गाँव-गाँव घुमकर बेचती है। सुविधा मिलने पर वह कुटनी का काम भी करती है। निराला लिखते हैं, *''वशीकरण आदि पर तो मनहारिन को स्वयं विश्वास है, क्योंकि शोभा पर उसने इसका प्रयोग एक बाबाजी से कराया था, और उसके माँ-बाप इसी के बाद मरे थे, और वह हाथ भी आ गई थी।''*[3] इससे भी वह कुछ उपार्जन कर लेती थी। मुन्ना बाँदी राजा राजेन्द्र प्रताप की रानी की दासी का काम कर उपार्जन करती थी। बुआ स्वदेशी आंदोलनकारियों के लिए खाना पकाकर गुजारा करती है। 'चमेली' में विधवा चमेली मायके में रहती है। वह पिता की खेती-बाड़ी के कार्य में सहायता करती है।

इस प्रकार निराला के उपन्यासों में चित्रित विभिन्न नारी पात्र पुरुषों पर निर्भरशील न रहकर खुद उपार्जन कर गुजारा करती हैं।

21वीं सदी में भी नारी के प्रति पुरुष की मानसिकता उदासीन नहीं है। इस उदासीनता के कारण नारी आज भी आर्थिक समस्या का शिकार बन रही है। निराला जी ने अपने उपन्यासों में नारी की आर्थिक समस्या के संदर्भ में विस्तार से आलोचना करते हैं। आपकी आर्थिक समस्या के कारणों को निम्नलिखित शीर्ष में विभाजित किया जा सकता है—

(i) रूढ़िगत समस्या
(ii) पुरुष वर्चस्वता
(iii) लिंग विषमता
(iv) निरक्षता और
(v) पारिवारिक कारक

(i) रूढ़िगत समस्या : भारतीय सामाजिक परंपरा यथार्थ पर नहीं, आदर्श पर अधिक महत्व देती है। इस परंपरा के अनुसार नारी को घर की चहारदीवारी में रहकर परिवार संभालना चाहिए। 'नारी है ना, बाहर काम करने के लिए जावै तो उसके साथ बहुत बुराइयाँ हो सकती हैं।' इस पुरानी विचारधारा के कारण समर्थ आग्रह तथा प्रयोजन होते हुए भी उसे उपार्जन करने के लिए बाहर जाने को रोक दिया जाता है। निराला समाज में प्रचलित इस प्रकार की दकियानुसी का तीव्र विरोध करते हैं। आप लिखते हैं – *''रूढ़ियाँ कभी धर्म नहीं होतीं, वे एक-एक समय की बनी हुई सामाजिक श्रृंखलाएँ हैं। वे पहले की श्रृंखलाएँ, जिनसे समाज में सुथरापन था, मर्यादा थी अब जंजीर हो गई है। अब उनकी बिल्कुल आवश्यकता नहीं, अब उन्हें तोड़कर फेंक देना चाहिए।''*[4] इसलिए आपके उपन्यासों की अनेक नारी पात्र इन सामाजिक रूढ़ियों को तोड़कर उपार्जन के लिए बाहर जाती हैं। जिस समय लड़कियों को स्कूल भेजने में ही सामाजिक बाधी थी, उसी समय 'अलका' उपन्यास में अलका कुलियों की स्त्रियों के लिए स्थापित नैश विद्यालय में शाम को सात बजे से नौ बजे तक पढ़ाती है। जहाँ परिवार के लोग लड़की होने के कारण घर के नजदीक के स्कूल में पढ़ने को अनुमति नहीं देते हैं, वहाँ 'अप्सरा' में माता सर्वेश्वरी कनक को उच्च शिक्षा ग्रहण करके भविष्य की उपार्जन क्षमता बढ़ाने के लिए यूरोप भेजना चाहती है। निराला जी लिखते हैं – *''कभी-कभी पाश्चात्य कला-संगीत और नृत्य की शिक्षा के लिए यूरोप चलने का भी चर्चा करती है। सर्वेश्वरी को भी उसे यूरोप भेजने की इच्छा थी, पर पहले वह अच्छी तरह से उसे अपनी शिक्षा देना चाहती थी।''*[5]

(ii) पुरुष वर्चस्वता : पुरुष केंद्रित समाज नारियों को अधिक अधिकार देना नहीं चाहता। आर्थिक क्षेत्र में उपार्जन से लेकर इसके व्यवहार तक का पूरा ब्योरा पुरुष अपने कब्जे में रखता है। पुरुषों की इस अर्थसत्ता ने पुरुष सत्ता का जन्म दिया है, जिसके कारण नारियों में आर्थिक समस्या का उद्‌भव होता है। निराला जी इस तरह की पुरुष मानसिकता का तीव्र विरोध करते हैं। उनके अनुसार पुरुष और नारी कर्म के क्षेत्र में समान है। सिर्फ नारी समझकर उस पर दबाव नहीं डालना चाहिए। उन्होंने लिखा है – ''उन्हें दबाव में रखकर इस देश के लोग अपनी जिस कल्याण के चिंतन में पड़े हैं, वह कल्याण कदापि नहीं बल्कि निरी मूर्खता है।''[6] इस पुरुष वर्चस्वता के विरुद्ध जाकर 'निरूपमा' उपन्यास में निरूपमा ने खुद जमींदारी संभाल ली। आमतौर पर पुरुष ही जमींदार होते हैं, लेकिन निराला जी ने निरूपमा को जमींदार बनाकर पुरुष वर्चस्वता पर तीव्र प्रहार किया।

(iii) लिंग विषमता : भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में नारी को अबला समझा जाता है। अबला का अर्थ होता है शक्तिहीन, कमजोर, असहाय, दुर्बल आदि। अर्थात् लोगों में यह धारणा आम है कि पुरुषों की तुलना में नारी की शारीरिक शक्ति कम है। इसी धारणा के आधार पर कुछ निर्दिष्ट क्षेत्र, जहाँ शारीरिक शक्ति का अधिक प्रयोजन है, पुरुषों के लिए सुरक्षित रखा जाता है। नारी के लिए वहाँ प्रवेश निषेध है। यहाँ नारी लैंगिग विषमता का शिकार बनती है। *''यह सत्य है कि पुरुष का शरीर स्त्री के शरीर की तुलना में अधिक गठिला होता है। वे 10 फीसदी अधिक लंबे, 20 फीसदी अधिक भारी व 30 प्रतिशत अधिक ताकतवार होते हैं, लेकिन स्त्री के शरीर के कुछ खूबियाँ इन विषमताओं को संतुलित करती हैं। स्त्रियों का शरीर थकान को ज्यादा बर्दाश्त कर पाता है। वे बिना थके लंबे समय तक काम कर सकती हैं। विश्व में जी-तोड़ शारीरिक श्रम करने वाली स्त्रियाँ यह साबित करती हैं कि पुरुष के मुकाबले मांसपेशियों की कमी उन्हें किसी भी पुरुष से कमतर नहीं बनाती।''*[7] पुरुष नारी की शक्ति संबंधी इस तथ्य की अज्ञानता के कारण लैंगिग विषमता के बहाने उसे कठिन कामों से दूर रखते हैं। आग्रह और सामर्थ्य होते हुए भी उसे उन कामों में अलग किया जाता है। निराला नारी और पुरुष की लैंगिग विषमता को दूर करके एक संतुलित व्यवस्था कायम करने के पक्ष में अपना अभिमत व्यक्त करते हैं। उन्होंने भारत की आधा आबादी नारी की शक्ति को परिवार तथा देश की प्रगति में व्यवहार करना चाहते हैं। निराला जी ने कहा है कि नारी को पुरुष

अर्द्धांगिणी कहते हैं, लेकिन अर्द्ध अधिकार तक नहीं देते हैं। उन्होंने कहा कि – *''स्त्री जिन अर्थों से पुरुष की सहधर्मिणी, अर्द्धांगिणी और गृहलक्ष्मी है, इसका पूरा-पूरा निर्वाह किया जाए। शिक्षा-दीक्षा, आदान-प्रदान, सामाजिक, राजनैतिक और संपत्ति अधिकार भी उसके पुरुष की तरह हों।''* [8] निराला जी ने पुरुषों से आह्वान करते हैं कि लैंगिग विषमता को छोड़कर नारियों को पुरुषों की तरह उपार्जन के क्षेत्र में समान सुविधा देनी चाहिए। 'अलका' उपन्यास में जमींदार स्नेहशंकर अलका को कर्मठ बनाता है। नारी शक्ति को महाभक्ति के रूप में अभिहित करके स्नेहशंकर अलका से कहता है, *''भय क्या है बेटी, दुःख मनुष्य ही झेलते हैं तू तो महाशक्ति है। जितना परिचय शक्ति का तूने दिया, उससे अधिक की मृत्यु के सामने भी जरुरत नहीं। भरोसा रख। अब तेरी उचित शिक्षा का प्रबंध करना है।''* [9]

(iv) निरक्षता : बौद्धिक प्रखरता सफल मनुष्य जीवन की एक सोपान होती है। इसे विद्या द्वारा प्राप्त किया जाता है। विद्वान प्राचीन काल से ही यह अभिमत व्यक्त करके आए हैं कि पुरुष हो या नारी-शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए, लेकिन जब से औपचारिक शिक्षा का प्रारंभ हुआ, तब से संपूर्ण शिक्षा-व्यवस्था पुरुषों के लिए सुरक्षित रखकर नारियों को हाशिए पर ढकेल दिया गया। यद्यपि इस व्यवस्था में कुछ सुधार हुआ, फिर भी नारी शिक्षा के लिए बहुत कुछ करने को बाकी है। निराला नारी की शिक्षा को उनकी आर्थिक समस्या से जोड़ते थे। इसलिए आप नारी को शिक्षित करने पर अधिक महत्व देते थे। आप लिखते हैं, *''इसके लिए प्रथम आवश्यक साधन है शिक्षा, हमारे देश में स्त्रियों की शिक्षा के अभाव में जैसी दुर्दशा हो रही है, उसका वर्णन असंभव है। उनको लांछित देखकर पाषाण भी गल जाते हैं।''* [10] नारी की इस लांछित, दुर्दशा का कारण आप शिक्षा को मानते हैं। आपके अनुसार प्रकृत शिक्षा नारी को विकास का रास्ता दिखा सकती है। आप फिर लिखते हैं, *''शिक्षा से यह सब दूर होगा। देवियाँ अपना दिव्य रूप पहचानें, उन्हें कर्तव्य का ज्ञान होगा। वे नदियों की तरह समाज के करारी से बहती हुई सहस्त्रों जीवन प्रतिदिन पवित्र कर जाएँगी। उनका जो स्थान संसार की स्त्रियों में है, उसे प्राप्त करेंगी। बच्चों की पीड़ा के समय उन्हें तड़पना न होगा। वे उनकी दवा कर उन्हें रोगमुक्त कर सकेंगी।''* [11] इसलिए निराला के उपन्यासों की अधिकतर नारी पात्र शिक्षित हैं। ये पात्र शिक्षित होकर स्वावलंबी हो चलीं।

(v) पारिवारिक कारक : नारी को कर्म के क्षेत्र में सबसे अधिक बाधा परिवार के लोगों से मिलती है। यद्यपि फिलहाल इस प्रकार की बाधा थोड़ी शिथिल हुई है, फिर भी भारतीय समाज के अनेक परिवार नारी को घर से बाहर जाकर काम करने की अनुमति देने में हिचकिताचे हैं, जिसके कारण वे उपार्जनहीन हो जाती है। अर्थ के अभाव में छोटी-सी चीज के लिए पुरुषों का सहारा लेना पड़ता है और इसका फायदा उठाकर वह नारी पर दबाव डालता रहता है। निराला नारी की उपार्जनहीनता को बर्दाश्त नहीं करते थे। आप भारत की हर एक नारी के स्वावलंबी होने के प्रति आशावादी थे। आप पुरुषों से आह्वान करते हैं कि नारी की स्वतंत्रता पर अभी तक जो रुकावट है उस पर फिर से विचार करें। आप लिखते हैं, *''महिलाओं की स्वतंत्रता ही उनके जीवन को सब दिशाओं का विकास करेगी। हमें सिर्फ उनकी स्वतंत्रता का सूत्र बतलाना है। इसलिए हम स्त्री स्वतंत्रता के कार्य में पुरुषों से मदद करने के लिए कहते हैं।''* [12] देखा जाता है, निराला के उपन्यासों की प्रायः नारी पात्र स्वतंत्र और स्वावलंबी है। कर्म के क्षेत्र में कोई रुकावट नहीं है। 'अलका' उपन्यास में अलका काम करने के लिए आग्रह दिखाकर उपन्यास के नायक प्रभाकर से पूछती है, *''क्या आपको मेरी सेवा को ऐसे समय जरूरत होगी? कभी हो, आप मुझे आज्ञा देने में संकोच बिल्कुल न करें। मुझे आपकी आज्ञानुवर्तिता से सुख होगा।''* [13] कर्म ही धर्म है, कर्म के बिना उपार्जन नहीं होगा और उपार्जन के बिना जिंदगी जीना दुश्वार हो जाती है। इसलिए अप्सरा में कनक की माता उसे काम करने की प्रेरणा देते हुए कहती है, *''अपनी बुनियाद पर इमारत की तरह तुझे अटल रहना होगा, नहीं तो फिर स्थिति से ढह जाओगे, बह जाओगी।''* [14] मनुष्य की कर्म शक्ति को संचय नहीं किया जा सकता। एक दिन काम न करने का अर्थ होगा एक व्यक्ति की एक दिन की कर्म शक्ति नष्ट होना, जिसको मानव संपदा का क्षरण होना कहा जाता है। इसलिए निराला आह्वान करते हैं कि लोग पुरानी विचार धाराओं को छोड़कर नारियों को काम करने की अनुमति दें।

भारतीय समाज आदर्श नारी पर अधिक महत्व दिया देखा जाता है। घर की चारदीवारी के बीच रहकर पति की सेवा, बाल-बच्चों का पालन-पोषण, छोटों को प्यार, ज्येष्ठजनों की श्रद्धा करती रहे तो वह आदर्श नारी है। परंतु घर से बाहर निकल कर नौकरी या अन्य काम करे तो वह आदर्श नारी नहीं है। इस तरह की धारणा में अब कुछ सुधार हुआ है। अर्थ उपार्जन की आवश्यकताओं को समझकर नारी आज स्वावलंबन की राह ढूँढ़ लेती है। लेकिन वहाँ भी नारी को समस्या से छुटकारा नहीं मिलता। स्वावलंबी नारी कर्मक्षेत्र में जाते समय अथवा कर्मक्षेत्र में विभिन्न समस्याओं का सामना करती है। निराला नारी की हर एक समस्या पर नजर रखते थे। 'अप्सरा' में कुँवर साहब कनक को महफिल में गाने के लिए बुलाकर उसका शारीरिक शोषण करना चाहते थे, लेकिन वहाँ से कनक चतुराई से भाग निकली। 'अलका' उपन्यास में अलका का नैश विद्यालय से लौटते समय जमींदार मुरलीधर ने अपहरण की कोशिश की। यह अलका के अपहरण करने का दूसरा प्रयास था। इसलिए उसने अपहरण के समय कहा, *"बड़ी मेहनत ली अब के दोबारा तुझमें पाने की तैयारी की।"*[15] निराला ने कठोर होकर अलका द्वारा ही इस समस्या का समाधान निकाला। अलका ने उसी समय उस उक्ति को दोहरा कर, *"बड़ी मिहनेत ली, अब को दोबारा तुझे पाने को तैयारी की। कहकर जेब से पिस्तौल निकाल ठीक छाती पर दाग दी।"*[16]

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने नारी समस्या से संबंधित अर्थ के एक व्यापक क्षेत्र को अपने उपन्यासों में समाहित कर उनकी समस्या समाधान करने का प्रयास किया है। आपके उपन्यासों की नारी पात्र इस क्षेत्र में विभिन्न चुनौतियों का सामना करती हैं। लेकिन हिम्मत न हारकर कामयाब होती हैं। इन पात्रों के जरिए आप आम नारी के लिए यह संदेश भेजना चाहते हैं कि नारियाँ आर्थिक क्षेत्र में पुरुषों पर भरोसा न करके स्वावलंबी हों, यही उनकी मुक्ति का एक सही उपाय हो सकता है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. नवल, नंदकिशोर, संपादक, निराला रचनावली भाग-3 पृ.सं. 22 राजकमल प्रकाशन, प्रा.लि. नई दिल्ली द्वितीय संस्करण : 1998
2. वही पृ: सं: 24
3. वही पृ: सं: 190
4. वही खंड-6, वही पृ: सं:131
5. वही खंड-3, वही पृ: सं: 37
6. वही खंड-6, वही पृ: सं: 130
7. कस्तवार, रेखा, 'स्त्री चिंतन की चुनौतियाँ, वही पृ: सं: 32 राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली, चौथा संस्करण : 2016
8. नवल, नंदकिशोर, संपादक, निराला रचनावली भाग-6, पृ: सं: 173-174, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण : 1998
9. वही भाग-3, पृ: सं: 150
10. वही भाग-6, पृ: सं: 129
11. वही पृ: सं: 129
12. वही पृ: सं: 374
13. वही पृ: सं: 215
14. वही पृ: सं: 24
15. वही पृ: सं: 221
16. वही पृ: सं: 221

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन : मूलभूत साक्षरता और संख्यात्मकता कार्यक्रम के विशेष संदर्भ में

श्रवन कुमार फगारिया
शोधार्थी, शिक्षा विभाग
जगन्नाथ विश्वविद्यालय
जयपुर (राजस्थान) पिन : 302001
9001981900
shrawanf@gmail.com

डॉ. अंकुश शर्मा
शोध निर्देशक, शिक्षा विभाग
जगन्नाथ विश्वविद्यालय
जयपुर (राजस्थान) पिन : 302001
9509250803
ankush.sharma@jagannathuniversity.org

सारांश :

प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि को जानने का प्रयास किया गया है। इस हेतु शोधार्थी ने वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया है। न्यादर्श के लिए राजस्थान राज्य के सीकर जिले के प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत 400 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक विधि के द्वारा किया। गणितीय उपलब्धि जानने हेतु स्वनिर्मित परीक्षण का प्रयोग किया एवं प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी-परीक्षण के माध्यम से किया गया। विश्लेषणोपरांत यह पाया कि सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में सार्थक अंतर है, जबकि सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में सार्थक अंतर नहीं है।

मुख्य शब्द :

गणितीय उपलब्धि, मूलभूत साक्षरता और संख्यात्मकता कार्यक्रम।

प्रस्तावना :

विद्यालयी शिक्षा में गणित एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। गणित ने हमें विचारों को निर्धारित करने, सटीक होने और हमारे दैनिक जीवन में स्थानिक अवधारणाओं का उपयोग करने में सहायता की है। इसे प्राकृतिक विज्ञान, इंजीनियरिंग, चिकित्सा और सामाजिक विज्ञान सहित कई क्षेत्रों में एक आवश्यक उपकरण के रूप में दुनिया भर में उपयोग किया जाता है। गणित न केवल दैनिक जीवन की स्थितियों में मदद करता है बल्कि तर्क, अमूर्त चिंतन और कल्पनाशीलता को भी विकसित करता है। आज विश्व में जो भी विकास हुआ है वह गणित के ज्ञान के बिना संभव नहीं था। भारत में गणित का शुभारंभ ''ऋग्वेद'' से माना गया है। वेंदाग ज्योतिष में गणित की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि जिस प्रकार मयूरों की शिखाएं और सर्पों की मणियां शरीर में सर्वोपरि स्थान रखती हैं, उसी प्रकार वेदों के सब अंगों तथा शास्त्रों में गणित शिरोमणि है।

पाठ्यक्रम का कोई विषय ऐसा नहीं है, जो गणित की तरह बच्चों के मस्तिष्क को क्रियाशील बनाता हो। गणित की प्रत्येक समस्या को हल करने के लिए

मानसिक कार्य की आवश्यकता होती है। जैसे ही गणित की कोई समक्ष बच्चों के समक्ष आती है। उसका मस्तिष्क उस समस्या को समझने तथा उसका समाधान करने के लिए ऐसे क्रम से गुजरती है, जो कि एक रचनात्मक एवं सृजनात्मक प्रक्रिया के लिए आवश्यक है। इस प्रकार बच्चे की सम्पूर्ण मानसिक शक्तियों का विकास गणित पढ़ने से सरलता से होता है। विद्यार्थियों की सफलता या असफलता बहुत कुछ विभिन्न विषयों में होने वाली परीक्षाओं में उपलब्धि पर निर्भर करती है। इन विषयों में गणित एक प्रमुख विषय है। अन्य विषयों की अपेक्षा गणित का हमारे दैनिक जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। मातृभाषा के अलावा अन्य कोई विषय ऐसा नहीं है, जो कि गणित की भाँति दैनिक जीवन से इतना अधिक संबंधित हो।

प्रारंभिक स्तर से लेकर माध्यमिक स्तर तक यह एक अनिवार्य विषय है। अन्य विषयों की भाँति गणित भी बच्चों को एक सामाजिक तथा बुद्धिमान नागरिक के रूप में विकसित करने में सहायक है। जब बालक गणित का अध्ययन करता है तो अनुशासन जैसे अन्य गुणों का विकास स्वत: ही हो जाता है। यही नहीं गणित, विज्ञान और तकनीकी शिक्षा को दिनों-दिन महत्व दिया जा रहा है और कहा जा रहा है कि यदि हमें राष्ट्र को आगे बढ़ाना है तो इन विषयों के स्तर को उन्नत करना होगा तथा प्रारंभिक स्तर से ही इन पर ध्यान देना होगा। इस संबंध में कोठारी आयोग ने गणित के महत्व को जानते हुए अपने सुझावों में स्पष्ट किया है कि ''विद्यालयी जीवन के प्रथम दस वर्षों में विज्ञान एवं गणित विषय सभी बच्चों को अनिवार्य रूप से पढ़ाए जाने चाहिए।''

बहुत से लोग यह मानते हैं कि यह बच्चों के भीतर डर, भय और तनाव उत्पन्न करता है। मूलभूत साक्षरता और संख्यात्मकता कार्यक्रम विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा के माध्यम से प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तर के बच्चों में गणित में दक्षता और कौशल विकसित करने पर जोर देता है। मूलभूत साक्षरता और संख्यात्मकता कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य यह है कि बच्चे गणित से भयभीत न होकर उसका आनंद उठाएं।

संबंधित साहित्य का अध्ययन

✦ कुमार, मनोहर (2022) ने माध्यमिक कक्षा के छात्र-छात्राओं की गणित उपलब्धियों का तुलनात्मक अध्ययन किया। इस अध्ययन का उद्देश्य अध्ययन 10वीं कक्षा के छात्र-छात्राओं की गणित उपलब्धियों का तुलनात्मक अध्ययन करना था। निष्कर्ष में यह पाया कि शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की गणित की शैक्षिक उपलब्धि एवं बुद्धि ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की गणित की शैक्षिक उपलब्धि से श्रेष्ठ है। लैंगिक स्तर पर शहरी बालक और बालिकाओं की बुद्धि का स्तर समान है तथा गणित की शैक्षिक उपलब्धि में बालिकाएं, बालकों से श्रेष्ठ हैं। लैंगिक स्तर पर ग्रामीण बालक और बालिकाओं की बुद्धि का स्तर समान है। गणित की शैक्षिक उपलब्धि में बालक, बालिकाओं से श्रेष्ठ है। शहरी क्षेत्र के गैर-सरकारी विद्यालय के बालकों एवं बालिकाओं की गणित की शैक्षिक उपलब्धि एवं बुद्धि सरकारी विद्यालय के बालकों से अच्छी एवं श्रेष्ठ है। ग्रामीण क्षेत्र के सरकारी विद्यालयों के बालकों एवं बालिकाओं की गणित की शैक्षिक उपलब्धि एवं बुद्धि की अपेक्षा गैर-सरकारी विद्यालय के बालकों एवं बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि व बुद्धि अच्छी एवं श्रेष्ठ है। शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों का गणित का बुद्धि से उच्च एवं धनात्मक सहसंबंध है, परंतु ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों का गणित में शैक्षिक उपलब्धि और बुद्ध का सहसंबंध शहरी परिपेक्ष के गणित और बुद्धि के सहसंबंध से श्रेष्ठ है।

✦ कुमार (2021) ने पाकुड़ जिले के माध्यमिक कक्षा के छात्र-छात्राओं की गणित उपलब्धियों का तुलनात्मक अध्ययन किया। इस अध्ययन का उद्देश्य माध्यमिक कक्षा के छात्र एंव छात्राओं की अंकगणित, सांख्यिकी, ज्यामिति, रेखागणित, बीज गणित, त्रिकोणमिति, क्षेत्रमिति, प्रतिशत, लाभ-हानि, सरल ब्याज एंव चक्रवृद्धि ब्याज एवं अनुपात एंव समानुपात संबधित उपलब्धियों का तुलनात्मक अध्ययन करना था। तथ्यों का विश्लेषण ज्ञात करने के उपरांत निष्कर्ष में पाया कि छात्रों की तुलना में छात्राओं की अंकगणित, बीज गणित, प्रतिशत, लाभ-हानि, सरल ब्याज एंव चक्रवृद्धि ब्याज एवं अनुपात एंव समानुपात में छात्राओं की उपलब्धि अधिक है, जबकि

सांख्यिकी, ज्यामिति, रेखागणित, त्रिकोणमिति, क्षेत्रमिति में छात्रों की उपलब्धि अधिक है।

✦ कुमार, राजेंद्र (2019) ने वैदिक एवं परंपरागत गणित शिक्षण विधि द्वारा पढ़े विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया। प्रस्तुत शोधकार्य का मुख्य उद्देश्य वैदिक एवं परम्परागत गणित शिक्षण विधि द्वारा पढ़े विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना है। शोध विधि के रूप में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है तथा प्रदत्त संकलन हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है व निष्कर्ष रूप में पाया कि वैदिक एवं परंपरागत गणित शिक्षण विधि से पढ़े विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के परीक्षण में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

अध्ययन के उद्देश्य

1. सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. गैर सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना

1 सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

2 सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

3 गैर सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

शोध विधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या

प्रस्तुत शोध अध्ययन में राजस्थान राज्य के सीकर जिले के प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत् विद्यार्थियों को अध्ययन की जनसंख्या हेतु चयनित किया गया है।

न्यादर्श

प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श के लिए राजस्थान राज्य के सीकर जिले के प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत् 400 विद्यार्थियों का चयन किया गया है।

प्रदत्त संकलन हेतु उपकरण

प्रस्तुत शोध अध्ययन में स्वनिर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया है।

शोध में प्रयुक्त सांख्यिकी

प्रस्तुत शोध अध्ययन में आंकड़ों का विश्लेषण करने हेतु मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी परीक्षण सांख्यिकी का प्रयोग किया गया है।

आंकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या

परिकल्पना 1 - सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका - 1

सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में अंतर

समूह	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी-मूल्य	सार्थकता स्तर
सरकारी विद्यार्थी	200	41.24	4.41	6.33	0.05
गैर सरकारी विद्यार्थी	200	43.80	3.64		

व्याख्या -

तालिका-1 से विदित होता है सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का मध्यमान 43.24 है, तथा गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का मध्यमान 41.80 है। इन दोनों मध्यमानों के अन्तर की तुलना करने हेतु परिकलित टी-अनुपात का मान 6.33 प्राप्त हुआ, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना असत्य सिद्ध हुई। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर है।

आरेख – 1

सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि के मध्यमान एवं प्रामप विचलन

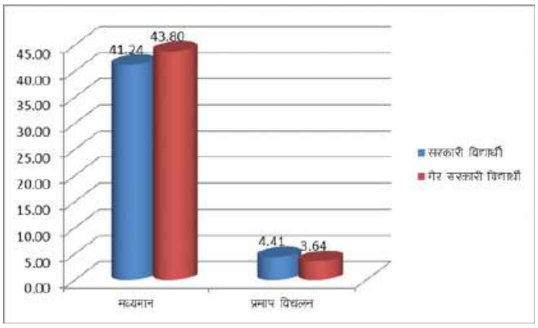

परिकल्पना 2 – सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका – 2

सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में अंतर

समूह	**संख्या**	**मध्यमान**	**प्रमाप विचलन**	**टी-मूल्य**	**सार्थकता स्तर**
ग्रामीण विद्यार्थी	100	43.32	7.53	1.03	0.05
शहरी विद्यार्थी	100	44.28	5.48		

व्याख्या –

तालिका–2 से विदित होता है गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत ग्रामीण विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का मध्यमान 43.32 है, तथा गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का मध्यमान 44.28 है। इन दोनों मध्यमानों के अन्तर की तुलना करने हेतु परिकलित टी–अनुपात का मान 1.03 प्राप्त हुआ, जोकि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं है। अत: शून्य परिकल्पना सत्य सिद्ध हुई। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

आरेख – 2

सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि के मध्यमान एवं प्रमाप विचलन

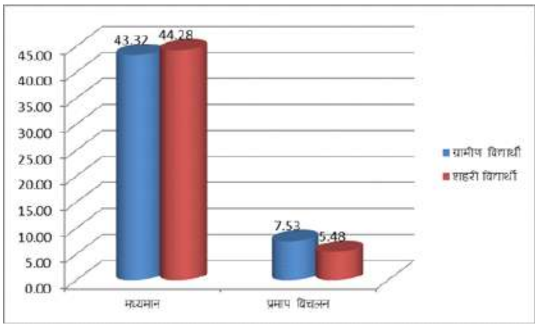

परिकल्पना 3 – गैर सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका – 3

गैर सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में अंतर

समूह	**संख्या**	**मध्यमान**	**प्रमाप विचलन**	**टी-मूल्य**	**सार्थकता स्तर**
ग्रामीण विद्यार्थी	100	44.92	6.67	0.76	0.05
शहरी विद्यार्थी	100	45.56	5.09		

व्याख्या –

तालिका–3 से विदित होता है गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत ग्रामीण विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का मध्यमान 44.92 है, तथा गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि का मध्यमान 45.56 है। इन दोनों मध्यमानों के अन्तर की तुलना करने हेतु परिकलित टी–अनुपात का मान 0.76 प्राप्त हुआ, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं है। अत: शून्य परिकल्पना सत्य सिद्ध हुई। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि गैर सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

आरेख – 3

गैर सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि के मध्यमान एवं प्रमाप विचलन

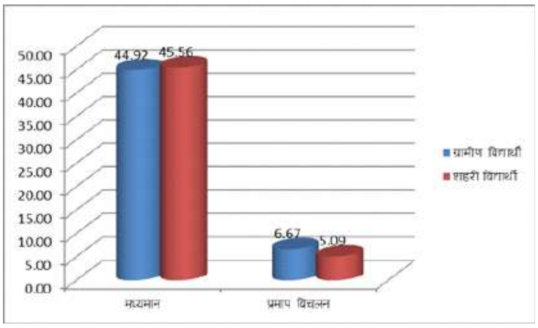

निष्कर्ष :

- सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया।
- सरकारी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।
- गैर सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की गणितीय उपलब्धि में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

सुझाव

- विद्यालय में गणित विषय पढ़ाते समय नवाचारी शिक्षण विधियों का प्रयोग करना चाहिए।
- गणित विषय के पाठ्यक्रम में ऐसी गतिविधियों को समाहित करना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों में गणित विषय के प्रति रूचि विकास हो।
- गणित विषय पढ़ाते समय डिजिटल संसाधनों का प्रयोग करना चाहिए।
- गणित विषय को व्यावहारिक जीवन के साथ जोड़कर पढ़ाना चाहिए।
- गणित विषय का शिक्षण ऐसा होना चाहिए जो विद्यार्थियों में तार्किक योग्यता, समस्या समाधान योग्यता एवं करके सीखने का विकास कर सके। ❑

संदर्भ सूची :

- बंसल, सी.एस., तथा चौहान, पी. (2015). सांख्यिकी एवं शोध विधि तंत्र. नई दिल्ली, आर.के. बुक्स
- कौल, एल. (2010). शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली. नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राईवेट लिमिटेड
- कुमार (2021) ने पाकुड़ जिले के माध्यमिक कक्षा के छात्र-छात्राओं की गणित उपलब्धियों का तुलनात्मक अध्ययन किया। जर्नल ऑफ इमर्जिंग टेक्नोलॉजी एण्ड इनोवेटिव रिसर्च, 8(3), 978-980
- कुमार, मनोहर (2022) ने माध्यमिक कक्षा के छात्र-छात्राओं की गणित उपलब्धियों का तुलनात्मक अध्ययन किया। जर्नल ऑफ इमर्जिंग टेक्नोलोजी एण्ड इनोवेटिव रिसर्च, 9(7), 202-208
- कुमार, राजेन्द्र (2019) ने वैदिक एवं परम्परागत गणित शिक्षण विधि द्वारा पढ़े विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया। रिव्यू ऑफ रिसर्च, 8(4), 1-3
- सलवदे.एस. (2012). रिसर्च मैथडॉलोजी. जयपुर, इशिका पब्लिशिंग हाउस
- त्रिवेदी, आर.एन. तथा शुक्ला, डी.पी. (2017). रिसर्च मैथडॉलोजी. जयपुर, कॉलेज बुक डिपो

Websites

- https://dsel.education.gov.in/sites/default/files/NIPUN_BHARAT_GUIDELINES_HI.pdf
- https://ncert.nic.in/pdf/announcement/NIPUNBharat_web.pdf

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

'आजादी मेरा ब्रांड' में स्त्री और समाज

पूनम कुमारी

शोधार्थी, हंदी विभाग
मिजोरम विश्वविद्यालय,
आइजोल - 796004
9650349567
poonamkant®w@gmail.com

प्रो. सुशील कुमार शर्मा

वरिष्ठ आचार्य, हिंदी विभाग
मिजोरम विश्वविद्यालय
आइजोल - 796004
9650349567
poonamkant®w@gmail.com

शोध सार :

साहित्य और समाज के बीच एक गहरा संबंध है। साहित्य जब कुछ कहता है, तो उसके केंद्र में समाज और समाज में गतिविधियां होती हैं। मानव तन के भांति ही साहित्यिक विधाओं की बुनावट में विभिन्न तत्वों का समावेश होता है। यात्रा-साहित्य के मूल में स्थानीयता, तथ्यात्मकता, चित्रात्मकता, आत्मीयता, कल्पना प्रवणता आदि तत्त्व होते हैं। मगर समाज, यात्रा साहित्य में रीढ़ की हड्डी का काम करता है। अनेक रचनाकर का समाज के प्रति अपनी एक विशेष दृष्टि होती है। 'आज़ादी मेरा ब्रांड' अनुराधा बेनीवाल का यात्रावृत्तांत है। इस रचना में भारत की संस्कृति और समाज को बखूबी से दर्शाया गया है। इसमें अनुराधा बेनीवाल पाश्चात्य संस्कृति और वहाँ के समाज का सूक्ष्मता से निरीक्षण भी किया है। अनुराधा भारतीय समाज के कुछ दकियानूस विचारों और व्यवहारों का प्रतिकार करती हैं तथा स्त्री स्वतंत्रता और नारी सशक्तिकरण का जोरदार आगाज़ भी करती हैं। यह आगाज़ समाज की उन स्त्रियों के प्रति है जो धर्म, संस्कार, मर्यादाओं के नाम की बेड़ियों से जकड़ी हुई हैं। आधुनिक होने के क्रम में आज हमारा समाज कहाँ खड़ा है? इसको लेकर अनुराधा बेनीवाल गंभीर चिंतन करती हैं।

बीज शब्द :

नारी, सशक्तिकरण, दकियानूसी, संस्कार, तत्त्व, धर्म, मर्यादा, स्वतंत्रता, सूक्ष्मता।

मूल आलेख :

कोई भी साहित्य समाज से इतर नहीं हो सकता। जब साहित्यकार कुछ भी लिखता है तो उसके केंद्र में आसपास की गतिविधियाँ होती है। ये गतिविधियाँ किसी न किसी समाज की होती है। साहित्य में मानव समाज ही नहीं अपितु जीव-जंतु, पेड़-पौधे, पर्वत-पहाड़, समुन्दर-जंगल कुछ भी हो सकता है, क्योंकि हर स्थान का अपना एक समाज होता है। अनुराधा बेनीवाल जब 'आजादी मेरा ब्रांड' जैसी रचना को रचती हैं तो उनके भीतर का एक चंचल, जिज्ञासु स्त्री मन का दस्तावेज निरंतर खुलता चला जाता है। अब तक पुरुष साहित्यकारों द्वारा बहुत सारे यात्रा-वृत्तांत लिखे गये हैं, जिनमें महिला यात्रा साहित्यकार भी शामिल हैं। इस यात्रा

साहित्य में भारतीय समाज के साथ-साथ पाश्चात्य समाज भी है और अनुराधा बेनीवाल दोनों समाज का बारीकी से निरीक्षण करती दिखाई पड़ती हैं। कुछ आप बीती, कुछ जग बीती के हर पहलुओं पर लेखिका की पैनी नजर है। लेखिका को धुन है आजादी की। बेफिक्री से दुनिया घूमने की। आजादी की धुन ने उन्हें भारत के एक छोटे से गाँव से निकल कर यूरोप तक जाने में मदद की। यूरोपियन देश के समाज और संस्कृति को बारीकी से समझ सकीं।

अनुराधा लिखती हैं – 'एक अकेली बेकाम, बेफिक्र, बेटैम फिरती लड़की में एक अलग-सी ताकत होती है। एक अलग-सा साहस होता है। वह साहस जो किसी (बाप, भाई, पति) का हाथ पकड़ कर निकलने में कहीं छुप जाता है। वह साहस जिससे हमारा समाज घबराता है। वह साहस जिसे कभी बाहर निकलने का मौका ही नहीं दिया गया। वही साहस ढूंढ़ने तुम निकलोगी। तुम फिरोगी उस साहस को जीने। वो तुम्हारा ही है, जब निकलोगी तब पाओगी।'

उक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि अनुराधा आजादी की माँग सिर्फ स्वयं के लिए नहीं कर रही। उन्हें चिंता समस्त स्त्री समाज की है। वे स्त्री अधिकार की बात कर रही हैं। यह एक प्रकार से नारी सशक्तिकरण का आन्दोलन है! आन्दोलन है स्त्री समाज के आजादी भरे जीवन का! जिसमें वह अपने मन की सोच सके और अपनी इच्छानुसार खुले आसमान में उड़ सके।

जिस पुरुष समाज के अस्तित्व का अंश स्त्री के गर्भ में पलता है, वही पुरुष समाज अपना वर्चस्व कायम रखने के लिए स्त्री के अस्तित्त्व का रिमोट कंट्रोल अपने हाथ में लेकर घूमता है। क्या यह विचारणीय और संवेदनीय बात नहीं है? नारी की स्वतन्त्रता पर चिंतन करते हुए 'कृष्णा सोबती' लिखती हैं – 'माँ सिर्फ ममता ही है क्या! क्या उसके अस्तित्व और व्यक्तित्व के सूत्र अब भी पिता, पति और पुत्र के हाथ में हैं!'

भारतीय समाज ने सारी नैतिकता का ठेका स्त्री समाज के माथे थोप दिया है। कुछ नैतिकता का निर्वहन पुरुष समाज भी करें तो स्त्रियों का जीवन भी सुखमय हो जाए। स्त्री की जुवान सुरीली होनी चाहिए, उसे सलीके से उठने बैठने और चलने की कला आनी चाहिए, स्त्रियों की जुवान के साथ निगाहें भी मधुर और शालीन होनी चाहिए! वस्त्रों के चयन का ध्यान रखना चाहिए, घर से बाहर यदि कदम रखना है तो परिवार के पुरुष मुखिया को इसकी जानकारी अवश्य होनी चाहिए आदि। कहने को हम उत्तर आधुनिक काल में जी रहे हैं या कहें कि आधुनिकता की सभी हदों को हम बड़ी तेजी से पार कर रहे हैं, परन्तु दिमागी तौर से आज भी हम और हमारा समाज जड़ है। आधुनिकता से जीवन यदि सहज बनाता है तो जरूरत है मानसिक तौर से आधुनिक बनने की! दिमाग में कुछ, दिल में कुछ और लेकर घूम रहे हैं लोग! सिर्फ वस्त्र, पहनावे और भाषा से ही हम आधुनिक नहीं हो सकते! आधुनिक बनने के लिए हमें दकियानूसी सोच और दिमाग में पल रहे नकारात्मक विचार से बचने की जरूरत है। आज हम चाँद तक पहुँचने की बातें करते हैं, लेकिन एक लड़की किसी लड़के से मुस्कुरा कर बात कर लेती है देखने वाले के दिमाग में उस ल ?की के प्रति नए-नए कुविचार उत्पन्न होने लगते हैं, कुछ अजीबो-गरीब नाम भी दे डालते हैं। जैसे – 'गन्दी लड़की, बदचलन लड़की, चरित्रहीन लड़की, यहाँ तक के उसके खानदान और पूर्वजों को भी लोग नहीं बख्सते।

अनुराधा जब पुणे शहर में 'रमोना' नाम की एक इटालियन लड़की से मिलती हैं तो वह देखती हैं कि रमोना किसी भी मुद्दे पर बात करने से बिलकुल भी संकोच और परवाह नहीं करती। वह दुनिया घूमने निकली है और वो भी बिल्कुल बेफिक्री से। अनुराधा रमोना के बेफिक्री भरे अंदाज पर लिखतीं हैं-'उसे तो किसी आंटी की पड़ी नहीं थी, पर मेरा बड़ा सवाल सोसाइटी में इज्जत का था! मेरे तो घर का कांट्रेक्ट भी 'अच्छी लड़की' बने रहने से ही रिन्यू होता था। थोड़ी इधर-उधर हुई नहीं कि सर पर छत के लाले पड़ जाने वाले थे!' कहने का तात्पर्य यह है कि हमारे भारतीय समाज ने अपनी मान, प्रतिष्ठा का पूरा भार स्त्रियों के मथ्थे ही सौंप दिया है। स्त्रियाँ उस प्रतिष्ठा के बोझ तले अपनी स्वतंत्रता की आहुति देती रही।

हम जरूरत से कहीं अधिक स्वयं नैतिकता के जाल बुनते चले जाते हैं और निरंतर उस जाल में उलझते रहते हैं तथा उस उलझन में जीवन के असल सौन्दर्य को भूलते, छोड़ते चले जाते हैं।

मानव जीवन में एकांत का अपना ही एक अलग सौन्दर्य और सुखद संयोग होता है। और जब बात सफर की हो तो क्या ही कहना उसमें भी यदि सफर खुद से खुद के लिए हो तो हम जीवन की सच्चाई और खुद से परिचित होते चले जाते हैं। जब मनुष्य परिवार और दोस्तों के बीच होता है, तब खुद को उनकी दृष्टी से देखने को मजबूर होता है, किन्तु जब वह एकल, एकांत में होता है, तब वह अपने आंतरिक स्वभाव से परिचित हो पाता है और तब उसे पता चलता है, उसे किस चीज की जरूरत है। हम स्वयं से परिचित तब हो पाते हैं, जब स्वयं पर काम करना शुरू करते हैं। उसके लिए हमें कभी कभार एकांत में भी रहना चाहिए। लेखिका लिखती हैं – 'जितनी गिरहें जिन्दगी की हैं, आजादी की उससे ज्यादा ही होंगी। एक को खोलिए तो दूसरा सामने ऐंठा रहता है। ये सब सामाजिक सभ्यता के निर्माण की गांठें हैं, जिनसे जीवन को भले स्थायित्व मिला, लेकिन पग-पग पर उसकी चाल को झटका लगा। अब मुझे ही देखिए। एक छोटी-सी आजादी थी, जो मुझे नहीं मिल सकी कभी। वह ऐसी कोई बड़ी बात न थी। उसे मेरा समाज मुझे दे सकता था। उसे मेरे आसपास के लोग मुझे दे सकते थे। परिचित और अपरिचित दोनों तरह के लोगों से वह मुझे मिलनी चाहिए थी – केवल चल सकने की आजादी।'

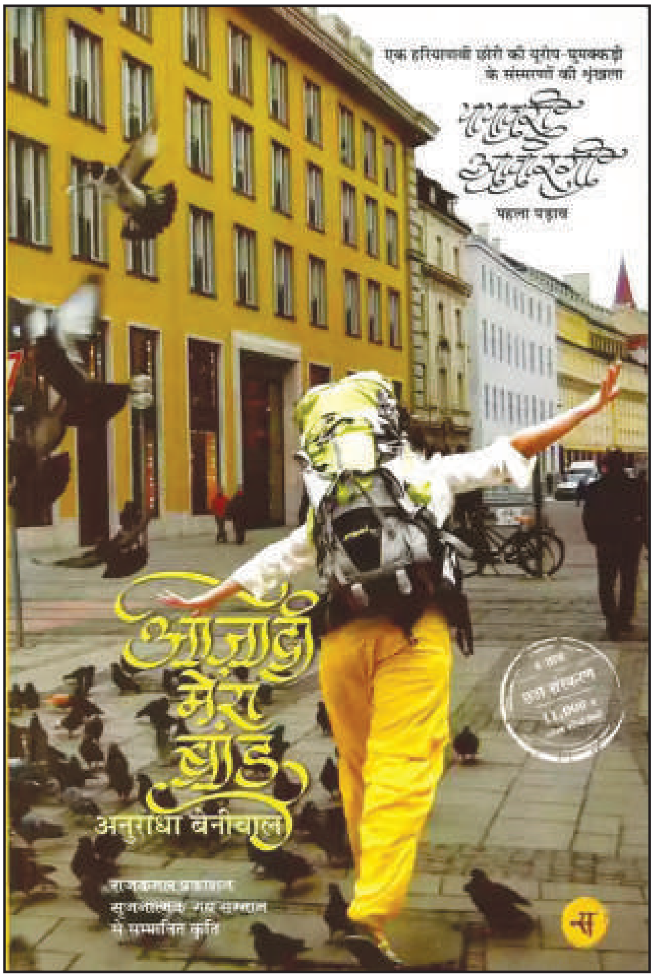

अनुराधा केवल चल सकने की आजादी की बात करती हैं, जो कि हमारे भारतीय समाज में स्त्रियों को इसका अधिकार आज तक न मिल सका है। कुछेक को मिली भी तो उनकी कड़ी मेहनत और बहुत मशक्कत के बाद। अपनी मर्जी से स्त्रियों को जीना तो दूर सांस लेने तक का भी अधिकार हमारा समाज देना नहीं चाहता – 'अपनी मर्जी का संसार हम बना नहीं सकते, लेकिन क्या इस संसार में अपनी मर्जी से हम कहीं आ-जा भी नहीं सकते! महज इसलिए कि कहीं कोई अनहोनी न हो जाए; किसी पुरुष के भीतर कहीं कोई जानवर न जाग जाए?'

हमारा समाज चाहे वह ग्रामीण हो अथवा नगरीय कहीं भी महिलायें खुद को सुरक्षित महसूस नहीं कर पातीं, क्योंकि कौन पुरुष कब भेड़िये का रूप अख्तियार कर ले यह समझना मुश्किल है। यहाँ बात समस्त पुरुष वर्ग की नहीं की जा रही है बल्कि समाज में बहुसंख्यक ऐसे पुरुष हैं, जिनके आचरण में स्त्रियों को देखते ही इतनी तेज गति

से बदलाव आता है शायद उतनी तेजी से गिरगिट भी अपना रंग न बदले। इसकी पुष्टि हर रोज अलग-अलग न्यूज चैनलों पर होती रहती हैं। आए दिन हमारे आस-पास ऐसी घटनाएं घटती रहती है। यह आज की बात नहीं सदियों से औरत केवल हाशिए पर नजर आती है।

बहरहाल बात साहित्य और समाज की हो रही है और साहित्यकार स्वयं भी एक सामाजिक प्राणी होता है। अत: उसकी कृतियों में समाज का हर पक्ष, हर तेवर तथा हर आयाम मूर्त होना लाजमी है। साहित्य के बिना समाज और समाज के बिना साहित्य दोनों ही अधूरे हैं। यदि कहें कि साहित्य के बिना समाज गूंगा और समाज के बिना साहित्य कोरी कल्पना है तो यह तनिक भी गलत न होगा! साहित्य समाज की वास्तविक छवियों को शब्दों के रूप में निरुपित करता है और कहीं न कहीं अनुराधा बेनीवाल भी 'आजादी मेरा ब्रांड' के माध्यम से समाज को उसका प्रतिबिंब दिखाने की कोशिश कर रही हैं।

अनुराधा सोशल मीडिया, फेसबुक का भी उल्लेख करती हैं कि वास्तविक जीवन से कितना अलग-थलग होकर प्राय: लोग अपने आपको और अपने परिवार को प्रस्तुत करने की कोशिश करते हैं। हँसी खिलखिलाती फोटो के पीछे का वास्तविक दर्द को लोग छिपाते फिरते हैं। उनके ऊपर से भी अनुराधा पर्दा उठाती हैं। भारत हो या पेरिस अंतत: धोखे का दर्द क्यूँ औरत के ही हिस्से आता है। 'जूही' जो कि अनुराधा की फेसबुक फ्रेंड है, वह आये दिन फेसबुक पर सुंदर-सुंदर रोमांटिक फोटोज शेयर करती रहती हैं, जिसको देखकर स्वाभाविक है कि सोशल मीडिया पर एक्टिव रहने वाले और वाली मित्र प्रभावित होंगे और वाह-वाही करेंगे तथा उसके जैसी किस्मत वाली दूसरी कोई नहीं इसकी दुहाई भी देंगी। और वैसे ही रोमांसमय जीवन जीने की कामना भी करेंगे! परन्तु जब उसके रोजमर्रा के जीवन से अवगत होंगे तब वास्तविकता क्या है और दिखावा क्या है, दोनों को आप भलीभांति जस्टिफाई कर सकेंगे -

'मुझे यह सब सोचने के लिए मजबूर कर रहा था कि क्या इतना पढ़-लिखकर, पेरिस के इस खुले समाज में रह कर भी सोच ऐसी जड़-की-जड़ है! बल्कि शायद ज्यादा ही जड़; क्योंकि दुनिया को लगता था - कितनी किस्मत वाली है जूही! विदेश में घर है। छुट्टियों में यूरोप घूमती है। आइफेल टावर पर सालगिरह मनाती है। पेरिस में शॉपिंग करती है, लेकिन अन्दर क्या था?'

जूही और धीरेन्द्र दोनों ही भारतीय हैं, मगर दोनों पेरिस में शिफ्ट हो चुके हैं। आधुनिकता की सारी हदें पार हैं, किन्तु दिमाग फिर भी जड़ अवस्था में ही पड़ा और सड़ा हुआ है। भारतीय पुरुष चाहे लन्दन, अमेरिका या पेरिस में क्यों न बस जाए मगर उनकी निगाहों में स्त्रियाँ उनके पैर के जूती से अधिक और कुछ नहीं - 'जिनके सुखी जीवन की सोच-सोच भारत में सभी आहें भरते हैं या सपने सँजोते हैं, वे भी यहाँ विदेश में कैसी दोहरी और मुश्किल जिन्दगी जिए जा रही हैं! कैसा ढकोसला है जीवन का कि दबे-ढंके सारे गुलछर्रे भी उड़ाने हैं और परिवार को जबरन खुश-खुश भी दिखाना है, उसको घर की हद में बांधकर। सारी आजादी खुद चाहिए और सारी बंदिशें पत्नी के लिए हैं। मनमानी का अधिकार पति को और घर की इज्जत के लिए कुर्बानी पत्नी की! कितने दकियानूस हैं ये लोग यहाँ आकर भी, शायद और ज्यादा जितना कि भारत में होते!'

अनुराधा अरेंज्ड मैरिज को लेकर भी चिंतित दिखाई पड़ती हैं - 'एक और लड़की मिली थी मुझे, 'इनक्रेडिबल इंडिया में - खुशबू। वह पश्चिम बंगाल से कैलिमपोंग से ब्याह कर ब्रस्सल्स आ गई थी और अब इस शहर में अपनी पहचान ढूँढ़ रही थी। कैसे हम सब लड़कियाँ कहीं से कहीं पहुँच जाती हैं! जहाँ न पहचान वाले हैं, न कोई सपोर्ट सिस्टम है और न कोई आर्थिक आजाादी कि यह सब बनाया जा सके। इतना बड़ा जुआ कैसे खेल लेती हैं हम लड़कियाँ? किस्मत से पति अच्छा निकला तो काम करने या पढ़ाई करने में मदद करेगा, नहीं तो विदेश में बैठकर रोटियाँ बेलो और फेसबुक पर विदेश की फोटो लगाकर खुश रहो।' एक समय था जब माता-पिता अपनी बेटी को जिस खूंटे से बाँध देते थे, लड़कियाँ उस रिश्ते को

अपना तकदीर ही नहीं बल्कि तथाकथित सात जन्मों का बंधन मानकर सहृदय स्वीकार करतीं थीं। लड़कों के मन में भी कहीं न कहीं यह भाव रहता था कि यही मेरी धर्म-पत्नी है और इसी के साथ अब पूरी उम्र गुजारनी है। बड़े अफसोस के साथ लिखना पड़ रहा है कि अब ऐसा देखना दुर्लभ हो गया है, क्योंकि समय का बहाव ने संस्कार की सारी हदों को अपने आवेश में बहा ले गया है।

वर्चस्ववादी पितृसत्तात्मक पर महिला आलोचक 'सुजाता' ने भी अपनी पुस्तक आलोचना का स्त्री पक्ष में उल्लेख किया है कि – 'पितृसत्तात्मक जिसे पुरुष स्त्रियों पर अधिकार जमाने के लिए इस्तेमाल करते हैं आखिर वह सिर्फ उच्च और मध्यवर्गीय पुरुषों का विशेषाधिकार नहीं है बल्कि समाज के सभी पुरुषों का है, भले ही वह किसी भी वर्ग या नस्ल का हो।'

भारतीय समाज की यह दुर्व्यवस्था है कि स्त्रियों को सिर्फ भोग की वस्तु समझी गई है और यही वजह है कि स्त्रियों को घर की चारदीवारी में कैद करके रखने की परम्परा पलती रही। अनुराधा जिस आजादी की और सुरक्षा की तलाश अपने देश में चाहि उन्हें अपने गाँव की गलियों में भी महसूस नहीं हुआ। अनुराधा जैसी तमाम भारतीय लड़कियाँ आजादी माँगती हैं, मर्दों की गन्दी निगाहों से, क्योंकि जब पुरुषों की गन्दी हरकतें और बुरी निगाहें स्वच्छ हो जाएंगी, तब स्त्रियाँ भी पुरुषों की भांति खुले मन से देर-सवेर घर से बहार आ-जा सकती हैं, मगर ऐसा क्या संभव है?

अनुराधा बेनीवाल लिखती हैं – 'दो जवान अनजान लड़कों के घर में मैं ऐसा महसूस कर रही थी, जैसा मैनें कभी अपने रिश्तेदारों के बीच भी नहीं किया था! वे मेरे दोस्त, भाई, गाइड, होस्ट सब बन गए थे। यह जिसे दुनिया संस्कृति या कि कल्चर कहती है, अगर ऐसी हो तो मैं उसको सर पर रखकर नाचूँ! अगर कोई धर्म इंसान को ऐसा बनाता हो तो मैं उसको पलकों पर बिठाऊं, सबको कन्वर्ट करने वाली मिशनरी बन जाऊं।'

विचारणीय बात यह है कि क्या हमारे समाज के पुरुषों के मन में सिर्फ और सिर्फ अपने घर की बहु-बेटियों के लिए ही सम्मान है बाकि स्त्रियाँ उनकी निगाहों में मन बहलाने का साधन मात्र है। अनुराधा सूदूर देश लन्दन, पेरिस, बर्लिन आदि जैसे विकसित देश में जिस बेफिक्री से घूमी हैं, उस बेफिक्री की माँग भारत से करती हैं और यह माँग सिर्फ अनुराधा की ही नहीं बल्कि भारत की पूरी आधी आबादी की है – 'मुझे इस आजादी को अपने खेतों, अपने गाँवों, अपने शहरों में महसूस करना है। मुझे यूँ ही निश्चिन्त बेफिक्र घूमना है रोहतक की गलियों में। मुझे वह चीज विकास नगर की उस गली में छोड़ देनी है, जहाँ वह लड़का मेरी छाती पर हाथ मारकर भाग गया था। सोनीपत बस स्टैंड के उस मोड़ पर छोड़ देनी है, जहाँ से गुजरते वक्त मुझे गंदे इशारों, टिप्पणियों से नवाजा जाता था।' मतलब हमारी सामाजिक व्यवस्था और पुरुष मानसिकता इतनी बुरी है कि एक लड़की को लड़की होने का, उसके खुद की नजरों में सवालिया निशाना स्थापित करता है।

अनुराधा जब चीखते हुए यह लिखती हैं, तो इस चीख में भारत की हर बेटी की चीख समाहित है – 'क्यों नहीं चलने देते तुम मुझे? क्यों मुझे रह-रहकर नजरों से नंगा करते हो? क्यों मैं तुझे अकेली चलती नहीं सुहाती?; मेरे महान देश के महान नारी पूजकों, जवाब दो! मेरी महान संस्कृति के रखवालों, जवाब दो.. जो समाज एक लड़की को अकेले सड़क पर चलना बर्दाश्त नहीं कर सकता वह समाज सड़ चुका है। वह कल्चर जो एक अकेली लड़की को सुरक्षित महसूस नहीं करा सकती, वह गोबर कल्चर है।' सात समुन्दर पार खुले आसमान के नीचे भारत की एक बेटी अपने ही देश में स्त्री सुरक्षा के लिए चीखतीं हैं तो समझिए कि कितने आधुनिक और कितने विकसित हुए हैं हम। हमारे समाज को विचारों और संवेदनाओं में आधुनिकता लाने की आवश्यकता है!

अंत में अनुराधा बेनीवाल 'सबके बाद, हमवतन लड़कियों के नाम' कुछ सन्देश देती हैं कि – 'तुम चलना। अपने गाँव में नहीं चल पा रही हो तो अपने शहर में चलना। अपने शहर में नहीं चल पा रही हो तो अपने देश

में चलना। अपना देश भी मुश्किल करता है चलना तो यह दुनिया भी तेरी है, अपनी दुनिया में चलना, लेकिन तुम चलना... दुनिया को हमारे चलने की आदत हो जाएगी।'

निष्कर्ष :

हमारा देश विश्वगुरु कहलाने की चाहत रखता है, परंतु जिस देश में देश की आधी आबादी पल-पल असुरक्षा के खौफ में जीती हों उस देश की आत्मा भला कैसे संतुष्ट हो सकती है? अनुराधा के साथ-साथ भारत भी स्त्री सुरक्षा के लिए चीख रहा है। गुहार रहा है। पुकार रहा है। भारतीय समाज को, मानसिक तौर से आधुनिक होने की आवश्यकता है। भारत इक्कीसवीं सदी में आने के बाद भी विकसित न हो सका है। आज भी भारत विकासशील देश ही है और इस विकासशील देश को जरूरत है स्वस्थ मानसिकता वाले समाज की! क्योंकि पाश्चात्य खान-पान और परिधान को अपनाने से हम आधुनिक नहीं हो सकते। इसके लिए समाज के प्रत्येक सदस्य को खुद के ऊपर काम करना होगा। बाहरी यात्रा से पहले अपने अंतर्मन की यात्रा से करनी पड़ेगी! आजादी न माँगने की चीज है और न ही छीनने की। आजादी पर पुरुषों के तरह स्त्रियों का भी उतना अधिकार है। अत: पूरे बल पूर्वक कहती हूँ कि हमारे देश की सामाजिक व्यवस्थाओं और पुरुष आचरणों में सुधार की अति आवश्यकता है। ❑

सन्दर्भ :

अनुराधा बेनीवाल, आजादी मेरा ब्रांड, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, भूमिका, xii
कृष्णा सोबती, समय सरगम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 77
अनुराधा बेनीवाल, आजादी मेरा ब्रांड, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ.1
वही, पृ. 13
वही, पृ. 14
वही, पृ. 42
वही, पृ. 45
वही, पृ. 60
सुजाता, आलोचना का स्त्री पक्ष, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2021, पृ. 29
अनुराधा बेनीवाल, आजादी मेरा ब्रांड, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ. 185
वही, पृष्ठ-186
वही, पृष्ठ-186
वही, पृष्ठ-186

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰিনাম ধৰ্মত মূল্যবোধৰ শিক্ষা

ড° বন্দনা বৰুৱা

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

শংকৰদেৱৰ এক শৰণ হৰি নাম ধৰ্মই সামাজিক সংস্কাৰ সাধন কৰাৰ লগতে জনসাধাৰণক মূল্যবোধৰ শিক্ষাও প্ৰদান কৰিছিল। ধৰ্মৰ লগত বিভিন্ন মূল্যবোধৰ শিক্ষা জড়িত হৈ থাকে। যিহেতু ধৰ্মৰ যোগেদিহে মানুহৰ নৈতিক, আধ্যাত্মিক ধৰ্মীয়, মানৱীয়, বৌদ্ধিক মূল্যবোধৰ বিকাশ সাধন কৰিব বিচৰা হয়। শংকৰদেৱেও তেওঁৰ সাহিত্যৰাজি, চিত্ৰকলা, নাট-ভাওনা, বৰগীত, ভটিমা আদি সৃষ্টিৰ যোগেদি ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ সমান্তৰালকৈ নৈতিক আধ্যাত্মিক, বৌদ্ধিক বিকাশ সাধনৰো ব্যৱস্থা কৰিছিল। তেওঁৰ দ্বাৰা ৰচিত পদ ঘোষাই এই কথা প্ৰমাণ কৰাৰ উপৰিও তেওঁৰ জীৱন শৈলীয়েও সেই কথাকেই প্ৰতীয়মান কৰে। তেওঁৰ ধৰ্মত মূল্যবোধ শিক্ষাই কেনেদৰে প্ৰাধান্যতা পাইছিল আৰু কোনবিলাক মূল্যবোধে কেনেদৰে সমাজ সংস্কাৰত সহায়ক হৈ উঠিছিল এই বিষয়ে পৰৱৰ্তী গৱেষণা পত্ৰত বিস্তৃতভাৱে আলোচনা কৰা হ'ব।

সূচক শব্দ ঃ

মূল্যবোধ শিক্ষা, শংকৰদেৱ, একশৰণ হৰিনাম ধৰ্ম, নৈতিক দিশ, আধ্যাত্মিক দিশ।

১.০ অৱতৰণিকা ঃ

শংকৰদেৱ আছিল একশৰণ হৰিনাম ধৰ্মৰ প্ৰৱৰ্তক। ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ লগে লগে সমাজ সংস্কাৰৰ উদ্দেশ্য আগত ৰাখি শংকৰদেৱে সাহিত্য, পৰিৱেশ্য কলা, চিত্ৰকলা আদিৰ সৃষ্টি কৰাই নহয় নামঘৰ, সত্ৰ প্ৰতিষ্ঠা কৰি সকলো জাতি, বৰ্ণ, ধৰ্ম, নিৰ্বিশেষে একত্ৰিত কৰি এক বৃহৎ অসমীয়া জাতি গঢ়ি তুলিবলৈ যত্ন কৰিছিল। তেওঁৰ ধৰ্মত এজন পৰম ব্ৰহ্ম স্বৰূপ কৃষ্ণ বা ৰামকেই উপাসনা কৰা হৈছিল যাৰ বাবে তেওঁৰ ধৰ্মৰ নাম আছিল একশৰণ হৰি নাম ধৰ্ম। সমসাময়িক সমাজ ব্যৱস্থাত গঢ়ি উঠা কিছুমান ৰীতি নীতি ধৰ্মীয় আচাৰ অনুষ্ঠানে সেই সময়ৰ সমাজখনক প্ৰদুষিত কৰি পেলাইছিল। 'নৰবলি' প্ৰথাৰ লগত সংগতি ৰাখি 'ভোগী' সম্প্ৰদায়ৰ সৃষ্টি হৈছিল। সেইদৰে তান্ত্ৰিক ৰীতি-নীতি, বলি-বিধান, কুমাৰী-পূজা, দেৱদাসী নৃত্যৰ পৰম্পৰাই সমাজত কুসংস্কাৰ, অন্ধ বিশ্বাস আদিৰ প্ৰভাৱ বৃদ্ধি কৰিছিল ফলত সমাজ সংস্কাৰৰ প্ৰয়োজনীয়তা আহি পৰিছিল। শংকৰদেৱে এই সমাজ সংস্কাৰৰ আদৰ্শ আগত ৰাখিয়েই একশৰণ হৰিনাম ধৰ্মৰ প্ৰচাৰ আৰম্ভ কৰিছিল। শংকৰদেৱে ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ লগতে সাহিত্য চৰ্চাৰ কামো আৰম্ভ কৰিছিল। কাৰণ তেওঁ বুজিছিল যে ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ বাবে গীত, নৃত্য, ভাওনাৰ আদিৰ লগতে সাহিত্য চৰ্চাও জৰুৰী। সেইবাবেই শংকৰদেৱ কীৰ্তন, দশম আদি ৰচনা কৰি জনসাধাৰণক ধৰ্মীয় শিক্ষা প্ৰদান কৰাৰ লগতে সমাজ সংস্কাৰৰ আদৰ্শও প্ৰদান কৰিছিল। শংকৰদেৱৰ সাহিত্য সৃষ্টিৰ আঁৰত ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ

সহকাৰী অধ্যাপিকা, অসমীয়া বিভাগ
চৰাইবাহী মহাবিদ্যালয়
মৰিগাঁও, অসম-৭৮২১০৬
৬০০১৮২১০৬১
bandanaboruah655@gmail.com

উদ্দেশ্য নিহিত থাকিলেও সাহিত্যৰ নৱ ৰসৰ ভিতৰত বহুকেইটা ৰসৰ সমাহাৰ তেওঁৰ ৰচনাৱলী হোৱাতো পৰিলক্ষিত হয়। শংকৰদেৱৰ সাহিত্যৰাজিত কেৱল ৰসৰেই সমাহাৰ হৈছে এনে নহয়; ইয়াৰ মাজত ধৰ্মীয় আধ্যাত্মিক নৈতিক শিক্ষাৰ লগতে বিভিন্ন সৎ আচৰণৰ শিক্ষাও নিহিত হৈ আছে। এই ধৰ্মীয়, আধ্যাত্মিক, নৈতিক শিক্ষাৰ যোগেদি শংকৰদেৱে প্ৰদান কৰিছিল বিভিন্ন মূল্যবোধৰ শিক্ষা।

শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰি নাম ধৰ্মত মূল্যবোধৰ শিক্ষাৰ বিষয়ে আলোচনা কৰাৰ আগতে মূল্যবোধৰ শিক্ষানো প্ৰকৃততে কি, ইয়াৰ সংজ্ঞা কেনেদৰে নিৰূপণ কৰা হৈছে এই সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাতো প্ৰয়োজন। শিক্ষাৰ মূল্যবোধৰ প্ৰসংগতো এই কাৰণেই উত্থাপিত হৈছে যে ক্ৰমাৎ প্ৰতিযোগিতাৰে পৰিপূৰ্ণ সমাজখনত মানৱীয় মূল্যবোধকে আদি কৰি নৈতিক, আধ্যাত্মিক মূল্যবোধৰ পৰিমাণ কমি আহিছে। ফলত সমাজখনত সংঘাত, বিশৃঙ্খলতা, অবিশ্বাস, সন্দেহ, সংশয় আদিৰে ভৰি পৰিছে। সামাজিক ব্যাধিৰ নিৰাময়ৰ ক্ষেত্ৰত শিক্ষাই এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছে। সেইকাৰণে বৰ্তমান সময়ছোৱাত মূল্যবোধৰ শিক্ষাৰ প্ৰসংগ বৰকৈ উত্থাপিত হৈছে। মূল্যবোধৰ শিক্ষাই বাঢ়ি অহা সামাজিক সমস্যাবোৰ সমাধানত এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছে। নতুন প্ৰজন্মক মূল্যবোধৰ শিক্ষাৰে শিক্ষিত কৰিব নোৱাৰিলে শিক্ষাৰ যি প্ৰকৃত উদ্দেশ্য সি কেতিয়াও সফল হ'ব নোৱাৰিব। বৰ্তমান সেয়ে মূল্যবোধৰ শিক্ষাৰ প্ৰতি প্ৰায় প্ৰত্যেকখন ৰাষ্ট্ৰই আগ্ৰহ প্ৰকাশ কৰিছে আৰু বিশ্বজোৰা জাগৰণো সৃষ্টি হৈছে। বৰ্তমান নগৰকেন্দ্ৰীক সভ্যতাৰ ব্যস্ততা, সময়ৰ নাটনি, আৱেগিক সম্পৰ্কৰ অৱনতিয়ে এনেকুৱা এটা পৰিৱেশ সৃষ্টি কৰিছে যে মানুহৰ মাজত সুস্থ এটা সম্পৰ্ক বজাই ৰখা টান হৈ পৰিছে। গতিকে এনে পৰিৱেশৰ পৰা উদ্ধাৰ কৰিবৰ বাবে ছাত্ৰ-ছাত্ৰী সকলক মূল্যবোধৰ শিক্ষা দিয়াতো প্ৰয়োজন হৈ পৰিছে। এই মূল্যবোধৰ ধাৰণাতো কিন্তু বৰ্তমান যুগৰ নহয়; অতি প্ৰাচীন কালৰে পৰা মূল্যবোধৰ শিক্ষাৰ প্ৰসংগ উত্থাপিত হৈছে। প্ৰকৃততে ধৰ্মৰ সৃষ্টিৰ লগে লগেই মূল্যবোধৰ প্ৰসংগতো আহি পৰিছিল। হিন্দু, খ্ৰীষ্টান, বৌদ্ধ, শিখ, জৈন, মুছলমান ধৰ্মতো নৈতিক আধ্যাত্মিক আৰু সজ আচৰণৰ শিক্ষা দিয়া হয়। এনে শিক্ষাৰ লগতে মূল্যবোধৰ ধাৰণাতো ওতঃপ্ৰোত ভাৱে জড়িত থাকে। গতিকে মূল্যবোধৰ ধাৰণাতো আজিৰ নহয়; বৰং ই পুৰণি কালৰে পৰাই প্ৰচলিত হৈ আছে। বিশেষকৈ পুৰণি শিক্ষা পদ্ধতিত যেতিয়া ছাত্ৰসকলে গুৰুগৃহত গৈ বিভিন্ন বিষয়ৰ শিক্ষা গ্ৰহণ কৰিছিল; সেই শিক্ষাৰ যোগেদিয়েই তেওঁলোকে মূল্যবোধৰ শিক্ষাও আহৰণ কৰিছিল। প্ৰাচীন ভাৰতবৰ্ষৰ ধৰ্ম আৰু সংস্কৃতিৰ লগত নিবিড় ভাৱে জড়িত আছিল মূল্যবোধৰ শিক্ষা। বিশেষকৈ বেদ উপনিষদ, ব্ৰাহ্মণ, পুৰাণ উপপুৰাণ আদিত মূল্যবোধৰ শিক্ষাৰ বীজ অংকুৰিত হৈছিল। সেইদৰে বৌদ্ধ ধৰ্মৰ মূলগ্ৰন্থ ত্ৰিপিটক, জাতক, জৈন ধৰ্মৰ শাস্ত্ৰসমূহতো মূল্যবোধৰ শিক্ষাই দিয়া হৈছিল। এই সম্পৰ্কত উল্লেখ কৰিব পাৰি *"The vedas, upanisadas, brahmanas and purasas are the sources of value education. In ancient india, Gurukula was known as a place where students learn all types of education. All students without any discrimination resided together in the ashrams. They learned the value that we all are same. There was brahmacharya, the period dedicated to education free from all sorts of distractions and they absorbed what they were intended to learn."* [১]

বৰ্তমান পাশ্চাত্য শিক্ষা পদ্ধতিত value based education ৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিয়া হৈছে। Neil Hawkes এ এই value based education ৰ প্ৰথম উদ্যোক্তা। তেঁৱেই value based education ধাৰণাতো প্ৰথমে প্ৰতিষ্ঠিত কৰিছিল। ব্যুৎপত্তিগত অৰ্থৰ ফালৰ পৰা চাবলৈ গলে মূল্যবোধৰ ইংৰাজী প্ৰতিশব্দ হৈছে value. লেটিন ভাষাৰ valere শব্দৰ পৰা আহিছে, যাৰ অৰ্থ হ'ল দাম, গুণ, গুৰুত্ব উপযোগিতা বা ধাৰণা। অৱশ্যে মূল্যবোধৰ এই অৰ্থ বিভিন্ন ধৰণে ব্যাখ্যা কৰিব পাৰি। মানুহৰ মাজত অন্তৰ্নিহিত হৈ থকা বিশেষ গুণ যোগ্যতা বা দক্ষতাকো মূল্যবোধ বুজায়। মূল্যবোধ সদায় ব্যক্তিজনৰ সামাজিক, আধ্যাত্মিক নৈতিক দিশৰ উত্তৰণৰ লগত জড়িত থাকে। তদুপৰি ই একোজন ব্যক্তিক মৰ্যদা, সন্মান প্ৰদান কৰে। মূল্যবোধেহে ব্যক্তি এজনৰ মনোভাৱ, বিচাৰ ধাৰা, আচৰণ, সিদ্ধান্ত গ্ৰহণৰ দক্ষতা, নৈতিক দিশ, সামাজিক দৃষ্টিভংগী উন্নত কৰে আৰু ব্যক্তিজনৰ ব্যক্তিত্বক পৰিচয় কৰাই দিয়ে। আনহাতে সামাজিক মূল্যবোধে সমাজ এখনৰ চিন্তাধাৰা আৱেগ অনুভূতি আদিক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। সময় আৰু সমাজভেদে মূল্যবোধো সুকীয়া সুকীয়া হ'ব পাৰে। তথাপিও কিন্তু কিছুমান আৱেগ অনুভূতি, নীতি-নিয়ম, আচৰণ একেধৰণৰ হয়। ধৰ্মৰ লগত মূল্যবোধৰ শিক্ষা ওতঃপ্ৰোতঃ ভাৱে জড়িত হৈ থাকে। এই value based educationৰ প্ৰকৃত উদ্দেশ্য কি সেই সম্পৰ্কে এই কথাষিনি উল্লেখ কৰিব পাৰি। *"Value education refers to the process of imparting ethical, moral and social values to individuals. The aims and objectives of value education is to develop positive values and character traits in individuals, which can help them lead happy, fulfilling lives and contribute positively to society".* [২] শংকৰদেৱে যি একশৰণ হৰিনাম ধৰ্ম প্ৰচাৰ

কৰিছিল, সেই ধৰ্মৰ লগত মূল্যবোধৰ শিক্ষা জড়িত হৈ আছে। এই গৱেষণা পত্ৰক্ষনত শংকৰদেৱে তেওঁৰ ধৰ্মৰ জৰিয়তে মূল্যবোধৰ শিক্ষা কেনেধৰণে প্ৰদান কৰিছিল আৰু তেওঁৰ ধৰ্মতনো কি কি মূল্যবোধৰ শিক্ষাই অগ্ৰাধিকাৰ পাইছিল এই সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিব বিচৰা হৈছে।

১.১ গৱেষণা পত্ৰক্ষনৰ পৰিসৰ ঃ

শংকৰদেৱে প্ৰচাৰ কৰা একশৰণ হৰিনাম ধৰ্মৰ লগত বহুবোৰ বিষয় জড়িত হৈ আছে যেনে ইয়াৰ সাহিত্যৰাজি, পৰিৱেশ্য ক'লা, সংগীত, চিত্ৰকলা, উপাসনা পদ্ধতি ইত্যাদি। এই গৱেষণা পত্ৰক্ষনৰ ক্ষুদ্ৰ পৰিসৰলৈ লক্ষ্য ৰাখি ইয়াত কেৱল মাত্ৰ একশৰণ হৰিনামৰ ধৰ্মৰ লগত মূল্যবোধৰ কি সম্পৰ্ক, ইয়াতনো মূল্যবোধ শিক্ষাৰ কোনবোৰ প্ৰকাৰে প্ৰাধান্যতা লাভ কৰিছে এই সম্পৰ্কহে আলোচনা কৰিব বিচৰা হৈছে।

১.২ গৱেষণা পত্ৰক্ষনৰ বিষয়বস্তুৰ প্ৰয়োজনীয়তা ঃ

বৰ্তমান আধুনিক সমাজ জীৱনত হিংসা, হত্যা, দ্বন্দ্ব, সংঘাতে মানুহৰ মাজত সমস্যাৰ সৃষ্টি কৰিছে। সেইবাবে শিক্ষা ব্যৱস্থাত মূল্যবোধ শিক্ষাৰ প্ৰয়োজনীয়তা আহি পৰিছে। ইয়াৰ উপৰিও অসমীয়া সমাজ জীৱনত আটাইতকৈ বেছি প্ৰভাৱ পেলোৱা শংকৰদেৱৰ কৰ্মজীৱন আৰু ৰচনাৱলীত কি কি মূল্যবোধে অগ্ৰাধিকাৰ লাভ কৰিছিল আৰু ইয়াৰ যোগেদি কেনেদৰে সমাজ সংশোধনৰ প্ৰচেষ্টা কৰা হৈছিল এই সম্পৰ্কে নতুন এক দৃষ্টিভংগীৰে আলোচনা কৰাতো প্ৰয়োজন হৈ পৰিছে। এনেবোৰ আলোচনাই বৰ্তমান সময়ত সমাজ সংশোধনৰ ক্ষেত্ৰত বিশেষ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিব বুলি আশা কৰিব পাৰি।

১.৩ গৱেষণা পত্ৰক্ষনৰ উদ্দেশ্য ঃ

১। শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰিনাম ধৰ্মত মূল্যবোধৰ কোনবোৰ প্ৰকাৰে প্ৰাধান্যতা লাভ কৰিছিল এই সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা।

২। শংকৰদেৱে তেওঁৰ ধৰ্মৰ জৰিয়তে কেনেকৈ মূল্যবোধৰ শিক্ষা প্ৰদান কৰিছিল এই সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা।

১.৪ গৱেষণা পত্ৰক্ষনৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰক্ষনৰ প্ৰস্তুতকৰণৰ বাবে মূখ্য আৰু গৌণ উৎস এই দুয়ো উৎসৰ পৰা দাতা সংগ্ৰহ কৰা হৈছে। শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰি নাম ধৰ্মৰ লগত জড়িত থকা চৰিত পুথি আৰু শংকৰদেৱ বিৰচিত মূল গ্ৰন্থ সমূহৰ পৰা দাতা সংগ্ৰহ কৰাৰ লগতে বিভিন্ন প্ৰাসংগিক গ্ৰন্থ আলোচনী, জাৰ্ণেল, ৱেব চাইট আদিৰ পৰাও দাতা সংগ্ৰহ কৰি বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰে বিশ্লেষণ কৰিব বিচৰা হৈছে।

১.৫ মূল আলোচনা ঃ

এখন সমাজৰ অগ্ৰগতি তথা উন্নয়নৰ বাবে মূল্যবধোৰ শিক্ষা অত্যন্ত জৰুৰী। মূল্যবোধ অবিহনে সমাজ বা ব্যক্তিৰ এক মৰ্যদাপূৰ্ণ জীৱন যাপন অসম্ভৱ। এই মূল্যবোধক বিভিন্ন দৃষ্টিকোণৰ পৰা ব্যাখ্যা দিব পাৰি। দাৰ্শনিক দৃষ্টিকোণৰ পৰা চালে মূল্যবোধ সদায় ব্যক্তি এজনৰ বিশ্বাস বা চিন্তাৰ লগত জড়িত। মনোবিজ্ঞানৰ দৃষ্টিকোণৰ পৰা কিন্তু তেনে নহয়। মনোবিজ্ঞানৰ মতে কোনো ব্যক্তি মূল্যবোধ বা নৈতিকতা লগত লৈ জন্ম গ্ৰহণ নকৰে; বৰং ই এক অৰ্জন কৰা প্ৰক্ৰিয়াহে। এজন ব্যক্তিয়ে অভিজ্ঞতা বা জীৱনৰ সাংস্কৃতিক সামাজিক প্ৰেক্ষাপটত ইয়াক অৰ্জন কৰে। তদুপৰি ইয়াৰ বিকাশো কৰিব পাৰি। আনহাতে সমাজতাত্বিক দিশৰ পৰা চালে মূল্যবোধ হ'ল শুদ্ধিকৰণৰ এক প্ৰক্ৰিয়া। ব্যক্তি সুন্দৰ হলেহে সমাজ সুন্দৰ হ'ব পাৰে। সমাজত নিজক প্ৰতিষ্ঠিত কৰিবলৈ যি শুদ্ধ, সৎ, সুন্দৰ ভাৱমূৰ্তিৰ প্ৰয়োজন হয় তাক অৰ্জনৰ প্ৰক্ৰিয়াই হৈছে মূল্যবোধ। সামাজিক মূল্যবোধে সদায় সমাজ এখনৰ আচৰণ, শৃঙ্খলা, মৰ্যদা আদি নিৰূপণ কৰে।

মূল্যবোধৰ সংজ্ঞা বিভিন্ন পণ্ডিতে বিভিন্ন ধৰণে দিছে। Allport এ ইয়াৰ সংজ্ঞা এইদৰে নিৰূপণ কৰিছে - "Value is belief upon which a man acts by preference অৰ্থাৎ মূল্যবোধ হৈছে এজন ব্যক্তিয়ে অগ্ৰাধিকাৰ দিয়া কৰ্মৰাজিৰ ওপৰত বিশ্বাস। John Dewayএ কৈছে- The value means primarity the prize, to esteem, to appraise and to estimate" অৰ্থাৎ মূল্যবোধৰ অৰ্থ মূখ্যতঃ পুৰস্কাৰ দিয়া, সন্মান কৰা, মূল্যায়ণ কৰা আৰু অনুমান কৰা। S.Brightmanৰ মতে *"In most elemantary sense, value means whatever is actually liked, prized, esteemed, desired approved or enjoyed by anyone at anytime অৰ্থাৎ একেবাৰে সাধাৰণ অৰ্থত মূল্যবোধ মানে হ'ল যিকোনো ব্যক্তিয়ে প্ৰকৃতাৰ্থত যিকোনো সময়ত পোৱা ভালপোৱা, পুৰস্কাৰ, মৰ্যদা, আকাংক্ষা, অনুমোদন বা বিনোদন।"*[৩]

মূল্যবোধৰ বিভিন্ন শ্ৰেণীবিভাগ আছে। বিভিন্ন দাৰ্শনিক পণ্ডিতে ইয়াৰ শ্ৰেণীবিভাজন বিভিন্ন ধৰণে কৰিছে; তাৰ ভিতৰত উল্লেখযোগ্য কেইটামান বিভাজন হৈছে -

১) সামাজিক মূল্যবোধ (Social Value)
২) নৈতিক মূল্যবোধ (Moral Value)
৩) ধৰ্মীয় মূল্যবোধ (Religions Value)
৪) আধ্যাত্মিক মূল্যবোধ (Spiritual Value)
৫) নন্দনতাত্বিক মূল্যবোধ (Aesthatic Value)
৬) স্বাস্থ্য সম্পৰ্কীয় মূল্যবোধ (Health Value)
৭) মানৱীয় মূল্যবোধ (Humanitarian Value)
৮) অৰ্থনৈতিক মূল্যবোধ (Economic Value)

৯) পৰিবেশীয় মূল্যবোধ (Environmental Value)

এতিয়া প্ৰশ্ন হ'ল যে মূল্যবোধৰ এই প্ৰকাৰ সমূহ শংকৰদেৱৰ জীৱন প্ৰৱাহ আৰু সাহিত্যৰাজিত কেনেদৰে প্ৰতিফলিত হৈছে। ধৰ্মীয় গুৰু হিচাপে শংকৰদেৱে একশৰণ হৰি নাম ধৰ্মৰ যোগেদি ধৰ্মীয় শিক্ষা প্ৰদান কৰিছিল। তদুপৰি তেওঁ এজন সমাজ সংস্কাৰকো আছিল। তেওঁ অনুভৱ কৰিছিল যে এখন সমাজ উন্নতিৰ দিশত অগ্ৰসৰ হ'বলৈ হলে সমাজখন কুসংস্কাৰ, ধৰ্মীয় গোড়ামি আদিৰ পৰা মুক্ত হ'ব লাগিব। সেইবাবেই তেওঁ ধৰ্মীয় শিক্ষা দিয়াৰ উপৰিও সজ আচৰণ, সকলো জীৱৰ প্ৰতি সমভাৱাপন্ন মনোভাৱ, স্ত্ৰী, শূদ্ৰ, চণ্ডাল সকলো জাতিৰে ধৰ্মীয় আচৰণৰ ক্ষেত্ৰত সমান অধিকাৰ এনেধৰণৰ নৈতিক দিশৰ কিছুমান শিক্ষাও তেওঁ নিজৰ ধৰ্মৰ যোগেদি প্ৰদান কৰিছিল। সেইবাবেই শংকৰদেৱৰ ধৰ্মীয় শিক্ষাত মূল্যবোধৰ শিক্ষা বিশেষভাৱে জড়িত হৈ আছে বুলি কব পাৰি। বিভিন্ন দাৰ্শনিক পণ্ডিতে মূল্যবোধৰ যি বিভিন্ন প্ৰকাৰৰ বিষয়ে উল্লেখ কৰিছি সেইবোৰ শংকৰদেৱৰ ধৰ্ম সাহিত্য আৰু কৰ্মৰাজিত কেনেদৰে প্ৰতিফলিত এই বিষয়ে এই গৱেষণা পত্ৰত আলোচনা কৰিব বিচৰা হৈছে।

১.৫.১। সামাজিক মূল্যবোধ ঃ শংকৰদেৱে ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ লগে লগে সমাজ সংস্কাৰৰ কামো কৰি গৈছিল। সমাজৰ কুসংস্কাৰ পূৰ্ণ-ৰীতি-নীতি, ধৰ্মীয় গোড়ামি আদিৰ পৰা অসমীয়া সামাজখনক আঁতৰাই নতুন ৰূপত সজাই পৰাই তুলিব বিচাৰিছিল। সেই সময়তে অসমীয়া সমজখনক বামাচাৰী ৰীতি-নীতি, তান্ত্ৰিকতা, যাগ যজ্ঞ বলি বিধানৰ পৰম্পৰাই আগুৰি ধৰিছিল। শংকৰদেৱে অসমীয়া সমাজখনত প্ৰভাৱ পেলোৱা এনে ধৰণৰ কুসংস্কাৰ পূৰ্ণ ৰীতি নীতিবোৰৰ সংস্কাৰ সাধন কৰিব বিচাৰিছিল। বন্ধুত্ব, সহযোগিতা, ভাতৃত্ববোধ, দায়িত্ববোধ, সহানুভূতিশীল আচৰণ, ধৈৰ্য আদিবোৰ হৈছে সমাজিক মূল্যবোধ। প্ৰকৃততে যিবোৰ মূল্যবোধে সমাজ এখনক শীৰ্ষ পৰ্যায়ত অৱস্থান কৰাই সিয়েই হৈছে সামাজিক মূল্যবোধ। শংকৰদেৱ এনে এজন উদাৰ মনৰ ব্যক্তি আছিল যে তেওঁৰ মানত সকলো শিষ্য সমান আছিল। তেওঁৰ ধৰ্মত ধনী দুখীয়া, জাতি ধৰ্ম বৰ্ণ সম্প্ৰদায়ৰ কোনো ভেদাভেদ নাছিল। এইকথা তেওঁ নিজেই ভাগৱতৰ দ্বিতীয় স্কন্ধত কৈ গৈছে ঃ

কিৰাত কছাৰি খাচি গাৰো মিৰি
যৱন, কঙ্ক গোৱাল।
অসম মুলুক ধোৱা যে তুৰুক
কুবাচ ম্লেচ্ছ চণ্ডাল
আনো পাপী নৰ কৃষ্ণ সেৱকৰ
সঙ্গত পৱিত্ৰ হয়।
ভকতি লভিয়া সংসাৰ তৰিয়া
বৈকুণ্ঠ সুখে চলয়।।[৫৪]

অৰ্থাৎ- কিৰাত কছাৰি, খাচি, গাৰো, মিৰি, যৱন, কঙ্ক গোৱাল, ধোৱা, তুৰুক, কুবাচ, ম্লেচ্ছ, চণ্ডাল আদি আৰু আন আন শ্ৰেণীৰ মাজত যিসকল পাপী লোক আছিল তেওঁলোকে কৃষ্ণ সেৱকৰ সংগ লাভ কৰি ভক্তিৰ সংযোগত সংসাৰ চক্ৰৰ পৰা উদ্ধাৰ লাভ কৰি অতি সুখেৰে বৈকুণ্ঠলৈ যাত্ৰা কৰে। উল্লেখযোগ্য যে শংকৰদেৱৰ প্ৰিয় শিষ্য সকলৰ ভিতৰত *"নৰোত্তম আতৈ আছিল নগা, গোবিন্দ গৰমণি আছিল গাৰো, পৰমানন্দ আছিল মিৰি, নৰহৰি আহোম, জয়ানন্দ বা জয়ৰাম ভুটীয়া, চান্দসাই আছিল মুছলমান, জয়হৰি যৱন মুছলমান, জৈন্তী গাৱঁৰ মঘাই (মাধৱ), শ্ৰীৰাম আতা আৰু ভোবোৰা দাস ক্ৰমে হীৰা কৈৱৰ্ত্ত আৰু বনিয়া সম্প্ৰদায়ৰ লোক আছিল বুলি বিশ্বাস প্ৰচলিত। শংকৰদেৱে শৰণ দিয়া কোচসকলৰ ভিতৰত আছিল মহাৰাজ নৰনাৰায়ণৰ ভ্ৰাতৃ চিলাৰায়। বগা যৱনেও (ৰজাৰ দৰ্জি) শংকৰদেৱৰ ওচৰত শৰণ লৈছিল।"*[৪]

শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰি নাম ধৰ্মত ধনী দুখীয়াৰ প্ৰভেদো নাছিল। তেওঁৰ ধৰ্মত সকলো শিষ্যই আছিল সমান। *"প্ৰায়বিলাক শিষ্য প্ৰশিষ্যই স্নেতয়ক বলোৰাম আতৈ, খৰাৰাম আতৈ ভিক্ষাৰী মধাই আতৈ, উদাৰ আতৈ, ধোবা (ৰঘুপতি আতৈ) বাঢ়ৈ (কাৰলা আতৈ, কমলা আতৈ) সোণাৰী (হৰিদাস আতৈ), হাতী ঘাঁহী (অনিৰুদ্ধ আতৈ) ঘোঁৰা ঘাঁহী (সনাতন আতৈ), মাউত (জয়ানন্দ আতৈ) কুমাৰ (হীৰা দলৈ) তেলি (কৃষ্ণ) আৰু বনুৰা (সাই আতৈ) আছিল। আনকি বাঁহ বন কৰা সাধাৰণ হজুৰৈ মানুহো শংকৰ মাধৱৰ শিষ্য আছিল। উদাহৰণ স্বৰূপে দাউকী গাঁৱৰ বুঢ়া বুঢ়ীলৈ আঙুলিয়াব পাৰি।"*[৫]

সমাজৰ তুচ্ছ জাতি বুলি কোনোৱে তেওঁৰ ধৰ্ম গ্ৰহণ কৰিব নোৱাৰিব বা নাৰী বুলি ধৰ্মীয় কাম কাজৰ পৰা আঁতৰত থাকিব লাগিব বুলি কোনো কথা শংকৰদেৱৰ ধৰ্মত নাছিল। হৰি ভক্তি ক্ষেত্ৰত কোনো ধৰণৰ ধনী দুখীয়া, উচ্চ-নীচ, জ্ঞানী-অজ্ঞানীৰ কথা নাছিল, তেওঁৰ ধৰ্মত সকলো সমান আছিল। কীৰ্তনৰ পাষণ্ড মৰ্দ্দনত এই কথা এনেদৰে উল্লেখ আছে ঃ

কুকুৰ খায় হেন ম্লেচ্ছগণ।
সিও শুদ্ধ হোৱে হৰি কীৰ্ত্তনে।।
চাণ্ডালো হৰি নাম লৱে মাত্ৰ
কৰিবে উচিত যজ্ঞৰ পাত্ৰ। [১১৮]

সেইদৰে স্ত্ৰী, বালক, বৃদ্ধ এই সকলোৰে অধিকাৰৰ ক্ষেত্ৰতো সুন্দৰ কথা এযাৰ কৈছে ভাগৱতৰ দ্বিতীয় স্কন্ধত

স্ত্ৰী বাল্য বৃদ্ধ সমস্তৰে অধিকাৰ
চণ্ডালকো কৰে নামে তেখনে উদ্ধাৰ।[১৩]

এইফালৰ পৰা লক্ষ্য কৰিলে শংকৰদেৱৰ প্ৰচাৰিত ধৰ্মত সামাজিক মূল্যবোধৰ আদৰ্শ জড়িত হৈ আছে। সকলো ধৰণৰ বৈষম্যৰ অৱসান ইয়ো সামাজিক মূল্যবোধৰে শিক্ষা। এই আদৰ্শৰে আগবাঢ়িলে সমাজত বাঢ়ি অহা বিশৃঙ্খলতা, সংঘাত, দ্বন্দ্ব, দুৰ্নীতি আদি ভালেমান সামাজিক ব্যাধিৰ অৱসান ঘটিব।

১.৫.২। নৈতিক মূল্যবোধ (Moral Value) ঃ

শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰিমান ধৰ্মত নৈতিক মূল্যবোধৰ শিক্ষাও জড়িত হৈ আছে। ধৰ্মীয় গুৰু হোৱা বাবেই হয়তো শংকৰদেৱে তেওঁৰ ভকত সকলৰ নৈতিক মূল্যবোধৰ উত্তৰণত বিশেষ গুৰুত্ব দিছিল। কীৰ্তন ঘোষাৰ পাষণ্ড মৰ্দ্দনত অধ্যায়ত শংকৰদেৱে লিখিছে চণ্ডালে হৰিনাম কীৰ্তন কৰা দেখি যিজনে নিন্দা কৰে তেওঁ যিমান পূণ্য নকৰক কিয় সেই পূণ্যৰ অৱসান ঘটে। ইয়াৰ অৰ্থ হৈছে কাকো কেতিয়াও তুচ্ছ জাতি বুলি নিন্দা কৰা উচিত নহয়। এই নৈতিক শিক্ষা শংকৰদেৱে তেওঁৰ শিষ্যসকলক প্ৰদান কৰিছিল। এই কথা পাষণ্ড মৰ্দ্দনত দ্বিতীয় কীৰ্তনত শংকৰদেৱে এইদৰে লিখিছে ঃ

চণ্ডালে কৰিছে হৰি কীৰ্ত্তন।
বুলিয়া নিন্দে যিটো অজ্ঞ জনে।।
আজন্মৰ পুণ্য তেখনে হৰে।।[৮৮]

সেইদৰে শংকৰদেৱে ভকতসকলক স্ত্ৰী, ধন, জন, যৌৱন, মদ আৰু বিদ্যাৰ গৰ্বই মানুহক বিপথে পৰিচালিত কৰে বুলি নৈতিক শিক্ষা প্ৰদান কৰিছিল। কীৰ্ত্তন ঘোষাৰ পাষণ্ড মৰ্দ্দনৰ দ্বিতীয় কীৰ্তনত তেওঁ এই নৈতিক শিক্ষাই প্ৰদান কৰিছিল।

স্ত্ৰী ধন জন যৌৱন মদে।
অন্ধ হোৱে বিদ্যা গৰ্ব্বৰ পদে।।
বিষ্ণু বৈষ্ণৱক ঝপায়া নিন্দে।
হৰিনামে যেন কাণত বিন্ধে।।[৯২]

ইয়াৰ উপৰিও যি মূৰ্খ হৈয়ো নিজকে পণ্ডিত বুলি জহাই ফুৰে আৰু আন সকলো লোকৰে মানসিক অৱস্থা বেয়া কৰে, কৰ্ম নকৰি নিজকে মূঢ় দেখুৱাই তেওঁলোককো এই পথ পৰিহাৰ কৰিবলৈ শংকৰদেৱে উপদশে দিছে। কীৰ্তনৰ পাষণ্ড মৰ্দ্দনত এই কথা এনেদৰে উল্লেখ আছে ঃ

কৰ্ম্মকো কৰিবে নজানে মূঢ়।।
মূৰ্খ হুয়া বোলে মঞি পণ্ডিত।
নষ্ট কৰি ফুৰে আনৰো চিত্ত।।[৯৫]

শংকৰদেৱে অকল মানুহৰ ক্ষেত্ৰতে সমভাৱাপন্ন হবলৈ কোৱা নাই; সকলো জীৱ জন্তুৰ প্ৰতি সমদৃষ্টি প্ৰদান কৰিবলৈ কৈছে। শ্ৰীকৃষ্ণৰ বৈকুণ্ঠ প্ৰয়াণত তেওঁ সেইকথা লিখিছে ঃ

কুকুৰ শৃগাল গৰ্দ্দভৰো আত্মাৰাম।
জানিয়া সৱাকো পৰি কৰিবা প্ৰণাম।।[১৮২৩]

অৰ্থাৎ কুকুৰ, শৃগাল গাধ আদি সকলো জীৱ জন্তুৰ মাজত সেই একেই আত্মা বিৰাজ কৰিছে যি আত্মা মানুহে নিজৰ দেহৰ মাজত লৈ ফুৰিছে। সেইবাবেই কোনো জীৱ জন্তুৰ প্ৰতি ঘৃণা বা অনাদৰ কৰিবলৈ তেওঁ কোৱা নাই। এইটোৱেই হৈছে শংকৰদেৱৰ আটাইতকৈ ডাঙৰ নৈতিক শিক্ষা।

১.৫.৩। ধৰ্মীয় মূল্যবোধ ঃ

পৃথিৱীৰ প্ৰত্যেকটো ধৰ্মতে মূল্যবোধৰ ওপৰত শিক্ষা দিয়া হয় যাতে ই মানুহৰ নৈতিক আধ্যাত্মিক উন্নতি সাধন কৰি সমাজৰ মংগল সাধন কৰে। প্ৰকৃততে ধৰ্ম হ'ল কিছুমান মূল্যবোধৰ সমষ্টি যেনে- প্ৰেম, সহানুভূতি, কৰুণা, মংগল, ত্যাগ, সমাজ সেৱা, মানৱ প্ৰেম, সহনশীল, দয়া, ক্ষমা, সৰলতা, ভাতৃত্ববোধ, ন্যায় বিচাৰ, শ্ৰমৰ প্ৰকৃত মৰ্যদা ইত্যাদি। অতি পুৰণি ধৰ্ম হিন্দু ধৰ্মৰ শ্ৰেষ্ঠ ধৰ্ম গ্ৰন্থ যৰ্জুবেদত কিছুমান মূল্যবোধৰ কথা কোৱা হৈছে, যেনে- মানৱ সমাজৰ মংগল সাধন, নিজৰ সম্পদহে উপভোগ কৰা, আনৰ সম্পদ লোভ নকৰা, শুদ্ধ পথেৰে ধন উপাৰ্জন কৰা, সমভাৱ বা বন্ধুভাৱেৰে জীৱন কটোৱা, মহৎ কাৰ্য সম্পাদন কৰা, মনক পবিত্ৰ কৰি ৰখা, বুদ্ধিৰ বিকাশ সাধন কৰা ইত্যাদি। শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰি নাম ধৰ্মতো এইবোৰ মূল্যবোধৰ শিক্ষাই প্ৰদান কৰা হৈছে। কীৰ্তনৰ শ্ৰীকৃষ্ণৰ বৈকুণ্ঠ প্ৰয়াণ খণ্ডত কোৱা হৈছে ঃ

ব্ৰাহ্মণৰ চণ্ডালৰ নিবিচাৰি কুল।
দাতাত চোৰত যেন দৃষ্টি এক তুল।।
নীচতা সাধুত যাৰ ভৈল এক জ্ঞান।
তাহাকেসে পণ্ডিত বুলিয় সৰ্ব্বজন।।[১৮২১]

উক্ত পদটিৰ যোগেদি শংকৰদেৱে সকলোৰে প্ৰতি সম দৃষ্টি গ্ৰহণ কৰিবলৈ উপদেশ দিছে। পুনৰ শ্ৰীকৃষ্ণই উদ্ধৱক উপদেশ দিছে এইদৰে ঃ

পিন্ধিবাহা বাকলি বসন।
বন্য ফল কৰিবা ভোজন।।
থাকিবাহা ইন্দ্ৰিয়ক দমি।
হৈবা শান্ত মনক নিয়মি।।[১৮৩৭]

উক্ত পদটিত কোৱা হৈছে যে বাকলি বসন পিন্ধি, বন্য ফল ভেজান কৰি ইন্দ্ৰিয়ক দমন কৰি নিয়মে সংযমে থাকিব পৰা জনহে সৎ মানুহ। ইয়াত উগ্ৰ খাদ্য ভোজন কৰিবলৈ বাধা দিয়া হৈছে। পাষণ্ড মৰ্দ্দনত জীৱৰ আত্মাৰ মুক্তিৰ পথ নিৰ্দ্ধাৰণ কৰি দিয়া হৈছে এইদৰে-

ৰাম নাম যিটো সততে গাৱে।
সেহিয়ে হাততে মুকুতি পাৱে।।[৭৮]

এনে ধৰণৰ অলেখ উদাহৰণ শংকৰদেৱৰ ৰচনাৰাজিত

পোৰা যায় যিবোৰে শংকৰদেৱৰ ধৰ্মীয় মূল্যবোধৰ চিন্তাৰাজিক প্ৰতিপন্ন কৰিছে।

১.৫.৪। আধ্যাত্মিক মূল্যবোধ ঃ

আধ্যাত্মিক মূল্যবোধ ধৰ্মীয় মূল্যবোধৰ লগতেই জড়িত হৈ থাকে। ঈশ্বৰৰ ওপৰত বিশ্বাসৰ পৰাই ধৰ্মীয় মূল্যবোধৰ সৃষ্টি হয়। আধ্যাত্মিকতাই মানৱ আত্মাক বা মনক এক পৃথক শক্তি প্ৰদান কৰি আহিছে। ব্যক্তিৰ বৌদ্ধিক উৎকৰ্ষ সাধনৰ পৰাই আধ্যাত্মিক উৎকৰ্ষ সাধন সম্ভৱ হয়। যোগ, ধ্যান, প্ৰাৰ্থনা আদিৰ যোগেদি ভগৱানৰ লগত আত্মাৰ যি একাত্মতা স্থাপিত হয় তাকেই আধ্যাত্মিক অনুভৱ বোলা হয়। শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰি নাম ধৰ্মত এই কথাই বাৰে বাৰে দোহাৰি থকা হৈছে। হৰি নাম শ্ৰৱণ কীৰ্তনৰ যোগেদি ভগৱানৰ লগত একাত্মতা অনুভৱ কৰি আধ্যাত্মিক সুখ লবলৈ শংকৰদেৱে তেওঁৰ শিষ্যসকলক উপদশে দি গৈছে। কীৰ্তন ঘোষা, ভাগৱতৰ বিভিন্ন স্কন্ধ, বৰগীত, ভটিমা, নাট, বিভিন্ন আখ্যান মূলক কাব্যৰ যোগেদি শংকৰদেৱে তেওঁৰ ভক্ত সকলক এই আধ্যাত্মিক উপলব্ধিয়েই কৰাব বিচাৰিছিল। কীৰ্তনৰ চতুবিংশতি অৱতাৰ বৰ্ণনত শংকৰদেৱে এই কথাই কৈছে-

কৃষ্ণৰ ৰহস্য কথা শুনা সৰ্ব্বজনে।
মোক্ষ পদে সাধে যাৰ শ্ৰৱণ কীৰ্ত্তনে।।
কৃষ্ণৰ কিঙ্কৰ ভণে শংকৰে সম্প্ৰতি।
বোলা হৰি হৰি পাপ যাউক অধোগতি।।[৩৩]

১.৫.৫। নন্দনতাত্বিক মূল্যবোধ ঃ

সাহিত্যই হওক বা চিত্ৰকলাই হওক নতুবা পৰিবেশ্য কলাই হওক এই সকলোতে এক অনন্য সুন্দৰ সৌন্দৰ্যবোধৰ উপলব্ধি হয়। সৌন্দৰ্যই সৃষ্টি কৰা মূল্যবোধেই হৈছে নন্দনতাত্বিক মূল্যবোধ। শংকৰদেৱে ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ উদ্দেশ্যে ৰচনা কৰা নাট, সংগীত, চিত্ৰকলা বাদ্যযন্ত্ৰ, আহাৰ্য এই সকলোতে এক বিৰল সৌন্দৰ্যবোধ অনুভৱ কৰা যায়। বিশেষকৈ অংকীয়া নাটত গায়ন, বায়নৰ সৈতে সূত্ৰধাৰৰ যি নৃত্যশৈলী, তেওঁলোকৰ সাজ-সজ্জা এই সকলোবোৰে এক নন্দনতাত্বিক সৌন্দৰ্যবোধৰ সৃষ্টি কৰে। ইয়াৰ উপৰিও ভাওনাত অংশ গ্ৰহণ কৰা ভাৱৰীয়া সকলৰ মেক আপ, সাজ-সজ্জা, অস্ত্ৰ শস্ত্ৰ, তেওঁলোকৰ অংগী ভংগী আৰু নৃত্যশৈলীয়ে এক নান্দনিক সৌন্দৰ্যৰ সৃষ্টি কৰে। চৰিত্ৰ সমূহে ব্যৱহাৰ কৰা মুখাৰ ব্যৱহাৰেও সেই সৌন্দৰ্য দুগুণে বৃদ্ধি কৰে। অকল ইমানেই নহয় অংকীয়া নাটত ব্যৱহৃত বিভিন্ন বাদ্যযন্ত্ৰ খোল, তাল, বাঁহী, ডবা আদিৰ সংমিশ্ৰণত যি অপূৰ্ব পৰিবেশৰ সৃষ্টি হয় সিয়ে কেৱল নান্দনিক সৌন্দৰ্যই সৃষ্টি নকৰে ভকত সকলক আধ্যাত্মিক সুখো প্ৰদান কৰে। তদুপৰি শংকৰদেৱে ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ বাবে যি কৃত্ৰিম ব্ৰজাৱলী ভাষাৰ সৃষ্টি কৰিছিল সেই ভাষাৰ কোমল সুৰে আৰু কৃষ্ণ স্মৃতি জড়িত ব্ৰজধামৰ ভাষা হোৱাৰ বাবে ই মানুহৰ মনত এক গভীৰ শ্ৰদ্ধাৰ সৃষ্টি কৰিছিল। ফলত সাধাৰণ ভক্তবৃন্দ সেই ভাষাটোৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত হৈছিল। ভাষাটোৰ মাজত নিহিত থকা নান্দনিক সৌন্দৰ্যই এই ধৰ্মৰ প্ৰতি মানুহক আকৰ্ষণ কৰিছিল। শংকৰদেৱে সৃষ্টি কৰা, বৰগীত ভটিমা আদি গুৰু গম্ভীৰ সংগীতসমূহে এফালে সাধাৰণ ভকতৰ নৈতিক আধ্যাত্মিক দিশৰ উৎকৰ্ষ সাধন কৰিছিল আনফালে এক নান্দনিক পৰিৱেশৰ সৃষ্টি কৰিছিল। শংকৰদেৱে সৃষ্টি কৰা বৰগীত সমূহেও এফালে পাৰমাৰ্থিক তত্ত্বৰ জ্ঞান আৰু আনফালে ক্ষণভঙ্গুৰ জীৱনত হৰিনামেই সাৰ এই শিক্ষা প্ৰদান কৰিছে। আনফালে মাধৱদেৱৰ বৰগীত সমূহত চোৰ, চাতুৰী, খেলন, নৃত্য, জাগৰণ আৰু চলন এই ছয় প্ৰকাৰৰ শ্ৰেণীবিভাগে বালক কৃষ্ণৰ দুষ্টামি, চোৰ, চাতুৰিৰ যিখন জীৱন্ত ছবি দাঙি ধৰিছে সি সঁচাকৈয়ে অনুপম আৰু মাতৃ পুত্ৰৰ যি চিৰন্তন সম্পৰ্ক আৰু বাৎসল্য ৰসৰ যি সমুদ্ৰ তাত সাধাৰণ ভকতে অৱগাহন কৰি এক নান্দনিক আধ্যাত্মিক সুখ অনুভৱ কৰে। আনফালে বৰগীত সমূহৰ সুৰৰ গাম্ভীৰ্য, ৰাগ তালৰ সমাহাৰে এক সুকীয়া পৰিতৃপ্তি প্ৰদান কৰি নান্দনিক সৌন্দৰ্য উপলব্ধি কৰোৱায়। সেইদৰে ভটিমাসমূহ যেনে নাটৰ প্ৰাৰম্ভিক ভটিমাই হওক বা মুক্তিমঙ্গল ভটিমাই হওক বা গুৰু ভটিমা, নাট ভটিমা, দেৱ ভটিমাই হওক এইবোৰেও ভকত সকলক এক নান্দনিক সুখ প্ৰদান কৰে।

১.৫.৬। স্বাস্থ্য সম্পৰ্কীয় মূল্যবোধ ঃ

শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰিনাম ধৰ্মই ভকতসমাজৰ নৈতিক আধ্যাত্মিক উৎকৰ্ষ সাধনতেই যে গুৰুত্ব দিছিল এনে নহয়, তাৰ লগে লগে তেওঁলোকক স্বাস্থ্য সম্পৰ্কীয় বিধি বিধান সমূহো মানি চলিবলৈ উপদেশ দিছিল। শংকৰদেৱে নিজেই যোগ বিদ্যাৰ অনুশীলন কৰিছিল। এই সম্পৰ্কে কথা গুৰু চৰিতত এইদৰে উল্লেখ আছে *“যোগশাস্ত্ৰ পঢ়িবলৈ আছিল, গৃহতে পঢ়ি জলত এপৰ বুৰ দি থাকে, বস্ত্ৰ নিতিতে। পাট সূতাৰে বন্ধ কৈ বায়ু নিৰোধে, ভট্ ভট্ কৈ ছিগে, আলসে বয়, হৰণ পুৰণ পাচে তাকো এৰিলে।”*[৬] উল্লেখযোগ্য যে সিদ্ধ যোগী সকলৰ দেহ ইমান মসৃণ হয় যে তেওঁলোকে পানীৰ তলত থাকিলেও তেওঁলোকৰ দেহ পানীত নিতিতে। *‘ইয়াৰোপৰি হাতেৰে শিঙত ধৰি প্ৰকাণ্ড যাড়গৰু মাটিত বগৰাই দিয়া, ভৰ বাৰিষাত ব্ৰহ্মপুত্ৰ নদী সাঁতুৰি ইপাৰ সিপাৰ হোৱা আদি ঘটনাইও শংকৰদেৱৰ প্ৰচণ্ড দৈহিক শক্তিৰ প্ৰমাণ দাঙি ধৰে। চৰিতকাৰে লিখিছে যে শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱে ভাগৱত শাস্ত্ৰখন পোৱাৰ পিছত যোগ অনুশীলন বাদ দিয়ে। ইয়াৰ অৰ্থ এইটোও হব পাৰে যে যোগসিদ্ধ হোৱাৰ পিছত শংকৰদেৱৰ বাবে যোগ অনুশীলনৰ প্ৰয়োজনীয়তা নোহোৱা হৈছিল। যোগ সাধনাই*

যে শংকৰদেৱৰ স্বাস্থ্যত তেৰা বৈকুণ্ঠী হোৱা পৰ্যন্ত প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰিছিল তাৰ প্ৰধান প্ৰমাণ হ'ল তেৰাই ১১৯ বছৰীয়া নিৰোগী কাৰ্যক্ষম জীৱন লাভ কৰিছিল।"[৭]

শংকৰদেৱে নামঘৰ বা সত্ৰত যি মাহ প্ৰসাদৰ ব্যৱস্থা কৰিছিল সি ভাৰতবৰ্ষৰ আন ঠাইৰ প্ৰসাদৰ লগত নিমিলে। হিন্দু ধৰ্মৰ মঠ মন্দিৰবোৰত প্ৰসাদ হিচাপে বিভিন্ন মিঠাই আগবঢ়োৱা হয়। মিঠাই মধুমেহ ৰোগী বা বয়সস্থ লোকসকলৰ বাবে ক্ষতিকাৰক। সেইবাবেই বোধকৰো শংকৰদেৱে বুট মগুৰ লগত কেইটামান আৰৈ চাউল, নিমখ, আদা, নাৰিকল আদি মিহলাই এনেকুৱাকৈ প্ৰস্তুত কৰিছিল যিটো আছিল অধিক স্বাস্থ্য সন্মত আৰু পুষ্টিকাৰক। লগত থাকে বিভিন্ন ধৰণৰ ফল যেনে আপেল, আঙুৰ, কল, নাচপতি, কুঁহিয়াৰ, মধুৰিআম ইত্যাদি। ফলসমূহে পুষ্টিসাধনত সহায় কৰে আৰু সহজে হজম যায়। সেইদৰে প্ৰসাদত ব্যৱহৃত মগু মাহ মল সংগ্ৰাহক, কফ, পিত্ত নাশক, চকুৰ বাবে হিতকৰ, জ্বৰ নাশক। বুট মাহ আকৌ তেজবৰ্ধক, বাত নিবাৰক, পিত্ত শৌচ নাশক আৰু ই কৌষ্ঠকাঠিন্য দূৰ কৰে, ৰজঃদোষ নাশক। তদুপৰি বুটে স্বাস্থ্য আৰু সৌন্দৰ্য ৰক্ষা কৰে। প্ৰসাদত যিবোৰ সামগ্ৰী ব্যৱহাৰ কৰা হয় সেইবোৰৰ আকৌ আনুপাতিক হিচাপ আছে। যেনে মগুঃবুট ৪ঃ১ মগুঃআদা ১০ঃ১ মগুঃনাৰিকল ৬ঃ১ মগুঃআৰৈ চাউল ২০ঃ১। ইয়াৰ পৰাই অনুমান কৰিব পাৰি যে শংকৰদেৱে কিমান আধুনিক বৈজ্ঞানিক দৃষ্টিভংগী আগত ৰাখি এনেবোৰ উপকৰণৰে প্ৰসাদৰ ব্যৱস্থা কৰিছিল। ইয়াৰ উপৰি শংকৰদেৱে নামঘৰ সত্ৰসমূহত যিবোৰ গছ-গছনি ৰোৱাৰ ব্যৱস্থা কৰিছিল, সি কেৱল পাৰিপাৰ্শ্বিক পৰিৱেশকেই যে উন্নত কৰিছিল এনে নহয় বৰং সেইবোৰ গছৰ ঔষধি গুণো আছিল যথেষ্ট। এই গছ সমূহ প্ৰধানকৈ শিলিখা, ভোমোৰা, আমলখি, বকুল, কলগছ, নাৰিকল, তুলসী ইত্যাদি।

শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰি নামধৰ্মৰ লগত শংকৰী নৃত্য বা সত্ৰীয়া নৃত্যও জড়িত হৈ আছে। এই নৃত্যৰ বহুবোৰ মুদ্ৰাৰ লগত যোগাসনৰ সম্পৰ্ক আছে। এই ক্ষেত্ৰত মাটি আখৰাৰ কথা উল্লেখ কৰিব পাৰি। মাটি আখৰাৰ 'উধালন'ৰ সম্পৰ্ক আছে শীৰ্ষাসনৰ লগত আৰু 'কাছবান্ধ'ৰ সম্পৰ্ক আছে পদ্মাসনৰ লগত। স্বাস্থ্য ৰক্ষাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখিয়েই নিশ্চয় শংকৰদেৱে নাম কীৰ্তনৰ লগত হাত চাপৰি বজোৱাৰ ব্যৱস্থা কৰিছিল। চাপৰি বজোৱাতো হাতৰ এটা সুন্দৰ ব্যায়াম। ই দেহৰ শিৰা সমূহক সুস্থ ৰাখে আৰু উচ্চ ৰক্তচাপ নিয়ন্ত্ৰণতো সহায় কৰে। এনে দৃষ্টি কোণৰ পৰা চালে শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰি নাম ধৰ্মই এক সুকীয়া স্বাস্থ্যসন্মত মূল্যবোধ ৰক্ষা কৰি শিক্ষা দি আহিছে।

১.৫.৭। মানৱীয় মূল্যবোধ ঃ

শংকৰদেৱে একশৰণ হৰিনাম ধৰ্ম সৃষ্টি কৰিছিল সমাজ সংস্কাৰৰ উদ্দেশ্য আগত ৰাখি। বিশেষকৈ তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ প্ৰভাৱ, নৰবলি প্ৰথা, ভোগী সম্প্ৰদায়ৰ সৃষ্টি, দেৱদাসী নৃত্যৰ লগত জড়িত নাৰীসকলৰ গোপন বেদনা, কুমাৰী পূজা, বলি বিধান ইত্যাদি কু-সংস্কাৰৰ পৰা সমাজখনক উদ্ধাৰ কৰাৰ মানসেৰে শংকৰদেৱে বৈষ্ণৱ ধৰ্মৰ পাতনি মেলিছিল সেইবাবেই শংকৰদেৱৰ ধৰ্মত মানবীয় মূল্যবোধৰ বেছি গুৰুত্ব দিয়া হয়। শংকৰদেৱৰ ধৰ্মত জাতি-অজাতি, স্ত্ৰী-পুৰুষ বুলি কোনো ধৰণৰ ব্যৱধান নাই। এই ধৰ্মত সকলো সমান। সকলোৱে নামঘৰত নিজৰ আসনত বহি ভগৱানৰ নাম শ্ৰৱণ কীৰ্তন কৰিব পাৰে। এই সমদৃষ্টি মানৱীয় মূল্যবোধৰে এটি সাধাৰণ উদাহৰণ। সেইদৰে ধৰ্মী-বিধৰ্মী, স্ত্ৰী-পুৰুষ নতুবা সকলো জীৱ জন্তুৰে প্ৰতি সমদৃষ্টি প্ৰচাৰ শংকৰদেৱৰ ধৰ্মৰ এক প্ৰধান বিশেষত্ব আছিল। তেৱেঁই সতী ৰাধিকাক টেম্বুৱানী বান্ধ বান্ধিবৰ বাবে আগবঢ়াই দিছিল। অথচ তেওঁ ব্ৰাহ্মণ পত্নী সকলক সেই সুবিধা দিব পাৰিলেহেঁতেন। একেদৰেই চিহ্নযাত্ৰা ভাওনাৰ পট নিৰ্মাণৰ সময়ত চণ্ডৰী আইৰ কথামতেই কল্পতৰু বৃক্ষৰ স্থান নিৰূপন কৰিছিল। এয়াই আছিল শংকৰদেৱৰ মানৱীয় মূল্যবোধ শিক্ষাৰ শ্ৰেষ্ঠতম উদাহৰণ।

১.৫.৮। অৰ্থনৈতিক মূল্যবোধ ঃ

শংকৰদেৱে কেৱল সমাজ সংস্কাৰৰ কথাই যে ভাবিছিল এনে নহয়, সমাজ এখনৰ লোকসকলে কেনেদৰে জীৱন নিৰ্বাহ কৰিব, অৰ্থৰ উপাৰ্জন কোন দিশৰ পৰা হ'ব সেই কথাও চিন্তা কৰিছিল। সেইকাৰণে সেইসময়ৰ সমাজ জীৱনত যিবোৰ কুটিৰ শিল্পৰ যোগেদি অৰ্থ উপাৰ্জনৰ সুবিধা দেখিছিল তেওঁ তেনেবোৰ শিল্পৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিছিল। শংকৰদেৱে গীত, নৃত্য, ভাওনা আদিত বিভিন্ন বাদ্য খোল, তাল, নাগাৰাকে আদি কৰি বিভিন্ন মুখাৰ ব্যৱহাৰ কৰিছিল আৰু এইবোৰ সামগ্ৰী নিজৰ অঞ্চলতে নিৰ্মাণৰ ব্যৱস্থা কৰিছিল। আজিও এইবোৰ সামগ্ৰীৰ বিক্ৰিৰ এখন বজাৰ আছে আৰু এনেবোৰ বস্তু অসমৰ পৰাই তিব্বত চীন ভুটান আদিলৈকে সৰবৰাহ হৈ আছে। শংকৰদেৱে সেই তেতিয়াই এই উদ্যোগৰ সম্ভাৱনাপূৰ্ণ দিশটোক আঙুলিয়াই দিছিল। তদুপৰি ভাওনাত ব্যৱহৃত পোছাক সমূহ প্ৰস্তুতৰ ব্যৱস্থাও নিজৰ অঞ্চলতে কৰা হৈছিল। বৰ্তমান এই শিল্প সমূহৰ প্ৰচাৰ প্ৰসাৰৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিলে ইয়াৰ পৰাও একশ্ৰেণী মানুহৰ জীৱিকা ওলাব বুলি ভাবিব পাৰি। শংকৰদেৱেই আজিৰ পৰা ছশ বছৰৰ আগতেই বস্ত্ৰ উদ্যোগৰ সম্ভাৱনা পূৰ্ণ দিশটোক আঙুলিয়াই দিছিল। তেঁৱেই অসম যে বস্ত্ৰ উদ্যোগত কিমান

চহকী আৰু অসমৰ শিপিনী এই কামত পটু সেই কথাৰ নিদৰ্শন স্বৰূপে বৃন্দাবনী বস্ত্ৰ বোৱাই সমগ্ৰ বিশ্বকে চমক খুৱাইছিল। তেৱেঁই সাঁচি পাতত পুথি লিখি এক উন্নতমানৰ সংস্কৃতি আৰু অৰ্থনৈতিক মূল্যবোধৰ পৰিচয় দাঙি ধৰিছিল।

১.৫.৯। পাৰিপাৰ্শ্বিক মূল্যবোধ ঃ

শংকৰদেৱৰ সাহিত্য ৰাজিৰ মূল উপাদানেই হ'ল প্ৰকৃতি। তেওঁৰ ৰচনাৰ মাজত অসমৰ প্ৰকৃতি জগতখনৰ নদ-নদী, হাবি-বননি, গছ-গছনি, জীৱ-জন্তু, পশু-পক্ষীয়ে এক মূখ্য স্থান লাভ কৰি আছে। শংকৰদেৱে মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ ওতঃপ্ৰোতঃ সম্পৰ্কক অনুভৱ কৰিছিল আৰু মানুহ প্ৰকৃতিৰ মাজত সমতা ৰক্ষা কৰি চলিলেহে যে পাৰিপাশ্বিকতা সমতা ৰক্ষা হ'ব সেই কথা বুজিছিল। *"প্ৰকৃতিৰ বিভিন্ন ৰূপ, বৈচিত্ৰ্য আৰু উপযোগিতাই শংকৰদেৱক ইমানেই আকৃষ্ট কৰিছিল যে ধৰ্মৰ তাত্ত্বিক দিশ সম্পৰ্কে বুজাবলৈও শংকৰদেৱে প্ৰকৃতিৰ উপাদান সমূহক উদাহৰণ হিচাপে গ্ৰহণ কৰিছিল। পৃথিৱীৰ জীৱ সমূহৰ অথিৰতা সম্পৰ্কে বুজাবলৈ শংকৰদেৱে লিখিছে বিজুলী চমক যেন জীৱন অথিৰ-পদ্মৰ পত্ৰৰ যেন জল নুহি থিৰ।"*[৪]

প্ৰকৃতি জগতৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰিয়েই জীৱই জীৱন নিৰ্বাহ কৰিছে। শংকৰদেৱে প্ৰকৃতিক বাদ দি কোনো ৰচনাই লিখা নাছিল। হৰিৰ মহিমা বৰ্ণনা কৰিবলৈও তেওঁ প্ৰকৃতিৰ পৰাই উদাহৰণ গ্ৰহণ কৰিছিল। সেইদৰে ঈশ্বৰৰ ৰূপ বৰ্ণনাতো শংকৰদেৱে প্ৰকৃতিৰ পৰাই উপাদান গ্ৰহণ কৰিছিল। কীৰ্তনৰ অজামিল উপাখ্যানত এই বৰ্ণনা এনেদৰে দিছে ঃ

পদ্ম পত্ৰ সম আয়ত লোচন
ভ্ৰূৰ যুগে কৰে কান্তি
নাসা তিল ফুল অধৰ ৰাতুল
দশন মুকুতা পান্তি।[১৭৮]

কীৰ্তনৰ প্ৰায় প্ৰতিটো খণ্ডতে প্ৰকৃতি জগতখনৰ ৰূপ মাধুৰ্যক শংকৰদেৱে দাঙি ধৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰিছে। হৰমোহনতো তেওঁ অসমৰ হাবিত পোৱা গছবন তৰু তৃণৰে ভৰপূৰ দিব্য উপবনৰ কথা বৰ্ণনা কৰিছে। অকল ইমানেই নহয়, প্ৰকৃতিৰ উপাদানৰ ওপৰত তেওঁ ঈশ্বৰত্ব আৰোপ কৰিছিল। হৰমোহনৰ দ্বিতীয় কীৰ্তনত লিখিছে ঃ

তুমি পশু-পক্ষী সুৰাসুৰ তৰু-তৃণ।
অজ্ঞানত মূঢ়জনে দেখে ভিন ভিন।।
....
সমস্ত ভূতৰে তুমি আছা হৃদয়ত।
তত্ত্ব নপাই তোমাক বিচাৰে বাহিৰত।।[৫২১]

শংকৰদেৱৰ দৃষ্টিৰ পৰিসীমা আছিল বিস্তৃত। বিশ্ব ব্ৰহ্মাণ্ডৰ জীৱ জগত জড় জগতৰ সকলো পদাৰ্থকে তেওঁ ঈশ্বৰৰ অংশ হিচাপে মান্যতা দিছিল। শ্ৰীকৃষ্ণৰ বৈকুণ্ঠ প্ৰয়াণত শংকৰদেৱে এই কথা এনেদৰে ব্যক্ত কৰিছে-

বিষ্ণুময় দেখে যিটো সমস্ত জগতে।
জীৱন্তে মুকুত হোৱে অচিৰ কালতে।।[১৮২৪]

সেইদৰে 'নাৰায়ণ কাহে ভকতি কৰো তেৰা' বৰগীতটিত এইদৰে উল্লেখ আছে-

জগ জীৱ জঙ্গম কীট পতংগম।
অগ নগ জগ তেৰি কায়া।।

এনে দৃষ্টিকোণৰ পৰা চালে শংকৰদেৱৰ ৰচনা ৰাজিত প্ৰকৃতিয়েই মূখ্য স্থান লাভ কৰি আছে। পাৰিপাৰ্শ্বিক মূল্যবোধৰ শিক্ষা তেওঁ ৰচনাৰাজিৰ মাজেৰেই দিবলৈ যত্ন কৰিছিল।

১.৬ উপসংহাৰ ঃ

শংকৰদেৱৰ ধৰ্মীয় আদৰ্শ, সমাজ সংস্কাৰৰ আদৰ্শ, তেওঁৰ সাহিত্যৰাজি, নাট, ভাওনা এই সকলোবোৰ বিশ্লেষণ কৰি এটা সিদ্ধান্তত উপনীত হ'ব পাৰি যে শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰি নাম ধৰ্মত মূল্যবোধৰ শিক্ষাই অগ্ৰাধিকাৰ পাইছিল। সমালোচক সকলে কৰা মূল্যবোধ শিক্ষাৰ বিভিন্ন বিভাগৰ ভিতৰত প্ৰধান কেইটামান মূল্যবোধ শিক্ষাৰ প্ৰভাৱ শংকৰদেৱৰ একশৰণ হৰিনাম ধৰ্মত কেনেদৰে প্ৰতিফলিত হৈছে এই গৱেষণা পত্ৰখনত সংক্ষিপ্তভাৱে আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। এই আলোচনাৰ পৰা এটা কথাই প্ৰতীয়মান হৈছে যে শংকৰদেৱে একশৰণ হৰি নাম ধৰ্মৰ যোগেদি সামাজিক, নৈতিক, ধৰ্মীয়, আধ্যাত্মিক, স্বাস্থ্য সম্পৰ্কীয়, নন্দনতাত্ত্বিক, মানৱীয় মূল্যবোধ, অৰ্থনৈতিক মূল্যবোধ, পৰিবেশীয় মূল্যবোধৰ শিক্ষা আজিৰ পৰা বহুত বছৰৰ আগতেই দি গৈছে। এই মূল্যবোধৰ আদৰ্শসমূহ গ্ৰহণ কৰিব পাৰিলে ব্যক্তিগত জীৱন বা সমাজ জীৱন বহুবোৰ সামাজিক ব্যাধিৰ পৰা ৰক্ষা পৰিব আৰু ইয়েই সমাজ জীৱনক বহুদূৰ উন্নতিৰ পথত আগুৱাই লৈ যাব। শংকৰদেৱৰ সাহিত্যৰাজিৰ পৰা তেওঁৰ ধৰ্মীয় আদৰ্শলৈকে এই সকলোবোৰ দিশত যথেষ্ট আলোচনা, গৱেষণা আদি হৈছে যদিও নতুন নতুন দৃষ্টি ভংগীৰে তেওঁৰ ধৰ্ম, আদৰ্শ, সাহিত্যৰাজি, পৰিৱেশ্য কলা সমূহৰ বিশ্লেষণ এতিয়াও আলোচনাৰ মাজলৈ অহা নাই। অদূৰ ভৱিষ্যতে এনে বিষয় সমূহৰ ওপৰত গৱেষণা হোৱাৰ যথেষ্ট প্ৰাসংগিকতা আছে। ❑

প্ৰসংগ টোকা ঃ

১) Singh, Shardha, Importance and Role of Value Education in Ancient India, IJELH, International Journal of English Language Literature and Humanties, volume III issue V July 2015 P.139

২) https://prepwithharshita.com/aims and objectives of value education. 24/07/2024

৩) কলিতা উৎপল, বৰা চহৰীয়া, সোণালী, শৰ্মা, অপৰাজিতা, মূল্যবোধ আৰু শান্তি শিক্ষা পৃ. ৬-৭

৪) শৰ্মা নবীনচন্দ্ৰ, মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ, পৃ. ৪২৭

৫) উল্লিখিত, পৃ. ৪২৭

৬) লেখাৰু, উপেন্দ্ৰ চন্দ্ৰ (সম্পা) কথা গুৰুচৰিত্ৰ পৃ. ২২

৭) দাস, পৰশমণি, 'পাৰিপাৰ্শ্বিক বিজ্ঞান আৰু স্বাস্থ্য বিজ্ঞানৰ দৃষ্টিত শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ' মহীয়সী মুকুৰ, বৰা শইকীয়া, ইন্দিৰা (সম্পা) পৃ ৫১১

৮) উল্লিখিত, পৃ. ৫০৯

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

কলিতা, উৎপল, বৰা চহৰীয়া, সোণালী, শৰ্মা, অপৰাজিতা, মূল্যবোধ আৰু শান্তি শিক্ষা, শান্তি প্ৰকাশন, গুৱাহাটী-১, প্ৰথম প্ৰকাশ, অক্টোবৰ ২০২০

গোস্বামী, অঞ্জনা 'মহাপুৰুষ শংকৰদেৱৰ নাটত নন্দনতাত্বিক মূল্যবোধ', প্ৰজ্ঞা চন্দ্ৰিকা, (সম্পা), পাটৰ, অমিয়া, স্মৃতি গ্ৰন্থ অসম কলেজ শিক্ষক সংস্থাৰ ৬৬ সংখ্যক বাৰ্ষিক অধিবেশন, অভ্যৰ্থনা সমিতি, ১২ ডিচেম্বৰ, ২০২১

বৰা শইকীয়া, ইন্দিৰা, বৈষ্ণৱ সাহিত্যৰ অধ্যয়ন, বাণী মন্দিৰ, প্ৰথম প্ৰকাশ, জুন ২০০৫

বৰা শইকীয়া, ইন্দিৰা (সম্পা), মহীয়সী মুকুৰ, শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ সংঘ, নগাঁও ফেব্ৰুৱাৰী ২০১৫

লেখাৰু, উপেন্দ্ৰ চন্দ্ৰ, কথা গুৰু চৰিত্ৰ, দত্তবৰুৱা পাব্লিচিং কোঃ প্ৰাঃ লিঃ, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী, পঞ্চম প্ৰকাশ ২০০৬

শৰ্মা, নবীন চন্দ্ৰ, মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ, বনলতা গুৱাহাটী-১;প্ৰথম সংস্কৰণ নৱেম্বৰ ২০১৪

হাজৰিকা, সূৰ্য্য (সম্পা), শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ বাক্যামৃত, বাণী মন্দিৰ, গুৱাহাটী, প্ৰথম প্ৰকাশ ২০১৪

Singh, Shardha, Importance and Role of Value Education in Ancient India, IJELH, International Journal of English Language Literature and Humanties, volume III issue V July 2015 P.139 https://prepwithharshita.com/aims and objectives of value education. 24/07/2024

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

মহিম বৰাৰ গল্প ‘এখন নদীৰ মৃত্যু’ ঃ এটি আলোচনা

দীপক দাস

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

বৰ্তমান সময়ত সাহিত্য আৰু মানুহৰ জীৱন চৰ্যা এটা মুদ্ৰাৰে ইপিঠি-সিপিঠি। সাহিত্যত সমাজ এখনৰ বিভিন্ন ঘটনা-পৰিঘটনা, সমস্যা আদিয়ে স্থান লাভ কৰি এটি বাস্তৱ ৰূপ প্ৰদান কৰে। প্ৰকৃতিৰ সকলো বস্তুৰেই সমাজ এখন বা জাতি এটাৰ লগত জড়িত হৈ থাকে। যাৰ ক্ষতিত সমাজ বা জাতিটোও ক্ষতিগ্ৰস্ত হোৱা দেখা যায়। ঠিক এনে মনোভাৱ প্ৰকাশ পোৱা সাহিত্যৰ এটি বিশেষ জনপ্ৰিয় আৰু অভিনৱ ধাৰা হৈছে চুটিগল্প। মানুহৰ জীৱন সংগ্ৰামৰ কৰুণ পৰিণতি প্ৰকাশ পোৱা এটি উৎকৃষ্ট গল্প হৈছে মহিম বৰাৰ ‘এখন নদীৰ মৃত্যু’। গল্পটিত কলং নদীৰ মৃত্যুত তাৰ পাৰত বসবাস কৰা মাছমৰীয়া জাতিটোৰ জীৱনলৈ এক শোচনীয় অৱস্থা নামি অহাৰ দিশটো প্ৰকাশ পাইছে। আমাৰ এই অধ্যয়নত এখন নদীৰ মৃত্যু গল্পটিত প্ৰকাশ পোৱা কলং নদীখনৰ মৃত্যুত মানুহৰ মাজলৈ নামি অহা দুৰাৱস্থাৰ বিষয়ে অধ্যয়ন কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হ’ব।

বীজ শব্দ ঃ কলং, নদী, মাছমৰীয়া, মৃত্যু, মাছ, জাতি, শোচনীয়, নদীয়াল।

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

বৰ্তমান সমাজ এখনৰ প্ৰকৃত স্বৰূপ দাঙি ধৰিবলৈ সাহিত্যই বিশেষ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰি আহিছে। বিভিন্ন সময়ৰ বাস্তৱ ঘটনা-পৰিঘটনাৰ আধাৰত এটি উৎকৃষ্টমানৰ পৰিৱেশৰ সৃষ্টি কৰি ৰচনা হৈছে একো একোখন সৃষ্টিশীল সাহিত্য। য’ত বাস্তৱ সমাজখনৰ সামাজিক, সাংস্কৃতিক, ৰাজনৈতিক, অৰ্থনৈতিক আদি বিভিন্ন দিশসমূহ জীৱন্ত হৈ উঠে। তেনে ধৰণৰ এক প্ৰকাৰৰ সাহিত্যৰ অভিনৱ অংগ হৈছে চুটিগল্প। কম সময়তে পঢ়ি শেষ কৰিব পৰা সাহিত্যৰ এই ধাৰাটোৱে সমাজৰ এক প্ৰকৃত স্বৰূপৰ সাক্ষ্য বহন কৰি আহিছে।

সহকাৰী অধ্যাপক (অংশকালীন),
অসমীয়া বিভাগ
দুধনৈ মহাবিদ্যালয়
গোৱালপাৰা, অসম-৭৮৩১২৪
৯১০১৯৮৪৬৯২
dipak.das4343@gmail.com

অসমীয়া চুটিগল্প সাহিত্যৰ যিকেইগৰাকী গল্পকাৰৰ প্ৰচেষ্টাত বৰ্তমান সময়ত এটি খ্যাতিমান স্থান দখল কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে তেওঁলোকৰ ভিতৰত যুদ্ধোত্তৰ বা ৰামধেনু যুগৰ মহিম বৰাৰ নাম বিশেষভাৱে উল্লেখনীয়। “মহিম বৰাৰ গ্ৰাম্য জীৱনৰ চিত্ৰ মনোমোহা। নিজৰ অভিজ্ঞতাক অতিক্ৰম কৰিবলৈ অস্বীকাৰ কৰা মহিম বৰা এই পৰ্যায়ৰ শ্ৰেষ্ঠ গল্পকাৰ।” (হোমেন বৰগোহাঞি (সম্পা.) ঃ অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী (ষষ্ঠ খণ্ড), পৃ. ৪৩৩) বাস্তৱ সমাজৰ মানৱ জীৱনৰ বিভিন্ন ঘটনা-পৰিঘটনাৰ আলম লৈ তেওঁ বিভিন্ন গল্প ৰচনা কৰি গল্পৰ ভঁৰাল চহকী কৰিছে। বাস্তৱ চিত্ৰ জীৱন্ত কৰি তোলা তেওঁৰ গল্পৰ অন্যতম বৈশিষ্ট্য। তেওঁৰ কেইখনমান উল্লেখযোগ্য গল্প সংকলনৰ

নাম হ’ল— ‘কাঠনিবাৰী ঘাট’ (১৯৬১), ‘দেহা গৰকা প্ৰেম’ (১৯৬৭), ‘মই, পিপলি আৰু পূজা’ (১৯৬৭), ‘বহুভূজী ত্ৰিভূজ’ (১৯৬৭), ‘এখন নদীৰ মৃত্যু’ (১৯৭২), ‘ৰাতি ফুলা ফুল’ (১৯৭৭), ‘বৰযাত্ৰী’ (১৯৮০), ‘মোৰ প্ৰিয় গল্প’ (১৯৮৭) আদি।

মহিম বৰাৰ এটি উৎকৃষ্টমানৰ গল্প হৈছে— ‘এখন নদীৰ মৃত্যু’। য’ত প্ৰকাশ পাইছে এখন নদীৰ মৃত্যুৰ লগতে তাৰ পাৰত বসবাস কৰা সমাজ এখনৰ শোচনীয় অৱস্থা। তাৰ লগতে প্ৰকাশ পাইছে বাস্তৱ সমাজৰ গুণি-মানী,ক্ষমতাত থকা সেই এচাম মানুহৰ অৱহেলা আৰু নৱ প্ৰজন্মৰ ভৱিষ্যতৰ কৰুণ পৰিণতি। সেয়েহে কলং নদীখনৰ মৃত্যুৰ ফলত কেনেদৰে সমাজ এখনৰো মৃত্যু হৈ যাব পাৰে সেই সম্পৰ্কে আমাৰ “মহিম বৰাৰ গল্প ‘এখন নদীৰ মৃত্যু’ ঃ এটি আলোচনা” শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখনত আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হ’ব।

০.০১ গৱেষণাৰ উদ্দেশ্য ঃ

মহিম বৰাৰ ‘এখন নদীৰ মৃত্যু’ গল্পটিত প্ৰতিফলিত কলং নদীৰ দুৰাৱস্থাৰ ফলস্বৰূপে কিদৰে এখন সমাজ শোচনীয় অৱস্থাপ্ৰাপ্ত হৈছে আৰু বাস্তৱ সমাজৰ বিভিন্ন চিত্ৰ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাই আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনৰ প্ৰধান উদ্দেশ্য।

০.০২ গৱেষণাৰ পৰিসৰ ঃ

“মহিম বৰাৰ গল্প ‘এখন নদীৰ মৃত্যু’ ঃ এটি আলোচনা” শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখনৰ পৰিসৰৰ ভিতৰত ‘এখন নদীৰ মৃত্যু’ গল্পটিত প্ৰতিফলিত হোৱা সমাজৰ বিভিন্ন বাস্তৱ দিশসমূহক সামৰি লোৱা হৈছে।

০.০৩ গৱেষণাৰ পদ্ধতি ঃ

“মহিম বৰাৰ গল্প ‘এখন নদীৰ মৃত্যু’ ঃ এটি আলোচনা” শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে বিশ্লেষণাত্মক আৰু বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.০৪ গৱেষণাৰ উৎস ঃ

গযেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে মুখ্য আৰু গৌণ উৎসৰ পৰা তথ্য আহৰণ কৰা হৈছে। মুখ্য উৎস হিচাপে মূল গ্ৰন্থ আৰু গৌণ উৎস হিচাপে বিভিন্ন প্ৰাসঙ্গিক গ্ৰন্থ আদিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

২.০০ মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

২.০১ গল্পটিৰ মূল কাহিনীভাগ ঃ

মহিম বৰাৰ এখন নদীৰ মৃত্যু গল্পটিত মাছমৰীয়া শ্ৰেণীটোৰ জীৱন-নিৰ্বাহৰ একমাত্ৰ উপায় কলং নদীৰ দুৰৱস্থাৰ ফলত সেই শ্ৰেণীটোৰ শোচনীয় অৱস্থা সুন্দৰকৈ জীৱন্ত হৈ উঠিছে। গল্পটিৰ কাহিনীভাগ চমুকৈ এনেধৰণৰ—

গল্পটিৰ প্ৰধান চৰিত্ৰ ধনেশ্বৰ। কলং নদীত মাছ মাৰি বিক্ৰী কৰি ঘৰখনক পোহপাল দি আহিছে। কিন্তু নদীখনৰ দুৰাৱস্থাৰ বাবে বৰ্তমান মাছ নাই বুলিবই পাৰি। বিহমেটেকা, ঝাওবন, নলখাগৰি গছ আদিৰ বাবে পানী প্ৰদূষণ হৈ বিষাক্ত গৈছে, যাৰ ফলত নদীখনত নমাৰ লগে লগে খজুৱতি আৰম্ভ হয়। ধনেশ্বৰো এদিন মাছ মাৰিবলৈ গৈ একে অৱস্থা হয়। অৱশেষত কেৰাচিন তেল ঘঁহি তাৰ উপশম কৰে। তেওঁ নামঘৰ, পঞ্চায়ত আদি বিভিন্ন ঠাইত নদীখনৰ এই দুৰাৱস্থাৰ বিষয়ে অৱগত কৰিছে যদিও সকলোৱে অৱহেলা কৰি একো উপায় বিচাৰি নুলিয়ালে। যাৰ ফলত এসময়ত সুখে-সন্তোষে পাৰ কৰা বৰ্তমান সেই সমাজখন শোচনীয় অৱস্থাত ভুগিবলগীয়া হৈছে। ইয়াৰ উপৰিও মাছমৰীয়া সমাজৰ ল’ৰা-ছোৱালীসকলৰ ভৱিষ্যতৰ দিশটোও গল্পটিত প্ৰকাশ পাইছে। যিসকলে অনাই-বনাই ঘুৰি-ফুৰি সময় কটাই থাকে। যাৰ ফলত তেওঁলোকৰ একো উন্নতিৰ আশা কৰিব নোৱাৰি।

২.০২ ‘এখন নদীৰ মৃত্যু’ এটি আলোচনা ঃ

এখন নদীৰ মৃত্যু গল্পটি হৈছে একপ্ৰকাৰৰ নদীকেন্দ্ৰিক গল্প। গল্পটিৰ মূল কেন্দ্ৰ হৈছে কলং নদী। এই নদীখনকে কেন্দ্ৰ কৰি গল্পটিৰ কাহিনীভাগ আগবাঢ়ি গৈছে। এসময়ৰ জীয়া নদী কালৰ সোঁতত বিলীন হৈ যাব ধৰিছে। ফলস্বৰূপে তাৰ প্ৰকোপ ভুগিবলগীয়া হৈছে কলং পাৰত বসবাস কৰি জীৱন-নিৰ্বাহ কৰা মাছমৰীয়া শ্ৰেণীটোৱে। তেওঁলোকৰ বৃত্তিৰ একমাত্ৰ উপায় আছিল এই কলং নদীখন। কিন্তু সেই জীয়া নদীখন এতিয়া বিহমেটেকা, ঝাওবন, নলখাগৰি গছ আদিৰ কবলত, যাৰ ফলত পানী বিষাক্ত হৈ মাছ নোহোৱা হৈ মাছমৰীয়াসকলৰ বৃত্তিত ব্যাঘাত জন্মিছে। সেয়ে ধনেশ্বৰে মাছ মৰাৰ পৰা উভতি আহিনদীখনৰ অৱস্থাৰ বিষয়ে এনেদৰে কৈছে—

“.....এতিয়া এইখন কলং নদী হৈ আছে নে, এইখন গেলা পুখুৰী। মাছ আহিব ক’ৰ পৰা, পানীয়েই নাই। এনেখন স্বাধীন দেশ হ’ল ঐ-জীয়া কলংখন মাৰি পেলালে। এই কলংপাৰত মাছুৱৈ ৰাইজখনকো যে লগত মাৰি পেলালে এই চকু থকা ধেন্দেলাহঁতে দেখা নাই নেকি?” *(হীৰেণ গোহাঁই (সম্পা.) ঃ মহিম বৰাৰ গল্প সমগ্ৰ, পৃ. ১৭২-১৭৩)*

ইয়াত ধনেশ্বৰৰ সুৰত এক প্ৰতিবাদী সুৰ ব্যঞ্জিত হৈ মাছমৰীয়া জাতি একোটাৰ জীৱন সংগ্ৰামৰ এটি বাস্তৱ ৰূপ

পৰিলক্ষিত হোৱা দেখা যায়। য'ত নদীখনৰ ওপৰতে নিৰ্ভৰশীল হৈ থকা জাতিটোৰ জীৱনলৈ অসম্ভাব্য ৰূপত অকালতে শোচনীয় অৱস্থা নামি আহিছে।

গল্পটিত মাছমৰীয়া লোকসকলৰ লগতে ক্ষুদ্ৰ কৃষক আদি শ্ৰেণীটোৰ বাস্তৱ সমস্যাৰ দিশটোও ফুটি উঠিছে। এসময়ত এই কলং নদীৰ ওপৰতে নিৰ্ভৰশীল হৈ সকলোৱে স্নেত কৰিছিল, মাছ মাৰি চাউল, লোণ আদিৰ খৰচ উলিয়াই সুখে-সন্তোষে জীৱন কটাইছিল। কিন্তু বৰ্তমান সেই জীয়া নৈখন আৰু জী থকা নাই, বিহমেটেকা, ঝাওবন আদিয়ে কলংখন পুতি পেলাইছে। যিটো ক্ষেত্ৰত প্ৰকাশ পাইছে চৰকাৰৰ চৰম অৱহেলা। য'ত নৈখনৰ লগতে এটা জাতিকো জীৱন্তে ধ্বংস কৰি পেলাইছে। কলং মৰিসুঁতি হোৱাৰ ফলত নদীয়াল সমাজখনৰ ক্ষুদ্ৰ ক্ষুদ্ৰ বৃত্তিসমূহ ব্যাহত হৈছে। সেই পৰিপ্ৰেক্ষিতত ধনেশ্বৰে নামঘৰ, পঞ্চায়ত আদিত বহুবাৰ কথাযাৰ উলিয়ালে যদিও কোনেও সক্ৰিয় অংশগ্ৰহণ নকৰিলে। ইয়াতে বাস্তৱ সমাজখনৰ শাসন ব্যৱস্থাটোৰ এটি বাস্তৱ স্বৰূপ প্ৰকাশ পাইছে।

সমাজত পুৰুষৰ সমানে তিৰোতাসকলেও বিভিন্ন কামত নিয়োজিত হৈ সংসাৰ চলোৱাত সহায় কৰা দেখা যায়। ঠিক সেইদৰে কলংৰ পাৰত বসবাস কৰা সমাজখনৰ ধনেশ্বৰৰ ঘৈণীয়েক আৰু সমবয়সীয়া বা লগৰীয়া আন আন তিৰোতা সকলেও একেলগে পথাৰত ভুঁই ৰুৱ, ধান দাব, চৰ-চাপৰিৰ মাহ সৰিয়হ তুলিবৰ কাৰণে হাজিৰা কৰি ঘৰখন পোহপাল দিয়াত সহায় কৰে। গিৰীয়েকসকলে মাছ মাৰি আনিলে তিৰোতাসকলেই একেলগ হৈ মাছ বিক্ৰী কৰিবলৈ যায়। কলংখন জী থাকোঁতে এই প্ৰক্ৰিয়া ভালদৰেই চলি আছিল কিন্তু কলঙৰ মৃত্যুত এতিয়া যিহে মাছ পায় সেই মোৱামাছ কেইটামানেৰে সৈতে কোনেও ধান দিব নোখোজে, পইচাহে যাচে, কাৰো খাবলৈ ধান নাই অৰ্থাৎ কলঙৰ মৃত্যুত মাছুৱৈসকলৰ লগতে ক্ষুদ্ৰ কৃষকসকলেও একে অৱস্থাৰ সন্মুখীন হ'বলগীয়া হৈছে। তাৰ কাৰণ এটাই কলঙৰ মৃত্যু।

গল্পটিত সক্ৰিয় তথা বিশেষ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰা এটি অন্যতম চৰিত্ৰ হৈছে এসময়ত মাটি-বাৰীয়ে, ভাতে-ভঁড়ালে, গোসাঁই ঘৰৰ সাতোলাৰ বাব লৈ, ভাওনাৰ সূত্ৰধাৰ হৈ সমাজত এটি সন্মানৰ স্থান লাভ কৰা ধনেশ্বৰৰ দেউতাক। তেওঁ কলং নদীৰ মৃত্যুৰ ফলত হোৱা কলং পাৰৰ সমাজখনৰ দুৰাৱস্থা সম্পৰ্কে ফকৰা যোজনা, বিভিন্ন শাস্ত্ৰ আদিৰ দ্বাৰা তাৰ ব্যাখ্যা আগবঢ়াইছে। তেওঁ ফকৰা যোজনাত উল্লেখ থকা কলি কালৰ দুৰাৱস্থাৰ ভৱিষ্যৎ বাণীৰ বিষয়ে কৈছে এনেদৰে—

"শস্য হৰিব, মৎস্য হৰিব, হৰিব বিৰিখৰ গুটি
বৰ বৰ মানুহৰ বাক্য লৰিব, লৰিব ধৰমৰ খুটি।"

(হীৰেণ গোহাঁই (সম্পা.) ঃ মহিম বৰাৰ গল্প সমগ্ৰ, পৃ. ১৭৪)

অৰ্থাৎ কলিকালত সকলো বস্তুৰে অভাৱ হ'ব। শস্য, মৎস্য হ্ৰাস পাব। বৰ বৰ মানুহে নিজৰ বাক্য পালন নকৰিব, ধাৰ্মিকে নিজৰ বাক্য পালন নকৰিব, ফলস্বৰূপে কলিকালত দুৰ্ভিক্ষই দেখা দিব আৰু ধৰ্মীয় নীতি-নিয়মত বিশৃঙ্খল লাগিব। তেওঁ আকৌ মহাপুৰুষৰ কথাৰে উল্লেখ কৰি কৈছে যে— দুৰ্ভিক্ষৰ ফলত প্ৰজাগণে জীৱন্তে মৃত্যু প্ৰায় হ'ব। শৰীৰ শুকাই-ক্ষিণাই যাব, সকলোৱে যেন একপ্ৰকাৰ পিশাচৰ আকাৰ ল'ব। মিছা মাত-কথাই প্ৰাধান্য লাভ কৰিব আৰু ধনেই সেই সময়ত সৰ্বস্ব ৰূপে পৰিগণিত হ'ব। তেওঁ মাধৱদেৱৰ ভাষাৰে কৈছে—

"পিতৃ বচন পুত্ৰে নুশুনিব
কনিষ্ঠে জেষ্ঠ্যজনৰ।
স্বামীৰ বচন ভাৰ্যা নুশুনিব
ভৃত্যজনে ঈশ্বৰৰ।"

(হীৰেণ গোহাঁই (সম্পা.) ঃ মহিম বৰাৰ গল্প সমগ্ৰ, পৃ. ১৭৫)

অৰ্থাৎ পিতৃ বাক্য পালন কৰা, ডাঙৰক সন্মান কৰা সকলোৰে প্ৰধান কৰ্তব্য। কিন্তু কলিকালত তাত আউল লাগিব। পিতৃৰ বাক্য পুত্ৰই মানি নচলিব, সৰুৱে জেষ্ঠ্যজনৰ আজ্ঞা পালন নকৰিব, পত্নীয়ে স্বামীৰ কথা পালন নকৰিব আৰু ভৃত্যজনে ঈশ্বৰৰ । মুঠতে সৃষ্টিৰ জীৱন চক্ৰত এক ভয়াৱহ সমস্যাৰ সৃষ্টি হ'ব।

দেখা গ'ল যে, সচৰাচৰ ব্যৱহাৰ হৈ থকা এই ফকৰা যোজনা, মহাপুৰুষ দুজনাৰ শাস্ত্ৰত উল্লেখ থকা ভৱিষ্যৎ বাণী আদি কলংপাৰৰ মাছমৰীয়া জাতিটোৱে অৰ্থাৎ পৃথিৱীৰ সকলো মানুহে অৰ্থে-অৰ্থে ভোগ কৰিবলগীয়া হৈছে। সেয়ে গল্পটিত উল্লেখ কৰিছে—

"চাওঁতে চাওঁতে এই গাঁওখন শুকাই গ'ল, এই মানুহবোৰ শুকাই গ'ল, তেওঁলোকৰ দুৱাৰমুখৰ এই কলং নৈখন শুকাই যোৱাৰ দৰে। নৈত পানী নাই, পানীত মাছ নাই, পথাৰত ধান নাই, বাৰীত শাক নাই, গৰুত গাখীৰ নাই, সকলো হৰি গ'ল। কলিয়ে হৰি নিলে, কালে হৰি নিলে।" *(হীৰেণ গোহাঁই (সম্পা.) ঃ মহিম বৰাৰ গল্প সমগ্ৰ, পৃ. ১৭৫)*

বৰ্তমান সময়ত আধুনিকীকৰণ এটি পৰম্পৰাগত প্ৰক্ৰিয়া, কিন্তু এই আধুনিকীকৰণ সকলো সময়তে আশীৰ্বাদ

হৈ দেখা নিদিয়ে। কেতিয়াবা কেতিয়াবা ই কাৰোবাৰ জীৱনলৈ অভিশাপ হিচাপেও পৰিগণিত হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। যিদৰে কলং নদীখনৰ মৃত্যুত যে অকল মাছমৰীয়াসকলৰ জীৱনেই নিশ্চল হৈ গৈছে তেনে নহয়, একালত নাৱৰ গুৰিয়াল হিচাপে কাৰ্যনিবাহ কৰা জয়ধনৰ লগতে আন আন কেবাজন ডেকাৰ জীৱনো নিশ্চল হৈ পৰিছে। এই গুৰিয়ালজনেই পূৰ্বৰ ৰোঁৱতী নৈত মাৰ নাওঁ, গুটিয়া নাওঁ আদি চলাই নিজৰ জীৱন কটাইছিল। কিন্তু দেশ স্বাধীন হোৱাৰ পাছত কলঙৰ ওপৰত দলং নিৰ্মাণে তেওঁলোকৰ পেটৰ ভাত কাঢ়ি নিয়া যেন হ'ল। সেয়ে নিৰুপায় হৈ সকলোৰে ইচ্ছা যে চৰকাৰে দলঙৰ ওপৰেৰে যোৱা যাত্ৰীসকলৰ ওপৰত কৰ লগাই কৰ সংগ্ৰহ কৰাৰ দায়িত্ব পূৰ্বৰ গুৰিয়াল জয়ধনকে দিব লাগে। সেয়ে গল্পটিত উল্লেখ কৰিছে—

"দলং হ'ল বাৰু, ইয়াৰ যাত্ৰীবোৰৰ পৰা এপইচাকৈও টেক্স লগোৱা হ'লে, চাইকেলবিলাকৰ পৰা দুপইচাকৈও টেক্স লোৱা হ'লে, মটৰবিলাকৰ পৰা আঠ অনাকৈ টেক্স লোৱা হ'লে চৰকাৰৰ দলং সজাৰ খৰচো ওলালেহেঁতেন আৰু (টেক্স লোৱা কামটো অৱশ্যে তাকে দিব) তাৰো চাকৰিটো ৰ'লহেঁতেন।" *(হীৰেণ গোহাঁই (সম্পা.) ঃ মহিম বৰাৰ গল্প সমগ্ৰ, পৃ. ১৭৭)*

গল্পটিত কলং নদীখনেই মূল কেন্দ্ৰ যদিও তাত মাছমৰীয়া অৰ্থাৎ নদীয়াল সমাজ এখনৰ ল'ৰা-ছোৱালীৰ জীৱন শৈলীৰ বিষয়েও উল্লেখ কৰিছে, যিয়ে এক সাৰ্বজনীন ৰূপ পৰিগ্ৰহণ কৰিছে। গল্পটোত কৈছে যে সমাজখনৰ ল'ৰা-ছোৱালীবিলাকৰ কোনোৰেই পঢ়া-শুনাত বা কোনো কাম কাজত ভাল নহয়। পটলং পিন্ধি অকল ঘূৰি ফুৰে। সকলো ডেকা ল'ৰাবোৰে পুৰা-গধূলি চাহৰ দোকানে-দোকানে মেল আড্ডা মাৰি, তাচ-পাশা খেলি ঘূৰি ফুৰে। হাল, বেপাৰ, বিদ্যা, হাকিম হুকুমৰ দৰমহা খোৱা কোনো চাকৰি আদি একোতেই ন'হল। চৰকাৰী আলিত ক'ৰ বিদেশৰ পৰা মুনিহ-তিৰোতা আহি ছয় টকাকৈ হাজিৰা কৰিছে। কিন্তু আমাৰ কোনোৱাই কোনো সৰু-সুৰা কাম কৰিবলৈ গ'লে তাক উৎসাহ দিয়াৰ পৰিবৰ্তে তাচ্ছিল্যহে কৰে। মুঠতে যিখন সমাজৰ ডেকা-গাভৰুসকলেই গতিশীল নহয়, সেইখন সমাজ কেতিয়াও গতিশীল হ'ব নোৱাৰে। অৱশ্যে এই সমস্যাটো অকল কলংপাৰৰ সমাজটোতে আৱদ্ধ হৈ থকা নাই ই এক সাৰ্বজনীন ৰূপ পৰিগ্ৰহণ কৰা বুলি ক'ব পাৰি।

৩.০০ সামৰণি ঃ

'এখন নদীৰ মৃত্যু' মাছমৰীয়া সমাজ এখনৰ জীৱন সংগ্ৰামৰ কাহিনী সম্বলিত এটি উৎকৃষ্ট গল্প। গল্পটিৰ মাজেৰে প্ৰকাশ পাইছে মাছমৰীয়া বা নদীয়াল সমাজৰ অতীত স্মৃতি। পূৰ্বতে মাছ পুঠিৰে পৰিপূৰ্ণ থকা কলং নদী সম্প্ৰতি এখন মৰিসুঁতি ৰূপে পৰিগণিত হৈছে। এখন নদীৰ মৃত্যুত যে সমগ্ৰ জাতি এটাৰ ধ্বংস হৈ যাব পাৰে তাৰ এটি বাস্তৱ ৰূপ গল্পটিৰ মাজেৰে প্ৰকাশ পাইছে। মাছ মৰাকে প্ৰধান বৃত্তি হিচাপে লৈ জীৱন-নিৰ্বাহ কৰা মাছুৱৈসকলৰ জীৱনত কলং নদীৰ মৃত্যুত নামি আহিছে এক শোচনীয় অৱস্থা। শাস্ত্ৰত উল্লেখ থকা ভৱিষ্যৎ বাণীৰ যেন গাঁওখনে এক বাস্তৱ ৰূপ লাভ কৰিছে। মাছমৰীয়াসকলৰ উপৰিও প্ৰকাশ পাইছে সেই কলঙৰ পাৰঘাটত নাও চলাই জীৱন-নিৰ্বাহ কৰা গুৰিয়ালসকলৰ জীৱনৰ কাৰুণ্য। তাৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত প্ৰকাশ পাইছে নদীয়াল সমাজব্যৱস্থা নৱ-প্ৰজন্মৰ ভৱিষ্যৎ জীৱনৰ গভীৰ ভয়াৱহতা। গতিকে, ক'ব পাৰি যে মহিম বৰাৰ 'এখন নদীৰ মৃত্যু' নদীকেন্দ্ৰিক অৰ্থাৎ নদীয়াল বা মাছমৰীয়া সমাজৰ বাস্তৱ জীৱনৰ চিত্ৰ ফুটি উঠা এটি সাৰ্থক গল্প। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

মুখ্য উৎস ঃ

গোহাঁই, হীৰেণ (সম্পা.) ঃ মহিম বৰাৰ গল্প সমগ্ৰ, গুৱাহাটী ঃ বনলতা, তৃতীয় প্ৰকাশ, ২০১২। মুদ্ৰিত

গৌণ উৎস ঃ

বৰগোহাঞি, হোমেন (সম্পা.) ঃ অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী (ষষ্ঠ খণ্ড), গুৱাহাটী ঃ আনন্দৰাম বৰুৱা ভাষা-কলা-সংস্কৃতি সংস্থা, অসম, চতুৰ্থ প্ৰকাশ, ২০১৭। মুদ্ৰিত

বৰুৱা, প্ৰহ্লাদ কুমাৰ ঃ অসমীয়া চুটি গল্পৰ অধ্যয়ন, ডিব্ৰুগড় ঃ বনলতা, পুনৰ মুদ্ৰণ, ২০১৭। মুদ্ৰিত

শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ ঃ অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত, গুৱাহাটী ঃ সৌমাৰ প্ৰকাশ, পুনৰ মুদ্ৰণ, ২০১৫। মুদ্ৰিত

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

দেউৰী ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰ ঃ এটি অধ্যয়ন

পিংকুমণি দেউৰী
গৱেষক, কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ
ৰাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী
অসম, খানাপাৰা, পিন ঃ ৭৮১০২২
৮৪৮৬৪১৬৬৮১
pinkumonideori111@gmail.com

ড° নিভা ৰাণী ফুকন
সহযোগী অধ্যাপিকা
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত
বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী অসম,
খানাপাৰা, পিন ঃ ৭৮১০২২
৯৩৬৫২৩১১৮১
neevarani11@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

উত্তৰ-পূৰ্ব্বাঞ্চলৰ আটাইতকৈ প্ৰভাৱশালী ভাষা হৈছে অসমীয়া ভাষা। অসমীয়া ভাষাৰ জন্ম মাগধী অপভ্ৰংশৰ পৰা হোৱা বুলি জৰ্জ আব্ৰাহাম গ্ৰীয়াৰ্ছন, সুনীতি কুমাৰ চট্টোপাধ্যায়, বাণীকান্ত কাকতি আদিৰ দৰে উল্লেখযোগ্য পণ্ডিতসকলে কৈ গৈছে। কিন্তু অতীজৰে পৰা ইয়াত অনাৰ্য ভাষিক গোষ্ঠীৰ বহুতো লোক বসবাস কৰি আহিছে। সেয়েহে অসমৰ অসমীয়া ভাষাটোৰ উপৰিও অনা-আৰ্য ভাষাগোষ্ঠীৰ বহুতো ভাষাৰ প্ৰচলন ইয়াতআছে। এইক্ষেত্ৰত চীন তিব্বতীয় ভাষা গোষ্ঠীৰ কিছুমান ভাষাৰ অৱস্থিতি বিশেষভৱে গুৰুত্বপূৰ্ণ। চীন তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ তিব্বত বৰ্মীয় শাখাৰ অসম বৰ্মীৰ অন্তৰ্গত 'দেউৰী' ভাষা অন্যতম বড়ো বৰ্গীয় ভাষা। কোনো এক অঞ্চলৰ মাজত প্ৰচলিত হৈ মানুহৰ সৰ্বতোপ্ৰকাৰ ভাৱ অনুভূতিৰ বিনিময় কৰি ভাষাই সেই অঞ্চলটোৰ জনসমষ্টিক একতাৰ দোলেৰে বান্ধি ৰাখে। এইক্ষেত্ৰত শব্দ সম্ভাৰৰ ভূমিকা যথেষ্ট গুৰুত্বপূৰ্ণ। সেয়েহে, দেউৰী ভাষাৰ ৰূপতত্ব , শব্দ সাধন প্ৰক্ৰিয়া আদিক অনুসৰণ কৰি 'দেউৰী ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰ ঃ এটি অধ্যয়ন' শীৰ্ষক বিষয়টো আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে ।

অৱতৰণিকা ঃ

ভাষা এটাই সমাজ এখনৰ সঞ্চালনৰ মাধ্যম হিচাপে কাম কৰে। সামাজিকভাৱে একেলগে বসবাস কৰা দুটা বেলেগ বেলেগ ভাষিক গোষ্ঠীৰ লোকসকলৰ মাজত যেতিয়া ভাষাৰ আদান-প্ৰদান হয় তেতিয়া ভাষা দুটাৰ মাজত পাৰস্পৰিকভাৱেই ধ্বনিতত্ব, ৰূপতত্ব আৰু শব্দতত্ব আদি দিশত প্ৰভাৱ পৰিলক্ষিত হয়। বিশেষকৈ শব্দৰ প্ৰভাৱৰ গতি এইক্ষেত্ৰত লক্ষণীয়। শব্দৰ এই দিশটোক উদ্ধাৰ কৰাই হৈছে আমাৰ আলোচনাৰ প্ৰধান উদ্দেশ্য। গ্ৰীয়াৰ্ছনৰ মতে — 'বড়ো ভাষাবোৰৰ ভিতৰত আটাইতকৈ পূৰ্বদেশীয় ভাষা হৈছে দেউৰী ভাষা।' বড়ো বৰ্গৰ অন্তৰ্গত এই ভাষাটো আটাইতকৈ প্ৰাচীন আৰু ই মূলৰ নিচেই ওচৰ চপা। ১৮৯৫ চনত ব্ৰাউন চাহাবে লিখা 'An outline Grammar of Deori -chutia Language' পুথিখনত শদিয়াৰ সিপাৰে দেউৰী সকলৰ মূল বাসস্থান বুলি কৈছে। বৰ্তমান দেউৰীসকল অসমৰ বিভিন্ন ঠাইত সিঁচৰতি হৈ আছে। কোনো এটা ভাষাৰ বিকাশ ইয়াৰ শব্দ ভাণ্ডাৰৰ ওপৰত যথেষ্ট নিৰ্ভৰশীল হৈ থাকে। ভীমকান্ত বৰুৱাৰ মতে *'চহকী শব্দ সম্ভাৰে বক্তাৰমনৰ জোখাৰে ভাৱ প্ৰকাশ কৰিবলৈ সমৰ্থ কৰি তোলে।'*[১] বিকাশশীল ভাষা হিচাপে অসমীয়া ভাষাত সাম্প্ৰতিক কাললৈকে হোৱা শব্দৰ ক্ৰমশঃ আমদানি আৰু আনফালে দেউৰী ভাষাৰ-চৰ্চাৰ ক্ষেত্ৰত উপযুক্ত নীতি-নিৰ্দেশনা, পদ্ধতিগত কৰ্মসূচী আৰু সুনিৰ্দ্দিষ্ট সূত্ৰৰ অভাৱৰ ফলত দেখা দিয়া ভাষা-

চৰ্চাগত গতিশীলতাৰ বাধা আদিৰ দিশলৈ লক্ষ্য ৰাখি এই গৱেষণা পত্ৰখনত দেউৰী ভাষাত ব্যৱহৃত শব্দসমূহৰ পুংখানুপুংখ অধ্যয়ন কৰিবলৈ যত্ন কৰা হৈছে। লগতে দেউৰী ভাষাৰ শব্দ-সম্ভাৰ সম্পৰ্কীয় সকলোবোৰ দিশ উন্মোচন কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু গুৰুত্ব ঃ

দেউৰী ভাষাৰ বিদ্যায়তনিক গৱেষণা চৰ্চাৰ ইতিহাস অতি পুৰণি নহয়। দেউৰীসকলৰ বৰ্তমান প্ৰাপ্ত তিনিওটা শাখাৰ— দিবঙীয়া, টেঙাপনীয়া, বৰগঞাৰ ভিতৰত কেৱল দিবঙীয়া দেউৰীসকলেহে নিজা ভাষাৰ ব্যৱহাৰ কৰে। কম জনসংখ্যক লোকৰ মাজত প্ৰচলিত হোৱা স্বত্তেও ভাষাটোৱে স্বকীয় ভাষাগত বৈশিষ্ট্যক সংৰক্ষণ কৰি আহিছে। দেউৰী ভাষাৰ আলোচনাত ইয়াৰ শব্দ সম্ভাৰৰ ভূমিকা যথেষ্ট গুৰুত্বপূৰ্ণ। উপযুক্ত শব্দৰ ব্যৱহাৰে ভাষাৰ প্ৰকাশিকা শক্তিক উচিত মৰ্যাদা প্ৰদান কৰে। এই প্ৰাসংগিকতালৈ লক্ষ্য ৰাখি 'দেউৰী ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰ ঃ এটি অধ্যয়ন' শীৰ্ষক বিষয়টিত এই সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

আলোচ্য বিষয়টোৰ অধ্যয়নৰ বাবে বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। লগতে বিষয় সম্পৰ্কীয় গ্ৰন্থ , আলোচনী , গৱেষণা গ্ৰন্থ আদিৰ সহায় লোৱা হৈছে ।

মূল বিষয় ঃ

দেউৰী ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰ ঃ

দেউৰী ভাষাৰ মূল চীন-তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ তিব্বত বৰ্মীয় শাখাৰ বড়োমূলীয় ভাষা, সেয়েহে ভাষাতাত্ত্বিক সকলো দিশতে বড়ো-মূলীয় অন্যান্য ভগ্নীস্থানীয় ভাষা, যেনে- বড়ো, কছাৰী, ৰাভা, তিৱা, কাৰ্বি, ডিমাছা আদি ভাষাৰ লগত ইয়াৰ আংশিক মিল আছে। শব্দ সম্ভাৰৰ ক্ষেত্ৰতো ই ব্যতিক্ৰম নহয় অঞ্চলভেদে আৰু ফৈদভেদে এই শব্দবিলাকৰ স্থানীয় বৈশিষ্ট্য বেলেগ বেলেগ দেউৰী ভাষাৰ শব্দৰ উৎস দুই ধৰণৰ পোৱা যায়। সেয়া হৈছে -

ক) উত্তৰাধিকাৰী সূত্ৰে পোৱা মূলোদ্ভৱ শব্দ

খ) সংশ্ৰৱ সূত্ৰে পোৱা ঋণগত শব্দ

দেউৰী শব্দ সম্ভাৰৰ উত্তৰাধিকাৰীসূত্ৰে পোৱা শব্দসমূহ ইয়াৰ মূলৰ লগত জড়িত। অৰ্থাৎ এই শব্দবোৰৰ কিছুমান চীন-তিব্বতীয় ভাষাসমূহৰ পৰা অবিকৃত, অৰ্ধবিকৃত আৰু পূৰ্ণবিকৃত ৰূপত দেউৰী ভাষাত ব্যৱহাৰ হৈছে। ইয়াৰ অবিকৃত শব্দ অৰ্ধবিকৃত শব্দৰ তুলনাত কিছু কম। অবিকৃত মূলোদ্ভৱ দেউৰী শব্দ কিছুমানৰ উদাহৰণ হ'ল—

দেউৰী	**অসমীয়া**
হা / য়া / আ	মাটি
মি / মায়	ধান
বা	বোকোচাত ল
আঁ	মই
মূঁ	পক্

দেউৰী ভাষাত প্ৰচলিত অৰ্ধবিকৃত শব্দসমূহ মূলতকৈ সামান্য পৃথককৈহে ব্যৱহাৰ হয়। যেনেঃ-

দেউৰী	**বড়ো**	**অসমীয়া**
গুঁই	গয়	তামোল
কাচ	খুছুং	কাছ
চিচিতি / তিতি	থায়	গুটি / ফল
গুমি	গুমৈ	ভিনীহি
ন	নোং	তুমি
মু	মু / নামা	নাম
মিৰু	মাইৰং	চাউল

দেউৰী ভাষাত প্ৰচলিত পূৰ্ণবিকশিত শব্দ সমূহ মূলৰ পৰা সম্পূৰ্ণ বিকাশ হৈ অন্য ৰূপত ব্যৱহাৰ হোৱা দেখা যায়। যেনে ঃ

দেউৰী	**বড়ো**	**অসমীয়া**
বাবা	আফা	দেউতা
জি	দৈ	পানী
দুবু	জিবু	সাপ

দেউৰী ভাষাৰ উত্তৰাধিকাৰী সূত্ৰে পোৱা মূলোদ্ভৱ শব্দসমূহৰ ইয়াৰ মূলৰ সৈতে কিছুক্ষেত্ৰত পাৰস্পৰিক সাদৃশ্য দেখা যায়। কিছুমান দেউৰী শব্দ ইয়াৰ ভগ্নীস্থানীয় ভাষা শব্দসমূহৰ লগত সাদৃশ্য থকা দেখা যায়। দেউৰী ভাষাত পোৱা এনে শব্দসমূহ হৈছে—

		দেউৰী	**অসমীয়া**
গাৰো ঃ	গুঁ	গুঁ	ফৰিং
	চি	চি	মৰ / তেজ
তিৱা ঃ	মকঁ	মঁক	ভাত
	পঁ	পঁ	বেছি
বড়ো ঃ	মিদি	দেৱতা	দেৱতা
	গাৰি	গাৰি	ঘা
ডিমাছা ঃ	চিঙ্	চিঙ্	নিমখ
	নু	নু	নাও

দেউৰী ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰত এই সকলোবোৰৰ উপৰিও সংশ্ৰৱ সূত্ৰে পোৱা ঋণকৃত শব্দৰ প্ৰাধান্য দেখা যায়। এই শব্দমূহ

বিশেষকৈ সাংস্কৃতিক বা ৰাজনৈতিক আদি কাৰণত ইয়াৰ সহবাসী জনগোষ্ঠীয় আৰ্য-বৰ্ণহিন্দুসকলৰ ভাষাসমূহৰ পৰা অহা শব্দসমূহক ধৰা হয়। দেউৰী ভাষাত আৰ্যমূলক বিভিন্ন ধৰণৰ তৎসম, অৰ্ধতৎসম আৰু তদ্ভৱ শব্দৰ ব্যৱহাৰ আছে।

তৎসম ঃ পাপ, সংসাৰ, ধৰ্ম, সত্য, ৰাজা, ৰাণী, বিদ্যা, মন্দিৰ পূজা ইত্যাদি।

অৰ্ধতৎসম / তদ্ভৱ ঃ বল, পিতবি (পৃথিৱী) , বছৰ (বৰ্ষ) জনম (জন্ম) ইত্যাদি।

দেউৰী ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰত পোৱা বিদেশী শব্দসমূহক কেতিয়াবা বিকৃত ৰূপত আৰু কেতিয়া অবিকৃতৰূপ পোৱা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে ঃ- ইংৰাজীমূলক শব্দ ঃ

দেউৰী	ইংৰাজী
বেন্‌চি	Bench
এলেক্‌তৰি	Electric
মেল্‌তৰি	Military
মেম্বৰ	Member

জেল, কব্বৰ - কাতি (খবৰ-খাতিৰ), নকল, হাজিৰা, দৰকাচ্‌ত (দৰ্খাস্ত), কাজানা (খাজানা), কৰচ (খৰচ), জমা, আন্দাজ শব্দসমূহ দেউৰী ভাষালৈ অহা অন্যান্য বিদেশী ভাষা শব্দ।

দেউৰী ভাষাৰ শব্দৰ গাঁথনিলৈ লক্ষ্য কৰিলে আমি এই ভাষাত দুইধৰণৰ শব্দ পাঁও। সেইকেইটা হৈছে — মৌলিক শব্দ আৰু যৌগিক শব্দ। মৌলিক শব্দবিলাক ভাঙিলে ইয়াৰ কোনো অৰ্থ পোৱা নাযায় , আনহাতে যৌগিক শব্দবিলাক বিশ্লেষণ কৰিলে ইয়াৰমূল অৰ্থৰ লগত কিছু তাৰতম্য ঘটা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপেঃ-

মৌলিক শব্দ ঃ আ (মাটি) + তিগু (?) >আতিগু (গাঁও)
জি (পানী) + কাতু (?)> জিকাতু (ঘাট)

ইয়াত তিগু, কাতু শব্দদ্বয়ৰ অৰ্থ দেউৰী ভাষাত পোৱা নাযায় অৰ্থাৎ এই শব্দ দুটাৰ দেউৰী ভাষাত ব্যৱহাৰ নাই।

যৌগিক শব্দঃ মঁক (ভাত) + তি (গুটি) > মকতি (ভাতৰ গুটি)
কু(ঘৰ) + তালি (বস্তুবাহানি) > কুতালি (বস্তু-বাহানি থোৱা সৰু ঘৰ)
চ (গা / শৰীৰ) + লা (লোৱা)> চলা / চুলা (গাত লোৱা কাপোৰ)
আ /য়া/ মাটি + দি / জি (পানী + ৰি (সংযোগ) > আদিৰি (বোকা)

দেউৰী ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰত অন্যান্য চীন-তিব্বতীয় ভাষাৰ দৰেই একোটা মূলৰ পৰাই সাধিত হোৱা আনেক শব্দ গঠনৰ বৈশিষ্ট্য বিৰাজমান। উদাহৰণস্বৰূপেঃ-

'মুকু' মানে হৈছে বায়ুৰ দৰে স্বচ্ছ, ফটফটীয়া, বকফুণ। এই 'মুকু' শব্দটোক মূল হিচাপে লৈ সৃষ্টি হোৱা শব্দ সমূহ হৈছে—

মুকু + তি (গুটি) > মুকুতি- চকু
মুকু + মিজি (জুল) > মুকুমিজি- চকুলো
মুকু + চিচ (মল / তেজ) > মুকুচ্চি - চকুৰমল / ফেঁচকুৰি
মুকু + বেমা (বলি যোৱা)> মুকুবেমা বলি যোৱা বতাহ

আ / য়া ৰ পৰা সৃষ্টি হোৱা শব্দ যিবোৰ শব্দৰ অৰ্থ মাটিৰ লগত সম্পৰ্কিত।

আঁচ্চ / য়াঁ	-	ঘৰ
আতিগু	-	গাঁও
আদিৰি	-	বোকা
আদুগঁ	-	চোতাল

দেউৰী ভাষাত ব্যৱহৃত শাৰীৰিক অংগ-প্ৰত্যংগ মূলক শব্দ সমূহ কেতিয়াবা যৌগিক আৰু কেতিয়াবা মৌলিক ৰূপত পোৱা যায়। উদাহৰণস্বৰূপেঃ-

মৌলিক ঃ মুকুতি - চকু
গুঁতু - নাক
আঁকু - কাণ

যৌগিকঃ মুকুতি+ চিমু (নোম)> মুকুতিচিমু (চকুৰ নোম)
মুকুতি +কুমা (পোৱা) >মুকুতিকুমা (চকুপোৱা)
আঁকু (কাণ) +চকৰা (মল)> আঁকুচকৰা (কাণৰ মল)
হাগে (গুৰি) + হাতি (দাঁত) > হাগেহাতি (গুৰিদাঁত)
পাউতা (কাযলতি) + চিমু (নোম)> পাউতাচিমু (কাযলতিৰ নোম)
গুগা (মুখ) + জি (পানী) >গুজি (থু / মুখৰ পানী)

চাঁ-মূলবাচক শব্দ ঃ

দেউৰী		অসমীয়া
চাঁ	-	সূৰ্য্য
চাঁউ	-	দিন
চাঁকু	-	সন্ধিয়া
চাজা	-	এদিন

মি-মূলক দেউৰী শব্দ ঃ

দেউৰী		অসমীয়া
মি	-	ধান
মিৰু	-	চাউল
মিবুৰুং	-	এবিধ ধানজাতীয় শস্য
মিচ্চিমা	-	গোমধান

দেউৰী শব্দ সম্ভাৰত পোৱা জন্তুবাচক 'মে' মূলক শব্দ ঃ

দেউৰী		**অসমীয়া**
মে	-	জন্তু
মেচি	-	হৰিণ
মেগঁ	-	গড়ঁ
মেউ / মিয়উ	-	হাতী

দেউৰী ভাষাত ব্যৱহৃত চৰাইজাতীয় বিশেষ্য শব্দ সমূহৰ মূল 'দু'/ 'দি', উদাহৰণস্বৰূপেঃ-

দেউৰী		**অসমীয়া**
দু	-	কুকুৰা চৰাই
দুকা	-	কাউৰী
দুচিৰিং	-	ঘনচিৰিকা
দুচ্চু	-	কপৌ

দেউৰী ভাষাত প্ৰায়বোৰ গুটি বা ফল বুজোৱা বিশেষ্যৰ শব্দৰ আগত 'তি' বহে তাৰ পিছত বেলেগ বেলেগ স্বাধীন অৰ্থযুক্ত অথবা অৰ্থহীন শব্দৰ যোগ হোৱা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে ঃ-

দেউৰী		**অসমীয়া**
তিক্'জি	-	বগৰী
তিজুঁ	-	কঁঠাল
তিৰি	-	কল

আনহাতে তেতেলি (তেতেলী), তকৌ (টকৌ), গদকা (নাৰিকল), অজিং (কমলা), চপা (ঔ টেঙা), গুচামি (লেটেকু), মিজিয়া (আমলখি), লিলি (শিলিখা) আদি শব্দত ইয়াৰ ব্যক্তিক্ৰম হোৱা দেখা যায়।

'তা' বাচক আলু জাতীয় শব্দ ঃ

দেউৰী		অসমীয়া
আচ্চতা	-	কাঠআলু
তাগদিয়াতা	-	মিঠা আলু
তাচিং তা	-	চিনা আলু

দেউৰী ভাষাৰ শাক জাতীয় নামবোৰ 'মি', 'মে' বা 'ম' ৰে আৰম্ভ হোৱা দেখা যায়। যেনেঃ-

দেউৰী		**অসমীয়া**
মিকাজি	-	মেচাকী শাক
মিৰুলি	-	মিঠা মৰা শাক
মেমেদু	-	ধনীয়া

ইয়াৰ ব্যতিক্ৰমী শাক বুজোৱা শব্দ সমূহ এনেধৰণৰ —

দেউৰী		**অসমীয়া**
তেবেজু	-	ডিমৰু
চকা	-	বেতগাজ
যুৱা চিমু	-	বাঁহ গাজ
চকাতি	-	ভেঁকুৰি

'চ্চি' বাচক মূলৰ পৰা সৃষ্টি হোৱা দেউৰী শব্দ ঃ

দেউৰী		**অসমীয়া**
চ্চিউপি	-	বৰজনা
চ্চিমা	-	মাক
চ্চিকা	-	যকৃৎ

মূল শব্দ 'গুম' (মূৰ) ৰ পৰা বহুতো নামবাচক শব্দ দেউৰী ভাষাত গু, গ ৰে আৰম্ভ হয়। যেনে ঃ-

দেউৰী		**অসমীয়া**
গুতু	-	নাক
গুগা	-	মুখ
গিঁচ	-	জুহালৰ ওপৰত থকা চাং
গাতিগি	-	মহিলাই মূৰত লোৱা গামোছা
গুতেৰা	-	জাপি
গিচা	-	ফণি

দেউৰী ভাষাত ব্যৱহৃত বিভিন্ন ধৰণৰ অস্ত্ৰ-শস্ত্ৰ বা সা-সঁজুলিৰ নামবাচক শব্দ সমূহ হৈছে—

দেউৰী		**অসমীয়া**
কাতাই	-	কটৰী
য়গি	-	দা
চেগুঁ - আঁতা	-	ধনু- কাড়
এতুৰু	-	বন্দুক
লুৱা	-	কুঠাৰ
য়ম্‌তু	-	হ্মন্ত
য়মা	-	চেপা
চকি	-	জাকৈ
কুবি	-	খালৈ
কুজি	-	কোৰ
হামি	-	মৈ

দেউৰী ভাষাত পোৱা কেতবোৰ ৰং (চেৰেং) বাচক শব্দ এনেধৰণৰ—

দেউৰী		**অসমীয়া**
এক্কুঁজি	-	ধোৱাবৰণীয়া
কাকি	-	মটীয়া বৰণীয়া
পুৰু	-	বগা
চাৰু	-	ৰঙচুৱা
মেজেৰা	-	মুগা

দেউৰী ভাষাৰ 'সময়' নিৰ্দেশক শব্দ ঃ

দেউৰী		**অসমীয়া**
কনু	-	বছৰ
কনুচ্চা	-	এবছৰ
দিচিৰা	-	এবছৰ
দিনি	-	আজি
চিৰি	-	ৰাতি
চাঁউ	-	দিনত
চিগা	-	পুৱা

দেউৰী শব্দ-সম্ভাৰত পোৱা কিছুমান পঢ়াৰ সজুলিৰ নাম হৈছে—

দেউৰী		**অসমীয়া**
গাৰতু	-	গ্ৰন্থ
য়াৰুবঁ	-	কিতাপ
তুলাচিয়াঁ	-	কাগজ
চ্চুৰাম	-	বাতৰি

দেউৰী ভাষাৰ মাছবাচক শব্দ ঃ

দেউৰী		**অসমীয়া**
চাজুং চ্চিএঁঙা	-	শিঙি মাছ
চ্চিচচঁ চ্চিএঁঙা	-	মিছা মাছ
ককিৰিং	-	কেকোৰা
জুগা	-	শামুক
কাচিতৰা চ্চিএঁঙা	-	টোৰা মাছ

দেউৰী তিৰোতা সমাজত প্ৰচলিত তাত বোৱাৰ সজুঁলি সমূহৰ নাম অসমীয়া ভাষাতকৈ কিছু পৃথক ৰূপত পোৱা যায়। যেনেঃ-

দেউৰী		**অসমীয়া**
চেৰেগি	-	চেৰেকী
জেঁচ্চ	-	যঁতৰ
কৰনি	-	কুকি
ককি	-	ৰাচত ভৰোৱা আঁকুহি
জাৰিচ্চ	-	মাকু
দিগিঁ	-	সূঁতা
গিচ্চা	-	আঁচু সূঁতা

দেউৰী সমাজত সচৰাচৰ ব্যৱহাৰ হোৱা আনকিছুমান শব্দ হৈছে—

দেউৰী		**অসমীয়া**
আতিগু	-	গাঁও
জিতিগু	-	ৰাজ্য
আচ্চ / য়াঁ	-	ঘৰ
উগাঁ	-	পথাৰ
বিঁব	-	ভৰাঁল
কুতালি	-	কোঠা
গাৰমি	-	এলান্ধু
চিয়াঁকতি	-	জাকি
আকুঁম	-	চাঙৰ তল
চ্চাৰণি	-	চালণী
চালগাতি	-	সাঁচতি
কাপি	-	পীৰা
দিচ্চ	-	কলহ
গাঁৰ	-	লোটা
জিবি	-	বাটি

দেউৰী সমাজত প্ৰচলিত আ-অলংকাৰ বাচক শব্দসমূহ এনেধৰণৰ—

দেউৰী		**অসমীয়া**
উচুঁ	-	খাৰু
কতু	-	কেৰু
লি	-	মণি
অচতিং	-	আঙুঠি
বিলিলিং	-	কাণফুলি
মাদলি	-	মাদুলি

দেউৰী ভাষাৰ সাহিত্য চৰ্চাৰ নতুন ধাৰাৰ আৰম্ভ হোৱাৰ সন্ধিক্ষণৰ আৰম্ভণিৰ পৰা সাম্প্ৰতিক কাললৈকে প্ৰয়োজন অনুসৰি দেউৰী ভাষাত নতুন নতুন শব্দৰ সংযোগ কৰা হৈছে। দেউৰী ভাষাৰ এনেধৰণৰ নব্য-সংযোজিত কিছুমান শব্দ হৈছে—

চ্চেংচ্চা	-	সভা সমিতি
চ্চু - চ্চেবা	-	সাহিত্য
আচ্চঙ্	-	ৰাজ্য বা দেশ। ইত্যাদি

দেউৰী ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰত কিছুমান শব্দৰ অৰ্থ দুৰ্বোধ্য। দেউৰী ভাষাৰ পুৰণি লোক-সাহিত্য সমূহ যেনেঃ- হুৰাই-ৰাঙুলি,লহৰিয়া, আবৰব', হাঁচতি আদি গীত-মাত, মন্ত্ৰক্ষেত্ৰেত সঘনাই উচ্চাৰিত কিছুমান শব্দৰ অৰ্থ সহজে বুজিব নোৱাৰি। এই শব্দবোৰ অধঃস্তৰ পৰ্যায়ত ভাষা-অৱশেষ ৰূপত একেবাৰে ক্ষয়প্ৰাপ্ত নোহোৱাকৈ চলি আহিছে। এই অধঃস্তৰ পৰ্যায়ত প্ৰচলিত শব্দ কিছুমানৰ পৰা পুনৰ প্ৰৱৰ্তন কৰি লোৱা শব্দ কিছুমান বৰ্তমান দেউৰী শব্দ সম্ভাৰত পোৱা যায়। এনেধৰণৰ শব্দ সমূহ হৈছে- উলি-পুলি (প্ৰজা), আৰাউ (প্ৰাৰ্থনা), বেলা (সময়), মিদি -গিঁউমা (মন্ত্ৰস্তোত্ৰ), নিয়নি মঁক (গৰম ভাত) মঁক নিৰহি বা (ভাত সম্পূৰ্ণ সিজা), মিদি / য়ই চ্চগাবা (দেৱতা/ আই সকামৰ উদ্দেশ্যে আগবঢ়োৱা)। মূলোদ্ভৱ আৰু সংশ্ৰৱ সূত্ৰে পোৱা শব্দ সমূহৰ উপৰিও দেউৰী ভাষাত সাম্প্ৰতিকালত ভাষাটোৰ চৰ্চাত ক্ষেত্ৰত প্ৰয়োজন

হোৱা বিভিন্ন ধৰণৰ নতুন শব্দ এনেদৰে সৃষ্টি কৰাৰ অথবা দেউৰী সমাজত হেৰাই যোৱা পুৰণি শব্দ সমূহ উদ্ধাৰ কৰাৰ প্ৰচেষ্টা বৰ্তমানেও অব্যাহত সৰ্বসন্মত এই নতুন শব্দ সমূহে স্বকীয়তা বৰ্তাই ৰাখি দেউৰী ভাষা সাহিত্য চৰ্চা ক্ষেত্ৰত বৰ্ণাব নোৱাৰা বাধা দূৰ কৰিব পৰাটো স্বাভাৱিক। দেউৰী ভাষা প্ৰচলিত এনেধৰণৰ কেতবোৰ নব্য-মূল্যায়নকৃত শব্দ সদ্য প্ৰকাশিত বিভিন্ন আলোচনী, স্মৃতি গ্ৰন্থ আদিত আত্ম প্ৰকাশ হোৱা দেখা যায়।

উপসংহাৰ ঃ

দেউৰী ভাষাৰ শব্দৰ সম্ভাৰে বিভিন্ন স্তৰত বিভিন্ন শব্দ নিৰ্মাণ আৰু বিভিন্ন সময়ত সহবাসী জনগোষ্ঠী শব্দ গ্ৰহণ কৰি বিকাশৰ পথলৈ আগবাঢ়িছে। ইয়াৰ উপৰি সাম্প্ৰতিক কালৰ গোলকীকৰণৰ প্ৰভাৱত দেউৰী ভাষাৰ শব্দৰ সম্ভাৰত অন্যান্য ভাষা যেনে ঃ- ইংৰাজী , হিন্দী আদি ভাষাৰ যথেষ্ট প্ৰভাৱ পৰাটো লক্ষণীয় বিষয়। এনে শব্দসমূহ দেউৰী ভাষী লোকসকলে স্বকীয় বৈয়াকৰণিক পদ্ধতিৰে অন্তৰ্ভুক্ত কৰাৰ ফলত ভাষাটোৰ স্বকীয়তা ৰক্ষিত হোৱাৰ লগতে প্ৰকাশিকা শক্তিও বৃদ্ধি হোৱা দেখা যায়। যিয়ে দেউৰী ভাষাৰ শব্দৰ সম্ভাৰক আৰু অধিক চহকী কৰাৰ দিশেৰে আগবঢ়াই নিছে। অৱশেষত আমি ক'ব পাৰো যে , দেউৰী ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰৰ উদ্ভৱগত দিশে অসমীয়া ভাষাৰ বৈচিত্ৰপূৰ্ণ শব্দৰ ভাণ্ডাৰলৈও যথেষ্ট অৰিহণা যোগাই আহিছে। ❑

পাদটীকা ঃ ১) বৰুৱা ড° ভীমকান্ত ঃ অসমীয়া ভাষা ২০০৬ , পৃ. ১৩৬

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

১। ামী , ড° উপেন্দ্ৰনাথ ঃ অসমীয়া ভাষাৰ উদ্ভৱ, সমৃদ্ধি আৰু বিকাশ, বৰুৱা এজেন্সি, গুৱাহাটী ৫ম প্ৰকাশ, ফেব্ৰুৱাৰী ২০০৫

২। ৱামী , ড° গোলোকচন্দ্ৰ ঃ অসমীয়া ব্যাকৰণ প্ৰৱেশ, বীণা লাইব্ৰেৰী, গুৱাহাটী, চয় প্ৰকাশ, এপিল, ২০২৩

৩। দেউৰী , নৃপেন ঃ দেউৰী ২; দাগাৰেবা, অসম সাহিত্য সভা, যোৰহাট, ২০০৫

৪। (সম্পা.) ঃ জিমচাঁয়া চ্চু বিঁব (প্ৰথম খণ্ড), এ. জি. প্ৰিণ্টাৰ্ছ , যোৰহাট প্ৰথম সংস্কৰণ, ২০০৫

৫। দেউৰী , ষড়ানন ঃ দেউৰী ভাষা সাহিত্য সমাজ, বীণা লাইব্ৰেৰী, গুৱাহাটী , প্ৰথম সংস্কৰণ, মে', ২০০৭

৬। দেউৰী , কৰবী (সম্পা.) ঃ জাংফাই, মনজিৎ অফ্‌চেট প্ৰিণ্টাৰ্চ, ধেমাজি, প্ৰথম সংস্কৰণ, ২০০৫

৭। দেউৰী, ৰাধাকান্ত ঃ চ্চিবা জিম চাঁয়া চ্চু বিঁব, প্ৰকাশক ঃ শ্ৰীঅপূৰ্ব কুমাৰ দেউৰী , নাৰায়ণ পুৰ (লক্ষিমপুৰ) , দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১২

৮। দেউৰী, উমাকান্ত ঃ টেঙাপানী , ২৩ তম সদৌ অসম দেউৰী সাহিত্য সভা , স্মাৰক গ্ৰন্থ , শিৱসাগৰ , ২০১৫

৯। পাথক , ৰমেশ ঃ অসমীয়া ভাষাৰ ইতিহাস , অশোক বুকষ্টল , গুৱাহাটী প্ত্ম প্ৰকাশ, ছেপ্তেম্বৰ, ২০০৮

১০। বৰুৱা , ড০ ভীমকান্ত ঃ অসমীয়া ভাষা , বনলতা , ডিব্ৰুগড় , ১ম প্ৰকাশ , নৱেম্বৰ , ১৯৯৭

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

মোপাছাৰ চুটিগল্পত নাৰী জীৱনৰ প্ৰতিফলন
(নিৰ্বাচিত চুটিগল্পৰ উল্লেখনসহ)

জোনালী মালাকাৰ

সহকাৰী অধ্যাপিকা, পূব বংশৰ মহাবিদ্যালয়
গৱেষক, বৈদেশিক ভাষা বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৯৮৫৯২৩৪৮৫৫
jonalimalakar04@gmail.com

ড° বিৰিঞ্চি কুমাৰ দাস

অধ্যক্ষ
বৰপেটা ছোৱালী মহাবিদ্যালয়
৭০০২১৪৩৩২৫

সাৰাংশ ঃ

বৰ্তমান সাহিত্যৰ শাখাসমূহৰ ভিতৰত জনপ্ৰিয় সাহিত্যবিধ হৈছে চুটিগল্প। ঊনবিংশ শতিকাতে আধুনিক বিশ্ব সাহিত্যত আৰম্ভ হোৱা চুটিগল্পই বৰ্তমান সকলো দিশৰ পৰাই পৰিপূৰ্ণৰূপ পৰিগ্ৰহণ কৰিছে। ফৰাচী সাহিত্যৰ এগৰাকী বিখ্যাত সাহিত্যিক হ'ল মোপাছা। তেওঁৰ গল্প সমূহৰ মাজেৰে সমাজৰ দুখ-দুৰ্দশা, শোষণ বঞ্চনাৰ ছবি, নাৰী মনৰ মানসিক অভিব্যক্ত আদি নিভাজ ৰূপত ফুটাই তোলা হৈছে। আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনত ফৰাছী সাহিত্যৰ আগশাৰীৰ গল্পকাৰ গী দ্য মোপাছাঁ তেওঁৰ চুটিগল্পত নাৰী জীৱনৰ প্ৰতিফলন ঘটা পৰিলক্ষিত হৈছে। আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনত মোপাছাৰ নেকলেচ, এ ভ্যাগবণ্ড, আন্দাৰ দ্য উদ্, 'এগেইনষ্ট দ্যা টাইড', অলচ ইনিউটাইল বিউটি, এ ভ্যাগবণ্ড 'এগেইনষ্ট দ্যা টাইড', 'অলচ ইনিউটাইল বিউটি' দ্য মাদাৰ অব মনষ্টাৰ্ছ, লিলি লালা শীৰ্ষক গল্পৰ মাজেৰে নাৰী জীৱনৰ প্ৰতিফলন কোনবোৰ দিশ উন্মোচিত হৈছে সেই সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰা হৈছে।

১.০০ অৱতৰণিকা ঃ

সাহিত্যৰ বিভিন্ন শাখাৰ ভিতৰত আটাইতকৈ জনপ্ৰিয় শিল্পৰূপ শাখাটোৱেই হৈছে চুটিগল্প। চুটিগল্প বংশ গৌৰৱত বৰ প্ৰাচীন নহয়। ঊনবিংশ শতিকাতহে পাশ্চাত্যত ইয়াৰ জন্ম হৈছিল। অৰ্থাৎ ইউৰোপত জন্মলাভ কৰা চুটিগল্প সম্পূৰ্ণৰূপে আধুনিক যুগৰ সৃষ্টি। সেয়া হলেও প্ৰাচ্য পাশ্চাত্য উভয়তে অতি পূৰণি কালৰ পৰাই সাধুকথাৰ ধাৰা এটা চলি আহিছিল আৰু এই ধাৰাটোতে আধুনিক চুটিগল্পৰ বীজ নিহিত হৈ থকা বুলি কোৱা হৈছে।

ঊনবিংশ শতিকাত আৰম্ভ হোৱা চুটিগল্পই সময়ৰ গতিত ন-ন বিষয় বস্তু আংগিক ইত্যাদিৰে সুসজ্জিত হৈ বৰ্তমান এক সমৃদ্ধিসালী ৰূপ পৰিগ্ৰহণ কৰিছে। কল্পনা আৰু যুক্তিনিষ্ঠাৰ উভয়তে সংমিশ্ৰণত চুটিগল্পৰ বিষয়স্তুৰ মাজেৰে উদ্ভাসিত হৈছে মানৱ জীৱনৰ ভিন ভিন বাস্তৱতা। মানৱ মনৰ অন্তৰ্নিহিত বিভিন্ন ক্ৰিয়া - প্ৰতিক্ৰিয়াৰ প্ৰকাশৰ জৰিয়তে মনঃস্তাত্বিক দিশটোও সাৰ্থক ৰূপত সাম্প্ৰতিক বিভিন্ন গল্পৰ মাজেৰে উদ্ভাসিত হৈ উঠা পৰিলক্ষিত হৈছে।

মানুহৰ জীৱনৰ অৰ্থাৎ মানৱ মনৰ ভিন ভিন মানসিক স্তৰৰ মানসিক জগত খনৰ সম্ভেদ দি নৰ-নাৰীৰ জৈৱিক বাসনা, দুখ-দুৰ্দশা, শোষণ বঞ্চনাৰ

ছবি নাৰী মনৰ মানসিক অভিব্যক্তি আদি নিভাজ ৰূপত ফুটাই তোলা হৈছে ।

আমাৰ অসমীয়া গল্প সাহিত্যত নাৰী বিষয়ক লৈ গল্প ৰচনা হৈছে যদিও পাশ্চাত্য সাহিত্যৰ নাৰী বিষয়ক গল্প ৰচনা হোৱা তেনেকৈ দেখা পোৱা নাযায় যদিও তাকৰ। পাশ্চাত্য সাহিত্যৰ বিখ্যাত গল্পকাৰ গী দ্য মোপাছাই তেওৰ প্ৰায় সংখ্যক গল্পৰ মাজেৰে সমাজৰ দুখ-দুৰ্দশা, শোষণ, বঞ্চনাৰ ছবি, নাৰী মনৰ মানসিক অভিব্যক্তি আদি নিভাজ ৰূপত ফুটাই তোলা হৈছে। 'মোপাছাৰ চুটিগল্পত নাৰীজীৱনৰ প্ৰতিফলন' শীৰ্ষক আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনৰ মাজেৰে মোপাছাৰ নিৰ্বাচিত কেইটামান গল্পৰ মাজেৰে নাৰীৰ বিভিন্ন দিশ কেনেদৰে প্ৰতিফলিত হৈছে সেই সম্পৰ্কে বিশ্লেষণ কৰা হ'ব।

২.০০ গৱেষণা আলোচনা পত্ৰৰ পদ্ধতি ঃ

"মোপাছাৰ চুটিগল্পত নাৰী জীৱনৰ প্ৰতিফলন" শীৰ্ষক আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনত মূলত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হ'ব যদিও ঠাই বিশেষে কিছু পৰিমাণে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰো সহায় লোৱা হ'ব।

৩.০০ গৱেষণা পত্ৰৰ পৰিষৰ ঃ

আমাৰ "মোপাছাৰ চুটিগল্পত নাৰী জীৱনৰ প্ৰতিফলন" শীৰোনামৰ গৱেষণা পত্ৰখনৰ পৰিসৰৰ ভিতৰত মোপাছাঁৰ ছয়টা গল্প লোৱা হৈছে। এই গল্প সমূহৰ মাজেৰে কেনেদৰে নাৰীৰ সহজাত প্ৰবৃতি, ইচ্ছা-অনিচ্ছা, নাৰীৰ অধিকাৰ প্ৰেম প্ৰণয়, ঈৰ্ষা অসূয়া আদি নাৰী হৃদয়ৰ নানান অভিব্যক্তি কেনেদৰে প্ৰকাশিত হৈছে তাকে আলোচনা কৰা হব।

৪.০০ মূল বিষয়বস্তুৰ আভাসঃ

ঊনবিংশ শতিকাৰ ফৰাচী ফৰাচী গল্প সাহিত্যত এটি চিনাকী নাম গী দ্য মোপাছা। তেওঁৰ জন্ম ১৮৫০ খৃষ্টাব্দৰ ৫ আগষ্ট তাৰিখে ফ্ৰান্সৰ নৰ্মাণ্ডি চহৰত। পিতৃৰ নাম গুস্তাভ দ্যা মোপাছাৰ মাতৃৰ নাম লৰালি পয়টিভান। তেওঁৰ মৃত্যু হয় ৬ জুলাই ১৮৯৩ খৃষ্টাব্দত। মাত্ৰ ৪৩ বছৰ বয়সতেই এই প্ৰতিভাৱান সাহিত্যক জনে মৃত্যু বৰণ কৰে। তেওঁ এমিল জোলাৰ দ্বাৰা সম্পাদিত 'Soirees de Medan' ত মোপাছাঁই পোন প্ৰথম বাৰৰ বাবে 'Boul de Suif' (১৮৮০) নামৰ গল্পৰ জৰিয়তে ফৰাচী সাহিত্য জগতত গল্পকাৰ ৰূপে পাতনি মেলে। ফ্লৱেয়াৰৰ উত্তৰ সাধক হিচাপে তেওঁৰ গল্প সমুহে বাস্তৱবাদ আৰু প্ৰকৃতিবাদৰ ধাৰা বহন কৰিছে। তেওঁৰ গল্প সমুহৰ মাজেদি নৰ্মাৰ্ণ্ডিৰ সৰ্বসাধাৰণ মানুহৰ সুখ-দুখ, হাঁহি-কান্দোন, ভয়-শংকা, মানৱতাবোধ আদি বিভিন্ন দিশ প্ৰতিফলিত হৈছে। মানৱ জীৱনৰ সকলো দিশ নিৰ্মোহভাবে অংকন কৰি মোপাছাই সত্যক প্ৰতিষ্ঠা কৰিছে তেওঁৰ গল্প সমুহৰ মাজেৰে।

৫.০০ মোপাছাৰ চুটিগল্পত নাৰী জীৱনৰ প্ৰতিফলন ঃ

ফৰাচী সাহিত্যৰ ঊনবিংশ শতিকাৰ এগৰাকী শক্তিশালী সাহিত্যিক হ'ল - গী দ্য মোপাছা। মোপাছাৰ সম্পুৰ্ণ নাম হ'ল - আলি ৰণি আলবেয়াৰ গী দ্য মোপাছাঁ। মোপাছাঁৰ সাহিত্যিক জীৱন সমৃদ্ধশালী আছিল যদিওঁ তেওঁৰ বাস্তৱিক জীৱন কিন্তু অতি সংঘৰ্ষময় আছিল। কঠোৰ বাস্তৱ, যুদ্ধৰ ভয়াবহতা, পাৰিবাৰিক কাৰুণ্য, জীৱনৰ অস্থিৰতা আদি বিভিন্ন দিশে তেওঁৰ ব্যক্তিগত জীৱনটো জুৰুলা কৰি তুলিছিল।

মোপাছাই বহুতো চুটিগল্প ৰচনা কৰিছিল। তেখেতৰ প্ৰায়বোৰ গল্পতে নাৰীয়ে মূখ্য চৰিত্ৰ ৰূপে উপস্থাপিত হৈছে। এইক্ষেত্ৰত নেকলেচ, এ ভ্যাগৰণ্ড, এগেইনষ্ট দ্য টাইড আন্দাৰ দ্য উৰ্ড অলচ ইনিচাইল বিউটি, আন্দাৰ দ্য উৰ্ড, দ্য মাদাৰ অব মনষ্টাৰ্ছ, লিলি লালা আদি বিশেষভাবে উল্লেখযোগ্য। নাৰীৰ সহজাত প্ৰবৃত্তি, ইচ্ছা, অনিচ্ছা, নাৰীৰ অধিকাৰ, প্ৰেম প্ৰনয়, ঈৰ্ষা অসূয়া আদি নাৰী হৃদয়ৰ নানান অভিব্যক্তি এই গল্প সমুহৰ জৰিয়তে প্ৰকাশিত হৈছে।

নেকলেছ, মোপাছাৰ এক উৎকৃষ্ট গল্প। গল্পটো প্যাৰীৰ মধ্যবিত্ত এগৰাকী নাৰীৰ জীৱনৰ আধাৰত ৰচনা কৰা হৈছিল। গল্পৰ কাহিনী অতি দুখজনক ভাবে প্ৰকাশ কৰিছে। গল্পকাৰে মধ্যবিত্ত নাৰীৰ আশা-আকাংক্ষা, উচ্চ অভিলাষ, কল্পনা-বিলাসিতা আদি অতি নিখুত ভাবে উপস্থাপন কৰিছে। গল্পটোৰ মূখ্য চৰিত্ৰ মেডাম লোৱাজেলৰ জৰিয়তে। কাহিনী মতে মেডাম লোৱাজেল এগৰাকী সুঠাম গাভৰু চৌখিন আধুনিকতাবাদী এটি চৰিত্ৰ।

লোৱাজেলে এজন মধ্যবিত্ত কেৰাণীৰ সৈতে বিৱাহ-পাশত আৱদ্ধ হৈছিল। কেৰাণী স্বামীয়ে লোৱাজেলক এক ঐশ্বৰ্যশালী অভিজাত্যপূৰ্ণ জীৱনৰ সকলো সা-সুবিধা দিব পৰা নাই যদিওঁ শান্তিপূৰ্ণভাৱে সীমিত পৰিসৰতে জীৱনৰ আনন্দ লাভ কৰিছে। কিন্তু মাজে-মাজে মেডাম লোৱাজেলে দৰিদ্ৰতাই কোঙা কৰা জীৱনটোক লৈ চিন্তিত হৈ পৰে আৰু এগৰাকী নাৰী হিচাপে সাজ-পাৰ, আ-অলংকাৰৰ প্ৰতি দুৰ্বলতা থকাটো স্বাভাৱিক কথা।

"তেওঁ প্ৰায়েই ভাবে কাৰ্পেটেৰে ঢকা সু-সজ্জিত এটি কোঠাত বহি জলমলীয়া পোচাক, আ-অলংকাৰ পিন্ধি অন্তৰঙ্গ বন্ধু-বান্ধৱ সকলৰ লগত যদি কথাৰ মহলা মাৰিব পাৰিলেহেতেন তেতিয়াহ'লে ধুনীয়া পোছাক পিন্ধা সুন্দৰ পুৰুষবোৰ তেওঁৰ ঘৰলৈ সঘনে অহা যোৰা কৰিলেহেতেন নিজকে ধন্য মনাব পাৰিলেহেতেন।" (নেকলেছ ২১৩)

এই চৰিত্ৰটোৰ বৰ্ণনাৰ পৰা স্বচ্ছন্দা ভোগ বিলাসৰ প্ৰতি হাবিয়াস তথা ভোগবিলাসপূৰ্ণ জীৱনৰ অপ্ৰাপ্তিয়ে নাৰীৰ মনলৈ কঢ়িয়াই অনা অসন্তোস আদি যথাৰ্থ ৰূপত ফুটি উঠিছে গল্পটিত। নাৰী এগৰাকীৰ সাংসাৰিক জীৱনত অভাৱ অনাটন কেনেদৰে নাৰীৰ মনত ক্ষোভ, মানসিক যন্ত্ৰণা, হীনমান্যতাবোধৰ জন্ম দিয়ে, সেয়াও মেডাম লোৱাজেলৰ চৰিত্ৰৰ মাজেদি গল্পকাৰে এনেদৰে দাঙি ধৰিছে -

"আৰু? তেওঁৰ একমাত্ৰ পৰিচাৰিকা ব্ৰঁতোক দেখি তেওঁৰ অন্তৰৰ অন্তঃস্থলত কামনা বাসনাৰ উদ্ৰেক হয়। ভিতৰি ভিতৰি জ্বলি পুৰি মৰে। দামী আচ-বাব পত্ৰৰে সজোৱা চিক্-চিকীয়া মজিয়াৰ এটি ঘৰৰ সপোনে মাজে মাজে তেওঁক বিষন্ন কৰি তোলে। আন তিৰোতাৰ গহনা-পাতি দেক্ষিঠক একেদৰে, মোপাছাঁৰ "এ ভ্যাগবণ্ড" নামৰ গল্পটিৰ মাজেৰেও সমাজৰ নিম্ন শ্ৰেণীৰ ছবি প্ৰকাশিত হৈছে। এ ভ্যাগবণ্ড নামৰ গল্পটিৰ মূখ্য চৰিত্ৰ হল ৰাদেল নামৰ তেজাল ডেকা, কৰ্মহীনতাৰ অভাৱত সমাজৰ উচ্চশ্ৰেণীৰ পৰা প্ৰতাৰিত হৈ কিদৰে জেল হাজোতলৈ যাব লগা হল তাৰ কৰুণ ছবি গল্পটোৰ মাজত প্ৰকাশিত হৈছে। ৰাদেল সাতাইশ বছৰীয়া এজন শক্তিবান সফল যুৱক আৰু পেচাত তেওঁ কাঠমিস্ত্ৰি। কিন্তু, কৰ্মহীনতাই তাৰ জীৱনৰ গতি স্থবিৰ কৰি দিয়ে আৰু কৰ্মসংস্থাপনৰ বাবে চহৰলৈ আহিবলৈ বাধ্য হয়। চহৰলৈ আহিও ৰাদেলে কাম নোপোৱাত ভিক্ষা মাগি খাদ্য আহৰণ কৰিব লগা হৈছে, আনহে নালাগে মেয়ৰৰ গালি গালাজ আৰু পুলিচ বাহিনীৰ মাৰ-ধৰো খাব লগা হৈছিল, ৰাদেল খাদ্যৰ অভাৱৰ বাবে পুলিচৰ লোকক তেওঁক জেললৈ নিবলৈ কাতৰ ভাৱে প্ৰাৰ্থনা জনাইছে, যাতে তেওঁ জেলত হলেও কিছু খাদ্য পাবলৈ সক্ষম হয়। ৰাদেলে বাট পথত যাকে লগ পাইছে তেওঁকেই সহায়ৰ বাবে কাতৰ আহবান জনাইছে। বাটৰুৱা এগৰাকীয়ে ৰাদেলক অতি বেয়া ব্যৱহাৰ কৰি কৈছিল যে-

"শুন, ঐ ধুৰন্দৰ চেংৰা, শুন, গাৱলৈ সোমোৱা প্ৰৱেশ পথটোৰ মুখতেই এখন জাননী আঁৰি থোৱা দেখা পাবি তাত লিখা আছে এই অঞ্চলত ভিক্ষা বৃত্তি নিষিদ্ধ। মই এই অঞ্চলৰ মেয়ৰ। তই এই মুহূৰ্ততে এই অঞ্চল এৰি নগলে মই তোক জেললৈ পঠোৱাৰ ব্যৱস্থা কৰিবলৈ বাধ্য হম। (এ ভ্যাগবণ্ড ১৪)

-----"আপুনি মোক জেললৈ পঠোৱৰ ব্যৱস্থাতোকেই কৰক। তাত যিমানেই কষ্ট নহওক কিয় অন্ততঃ উপবাসে মৰিব লগা নহ'ব।" (এ ভ্যাগবণ্ড ১৪)

সেই সময়ৰ সমাজখনত ঘটি থকা এনেবেৰে কথাই এচাম দুখীয়া দৰিদ্ৰৰ আৰ্তনাদৰ জীৱন্ত ছবি দাঙি ধৰিবলৈ সক্ষম হৈছে এই গল্পটিত।

আকৌ, আন্দাৰ দ্য উদ্, গল্পত নাৰী হৃদয়ৰ ৰহস্যঘন ভাৱ অনুভূতি, স্মৃতি ৰোমন্থন, প্ৰেমৰ নিবেদন আদি বিষয়সমূহ প্ৰকাশিত হৈছে গল্পটিত। এগৰাকী বৃদ্ধাই নিজৰ জীৱনৰ পুৰণিকলীয়া প্ৰেমৰ স্মৃতি ঘূৰাই অনাৰ বাবে বৃদ্ধ প্ৰেমিকৰ ওচৰত প্ৰেম নিবেদন কৰিছে। কাহিনীটোত হাস্যৰসৰ উদ্ৰেক নঘটা নহয়। নিকোলাচ বুৰেন এ প্যাৰিৰ ৰুঁ দ্য মাৰতামত কাপোৰৰ ব্যৱসায় কৰিছিল আৰু তেওঁৰ ব্যৱসায় সূত্ৰে এগৰাকী কিশোৰীৰ লগত পৰিচিত হৈ বিবাহ পাশত আবদ্ধ হৈছিল কিন্তু সেই সময়ত তেওঁলোকৰ মাজত সিমান আন্তৰিকতা নাছিল। বিয়াৰ বহু বছৰ পিছত তেওঁলোকৰ বয়স যেতিয়া প্ৰায় যাঠিৰ ওচৰ চাপিছিল হঠাত বুৰেণ পত্নীয়ে বুৰেনৰ ওচৰত প্ৰেম নিবেদন কৰি অতীতৰ প্ৰেমক জাগ্ৰত কৰাৰ বাবে এখন ঘন হাবিলৈ সোমাই গল আৰু তাতে বন বিষয়াৰ দ্বাৰা আবদ্ধ হব লগা পৰিস্থিতিৰ সৃষ্টি হল। তেতিয়া বুঢ়া নিকোলাচ বুৰেনে তেওঁৰ সহধৰ্মিণীৰ ফালে চাই ক্ষোভেৰে ক'লে-

"এতিয়া পালা মজাটো পৰিস্থিতি চন্তালি লোৱা। কথাটো এতিয়া মগজুত সোমাইছে নে নাই? ঘেন ঘেনাই পেন-পেনাই থাকি মোক এই বিপদত পেলালা, নিজেও বন্দি হলো। লাজত মোৰ নাক-কাণ কটা গ'ল। এই বয়সত অশোভন আচৰনৰ বাবে আদালতৰ কাঠগড়াত ঠিয় হব লাগিব। সন্মান বচাব লাগিলে ব্যৱসায় এৰি কৰবালৈ গৈ মূৰ গুজিব লাগিব।" (আন্দাৰ দ্য উদ্ ৬৭২)

- মোপাছাৰ 'এগেইনষ্ট দ্যা টাইড' এটি নাৰী ভাৱনা সমৃদ্ধ অন্যতম শ্ৰেষ্ঠ গল্প। এই গল্পটোৰ আৰম্ভনিৰ পাতনিতে গল্পকাৰে পাঠক সমাজৰ আগত নাৰী সম্পৰ্কীয় ধাৰণাৰ সম্যক আভাস দিছে এনেদৰে-

"এটা কথা জানিব বন্ধু, নাৰীৰ ক্ষেত্ৰত চল্লিছ বছৰ বয়সটো অতি ভয়ংকৰ হৈ উঠে? অতি মহান সতী-সাধ্বী মহিলাৰো যে কিমান বেপেৰোৱা হৈ উঠে। কাম পিপাসা বাঢ়োতে বাঢ়োতে একেবাৰে চৰম সীমাত উপনীত হয়। এই মহিলা গৰাকীয়ে বৰ্তমান একেই জ্বালাত বন্ধ হৈ আছে। ('এগেইনষ্ট দ্য টাইড ২৮৮)

ইয়াত গল্পকাৰে নাৰী মনৰ কামনা, বাসনা, আভ্যন্তৰীণ মনৰ অভিব্যক্তি প্ৰকাশ কৰিছে। উক্ত গল্পটোৰ মূখ্য চৰিত্ৰ মাদাম পয়কৰ এগৰাকী উদভ্ৰান্ত নাৰী এওঁৰ নিজৰ কামনা বাসনাক সিদ্ধি কৰাৰ বাবে চৰণলাভিৰ ওচৰত নিজকে আত্মসমপৰ্ণ কৰিছে। ইয়াত গল্পকাৰে পাঠক সমাজক এইটো কথাকে বোধগম্য কৰিব বিচাৰিছে যে- এগৰাকী নাৰীয়ে নিজৰ জৈৱিক কামনা বাসনাক স্বৰূপাৰ্থ কৰাৰ বাবে কিদৰে নিজৰ দেহ, মন সম্ভ্ৰম খ্যাতি মৰ্য্যাদা বিসৰ্জন দিব পাৰে' গল্পটিৰ মাজেৰে প্ৰকাশ পাইছে।

আনহাতে; মোপাছাই তেওঁৰ গল্পৰ মাজেৰে নাৰী জীৱনৰ গভীৰ উপলব্ধিকও বৰ্ণনা কৰিছে। "অলচ ইনিউটাইল বিউটি গল্পটিত মোপাছাই নাৰীক সন্তান প্ৰসৱৰ একো একোটা যন্ত্ৰ বুলি অভিহিত কৰি আৰু এগৰাকী নাৰীৰ গৰ্ভধাৰণৰ লগত জড়িত হৈ থকা নাৰী গৰাকীৰ ইচ্ছা অনিচ্ছা আদি বিষয়সমূহ অতি বাস্তৱ ৰূপত তেওঁ এই গল্পটোত বৰ্ণনা কৰিছে। ইয়াত নাৰীৰ ওপৰত পুৰুষ সমাজৰ অন্যায়, অত্যাচাৰ আৰু প্ৰতাৰণাৰ ছবি প্ৰকাশিত কৰিছে। মিজ্ঞ কাউন্টে তেওঁৰ পত্নীৰ ওচৰত চলোৱা অমানসিক অত্যাচাৰৰ কথা গল্পটোত অতি জীৱন্ত ৰূপত প্ৰকাশিত হৈছে কাউটে পত্নীয়ে কৈছে যে--

"সকলোতকৈ ডাঙৰ কথা মোৰ একান্ত ইচ্ছাৰ বিৰুদ্ধে তুমি মোক বিয়া কৰাইছিলা। অস্বীকাৰ কৰিব নোৱাৰিবা টকাৰ জোৰেৰে মোৰ মা-দেউতাক বশ কৰিছিলা। শ শ টকা দি তুমি মোৰ শৰীৰটো কিনি লৈছিলা বিয়াৰ পিছৰ পৰাই তুমি মোৰ প্ৰতিঘৃণা মিশ্ৰিত ঈৰ্ষা পোষণ কৰি আহিছা, অস্বীকাৰ কৰিব পাৰিবা? কিহৰ ঈৰ্ষাত সকলোৱে মোৰ ৰূপ সৌন্দৰ্যৰ প্ৰশংসা কৰে, তাকে দেখি মোৰ প্ৰতি তোমাৰ ঈৰ্ষা হয়। আৰু তাৰ বাবেই তুমি সিদ্ধান্ত কৰি এটাৰ পিছত এটাকৈ মোৰ দ্বাৰা সন্তান জন্মই মোৰ চেহেৰা আৰু ৰূপৰ অৱনতি ঘটাবা।" (অলচ ইনিউটাইল বিউটি ১৪১)

কাউণ্ট পত্নীৰ ওপৰত মিজ্ঞ কাণ্টটে অমানসিক অত্যাচাৰ কৰিছিল আৰু তাইক সন্তান জন্ম দিয়া যন্ত্ৰলৈ পৰিণত কৰিছিল। ইফালে পন্তী কাউন্টেও অন্য পুৰুষৰ ঔৰসত সন্তান জন্ম দি মিজ্ঞ কাউণ্টক মানসিক আঘাত হানিছিল।

"দ্য মাদাৰ অৱ মনষ্টাৰ্ছ", মোপাছাৰ অন্য এটি গল্প। ক্ষেত পথাৰত কাম কৰা এগৰাকী দুৰ্ভগীয়া নাৰী পুৰুষৰ দ্বাৰা ধৰ্ষিতা হয়। এই দুৰ্ভগীয়া নাৰী গৰাকীয়ে অৱাঞ্চিত সন্তানক সমাজৰ পৰা লুকুৱাই ৰাখিবলৈ নিজৰ ওফন্দি উঠা পেটটো ৰছী এডালেৰে বান্ধি মাক হোৱাৰ আশা-আকাংক্ষাক নিৰ্মমভাৱে ধ্বংস কৰাৰ এক কৌশল বাছি লৈছিল যদিও সন্তানটি ভূমিষ্ঠ হয়, আৰু বিকলাংগ তথা দৈত্যকায়ৰূপে। নাৰীগৰাকীয়ে পিছৰ সময়ছোৱাত একেদৰেই সন্তান জন্ম দিছে সন্তান বিক্ৰী কৰি পোৱা ধনৰ আশাত --

"ছোৱালীজনীয়ে অৰ্থৰ লালসাৰ বলি হৈ আকৌ নতুনকৈ গৰ্ভত দৈত্য ধাৰণাৰ কাৰণে অতি উৎসাহী হৈ পৰিল। এইদৰেই তাই ধনী হৈ সমাজৰ উচ্চ শ্ৰেণীৰ মানুহৰ সৈতে ফেৰ মাৰিব আৰু শংকাহীন হৈ চলি থাকিব পাৰিব, এয়েই তাইৰ আশা।" (দ্য মাদাৰ অৱ মনষ্টাৰ্ছ ৫০৮)।

এই গল্পটিত মাতৃৰ মমতাৰ পৰিৱৰ্তে মাতৃৰ অন্য এক বিভৎস ৰূপৰ কথা উল্লেশ কৰা হৈছে।

মোপাছাঁৰ "লিলি লালা" গল্পটিৰ মাজেৰেও নাৰীমনৰ আভ্যন্তৰীণ যন্ত্ৰণা আৰু প্ৰতিহিংসাৰ ছবি দাঙি ধৰা হৈছে।

গল্পটোত পুৰুষ তান্ত্ৰিক সমাজৰ বৰ্বৰতাৰ ছৱি প্ৰকাশিত হৈছে। লিলি লালা এগৰাকী কম বয়সীয়া ধুনীয়া সুঠাম গাভৰু। সৰুকালতে তাই চাৰ্কাছ দলত বিক্ৰী হৈছিল। চাৰ্কাছ দলৰ যিজন মেনেজাৰ আছিল তাইৰ ওপৰত অমানৱীয়

"নাৰীয়ে যিবোৰ মোক্ষম অস্ত্ৰৰ দ্বাৰা পুৰুষ সকলক ধৰাশায়ী কৰে চলনা, চাতুৰী, কপটতা, মিছাকোৱা আদি আটাইবোৰকেই মই তাৰ ওপৰত প্ৰয়োগ কৰিবলৈ ধৰিলো।" (লিলি লালা ৫৯৯)

লিলি লালাই নিজৰ প্ৰেমৰ জালেৰে মেনেজাৰৰ পৰা সকলো ধন হস্তাগত কৰি অৱশেষত মেনেজাৰক বৰফত পেলাই ইমানদিনে কৰি অহা অত্যাচাৰৰ পোটক ললে' মেনেজাৰৰ মৃত্যুৰ বাবে লিলি লালা অনুশোচিত হোৱা নাই বৰং মেনেজাৰৰ দৰে মানুহৰ বাবে জীৱন বিনষ্ট হোৱা এগৰাকী নাৰীৰ হৃদয়ৰ ক্ষোভ জ্বালা যন্ত্ৰনা অতি স্পষ্টভাৱে প্ৰকাশিত হোৱা দেখা পোৱা গৈছে-

"পৃথিৱীত সততাৰ মূল্য কিমান? গচপেলে যে শত্ৰুক মাৰ্জনা কৰাৰ উপদেশ দিছে তাৰ কিয়েইবা অৰ্থ থাকিব পাৰে?" (লিলি লালা ৫৯৯)

এনেদৰে আলোচনা কৰিলে দেখা যায় যে মোপাছাৰ বেছিভাগ গল্পৰ জৰিয়তে গল্পকাৰ পাঠক সমাজৰ আগত দাঙি ধৰিছে নাৰীৰ বিভিন্নৰূপ তথা ভাৱ অনুভূতিৰ বিচিত্ৰতা। তেওঁৰ গল্পত প্ৰকাশিত নাৰী চৰিত্ৰ তথা নাৰী মনৰ অভিব্যক্তি কেৱল ফৰাছী সমাজৰ নাৰীৰেই মনৰ কথা নহয়, সকলো দেশৰ নাৰীৰ ক্ষেত্ৰত গ্ৰহণযোগ্য এক সাৰ্বজনীন নাৰীৰ অব্যক্ত হৃদয়বাৰ্তা।

৬.০০ উপসংহাৰঃ

বাস্তৱ সমাজখনৰ তদানীন্তন পৰিৱেশ পৰিস্থিতিৰ পৰাই, প্ৰায় প্ৰতিটো গল্পৰ বিষয়বস্তু সংগ্ৰহ কৰা মোপাঁছাৰ গল্পৰ মাজেৰে নাৰী জীৱনৰ প্ৰতিফলন সাৰ্থক ৰূপত ৰূপায়িত হৈ উঠিছে বুলি আমি ভাবিব পাৰো। তেওঁ নাৰীৰ বিভিন্ন দিশ, বিভিন্ন চৰিত্ৰৰ জৰিয়তে যথেষ্ট বাস্তৱ সন্মত ৰূপত ৰূপায়িত কৰিছে। তেওঁ যিদৰে সমসাময়িক সমাজখনৰ প্ৰায় প্ৰতিটো দিশেই গল্পৰ মাজেৰে প্ৰস্ফুটিত কৰি তুলিছে, সেইদৰে গল্পসমূহৰ মাজেৰে নিজস্ব জীৱন দৰ্শনো সফলভাৱে উদ্ভাসিত কৰিছে। নাৰীৰ বিভিন্ন দিশ অথবা নাৰী জীৱনৰ প্ৰতিফলনৰ ভিন্ন দিশ সমূহ অতি সাৰ্থকভাৱে গল্পৰ মাজেৰে বিশ্লেষণ কৰি তাৰ মাজেৰে পাঠক সমাজকো সজাগ কৰি তোলাৰ তেওঁ এক প্ৰয়াস কৰিছে। ❑

প্ৰসঙ্গ সুত্ৰঃ

কুমাৰ, প্ৰদীপ (অনু)। মোপাছাঁৰ গল্প, ষ্টুডেন্টচ্ ষ্ট'ৰচ। গুৱাহাটীঃ প্ৰথম প্ৰকাশ। ২০১৪ নৱেম্বৰ। মুদ্ৰিত
দাস, হৰেণ (অনু)। মোপাছাঁৰ গল্প সমগ্ৰ। গুৱাহাটী। গুৱাহাটী পূৰ্বাঞ্চল প্ৰকাশ। ২০১৩ মুদ্ৰিত
কলিতা, অমৰেন্দ্ৰ। পাশ্চাত্য সাহিত্য প্ৰকাশকঃ কিতাপ ঘৰ। ২০০৬। মুদ্ৰিত
দাস, নাৰায়ন, দাস, পৰমানন্দ (সম্পা.) অসমীয়া সাহিত্যত পাশ্চাত্যৰ প্ৰভাৱ। চন্দ্ৰ প্ৰকাশক। ২০১৪। মুদ্ৰিত
দত্ত, উদয়। চুটিগল্প। অসম সাহিত্য সভা। চন্দ্ৰকান্ত সন্দিকৈ ভৱন, যোৰহাত-১। ১৯৯৬ মুদ্ৰিত

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

স্বাধীনতা সংগ্ৰামী তিৰা শ্বহীদ হেমৰাম পাতৰ ঃ এক ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়ন

ড° মৌচুমী বৰদলৈ হাজৰিকা

অধ্যাপিকা, অসমীয়া বিভাগ
কৰ্মশ্ৰী হিতেশ্বৰ শইকীয়া মহাবিদ্যালয়
ছয়মাইল, গুৱাহাটী-৭৮১০২২
৯৮৫৪০২০০২৬,
৮৬৩৮৬৮২৯০৬
mowmi18@gmail.com

আৰম্ভণি ঃ

বিশ্বৰ ইতিহাসত ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ বৰ্ণিল ইতিহাসে গুৰুত্বপূৰ্ণ স্থান ধাৰণ কৰি আহিছে। ভাৰতৰ কোটি কোটি জনগণৰ আত্মবলিদানৰ বীৰগাঁথাই মুক্তি সংগ্ৰামৰ ইতিহাসত এক মচিব নোৱাৰা সাঁচ ৰাখি গৈছে। ইংৰাজ শাসনৰ দাসত্বৰ পৰা মুক্ত হ'বলৈ ভাৰতবাসীয়ে যি অহিংসাত্মক স্বাধীনতা সংগ্ৰাম নিৰ্বিবাদে চলাই নিছিল, তাৰ মূলমন্ত্ৰ আছিল মহামানৰ মহাত্মা গান্ধীৰ লগত। পৰাধীনতাৰ বাঘজৰী ছিঙি স্বাধীন ভাৰত গঢ়িবলৈ যাওঁতে গান্ধীজীয়ে এচাম শিক্ষিত ভাৰতীয় যুৱকৰ সহায় ল'বলগা হৈছিল। বৃটিছৰ শাসন চলি থকা সময়ছোৱাত বৃটিছৰ বিৰুদ্ধে ঐক্যমত গঢ়ি তুলি জনগণক সচেতন আৰু একত্ৰিত কৰাৰ বাবে পৰিস্থিতি তেনেই অনুকূল আছিল। তথাপিও দেশক সেই সময়ত পৰাধীনতাৰ পৰা মুক্ত কৰিবলৈ এচাম যুৱকৰ সহযোগিতাত এখন জাতীয় মঞ্চ গঠনৰ প্ৰয়োজনীয়তা আহি পৰিল। এই ক্ষেত্ৰত ভাৰতৰ বিভিন্ন অঞ্চলত গঢ়ি উঠা বিভিন্ন ধৰণৰ সংস্থা আৰু ইউৰোপীয়ান ডিফেন্স এছ'চিয়েশ্যন, জাতীয় সংস্থাবোৰৰ অৱদান স্বীকাৰ কৰিবই লাগিব। কিন্তু ভাৰতৰ জাতীয় কংগ্ৰেছৰ জন্মত বিশেষভাৱে ল'বলগা এটা নাম হৈছে ভাৰতীয় সেৱা আয়োগৰ প্ৰাক্তন কৰ্মী আলান অক্টভিয়ান হিউম (Mr. Alam Octavian Hume) ৰ। *"হিউম নামৰ অৱসৰপ্ৰাপ্ত এই চৰকাৰী কৰ্মচাৰীজনে কলিকতা বিশ্ববিদ্যালয়ৰ স্নাতকসকলক তেওঁলোকৰ মানসিক, নৈতিক, সামাজিক আৰু ৰাজনৈতিক উৎকৰ্ষ সাধনৰ কাৰণে এটা সংস্থা গঠন কৰিবলৈ আহ্বান জনাইছিল।"* [১] সেই আহ্বান মৰ্মে বোম্বাইত এক্ষন প্ৰতিনিধিত্বমূলক সভা পাতি 'ভাৰতীয় জাতীয় কংগ্ৰেছ' নামকৰণ কৰি, ১৮৮৫ খ্ৰীষ্টাব্দত শুভাৰম্ভ কৰা হয়। সভাৰ প্ৰথমজন সভাপতি আছিল কলিকতাৰ উমেশ চন্দ্ৰ বেনাৰ্জী। পিছলৈ এই জাতীয় কংগ্ৰেছৰ গুৰি ধৰোঁতা আৰু সদস্যসকলেই ভাৰতৰ স্বাধীনতা আন্দোলনত আগভাগ লৈ দেশৰ বাবে উল্লেখনীয় বৰঙণি আগবঢ়ায় ইতিহাস ৰচি থৈ যায়। দেশৰ প্ৰান্তে প্ৰান্তে অগণন মুক্তিকামী জনতাই জাতীয় কংগ্ৰেছৰ হৈ অলেখ ঘাত-প্ৰতিঘাত অতিক্ৰম কৰি ১৯৪৭ চনৰ ১৫ আগষ্ট তাৰিখে স্বাধীন ভাৰতৰ জন্ম দিলে।

স্বাধীনতা সংগ্ৰামত মধ্যঅসমৰ ভূমিকা ঃ

ভাৰতৰ জাতীয় কংগ্ৰেছৰ আৰম্ভণিৰ ইতিহাসে কেৱল প্ৰাদেশিক স্তৰতেই নহয়, সমগ্ৰ ভাৰত তথা বিশ্বৰ ইতিহাসত নিঃসন্দেহে এক গুৰুত্বপূৰ্ণ স্থান দখল কৰি আহিছে।

ভাৰতৰ পুৰণি ইতিহাস আৰু আধুনিক নৱ-ভাৰত প্ৰতিষ্ঠাত এই জাতীয় কংগ্ৰেছে উল্লেখনীয় বৰঙণি আগবঢ়াইছে।

১৯১৯ চনত সংঘটিত হোৱা জালিয়ানাৱালাবাগৰ লোমহৰ্ষক হত্যাকাণ্ডৰ ঘটনাৰ পিছতে সমগ্ৰ ভাৰতবৰ্ষৰ জনসাধাৰণ বৃটিছ চৰকাৰৰ বিৰুদ্ধে ক্ষুণ্ণ হৈ পৰিল আৰু এই বিৰোধিতাৰ অগ্নিৰ ফিৰিঙতি আহি প্ৰান্তীয় প্ৰদেশ অসমতো পৰিছিল। ইয়াৰ পিছত ১৯২০ চনত নাগপুৰত বহা জাতীয় কংগ্ৰেছৰ মহাসভাই অসমৰ প্ৰাদেশিক কংগ্ৰেছক এক সুকীয়া মৰ্যদা প্ৰদান কৰে। ১৯২১ চনৰ গান্ধীজীৰ অসহযোগ আন্দোলন, ১৯৩০ চনত আইন অমান্য আন্দোলন আৰু ১৯৪২ চনৰ ভাৰত ত্যাগ আন্দোলনৰ চৌৰে প্ৰত্যেক ভাৰতীয়কে 'তৰিলে দেশ মৰিলে স্বৰ্গ', 'Do or die', 'কৰেঙ্গে ইয়া মৰেঙ্গে' মন্ত্ৰেৰে উদ্বুদ্ধ হৈ বৃটিছ প্ৰশাসনৰ ভেটি কঁপাই তুলিলে। অসমতো জনসাধাৰণে 'কানি বৰবিহ বন্ধ'ৰ দৰে আঁচনি লৈ বিদেশী বস্ত্ৰ বৰ্জন, স্বদেশী গ্ৰহণ আদিৰে পূৰ্ণৰূপত স্বদেশী আন্দোলনত জপিঁয়াই পৰিল।

জালিৱানাৱালাবাগৰ হত্যাকাণ্ডৰ পিছতে অসমতো প্ৰতিহিংসাৰ জুই বাৰুকৈয়ে জ্বলি উঠিল। সেই সময়তে বৰপেটাৰ ওচৰৰ বৰনগৰত কৰ্মবীৰ নবীন চন্দ্ৰ বৰদলৈদেৱৰ আহ্বানক্ৰমে চন্দ্ৰনাথ শৰ্মাৰ সভাপতিত্বত হোৱা ৰাজহুৱা সভাত বৰদলৈদেৱৰ উদ্দাত্ত ভাষণে সমগ্ৰ অসমত বিপ্লৱৰ অগ্নিশিখা সিঁচি দিলে। মহাত্মা গান্ধীৰ জাতীয় কংগ্ৰেছত যোগদানৰ পিছতে ১৯২৬ চনত জাতীয় কংগ্ৰেছৰ অধিবেশন গুৱাহাটীৰ পাণ্ডুত অনুষ্ঠিত হয়। দেশভক্ত তৰুণৰাম ফুকন আছিল এই অধিবেশনৰ অভ্যৰ্থনা সমিতিৰ সভাপতি। মূল সভাখনত সভাপতিত্ব কৰিছিল শ্ৰীনিবাস আয়েংগাৰে। পাণ্ডু অধিবেশনৰ মূল মহাসভাত অধিবেশনৰ মণ্ডপ নিৰ্মাণ কৰা হৈছিল কেৱল হাতেৰে তৈয়াৰ কৰা খদ্দৰ কাপোৰেৰে। উল্লেখযোগ্য যে মণ্ডপৰ প্ৰয়োজনীয় গোটেইখিনি কাপোৰ নগাওঁ, মৰিগাওঁ অঞ্চলৰ শিপিনীয়ে যোগান ধৰিছিল। সেই বছৰত নগাওঁ অঞ্চলৰ শিপিনীৰ কথা সমগ্ৰ ভাৰততে বিয়পি পৰিছিল। এই কাৰ্যৰ বাবে মহাত্মা গান্ধীয়েও অসমৰ শিপিনীৰ ভূয়সী প্ৰশংসা কৰিছিল। উক্ত মহাসভাত নগাঁও অঞ্চলৰ বৃহৎসংখ্যক কংগ্ৰেছ কৰ্মীয়েও যোগদান কৰিছিল।

মধ্যঅসম অৰ্থাৎ অবিভক্ত নগাওঁ অঞ্চলক আহোম ৰাজত্বকালৰ পৰাই বিদ্ৰোহী ঠাই বুলি জনা গৈছিল। বুৰঞ্জীত ইয়াক 'ৰাজখেদা নগঞা' বুলি আখ্যা দিছিল। কেৱল আহোমৰ দিনতেই নহয় ইংৰাজৰ শাসনকালতো নগাওঁৰ ফুলগুৰি নামৰ ঠাইত পোনপ্ৰথম কৃষক বিদ্ৰোহৰ সূত্ৰপাত ঘটে। ১৮৬১ চনতে হোৱা বিখ্যাত দুৰ্ঘটনাটো নগাওঁৰ কৃষক ৰাইজ আৰু বৃটিছৰ নগাওঁ জিলাৰ এছিচটেন্ট কমিছনাৰ লেফটেনেন্ট ছিংগাৰ চাহাবৰ মাজত সংঘটিত হয়। ক্ৰমান্বয়ে বৰ্ধিত কৰ-কাটলৰ বোজা সহিব নোৱাৰি কৃষকে ইয়াক হ্ৰাস কৰিবলৈ বহুতো আবেদন জনোৱাৰ পিছতো সুফল নাপাই ফুলগুৰি নামৰ ঠাইত 'ৰাইজৰ মেল' পাতিবলৈ গোট খাইছিল। ছিংগাৰ চাহাবে কেইজনমান গোড়া চিপাহীৰে সৈতে সজ্জিত হৈ ৰাইজক আঁতৰি যাবলৈ নিৰ্দেশ দিয়ে। বিনাদোষত ৰাইজক অপমানিত কৰাত ৰাইজ উত্তেজিত হৈ পৰে। ৰাইজৰ মাজৰে বাহু কৈৱৰ্ত নামৰ লোকজনে ওলাই আহি ছিংগাৰ চাহাবক টাঙোনেৰে কোবাই ঘোঁৰাৰ পৰা বগৰাই দিয়ে। লগতে আৰু তিনিজন গোড়া চিপাহীৰো মৃত্য ঘটে। বৃটিছ চৰকাৰৰ মাজত এই ঘটনাৰ ভালকৈ প্ৰভাৱ পৰে। প্ৰতিক্ৰিয়া স্বৰূপে স্থানীয় গাঁৱৰ নিৰ্দোষী মানুহবোৰক ধৰি আনি অত্যাচাৰ কৰি ফাঁচী দিয়ে আৰু কেইজনমানক কলীয়াপানীলৈ প্ৰেৰণ কৰে।

এই আন্দোলনৰ পিছতো অলেখ আন্দোলনকাৰীয়ে দেশমাতৃৰ কাৰণে স্বদেশী আন্দোলনত জঁপিয়াই পৰি মৃত্যুক আঁকোৱালি লৈছিল। তেওঁলোকৰ মাত্ৰ দুজনমানৰ নামহে ইয়াত উল্লেখ কৰা হ'ল—'স্বামী কৃষ্ণানন্দ ব্ৰহ্মচাৰী, চন্দ্ৰমোহন বিশ্বাস, ধৰ্ম বৰঠাকুৰ, নৃপেন পাতৰ, পাহসিং কোঁৱৰ, মনুৰাম তামুলী, বাপাৰাম বৰকাকতি, মতিৰাম বৰা, সৰ্গসিং ডেকা, ভদ্ৰসেন ডেকা ইত্যাদি। ইয়াৰ বাহিৰেও আহিনা কোঁৱৰ, হৰকান্ত বৰকাকতি, ধনবৰ পাতৰ, ৰহমত আলি, যজ্ঞৰাম ডেকা, সোমনাথ ৰজা, দেৱাজুদ্দিন আহমেদ আদি লোকসকলে কাৰাবাস খাটি আৰু শাৰীৰিক নিৰ্যাতন ভোগ কৰি দেশমাতৃলৈ সেৱা আগবঢ়ায় গৈছে। উল্লেখযোগ্য যে এইখিনি লোকৰ নামৰ উপৰিও আৰু অজস্ৰ নগঞা লোকে আগবঢ়োৱা ত্যাগৰ বাবে অসমৰ বোধকৰো এই অঞ্চলতেই শ্বহীদৰ সংখ্যাও বাকীকেইখন জিলাৰ তুলনাত বেছি।

স্বাধীনতা সংগ্ৰামত ৰাৰপুজীয়া, চৰাইবাহী, বেবেজীয়া অঞ্চলৰ ভূমিকা ঃ

১৯২১ চনত গান্ধীজী অসমলৈ আহি গুৱাহাটী, তেজপুৰ, যোৰহাট, শিৱসাগৰ আদি বিভিন্ন ঠাইত অসহযোগ আন্দোলনৰ বাণী প্ৰচাৰ কৰিছিলহি। কটন কলেজৰ ছাত্ৰ মাটিৰাম ডেকা আৰু ৰে'ল বিভাগৰ কৰ্মচাৰী বীৰচিং ডেকা

আদি বাৰপূজীয়া ডেকাসকলে লগ হৈ চাকৰি আৰু শিক্ষা এৰি আহি জিলা কংগ্ৰেছ কমিটিৰ সৈতে আলোচনা কৰি বাৰপূজীয়া ৰাইজৰ সহযোগত বাৰপূজীয়া শাখা কংগ্ৰেছ কমিটি গঠন কৰিলে। প্ৰাচীন ৰজাগাঁৰৰ বৰনামধৰত জয়কান্ত মহন্ত (সভাপতি), মাটিৰাম ডেকা (সম্পাদক), বীৰচিং ডেকা আৰু থুলেশ্বৰ দাস আৰু বাৰপূজীয়াৰ প্ৰথম স্নাতক ৰূপমসিং দাসক অন্যতম সদস্য হিচাবে নিযুক্তি দি ২৫ জন সভ্যৰে শাখা কমিটি গঠন কৰি দিয়া হয়। এই সমিটিখনে বৰ্তমান নগাওঁ জিলাৰ পূবে বেবেজীয়া, জামুগুৰি, ফুলগুৰি, পশ্চিমে বৰ্তমানৰ মৰিগাওঁ জিলাৰ বঘৰা, জাগীভকত গাওঁ, ধৰমতুল, চৰাইবাহী আদি বিস্তৃত অঞ্চললৈ আন্দোলন সম্প্ৰসাৰণ কৰি তোলে। পুৰুষ-মহিলা নিৰ্বিশেষে ভাগে ভাগে বিভিন্ন ঠাইলৈ গৈ আন্দোলন আৰু স্বাধীনতা ৰণৰ বাতৰি দি গাওঁবাসীক জাতীয় কংগ্ৰেছৰ আদৰ্শতে অনুপ্ৰাণিত কৰি তুলিলে। মাদকদ্ৰব্য নিবাৰণ, খাদী বস্ত্ৰৰ প্ৰচলন, অস্পৃশ্যতা বৰ্জন, আইন অমান্য আন্দোলন বিদেশী বস্তু বৰ্জন আদি এই অসহযোগ আন্দোলনৰ অংশ আছিল।

১৯২৬ চনত পাণ্ডু কংগ্ৰেছৰ ৪১তম বাৰ্ষিক অধিবেশনলৈ বাৰপূজীয়া শাখা কংগ্ৰেছৰ পৰা বীৰচিং ডেকা, দেহেজুৰ ডেকা দলৈ, ডম্বৰুধৰ বৰা, শিৰৰ নলুং, থুলেশ্বৰ শৰ্মা, মহম্মদ আলীকে আদি কৰি ৭ জন সেৱকক পঠোৱা হৈছিল। এই সকলো ডেকা বাৰপূজীয়া শাখাৰ অন্তৰ্গত টাঙোনমৰা, কুঁহিগুৰি, গোসাঁই বড়ী, জালুগুটি আদি প্ৰাথমিকৰ পৰা পঠোৱা হৈছিল। স্বাধীনতা সংগ্ৰামী তৰুণৰাম ফুকনৰ তত্বাৱধানত পাণ্ডু কংগ্ৰেছলৈ নগাওঁ অঞ্চলৰ শিপিনীয়ে পঠোৱা ২৫০ খন কাপোৰৰ ১৫০ খনেই বাৰপূজীয়াৰ পৰা তৈয়াৰ কৰি পঠাইছিল।

১৯৩০ চনৰ আইন অমান্য আন্দোলনত এই অঞ্চলৰ লোকসকলে গান্ধীজীৰ নেতৃত্বত ধৰ্মঘট, শোভাযাত্ৰাৰ লগতে পূৰ্ণৰূপত জঁপিয়াই পৰিছিল। একেৰাহে ২৫ দিন ধৰি কানি নিবাৰণৰ উদ্দেশ্যে কানি দোকানৰ আগত পিকেটিং কৰি 'কানিয়াসকলক কানি নিকিনিবলৈ, কানি নাখাবলৈ আৰু দোকানীসকলক কানি নেবেচিবলৈ অনুৰোধ কৰিছিল। এই কাৰ্যত আন বহুতৰ লগত বাৰপূজীয়াৰ কংগ্ৰেছ কৰ্মীসকলে আগভাগ লৈছিল। এই কাৰ্য সফল হোৱাত মৰিগাঁৱৰ থানাৰ দাৰোগাই নায়ক বীৰচিং ডেকাক মাতি নি বেচ উৎসাহ যোগাইছিল।" (অজস্ৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰামী বীৰৰ নাম উল্লেখ কৰা হোৱা নাই)।

"স্বাধীনতা আন্দোলনত অন্যতম নেতা সোণাৰুগুৰিৰ বেণুধৰ ডেকা, ভকতগাঁৱৰ বাপন ডেকা, প্ৰিয়নাথ বৰদলৈ আদি বাৰপূজীয়া শাখা কমিটিৰ কামত ওতঃপ্ৰোতভাৱে জড়িত আছিল। ইয়াৰে মাজত বেণুধৰ ডেকা জাগীৰোডৰ ওচৰত পানীখাইটীত (পানীখাইটী) ৰে'ল বগৰোৱা কাৰ্যত জড়িত থকা অন্যতম কাণ্ডাৰী আছিল।

সদৌ অসম ভিত্তিত অনুষ্ঠিত 'গান্ধী সপ্তাহ'ৰ যঁতৰত সূতা কটা প্ৰতিযোগিতা ১৯৪২ চনৰ শ্বহীদ, আমাৰ আলোচনাৰ মূল হোতা হেমৰাম পাতৰৰ খুড়ীয়েক কোটঙী লালুঙনীয়ে প্ৰথম স্থান লাভ কৰি সোণৰ পদক পাইছিল। বেবেজীয়াৰ ওচৰৰ আন এগৰাকীয়ে দ্বিতীয় স্থান পোৱাৰ বিপৰীতে কোটঙী লালুঙনীৰ জীয়ৰী দীনেমাই লালুঙনীয়ে তৃতীয় স্থান পাই ব্ৰঞ্জৰ পদক লাভ কৰিছিল।

লাহে লাহে আন্দোলনে তীব্ৰতৰ ৰূপ গ্ৰহণ কৰে আৰু সমগ্ৰ ভাৰততে জধে-মধে নেতাসকলক বন্দী কৰি অশেষ অত্যাচাৰ কৰিবলৈ ধৰিলে। আনফালে ৰাইজ এই কথাত উত্তেজিত হৈ চৰকাৰী কাৰ্যালয় দখল আৰু ধ্বংস কৰা, দলং পোৰা, ৰেল বগৰোৱা, বৃটিছৰ গোলামী ত্যাগ আদি কামবোৰ কৰাৰ সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ কৰে। বাৰপূজীয়া, ৰহা, টোপাকুচি, কপাহেৰা, ভকতগাওঁ, চৰাইবাহী, ফুলগুৰি, নামগাওঁ, বগৰিগুৰি আদি ঠাইৰ পৰা হাজাৰ হাজাৰ মানুহ ওলাই আহি ১৯৪২ চনৰ আন্দোলনত যোগ দিছিল। তেওঁলোকৰ নেতা আছিল মহেন্দ্ৰ হাজৰিকা। ১৯৪২ চনৰে ২৬ আগষ্টত বাৰপূজীয়া দৌল মণ্ডপত মহেন্দ্ৰ হাজৰিকাৰ নেতৃত্বত সংগ্ৰামী দলৰ সভা হয়। এই সভাতে মিলিটেৰীৰ অত্যাচাৰ ৰোধ কৰিবৰ বাবে সেই অঞ্চলত দলং, ৰাস্তা ভাঙিব লাগিব বুলি সিদ্ধান্ত হয়। এনে সময়তে বেবেজীয়াৰ হেম বৰা আৰু এজন কৰ্মীক দলঙৰ তলত লুকাই থকা মিলিটেৰীয়ে গুলিয়াই মাৰিছে। এনেদৰেই জোঙালবলহু গড়ৰ কাষত দলং খান্দি থকা অৱস্থাতে জধে-মধে গুলিচালনা কৰাত হেমৰাম পাতৰ আৰু গুণাভিৰাম বৰদলৈৰ মৃত্যু হয়। আকৌ গাঁৱৰে মোহন বেঙা বুলি পৰিচিত এজনক বিনা কাৰণতে বুট জোতাৰে গুৰিয়াই বন্দুকৰ নলীৰে খুচি পেলাই থৈ যায়। লগতে আন দুজন বৃদ্ধ ককবৰ লালুং আৰু নাথুৰাম লালুঙকো সোধা প্ৰশ্নৰ উত্তৰ নিদিয়াত মাৰি পেলাই থৈ যায়। আকৌ মৰিগাওঁ-নগাওঁ পথত পহৰা দি থকা অৱস্থাত মিলিটেৰীৰ নিৰ্দেশ নমনাৰ বাবে তিলক ডেকাৰ মূৰত গুলিয়াই বাটৰ কাষৰ আঁহত গছ এডালত মূৰটো থেকেচা মাৰি মাৰি পেলায়।

এনেদৰে অলেখ মানুহে কষ্ট, সংগ্ৰাম, নিৰ্যাতন সহ্য কৰি আৰু কাৰাবৰণ, মৃত্যুবৰণ কৰি দেশমাতৃৰ বাবে বলিদান দি থৈ যায়।

৪২ৰ আন্দোলনত প্ৰাণ আহুতি দিয়া হেমৰাম পাতৰ, গুণাভিৰাম বৰদলৈ আৰু তিলক ডেকা ঃ

অসম বুৰঞ্জী মতে আহোম স্বৰ্গদেউ জয়ধ্বজ সিংহই বৃহত্তৰ নগাওঁ অঞ্চলৰ ৰহাত “ৰহাচকী” স্থাপন কৰিছিল আৰু টেকেলা সন্দিকৈ বৰুৱাক তাতে চকীয়াল নিযুক্তি দিছিল। তাৰে ওচৰে পাঁজৰে থকা লালুং আৰু মিকিৰ ফৈদৰ (লালুং চাৰিজন আৰু মিকিৰৰ এজন) মুঠ পাঁচজন কোঁৱৰ আনি টুপাকুছি, বাৰপূজীয়া, মিকিৰগএগ্ৰা, সৰা আৰু খাইগড়, এই পাঁচখন ৰাজ্য পাতি কোঁৱৰ পাঁচজনক সংস্থাপিত কৰে।”[২] অসম বুৰঞ্জীত এই ৰাজ্যকেইখনকে ‘পাঁচোৰাজ্য ’ বুলি জনা যায়। ইয়াৰে বাৰপূজীয়া ৰাজ্যৰ পাতৰ বা পাত্ৰমন্ত্ৰী আছিল সেই অঞ্চলৰ শ্বহীদ হেমৰাম পাতৰৰ পিতামহ বা আজুককাসকল। বৰ্তমানে সেই ৰাজ্য আৰু ৰজা নাই যদিও লালুং (তিৱা) সকলে পৰম্পৰাগতভাৱে ব’হাগ মাহত উদযাপন কৰা মেলাত প্ৰতীকস্বৰূপে পৰিয়াল কেইটাই ৰজা আৰু মন্ত্ৰীৰ দায়িত্ব পালন কৰে।

হেমৰাম পাতৰৰ জন্ম হয় ১৯২০ চনৰ ভাদমাহত। এক ঐতিহ্যপূৰ্ণ পৰিয়ালত লুডুৰাম পাতৰ আৰু সোনসনি পাতৰৰ ঔৰসত অষ্টম সন্তানৰূপে জন্ম হোৱা হেমৰাম পৰিয়ালৰ নুমলীয়া সন্তান আছিল। ‘সৰু বোপা’ নামেৰে জনাজাত হেমৰাম সৰুৰে পৰা স্বল্প ভাষী, সাহসী আৰু জেদি স্বভাৱৰ আছিল। তেওঁৰ বয়স চাৰি বছৰ হওঁতে ঘৰৰ কাষতে এম ভি স্কুল এখন স্থাপন হয় যদিও তেওঁৰ স্কুললৈ যোৱা হোৱা নাছিল। কিন্তু সংস্কৃতিবান ঘৰখনৰ পৰা তেওঁ মানুহক ভাল পাবলৈ, দেশ-জাতিক ভাল পাবলৈ, সমাজৰ কামত আগবাঢ়ি যাবলৈ আনকি জীৱ-জন্তুৰ প্ৰতি সদয় হ’বলৈ আৰু সংস্কৃতিবান হ’বলৈ সুশিক্ষা পাইছিল।

সেই সময়ত অসমৰ বিভিন্ন ঠাইৰ লগতে বাৰপূজীয়াতো স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ ব্যাপকতা বৃদ্ধি পাইছিল। বাৰপূজীয়া শাখা সমিতিখনৰ সভাপতি আছিল জয়কান্ত মহন্ত আৰু সম্পাদক লোকনাথ ডেকা। স্থানীয় প্ৰায় প্ৰতিজন সংগ্ৰামীয়ে কংগ্ৰেছৰ সভা সমিতিত গান্ধীটুপী পিন্ধি অংশ লৈছিল। হেমৰামে পৰিয়ালৰ জ্যেষ্ঠসকলৰ পৰা মহাত্মা গান্ধী, জৱহৰলাল নেহৰু আৰু আন স্বাধীনতা সংগ্ৰামীসকলৰ কথা সাধুকথা শুনাৰ দৰে শুনিছিল আৰু স্বৰাজৰ সংগ্ৰামৰ সময়ত কিশোৰ হেমৰামকো সভা-সমিতি, প্ৰতিবাদ কাৰ্যসূচী আৰু অৱৰোধ আদি কাৰ্যত লৈ যাবলৈ জোৰ কৰিছিল। এনেদৰেই শৈশৱৰ পৰাই সংগ্ৰামী চেতনাৰে উদ্বুদ্ধ হৈ হেমৰাম ডাঙৰ হোৱাত বাৰপূজীয়া স্বেচ্ছাসেৱক বাহিনীত যোগদান কৰে। ১৯৪২ চনৰ ৮ আগষ্টত মুম্বাইত বহা কংগ্ৰেছৰ অধিবেশনত ‘কৰিম বা মৰিম’ এই মহামন্ত্ৰৰ ঘোষণা কৰাৰ লগে লগে নিখিল ভাৰত কংগ্ৰেছ কমিটীৰ আৰু সকলো কাৰ্যকৰী সমিতিৰ সদস্যাকে বৃটিছ সাম্ৰাজ্যবাদী চৰকাৰে গ্ৰেপ্তাৰ কৰি জেলত ভৰাই দিলে। ইয়াৰ পিছতে *“৯ আগষ্ট তাৰিখে জাতীয় কংগ্ৰেছৰ পতাকা উত্তোলন কৰি ভাৰত ত্যাগ আন্দোলনৰ প্ৰস্তাৱ ঘোষণা কৰিছিল বিপ্লৱী বীৰাংগনা অৰুণা আচফ আলীয়ে।”*[৩]

অসমতো জনতাৰ আন্দোলন তীব্ৰগতিত চলিব ধৰিলে। প্ৰশাসনে আন্দোলনকাৰীৰ ওপৰত অমানৱিক নিৰ্যাতনো চলাই থাকিল। ২৫ আগষ্ট তাৰিখে বিদ্ৰোহীসকলে বেবেজীয়া অঞ্চলৰ এখন দলঙত অগ্নি সংযোগ কৰি দিয়াৰ পিছত নগাঁৱৰ পৰা এদল পুলিচ-মিলিটেৰী আহি অঞ্চলটোত সন্ত্ৰাসৰ সৃষ্টি কৰিলে। এই খবৰ বিয়পি পৰাত ২৬ আগষ্টৰ পুৱাৰ ভাগত ৰাইজে দলে-বলে উপায়ুক্তৰ কাৰ্যালয়লৈ গৈ থাকোতে দলঙৰ তলত লুকাই থকা বৃটিছ মিলিটেৰীয়ে নৃশংসভাৱে নিৰীহ মানুহক ছত্ৰভংগ দিবলৈ জধে-মধে গুলি চলায়। কলাই কোঁচ আৰু হেমকান্ত বৰুৱাৰ থিতাতে মৃত্যু হয়। আন কেইবাজনো গুৰুতৰভাৱে আহত হয়।

এই ঘটনাৰ পিছতে শান্তিকামী আন্দোলনকাৰীসকলৰ মাজত আতংক আৰু উত্তেজনা বিৰাজ কৰিলে। সেই সময়ত নগাওঁ জিলাৰ কংগ্ৰেছী নেতা মহেন্দ্ৰ হাজৰিকাৰ নেতৃত্বত সভা পাতিলে আৰু স্বেচ্ছাসেৱকসকলৰ সৈতে মিলিত হৈ তেওঁলোকৰ দায়িত্ব আৰু কৰ্তব্য বিষয়ে বুজাই দিয়ে। চোৰাংচোৱাৰ পৰা খবৰ পোৱা গ’ল যে এই ৰণ নিৰ্মূল কৰিবৰ বাবে গুৱাহাটীৰ পৰা আৰু অধিক মিলিটেৰী বাহিনী আনিব আৰু জনতাৰ ওপৰত নিৰ্যাতন হ’ব। গতিকে মিলিটেৰী বাৰপূজীয়া, বেবেজীয়া. চৰাইবাহী অঞ্চললৈ আহিব নোৱাৰাকৈ ৰহাৰ জোঙালবলহু গড়ত থকা ‘কছাৰী খান্দা’ দলংখন খান্দি উঠাই দিব লাগে। কথামতেই শিঙা বজোৱাৰ লগে লগে হেমৰাম পাতৰেও নিজৰ অতি মৰমৰ ম’হৰখুটিত

থকা পামখন চাই লৰালৰিকৈ লগৰীয়া গুণাভিৰাম বৰদলৈ সহিতে বহুকেইজন *“জোঙালবৰুহ গড় পালেগৈ। তেওঁলোক দুভাগত ভাগ হৈ পৰিল। এটা দলে ৰে’ল লাইনৰ চিৰিপাট উঠাই ৰেইলচ্যুত কৰিবলৈ আগবাঢ়িল আৰু আনটো দলে ৰাষ্ট্ৰীয় ঘাইপথত থকা ‘কছাৰী খান্দা’ দলংখন খান্দি উঠাবলৈ গ’ল। ... কিবা বিপদ বা পুলিচ-মিলিটেৰী দেখিলে পহৰা দিয়াসকলে শিঙা বজাই সংকেত দিব।”*[৪] সেইমতে হেমৰাম আৰু গুণাভিৰামৰ নেতৃত্বত দলটো আগবাঢ়ি গ’ল। ৰেইলৰ ছিৰি খুলিব যোৱা, দলং খান্দিব যোৱা আৰু পহৰা দি থকা স্বেচ্ছাসেৱীসকলে দলঙৰ ওচৰত ৰৈ যোৱা মিলিটেৰীৰ গাড়ীখন তৎক্ষণাত আগুৰি ধৰিলে। সৈন্যভৰ্তি গাড়ীখন ক্ৰমে পিছুৱাই আহি অলপ দূৰৰ পৰা প্ৰথমে ব্লেংক ফায়াৰ কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰিলে। বন্দুকৰ শব্দ শুনি সকলো ৰাইজ যেনি-তেনি পলালে। হেমৰাম আৰু গুণাভিৰামৰ দলটোও উপায়হীন হৈ দলঙৰ কাষত থকা বিলখনৰ মেটেকানিত জঁপিয়াই পৰিল। গুলিবিদ্ধ গুণাভিৰামৰ তাতেই মৃত্যু ঘটিল আৰু অৰ্দ্ধজীৱিত হেমৰামক টৰ্চ মাৰি বিচাৰি সৈন্যবোৰে আন্দোলনৰ বিষয়ে নানা প্ৰশ্ন সুধিব ধৰিলে। কিন্তু সিহঁতে কোনো উত্তৰ নাপাই ভৰি দুখন বান্ধি ৰাস্তাৰ কাষেৰে চোঁচৰাই লৈ যায়। ইয়াৰ পিছত ৰহা থানাত নাম ৰেজিষ্টাৰ কৰিবলৈ নি থকা অৱস্থাতে ২১ বছৰ বয়সীয়া হেমৰামে শেষ নিঃশ্বাস ত্যাগ কৰে।

এই ঘটনাৰ পিছত ২৮ আগষ্ট, শুক্ৰবাৰে কংগ্ৰেছৰ অধীনৰ শান্তি সেনা বাহিনীয়ে খবৰ পালে যে বাৰপূজীয়াত মিলিটেৰীয়ে কঠোৰ অভিযান চলাব। লগে লগে স্থানীয় ৰাইজে আলোচনা কৰি সজাগ হৈ থাকিবলৈ ঠিৰাং কৰিলে। লগতে *“মিলিটেৰী অহাৰ লগে লগে যাতে শিঙাৰ সংকেত আৰু ঢবা, কাঁহ আদি বাজি উঠে। এই মতে সিদ্ধান্ত কৰি ৰাইজ সজাগ হৈ থাকিল।”*[৫] তিলক ডেকা মিকিৰগাঁৱৰ মাহীয়েকৰ ঘৰলৈ আলহী খাবলৈ আহি শান্তিৰক্ষী পহৰা দিয়া বাহিনীলৈ যাব লগা হয়। কাৰণ সেইদিনা মাহীয়েক মহাকৰ ঘৰখনৰ পহৰা দিয়া পাল আছিল আৰু মহাক বিশেষ এটা কামত ভকতগাওঁ পামলৈ যাব লগা হয়। *“চৰাইবাহীত ইতিমধ্যে স্বেচ্ছাসেৱক শান্তিৰক্ষক আৰু মৃত্যু বাহিনীৰ কুচ-কাৱাজৰ শিক্ষাত পৈণত হৈ থকা তিলকে স্বাভাৱিকতে মাহীয়েকৰ কথাত মান্তি হ’ল।”*[৬]

তিলক ডেকা আৰু শান্তিৰক্ষক বাহিনীৰ সদস্যসকল আহি বাৰপূজীয়া পোৱাত আচম্বিতে বৰ্তমানৰ খণ্ড উন্নয়ন বিষয়াৰ কাৰ্যালয়ৰ সন্মুখতে বৃটিছ সামৰিক বিষয়া ফিন্চ চাহাব, মিঃ ডাম চাহাব, ১৬ জনমান গোড়া পল্টন, দেশীয় পুলিচ, স্থানীয় ডাৰোগাৱে সজ্জিত দল এটাক লগ পায়। শিঙা লৈ পহৰা দি থকা দলটোক দেখি মিলিটেৰী বাহিনীয়ে তেওঁলোকক শিঙা ফুকাৰ পৰা বিৰত থাকিবলৈ নিৰ্দেশ দিয়ে। কিন্তু কৰ্মপৰায়ণ, নিষ্ঠাৱান সংগ্ৰামীয়ে চিপাহীৰ নিৰ্দেশ অমান্য কৰি গাওঁবাসীক সজাগ কৰিবলৈ ব্যস্ত হৈ পৰিল। “তিলকে বুকুৰ আগত বন্দুকৰ সন্মুখত মৃত্যৰ সংকেত দেখিও চিঞৰি চিঞৰি শিঙা ফুকি ৰাইজক সচেতন কৰাত লাগিল। মুখেৰে মাথোঁ প্ৰকৃত বীৰৰ দৰে উচ্চাৰণ কৰিলে— আপোনালোকে আপোনালোকৰ কাম কৰক, মই মোৰ কৰ্তব্য কৰিমেই।” লগে লগে বন্দুকৰ গুলিয়ে তিলকৰ মূৰ ভেদি গ’ল। বিপদৰ সংকেত শুনি মানুহবোৰ গোট খালে আৰু চাৰিওফালে হাহাকাৰ লাগি গ’ল। ৰক্তাক্ত দেহাটি পথৰ কাষত পুতি থোৱা অৱস্থাৰ পৰা দেশপ্ৰাণ মহেন্দ্ৰ হাজৰিকাৰ নেতৃত্বত উলিয়াই আনি বিধিমতে বৰ্তমানৰ শ্বহীদ স্তম্ভ থকা ঠাইতে সৎকাৰ কৰা হ’ল।

সামৰণি ঃ

শ্বহীদ হেমৰাম পাতৰৰ মধ্যবিত্ত পৰিয়ালটো বৰ্তমানে আৰ্থিকভাৱে দুৰ্বল হৈ পৰিছে। দিন মজুৰি কৰিহে তেওঁলোকে পৰিয়াল পোহপাল দিছে। স্বাধীনতাৰ ৭৫ বছৰৰ পিছতো পৰিয়ালটোৱে আজিলৈকে একো সাহায্য পোৱা। শাসনাধিষ্ঠিত চৰকাৰখনে ঘোষণা কৰা পাঁচ লাখ টকাৰ অনুদানো পাতৰ পৰিয়ালে পোৱা নাই। আনকি শ্বহীদজনৰ মূল ঘৰৰ সন্মুখৰ দুশ মিটাৰ পথো আজিলৈকে পকীকৰণ হোৱা নাই। ইতিমধ্যে বাৰপূজীয়াবাসী ৰাইজে পথৰ কাষত পঞ্চায়তৰ সন্মুখত শ্বহীদ জনাৰ আৱক্ষ মূৰ্তি স্থাপন কৰিছে আৰু প্ৰতিবছৰে শ্বহীদ হেমৰাম পাতৰ আৰু গুমাভিৰাম বৰদলৈৰ মৃত্যু দিৱসটি, ২৬ আগষ্টৰ তাৰিখটো পালন কৰি সন্মান জনাই আহিছে।

শ্বহীদ তিলক ডেকাৰো ২৮ আগষ্টৰ মৃত্যু দিৱস পালন কৰাৰ লগতে আৱক্ষ মূৰ্তিও স্থাপন কৰা হৈছে। তিলক ডেকাৰ মাতৃয়ে চৰকাৰৰ পৰা মুক্তি যুঁজাৰু অনুদান পাইছিল বুলি জনা যায়। কিন্তু বৰ্তমানে পৰিয়ালত কোনো লোক জীৱিত নথকাৰ বাবে শ্বহীদ জনাৰ বিষয়ে জানিবলৈ বিভিন্ন কিতাপ, আলোচনী আদিৰ সহায় ল’ব লাগে। ড° কমল নাথ দেৰে (বৰ্তমান চৰাইবাহী

কলেজৰ অধ্যক্ষ) শ্বহীদ তিলক ডেকাৰ বিষয়ে যথেষ্টখিনি তথ্য সংগ্ৰহ কৰি এক যুগমীয়া কাম কৰি থৈছে।

সামৰণিত ইয়াক ক'ব বিচাৰো যে অসমৰ গৌৰৱ, ১৯৪২ চনৰ স্বাধীনতা আন্দোলনত বিশ্বৰ ইতিহাসত নিজৰ কীৰ্তি যুগমীয়া কৰি থৈ যোৱা বহুত লোক আছে, যাৰ বিষয়ে চৰ্চা আৰু প্ৰচাৰ এতিয়াও বহুত কম হৈ আছে। নতুন প্ৰজন্মই বিষয়টোত গুৰুত্ব দি প্ৰতিজন শ্বহীদে পৰ্যাপ্ত সন্মান পাবলৈ যাতে সক্ষম হয় তাৰ বাবে অধ্যয়ন, প্ৰচাৰ-প্ৰসাৰ আৰু চৰকাৰৰ সৈতে পূৰ্ণ সহযোগ কৰে যেন। গৱেষণা পত্ৰখনৰ এয়াই হৈছে উদ্দেশ্য। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থ ঃ

১। ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰাম আৰু অসম ঃ আদ্যনাথ চক্ৰৱৰ্তী আৰু নৰেন্দ্ৰ নাথ শৰ্মা

২। ভাৰতৰ ৰাজনৈতিক ব্যৱস্থা ঃ ড° কৃপেশ চন্দ্ৰ পাল আৰু অধ্যাপক প্ৰতুল চন্দ্ৰ নায়ক

৩। মুক্তিযুঁজাৰু তিলক ডেকা, ড° কমল চন্দ্ৰ নাথ সদ্যস্নাতা প্ৰকাশ, চৰাইবাহী, ২০০২

৪। Chand, Tara - History of Freedom Movement in India

৫। Kothari, Rajini - Politics in India

৬। কাৰ্বি আংলং জিলাৰ পাহাৰীয়া তিৱাসকলৰ সমাজ আৰু সংস্কৃতি ঃ ড° মৌচুমী বৰদলৈ হাজৰিকা

আলোচনী ঃ

১। ৰিংছাং (প্ৰতিধ্বনি) প্ৰথম বছৰ, প্ৰথম সংখ্যা, সদৌ অসম তিৱা (লালুং) যুৱ-ছাত্ৰ সন্মিলনৰ মুখপত্ৰ (আলোচনী)

২। থোৰাং ঃ মুখপত্ৰ, তিৱা মাথন, লাই তগ্ৰা, ১৯৯৭ (আলোচনী)

প্ৰবন্ধ ঃ

* ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰামত বাৰপূজীয়াৰ ভূমিকা ঃ বলাইৰাম সেনাপতি ৰচনা সমগ্ৰ, সম্পাদক -শ্ৰীগণেশ সেনাপতি

* বিপ্লৱৰ এক অধ্যায় ঃ বলাইৰাম সেনাপতি ৰচনা সমগ্ৰ, সম্পাদক - শ্ৰী গণেশ সেনাপতি (১৯৪৮ চনত উদয় মুখপত্ৰত প্ৰকাশিত)

* ৪২ৰ শ্বহীদ হেমৰাম পাতৰ ঃ ভূপেশ দাৰফাং

* শ্বহীদ হেমৰাম পাতৰ ঃ ৰিংছাং (প্ৰতিনিধি) সদৌ অসম তিৱা (লালুং) যুৱ-ছাত্ৰ সন্মিলনৰ মুখপত্ৰ, শ্ৰী গণপতি সুকায়

তথ্য আহৰণ ঃ

* শ্ৰীমহেশ্বৰ পাতৰ, শ্ৰীমতী মৌচুমী পাতৰ, শ্ৰী ৰত্নেশ্বৰ পাতৰ, শ্ৰীমতী লাহেশ্বৰী পাতৰ, শ্ৰীমতী বিকুলা পাতৰ আৰু শ্ৰী ভূপেশ দাৰফাং

পাদটীকা ঃ

১। স্বাধীনতা আন্দোলন ১৮৮৫-১৯৩০ চনত ড০ কৃপেশ চন্দ্ৰ পাল, অধ্যাপক প্ৰতুল চন্দ্ৰ নায়ক, ভাৰতৰ ৰাজনৈতিক ব্যৱস্থা, ২০১১ , জুলাই

২। প্ৰবন্ধ ঃ ৪২ ৰ শ্বহীদ হেমৰাম পাতৰ, ভূপেশ দাৰফাং

৩। পৃষ্ঠা ১৬৩, দ্বিতীয় মহাসমৰ আৰু জাতীয় আন্দোলন, প্ৰবন্ধ ঃ ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰাম আৰু অসম, আদ্যনাথ চক্ৰৱৰ্তী আৰু নৰেন্দ্ৰনাথ শৰ্মা

৪। প্ৰবন্ধ ঃ ৪৩ ৰ শ্বহীদ হেমৰাম পাতৰ

৫। পৃষ্ঠা ৩৮, মুক্তিযুঁজাৰু তিলক ডেকা, ড° কমল চন্দ্ৰ নাথ, সদ্যস্নাতা প্ৰকাশ, চৰাইবাহী, মৰিগাওঁ

৬। পৃষ্ঠা ৩৮, মুক্তিযুঁজাৰু, তিলক ডেকা

৭। পৃষ্ঠা ৩৯, মুক্তিযুঁজাৰু তিলক ডেকা

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

আহোম সম্প্ৰদায়ৰ মাজত প্ৰচলিত পৰম্পৰাগত পানীয় 'সাজ'ৰ প্ৰস্তুত প্ৰণালীৰ অধ্যয়ন

ড° ইলোৰাধা শইকীয়া

জৱাহৰ নগৰ হাউচফেড
ক'ম্পপ্লেক্স ত্ৰিপুৰা ৰোড
ঘৰ নং ২০২, ব্লক নং- (G) ছয়মাইল
পিন ঃ ৭৮১০২৮, গুৱাহাটী (অসম)
৬০০১৭৭৩১০৯
iluradha17@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

জীৱনধাৰণৰ বাবে মানৱজাতিৰ প্ৰাথমিক আৰু মুখ্য প্ৰয়োজনীয় উপাদানেই হৈছে খাদ্য (অন্ন)। অন্ন, বস্ত্ৰ আৰু বাসস্থানৰ অবিহনে মানুহ জীয়াই থাকিব নোৱাৰে, এই খাদ্যমুঠি চৌপাশৰ প্ৰকৃতিৰ পৰাই আহৰণ কৰা হয়। সেয়ে মানুহৰ খাদ্যাভাস বহুপৰিমাণে প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশ বা ভৌগলিক অৱস্থান অনুসৰি গঢ় লৈ উঠে। প্ৰাকৃতিকভাৱে আহৰণ কৰা থলুৱা খাদ্যসমূহৰ বহুবেছি খাদ্যগুণ আছে। অসমৰ অন্যতম বৃহৎ জনগোষ্ঠী আহোমসকলৰ খাদ্যপ্ৰণালী বৈচিত্ৰময়। তেওঁলোকে ভাতৰ উপৰিও চাউলৰ পৰা বিভিন্ন ধৰণৰ সুস্বাদু খাদ্য প্ৰস্তুত কৰে। সেইবোৰ হৈছে চেৱাদিয়া ভাত বা ভাপত সিজোৱা ভাত, চুঙা-চাউল, পিঠাগুৰি দি বন্ধা আঞ্জা, সান্দহৰ ভাজি, বৰপিঠা-ঘিলাপিঠা, হেঁচাপিঠা, চিৰা, মুড়ী, হুৰুম, লুথুৰি পিঠা, তৰাপাটত সিজোৱা পিঠা ইত্যাদি। এইবোৰৰ প্ৰস্তুত প্ৰণালীও বিচিত্ৰ। ঠিক সেইদৰে বিভিন্ন বন-দৰৱ কেঁচা পিঠাগুৰিৰ সৈতে মিলাই এবিধ বিশেষ ধৰণৰ পিঠা প্ৰস্তুত কৰা হয়। এই পিঠাৰ সৈতে ভাত মিহলাই সাজ প্ৰস্তুত কৰাৰ কাৰণেই এই পিঠাটোক 'সাজৰ পিঠা' বুলি কোৱা হয়। সাজৰ পিঠাত ব্যৱহাৰ কৰা বন দৰৱসমূহৰ খাদ্য গুণাগুণ অপৰিসীম। পৰম্পৰাগতভাৱে প্ৰস্তুত কৰা এই সাজক সকাম-নিকাম, উৎসৱ-পাৰ্বন আদি বিশেষ দিনত ব্যৱহাৰ কৰা হয়। সাজ বা লোকলাও আহোমসকলৰ অতি প্ৰিয় তথা পবিত্ৰ পানীয় খাদ্য। আমাৰ এই অধ্যয়নত সাজৰ প্ৰস্তুত প্ৰণালীৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হ'ব।

বীজ শব্দ ঃ

পৰম্পৰা, খাদ্য, আহোম, পৰম্পৰা, সাজ (সাজপানী) আদি।

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

খাদ্য এহাতে মানুহৰ মৌলিক প্ৰয়োজনীয় সামগ্ৰী, অন্যহাতে ই সংস্কৃতিৰ অপৰিহাৰ্য অংগ। খাদ্য দেহৰ পুষ্টি আহৰণৰ বাবে খোৱা কিছুমান পদাৰ্থ। সাধাৰণতে উদ্ভিদ আৰু প্ৰাণীজ এই দুটা উৎসৰ পৰাই জীৱই খাদ্য আহৰণ কৰে। আহোম সম্প্ৰদায়ৰ খাদ্যসম্ভাৰ অতি সুস্বাদু আৰু পৰম্পৰাগত। প্ৰত্যেক জাতি জনগোষ্ঠীৰে ভাষা আৰু আচাৰ-নীতি যিদৰে ভিন্ন ঠিক সেইদৰে খাদ্যসম্ভাৰো তদ্ৰুপ। অৱশ্যে পৰম্পৰাগতভাৱে প্ৰচলিত হৈ অহা খাদ্যসমূহৰ সময় পৰিৱৰ্তনৰ লগে লগে কিছু সালসলনি ঘটিছে যদিও সেইয়া ৰুচিবোধ সময় আৰু পৰিস্থিতি সাপেক্ষ। *প্ৰায় সকলোবোৰ কিৰাতমূলীয় জনগোষ্ঠীয়েই*

চাউলৰ পৰা কৰা ভাত প্ৰধান আহাৰ স্বৰূপে ব্যৱহাৰ কৰিলেও চাউলৰ পৰা নিজা নিজা পদ্ধতিৰে 'সুৰা' তৈয়াৰ কৰি লোৱাৰ প্ৰথা এতিয়াও চলি আহিছে। বড়োসকলৰ লাওপানী, মিচিংসকলৰ আপং, দেউৰীসকলৰ চুজে, কাৰ্বিসকলৰ হাৰ্লং, ডিমাছাসকলৰ জৌ, ৰাভাসকলৰ লাওপানী চাউলৰ পৰা কৰা পানীয়। প্ৰত্যেকৰে পানীয় প্ৰস্তুত কৰাৰ পদ্ধতি আৰু পানীয়ৰ স্বাদৰো পৃথকতা নথকা নহয়।[১] আহোমসকল অসমলৈ অহাৰ আগৰ খাদ্যসম্ভাৰ আৰু আহোম যুগৰ খাদ্য সম্ভাৰ একে হ'লেও কিছু পৰিমাণে নতুনৰ সংযোগ ঘটিছে। তেতিয়া মানুহে খাদ্যৰ বাবে প্ৰায়ে প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ ওপৰতে নিৰ্ভৰশীল আছিল। ভাতেই প্ৰধান আহাৰ আছিল যদিও ধানৰ পৰা অনেক সুস্বাদু জা-জলপানো তৈয়াৰ কৰিছিল। শ্ৰমতয়ক সমাজৰ কৰ্মঠ লোকসকলৰ বাবে সাজ শক্তিবৰ্দ্ধক পানীয় হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰা হয়। যিহেতু চাউলৰ পৰা তৈয়াৰ হোৱা গতিকে কাৰ্বহাইড্ৰেড, প্ৰ'টিন, শৰ্কৰা, ভিটামিন বা ক্ষনজ লৱণ থাকে। শক্তি আহৰণ আৰু উদ্দীপনা বৃদ্ধিৰ বাবেই এই পানীয় ব্যৱহাৰ কৰিছিল। দৈনন্দিন জীৱনত অন্যান্য খাদ্য খোৱাৰ দৰেই পুৰা-গধুলি সাজ বা লাওপানীৰ প্ৰচলন আছিল। ঘৰলৈ আলহি অতিথি আহিলে বা বিশেষ কাম-সকামত সাজৰ প্ৰচলন হৈ আহিছে। এই সাজ পৰম্পৰাগত পদ্ধতিৰে ঘৰতেই প্ৰস্তুত কৰা হয়।

ভাতৰ লগত বিশেষ 'দৰৱ' সানি লাওপানী তৈয়াৰ কৰা হৈছিল। পিঠাৰ লগত জালুক, কপৌঢেঁকীয়া, পাতিসোন্দাৰ পাত, বনজালুক, টংলতিৰ পাত, জেতুলিপকাৰ পাত আদি খুন্দি 'দৰৱ' তৈয়াৰ কৰে। এই দৰৱ বৰা চাউলৰ ভাতৰ লগত সানি তিনিদিন গাপ্ দি থয়। তিনিদিনৰ মূৰত 'ৰহী' পকিবলৈ ধৰে। তেতিয়া গাপ্ দিয়া ভাতখিনি জোখাৰে কলহত ভৰায় থয়। দিনচেৰেকৰ পিছত কলহটো ৰসেৰে উপচি পৰে। আহোম মানুহ একালত অতি উচ্চখাপৰ লাওপানী তৈয়াৰ কৰাত পাকৈত আছিল। 'দৰৱ'ৰ লগত দিয়া অনুপাত কমাই-বঢ়াই চোকা, মিঠা, ৰঙা, পাতল ৰঙা ৰঙৰ লাওপানী তৈয়াৰ কৰিব পাৰিছিল। . . . . . . এনেকুৱা লাওপানী তৈয়াৰ কৰা আৰু খোৱাৰ ৰীতি অন্যান্য জনজাতিৰ মাজতো আছিল; কিন্তু 'দৰৱ' তৈয়াৰ কৰা অনুপান সুকীয়া আছিল।[২]

সাজ প্ৰস্তুত কৰোঁতে আটাইতকৈ অত্যাৱশ্যকীয় সামগ্ৰী বিধ হৈছে সাজৰ পিঠা। (চু-লাওঁ Fermenter)। এই সাজৰ পিঠাও ঘৰুৱাকৈ প্ৰস্তুত কৰি লোৱা হয়। সাধাৰণতে চাউলৰ লগতেই সাজ প্ৰস্তুত কৰা হয় যদিও পঁকা ভীমকল আৰু পঁকা কঁঠালৰ পৰাও কেতিয়াবা সাজ বা ৰহী প্ৰস্তুত কৰা দেখা যায়। সাজ প্ৰস্তুত কৰা প্ৰক্ৰিয়াটো হ'ল এক জৈৱ ৰাসায়ন প্ৰক্ৰিয়া। সাজ বা লোকলাও হৈছে ফাৰমাউণ্টেড ৰাইছ ৱাইন (Fourmounted rice wine)। অৱশ্যে ঠাই অনুসৰি গছ-লতিকাবোৰৰ ব্যৱহাৰ আৰু নামবোৰো কিছু পৰিমাণে বেলেগ বেলেগ হোৱা দেখা যায়।

০.১ বিষয়বস্তুৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

অসমৰ থলুৱা খাদ্য সম্ভাৰ হৈছে অসমৰ লোক-সংস্কৃতিৰ এক আপুৰুগীয়া সম্পদ, গতিকে আপুৰুগীয়া সম্পদ হিচাপে ইয়াৰ বিষয়ে অধ্যয়ন কৰাটো গুৰুত্ব আছে। এটা জাতিৰ খাদ্যাভাযে জাতিটোৰ সম্যক পৰিচয় বহন কৰে আৰু সাজ হৈছে আহোম বা যিকোনো জনজাতীয় সমাজৰ অপৰিহাৰ্য পানীয় খাদ্য, গতিকে ইয়াৰ বিষয়ে আলোচনা কৰাটো আৱশ্যক। সাজৰ প্ৰস্তুত প্ৰণালীও আকৰ্ষণীয়। পদ্ধতিগত অধ্যয়নৰ অবিহনে যিকোনো এটা বিষয় সম্পূৰ্ণ নহয়। সাজ আহোম সম্প্ৰদায়ৰ মাজত পৰম্পৰাগতভাৱে প্ৰচলিত হৈ অহা যদিও সাজৰ প্ৰস্তুত প্ৰণালীৰ সম্পৰ্কত পদ্ধতিগত অধ্যয়ন চকুত লগাকৈ হোৱা নাই। আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰত চাক্ষুক অভিজ্ঞতাৰ লগতে অভিজ্ঞ ব্যক্তিৰ সমল লৈ পদ্ধতিগতভাৱে আলোচনা আগবঢ়োৱাই হৈছে মূল উদ্দেশ্য।

০.২ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু পৰিসৰ ঃ

'আহোম সম্প্ৰদায়ৰ মাজত প্ৰচলিত পৰম্পৰাগত থলুৱা পানীয় সাজৰ প্ৰস্তুত প্ৰণালী অধ্যয়ন' শীৰ্ষক বিষয়টি অধ্যয়ন কৰোঁতে মূলত বৰ্ণনাত্মক অধ্যয়ন (Describtive Metholgy) পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। অসমীয়া লোকসংস্কৃতিৰ অন্তগত অন্যতম বিভাগ ভৌতিক সংস্কৃতিৰ অৰ্ন্তগত খাদ্যসম্ভাৰ সম্পৰ্কীয় গ্ৰন্থ, ইণ্টাৰনেটত উপলব্ধ তথ্য, ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ (Field study) জৰিয়তে বিভিন্ন অভিজ্ঞ ব্যক্তিৰ সৈতে কথোপকথন আৰু ব্যক্তিগত চাক্ষুক অভিজ্ঞতা আদি তথ্যসমূহ বিশ্লেষণাত্মক (Inalitical Mathotology) অধ্যয়ন পদ্ধতি প্ৰয়োগ কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ পৰিসৰ হিচাপে আহোম সম্প্ৰদায়ৰ পৰম্পৰাগত থলুৱা পাণীয় 'সাজ'ৰ প্ৰস্তুত প্ৰণালীক পদ্ধতিগভাৱে অধ্যয়ন কৰিবলৈ যত্ন কৰা হৈছে। সাজ কেনেকৈ প্ৰস্তুত কৰে, ইয়াৰ বাবে প্ৰয়োজনীয় সামগ্ৰী, ইয়াৰ খাদ্য গুণাগুণ, সাজৰ পিঠা কেনেকৈ প্ৰস্তুত কৰে, সাজৰ পিঠাত ব্যৱহাৰ কৰা বন দৰবসমূহ, ইয়াৰ গুৰুত্ব কিমান, ইয়াৰ লগত জড়িত লোকবিশ্বাস, ৰীতি-নীতি আদি পদ্ধতিগতভাৱে এই অধ্যয়নৰ পৰিসৰত সামৰা হৈছে।

০.৩ অধ্যয়নৰ উৎস ঃ

'আহোম সম্প্ৰদায়ৰ মাজত প্ৰচলিত পৰম্পৰাগত থলুৱা পানীয় সাজৰ প্ৰস্তুত প্ৰণালী অধ্যয়ন' শীৰ্ষক বিষয়টি গৱেষকৰ চাক্ষুক অভিজ্ঞতা আৰু অভিজ্ঞ ব্যক্তিৰ লগত বাৰ্তালাপ কৰা সমলক মুখ্য উৎস আৰু লোকসংস্কৃতি বিষয়ৰ বিভিন্ন গ্ৰন্থ, ইণ্টাৰনেটত উপলব্ধ তথ্যক গৌণ উৎস হিচাপে লোৱা হৈছে।

০.৪ সাজ প্ৰস্তুত কৰোঁতে প্ৰয়োজন হোৱা সামগ্ৰী ঃ

সাজৰ বাবে প্ৰয়োজন হোৱা সমাগ্ৰীসমূহ হ'ল—

(১) বৰা চাউল বা আউৰ চাউল
(২) কলহ
(৩) সাজৰ পিঠা
(৪) বহল ডলা বা ঢাৰি
(৫) কলপাত
(৬) কেৰাহী বা টৌ, (টো মাৰি)
(৭) ফুটা দিয়া খৰাহী
(৮) গামলা
(৯) কলপটুৱা

০.৫ সাজৰ-পিঠা প্ৰস্তুত প্ৰণালী আৰু প্ৰয়োজন হোৱা সামগ্ৰী ঃ

সাজৰ-পিঠা প্ৰস্তুত কৰোঁতে বিভিন্ন বনৌষধিযুক্ত গছ-লতিকাৰ পাত, ঠাৰি, শিপা, গুটি আৰু গছৰ ছাল আদি ব্যৱহাৰ কৰা হয়। এই গছ-লতিকাবোৰ প্ৰায়বোৰ হাবিৰ পৰা বুটলি অনা হয়। ঠাই বিশেষে এই গছ লতিকাবোৰ নাম উচ্চাৰণ অলপ বেলেগ হোৱাৰ দেখা যায়। সাজৰ পিঠাত ব্যৱহাৰ কৰা এই দৰৱসমূহৰ নাম উল্লেখ কৰা হ'ল—

মিঠা মধুৰীৰ (পানী মধুৰী) (Psychotrs Sp.) কুমলীয়া আগ, মধুৰী পাত (Psidium Guajava), জালুক (Piper Nigrum) জালুকৰ পাত, পিপলী (Piper Longum), পান, বনজালুক (Oldenlandia Corymbosa), বৰ মানিমুনি (Canella Asiatiea), সৰু মানিমুনি (Hydrocotyle Sibthorpioides), লংগুটি (Clove), ডালচেনিৰ পাত, আদাৰ পাত, হালধি পাত, নেমুটেঙাৰ পাত, ধপাত তিতাৰ পাত, পাটীসূতা বা পাটসোন্দা গছৰ পাত (Cinnamomum Sp.) কপৌঢেঁকীয়া (Lygodium), ৰূপহী থেকেৰাৰ মাজৰ গুটিটো, গছ মাহুদী (Croton Joutra), লতা মাহুদী (Croton Caudatus), খৰম্মৰ পাত বা খুনখুনি ঢেকীয়া (Selaginella Sp.) জালিক এটা বা দুটা, মাধৈমালতী পাত, ঠৰঠৰা পাত, বিয়নী সবটা বা সাচপাতা (Achyranthes Aspera), তেজুমুই বা তেজমুৰী (Zanthoxylum Nitidum), কঁঠালৰ পাত (Artocarpus), বিহলঙনী, গপচৈ (Naravallia Zeylanica), কাঁচিদাঁৰিয়া, সুৰদিপাত, মদটি শিপা, শোহনি বন, বন সুমথিৰা, বন আমলখি, জটীয়া ঢেকীয়া, পাঁজি শিপা, এছাৰিলতা, মিঠালতা পাত, আঠুভঙা, বন কুঁহিয়াৰ আগ, জেতুলিপকাৰ পাত (Rubus Ruyousus), হেতালতী পাত (Thumbergia Seragmena Sp.), বাত দোৱামালি (Jarmium Sp.), মালকাঠী (Spilanthes Clava), হেতালতী পাত (Thumbergia) ইত্যাদি।

ওপৰত উল্লেখ কৰা লতা-পাত শিপা আদি নিৰ্দিষ্ট পৰিমাণত লৈ ৰ'দত শুকুৱাই ঢেকীত খুন্দি গুৰি কৰি চালনিৰে চালি ঠাৰি আৰু আঁহবোৰ আঁতৰাই দিয়া হয়। এই গুৰিখিনিৰ লগত কেঁচা পিঠাগুৰি মিহলাই ভালকৈ সানি সৰু সৰুকৈ পিঠা-পিঠা আকৃতিৰ বা লাৰু লাৰু কৰি ডলা বা অন্য বহল পাত্ৰত ধানখেৰ আৰু বিহলঙনী দি উক্ত পিঠাবোৰ ৰ'দত শুকুৱা হয়। অলপ শুকান হোৱাৰ পাছত পিঠাবোৰ আধা শুকান বিহলঙনীৰে ঢাকি দিয়া হয়। গৰমৰ দিনত সোনকালে পোকে ধৰে বা সাজৰ পিঠাবোৰ বেয়া হ'বলৈ ধৰে, সেয়ে বেয়া নহ'বলৈ এখন চালনীত দি পিঠাবিলাক পাকঘৰত ধোৱাৰ ওপৰত দি ধোঁৱা খাবলৈ দিয়া হয়। তেতিয়া পোকেও নধৰে। কেইদিনমানৰ পাছত পিঠাবোৰ শুকান হৈ পৰে আৰু সাজ প্ৰস্তুতকৰণৰ বাবে উপযুক্ত হৈ উঠে। কেতিয়াবা নতুন সাজপিঠা প্ৰস্তুত কৰোঁতে পিঠাগুৰিখিনি সানিবৰ সময়ত পুৰণা সাজৰপিঠা মিহলাই দিয়াও দেখা যায়। ইয়াক ঘাই পিঠা বুলি কোৱা হয়। কিমান পৰিমাণৰ চাউলৰ লগত কিমান পৰিমাণৰ দৰৱৰ গুৰি মিহলাব, কোনজোপা দৰৱৰ পাত কেইখিলা দিব এই কথা অভিজ্ঞতাৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰে। ইয়াৰ কোনো নিৰ্ধাৰিত পৰিমাণ নাই। সেয়ে চাক্ষুক অভিজ্ঞতা খুউব প্ৰয়োজন। এইটোৱেই হৈছে সাজৰ পিঠা প্ৰস্তুতকৰণ প্ৰক্ৰিয়া।

০.৫.১ সাজৰ প্ৰস্তুতকৰণৰ প্ৰণালী ঃ

সাজ প্ৰস্তুত কৰিবলৈ সাধাৰণতে আঠা জাতীয়া চাউল লোৱা হয়। বৰাধানৰ চাউল, বিয়ৈধানৰ চাউল আৰু কেতিয়াবা মৌসৰা ধানৰ চাউল লোৱা হয়। সিজোৱা ধানৰ চাউল বা ওখোৱা চাউলৰ পৰা সাজ থ'লে ৰস ক'মকৈ উলায় সেয়ে আৰৈ চাউল হ'লে ভাল। সিজোৱা ভাততকৈ 'চেৰাদিয়া ভাত'ৰ পৰাহে পৰম্পৰাগতভাৱে সাজ থোৱা প্ৰক্ৰিয়াটোৰ প্ৰচলন হৈ আহিছে। সাজ থ'বলৈ প্ৰথমে বৰা

ধানৰ চাউল অলপ কোমল হোৱালৈকে তিয়াই থোৱা হয়। দুই তিনিঘণ্টামান তিয়াই থোৱাৰ পাছত পানীৰ পৰা টুকি লোৱা হয়। চেৰাদিয়া ভাত কৰিবলৈ হ'লে টুকি থোৱা চাউলখিনিৰ ফুটা থকা এটা পিতলৰ খৰাহীত ঢাকোন দি ভাপত সিজাবৰ বাবে ডাঙৰ বটোৰাৰ ওপৰত পাতি দিয়া হয়। প্ৰথমে বটোৰাটোত পানী অলপ ভাপ হোৱাকৈ উতলাই কলপটুৱা পাৰি ভালকৈ ঢাকি দিয়া হয়। তেতিয়াহে ভাপখিনি যেনি তেনি ওলায় যাব নোৱাৰে। পটুৱাখনৰ মাজতে ফুটা এটা কৰি দিয়া হয় যাতে সেই ফুটাৰে যোৱা পানীৰ ভাপবোৰ খৰাহীৰ চাউলৰ মাজেদি পাৰহৈ গৈ থাকে। কলপটুৱাৰ ফুটাটো আৰু চাউল থকা খৰাহিটো ফুটাটো সমান্তৰালকৈ হ'ব লাগে, তেতিয়াহে পানীখিনি উতলি ভাপবোৰ গৈ চাউল সিজিব। ভাপৰ উত্তাপত সিজি চাউলবোৰ কোমল এটা এটা ভাত হয়, আঠাজাতীয় নহয়। এনে ভাতকে চেৰাদিয়া ভাত বোলে। গোটেই প্ৰক্ৰিয়াটো চাউলৰ পৰা ভাত হোৱালৈকে অলপ সময়ৰ প্ৰয়োজন। সিজোৱা ভাতখিনি বহল ডলা বা ঢাৰি এখনত মেলি ঠাণ্ডা কৰি লোৱা হয়, তাৰ পাছত 'সাজৰ পিঠা' গুৰি কৰি ভাতখিনিৰ সৈতে মিহলাই লোৱা হয়। ভাতৰ পৰিমাণ চাইহে পিঠাৰ পৰিমাণ নিৰ্ধাৰণ কৰি মিহলোৱা হয়। তাৰ পাছত এটা বাঁহৰ সেৰেঙা খৰাহিত কলপাত পাৰি সাজৰ পিঠা সনা ভাতখিনি ঢালি দি আকৌ কলপাতেৰে ভালকৈ ঢাকি দিয়া হয়। এটা গামলা বা কেৰাহীজাতীয় পাত্ৰত দুডাল টৌমাৰি পথালিকৈ থৈ তাৰ ওপৰত উক্ত মিশ্ৰণ থোৱা খৰাহিটো এনেদৰে তুলি থোৱা হয় যাতে অলপো লৰচৰ হৈ নপৰে। এসপ্তাহমান থোৱাৰ পাছত ভাতত ঈষ্ট (Yeast) গজি উঠে। এই ঈষ্টেই ভাতখিনি 'ফাৰমেণ্টেড' কৰে, ফলত চাউলত থকা কাৰ্বোহাইড্ৰেড সুৰা (alcohol) লৈ ৰূপান্তৰিত হয়। সেই সময়ত ইয়াৰ পৰা এটা সুগন্ধি ওলায়। এলকহলৰ ঘনত্ব বাঢ়ি অহাৰ লগে লগে ঈষ্ট (Yeast) বোৰ মৰি যায় আৰু ভাতখিনি কোমল হৈ এক ৰসাল পদাৰ্থ তৈয়াৰ হোৱা দেখা যায়। তেতিয়াই সেই ভাতৰ মিশ্ৰণখিনিৰ পৰা টুপ টুপকৈ গামলাটোত ৰস নিগৰিবলৈ ধৰে। সেৰেঙা বা তলৰ ফালে ফুটা দিয়া খৰাহী লোৱা হয় এইকাৰণেই যাতে ৰস টুপ টুপাই পৰিবলৈ সুবিধা হয়। প্ৰথম দিনাৰ পৰা লাহে লাহে পৰিমাণ বাঢ়ি গৈ থাকে আৰু তিনি চাৰিদিন মানৰ পাছত আকৌ ৰস পৰা পৰিমাণ কমি আহে। নতুন চাউলৰ পৰা বেছি ৰস ওলায় অৱশ্যে চেৰাদিয়া ভাতখিনিত পিঠাৰ পৰিমাণ সনাৰ ওপৰতো নিৰ্ভৰ কৰে। এই ৰসখিনিক ৰহী বুলি কোৱা হয়। এনেদৰে এসপ্তাহ দহদিনমান হোৱাৰ পাছত এইখিনি কলহত ভৰোৱাৰ উপযুক্ত হৈ উঠে, এইখিনি সাজৰ গুটি বুলি কোৱা হয়। যিমানদিন বেছিকৈ ৰাখিব পাৰে সিমানে লুকলাও বা সাজখিনি খাবলৈ জুতিলগা হয় আৰু কাঢ়া ৰঙা বৰণৰ হৈ গৈ থাকে। সাজৰ গুটিখিনি কলহত ভৰাই পানী দি কলহটোৰ মুখত আধা শুকান কলপাতেৰে ভালকৈ মুখখন বন্ধ কৰি দিয়া হয়। এনেকৈ থোৱা দুদিন বা তিনিদিন মানৰ পাছতে খাবৰ বাবে উপযুক্ত সময় হয়, তেতিয়া সাজৰ কলহটো কাটি কৰি নিগৰাই ইয়াৰ পৰা ৰসখিনি উলিওৱা হয়। এই ৰসখিনি চিচাৰ বটলত ভৰাই বহুদিনলৈকে সংৰক্ষণ কৰি থ'ব পাৰি। যিমানে বেছি দিন থয় সিমানে খাবলৈ মিঠা-চোকা হয়। পানী নিদিয়াকৈ পৰা ৰসখিনিক ৰহী বা লুকলাও বুলি কোৱা হয় আৰু পানী দি কলহত পৰা নিগৰাই উলিওৱা ৰসখিনিক সাজ, সাজপানী, সোমৰস, ৰহীলাও, নামলাও আদি বিভিন্ন নাম কোৱা হয়। এনেকৈয়ে সাজ প্ৰস্তুত কৰা হয়।

০.৫.২ সাজৰ ব্যৱহাৰ ঃ

আহোমৰ ৰাজত্বৰ আৰম্ভণি সময়ৰ পৰাই নামলাও বা লাওপানী আহোমৰ সম্প্ৰদায়ৰ সমাজত প্ৰচলন হৈ আহিছে। হয়তো চ্যুকাফাৰ লগতেই অসমলৈ প্ৰৱেশ কৰিছিল। *লাওপানী বা সাজ আহোম সমাজত আলহী-অতিথিক ঘৰলৈ আগমন হ'লে সন্মান আৰু আদৰ যাচি আগবঢ়োৱা হয়। সাজৰ অবিহনে আহোমসকলৰ সকাম-নিকাম, উৎসৱ-পাৰ্বন, আলহী-অতিথিৰ আপ্যায়ন আধৰুৱাহৈ ৰয়। সেয়ে হয়তো বহুতো আহোম গাঁৱত সাজপানীক 'জলপান' বুলিও কোৱা হয়।* [৩]

আহোম সম্প্ৰদায়ৰ মাজত 'ডাম বা মৃতক পূজা'ৰ পৰা আৰম্ভ কৰি যিকোনো মাংগলিক কৰ্মত সাজ নহ'লে সম্পাদন নহয়। আহোমৰ অন্যতম মূল উৎসৱ 'মে-ডাম-মেফিত' সাজ বা লুকলাও লাগিবই। কলপাতত ৰঙা কুকুৰাৰ মাংসৰ সৈতে কাঁহৰ বাতিত সাজ একেলগে দেবতালৈ আগবঢ়োৱা হয়। সকামৰ মূল সাধু বা ভকতজনে নাম গুণ গায় আৰু জ্যেষ্ঠ এগৰাকী 'আয়ে' মুখত লগাই এঢোক-এঢোককৈ তিনিঢোক সাজ খুৱাই দিয়াৰ পাছতহে বাকী ভকতসকলে খাবলৈ আৰম্ভ কৰে। তাৰ পাছত এই মূল বাতিটোৰ পৰা সমাজত বহি থকা জ্যেষ্ঠ আটাইকেইজন ভকতক বাতিত অকনমান

অকনমান বাকি বাকি দিয়া হয়। এই মূল বাতিটোৰে সৈতে আৰু দুটা বাতি লৈ তিনিগৰাকী বা পাঁচগৰাকী আয়ে ভকতৰ সন্মুখত গৈ ভকতীয়া নাম গাই গাই প্ৰতিজন ভকতকে এঢোক এঢোক খুৱাই সেৱা কৰে আৰু পৰ্ব চলি থাকে। এনে ভকতিয়া নামত কেতিয়াবা নামঘোষা বা আন ভক্তিমূলক ভাৱ প্ৰকাশক নাম সুৰ লগাকৈ গোৱা হয়। এই সুৰ অতি চিত্তাকৰ্ষক, ইয়াত সম্পূৰ্ণ ভক্তিভাৱ জড়িত হৈ থাকে। ভকত-ভকতনীসকলে এই সময়ত সাজক্ষিনক 'দেওৰস' বুলি কয়। এনে নীতি-নিয়ম শেষ হোৱাৰ পাছতহে অন্য জ্ঞাতি বৰ্গত সাজ খাবলৈ দিব পাৰে।

ডাম বা মৃতকৰ পূজাৰ উপৰিও ডাঙৰীয়া সকাম, বৰসেৱা বা বৰসকাম, পকা ভগীয়া আই সবাহ, বিবাহ অনুষ্ঠানৰ পূৰ্বতে ন-পুৰুষৰ শ্ৰাদ্ধ, তিনি বিহু, পথাৰত প্ৰথম গোছ-ৰোৱা, ন-লগোৱা পৰ্ব আদিত সাজৰ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। এই বিষয়ে ড° সুখ বৰুৱাৰ আহোমসকলৰ ঋতুকালীন উৎসৱ প্ৰবন্ধত উল্লেখ পোৱা যায় এইদৰে —

'বহাগ বিহুৰ দৰে মাঘ বিহুতো আহোমসকলে একে কেইজন উপৰিপুৰুষক তলত উল্লেখ কৰা নৈবেদ্যসমূহ অৰ্পন কৰে। অৱশ্যে মাঘ বিহুত পিঠাৰ সলনি চাউলৰ সান্দহ, সিজোৱা কাঠআলু, গুড়, চিঙ্গৰা ফুলেৰে খনীয়া তামোল, ৰহী লাও, কলপটুৱাৰ থুলা সাজি ডাম্-দেৱলৈ আগবঢ়ায়।' [৪]

সাজ ৰাগিয়াল দ্ৰব্য যদিও আহোম সম্প্ৰদায়ৰ লোকসকলে ৰাগিয়াল বস্তুৰ দৰে ব্যৱহাৰ নকৰে। ইয়াক দৈনন্দিন জীৱন ধাৰণৰ বাবে ভাত, চাহ-জলপান খোৱাৰ দৰেই ব্যৱহাৰ কৰে। কোনোবা আপোন আলহী আহিলে সাঁচি থোৱা পুৰণা ৰহী বা লুকলাও দি আপ্যায়ন কৰে। বিয়া-সবাহ বা স্নেত বাতিত 'হাঁউৰি মতা' বা ঘৰত কিবা অনুষ্ঠান আয়োজন কৰিলে গঞাক নিমন্ত্ৰণ কৰি সাজেৰে আপ্যায়ন কৰাটো বাধ্যতামূলক। এই অনুষ্ঠানবোৰত সাজৰ এক বিশেষ মৰ্যদা আছে। বয়সস্থ ব্যক্তিক সাজ কাঁহৰ বাটিত সজায় তলে ওপৰে অকনমান কলপাত সন্মানসূচক হিচাপে দিয়া হয়। মুঠতে সাজ বা লুকলাও আহোম সমাজৰ কেৱল পৰম্পৰাগত খাদ্য নহয় একতাৰ বান্ধোন, মৰম আৰু হেঁপাহৰ জৰী আৰু আহোম সম্প্ৰদায়ৰ স্বাভিমানৰ স্বাক্ষৰ।

০.৬ সাজৰ লগত জড়িত বিশ্বাস ঃ

সাজ প্ৰস্তুতকৰণ প্ৰণালীটোৰ সৈতে আহোমসকলৰ মাজত কিছু বিশ্বাস আৰু ৰীতি-নীতি আদিৰ দিশসমূহ জড়িত হৈ আছে। যি গৰাকী ব্যক্তিয়ে সাজ প্ৰস্তুত কৰে গোটেই প্ৰক্ৰিয়াটো সম্পূৰ্ণ হোৱাৰ সময়ছোৱাত তেওঁ টেঙাজাতীয় খাদ্য নাখায়, যিটো কোঠাত প্ৰস্তুত কৰে সেই কোঠাটোলৈ যিকোনো ব্যক্তিক যাবলৈ নিদিয়ে, গ'লে সম্পূৰ্ণ শুচি হৈ ভক্তিভাৱেৰে যাব লাগে বুলি মানি আহিছে। এই বিষয়ে নগেন শইকীয়াৰ অসমীয়া মানুহৰ ইতিহাস গ্ৰন্থত উল্লেখ পোৱা যায় এইদৰে — *সাজপানী গা-ধুই, শুচি তথা 'ধুতিগাৰে' প্ৰস্তুত কৰি গোসাঁই ঘৰত ৰাখে আৰু হিন্দুধৰ্মত সোমোৱা অৰীতীয় সকামত ব্যৱহাৰ কৰে।* [৫] সাজৰ পিঠাক্ষিন ৰ'দত শুকুৱাওতে সহজতে মানুহ আহ-যাহ নকৰা অলপ আওঁহতীয়া ঠাইত শুকোৱা হয়, কাৰণ মানুহে দেখিলে সাজ বেয়া হ'ব বা মুখ লাগিব বুলি বিশ্বাস কৰে। সাজ প্ৰস্তুত কৰা আৰম্ভণি কেইদিনত পিঠা সানি ঢাকি থওঁতে কলহত ভৰোৱাৰ আগতে 'মৌ-বাঁহ' শব্দটো প্ৰয়োগ কৰে। 'মৌ-বাঁহ পকিলেনে'— এনেদৰে স-সন্মানে কয়। পৰিয়ালৰ কোনো লোকৰ মৃত্যু হ'লে বা কাৰোবাৰ ঘৰত কেচুৱা জন্ম হ'লে, আযাৰৰ সাতদিনলৈ ঘৰখন অ-শৌচ বুলি ধৰে আৰু তেতিয়া সেই ঠাইলৈ যোৱা নিষেধ। সাজ কলহৰ পৰা বাকোতে পৰিলে বা আন কেনেবাকৈ পৰি ভৰিত লাগিলে সেৱা কৰে এনেধৰণৰ বহুতো বিশ্বাস জড়িত হৈ আছে। সাজ থোৱা বা সাজ ভৰোৱা কলহটোও প্ৰস্তুতি পৰ্ব আছে, যিকোনো কলহ দোকানৰ পৰা আনি পোনচাটেই ব্যৱহাৰ কৰা নহয়। পৰিয়ালৰ বা ঘৰখনৰ জ্যেষ্ঠ এগৰাকীয়ে ভাল দিনবাৰ চাই (আউসী বা একাদশীত নহয়) জুইধৰি মাটিৰ কলহটো পুৰি পানী ভৰাই থৈ বিহলঙনী পাত সানি ৰ'দত শুকুৱাইহে সেই কলহ সাজ থ'বৰ বাবে উপযুক্ত কৰি তুলে। সৰু ল'ৰা-ছোৱালীক এই কলহটো চুবলৈ নিদিয়ে, চুলে সাজ ভাল নহ'ব বুলি বিশ্বাস কৰে। প্ৰতিবাৰেই সাজ থ'বৰ বাবে নতুন কলহ নল'বও পাৰে। পুৰণি কলহৰ সাজ এবাৰ শেষ হোৱাৰ পাছত ধুই পখালি আওহতীয়া ঠাইত ৰ'দত ভালকৈ শুকুৱাই আকৌ জুইত পুৰিহে সাজ ভৰায়। যিমানে পুৰণি কলহ হয় মৃতকৰ বা উপৰিপুৰুষৰ স্মৃতিৰ চিন বা আশীৰ্বাদ হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ ভাল পায়। সাজ মিঠা হ'লে ভাল তিৰোতা আৰু টেঙা বা বেচি চুকা হ'লে দন্দুৰী বা মুখৰা তিৰোতাৰ হাতেৰে প্ৰস্তুত কৰা বুলি জ্যেষ্ঠসকলে ওমান পায় বা সমাজত বিশ্বাস কৰে। কেতিয়াবা মৃতকৰ কিবা দুখ লাগি থাকিলেও সাজ বেয়া হয় বুলি বিশ্বাস কৰে। এটা নিৰ্দিষ্ট সকামৰ বাবে নাম কৈ আগবঢ়াই মনতে ভাবিহে সাজ প্ৰস্তুত কৰে। বেলেগ কামৰ

বাবে থোৱা সাজ বেলেগ সকামত ব্যৱহাৰ নকৰে। এনেদৰে সাজৰ লগতে জড়িত বহুতো লোকবিশ্বাস দেখিবলৈ পোৱা যায়।

০.৭ সাজৰ উপকাৰিতা আৰু অপকাৰিতা ঃ

সাজ প্ৰস্তুতকৰণত ব্যৱহাৰ কৰা সাজৰ পিঠাটোৰ চাউলগুৰি অৰ্থাৎ পিঠাগুৰিৰ লগত প্ৰকৃতিৰ বুকুত উপলব্ধ বিভিন্ন গছ লতিকা মিহলাইহে প্ৰস্তুত কৰা হয়। প্ৰত্যেক জোপা গছ ঔষধী গুণেৰে ভৰপুৰ। সেয়ে সাজৰ ঔষধী গুণৰ কথা নুই কৰিব নোৱাৰি। চাউলৰ পৰাই যিহেতু প্ৰস্তুত কৰা হয়, এই চাউলত থকা কাৰ্বহাইড্ৰেট আৰু প্ৰোটিন আমাৰ দেহৰ বাবে লাগতিয়াল। অতীতত ক্ষেত্ৰয়ক সমাজৰ লোকে দিনটো পথাৰৰ পৰা ভাগৰে-জুগৰে আহি এবাটি সাজপানী খাইহে শৰীৰটো শীতল পেলোৱাৰ লগতে কিবা অসুখ বিসুখ হ'লেও সাজ খাই দেহটো নিৰ্মূল কৰা প্ৰথা পৰম্পৰাগতভাৱে প্ৰচলন আছিল। দৈহিক শ্ৰম কৰা লোকৰ বাবে কাৰ্বহাইড্ৰেড আৰু প্ৰ'টিন যথেষ্ট পৰিমাণে প্ৰয়োজন, সাজত যিহেতু এইকেইবিধ পোৱা যায় গতিকে অতি উপকাৰী বুলিব পাৰি। শক্তিবৰ্দ্ধক পানীয় (Energy drinks) হিচাপে বনৌষধিৰ পৰা তৈয়াৰ কৰা সাজৰ প্ৰচলন অতিজৰ পৰাই আছিল। বিশেষকৈ মূত্ৰাশয় বা প্ৰেচাবজনিত ৰোগ, জণ্ডিছ, অৰ্জীণ আদি ৰোগবোৰত ৰহি খালে নিৰাময় হোৱাৰ কথা জ্যেষ্ঠসকলৰ মুখত শুনা যায়। পেটফুলা ৰোগত পুৰণি সাজ খালে একেবাৰেই নিৰ্মূল হোৱাৰ লগতে আৰু কোনো পেটৰ ৰোগ নহয় বুলি আহোম সম্প্ৰদায়ৰ সমাজত প্ৰচলিত হৈ আহিছে।

সাজৰ পিঠাত ব্যৱহাৰ কৰা জালুক, বৰ মানিমুনি সৰু মানিমুনি আদি গছবোৰৰ কথা ভেষজ বিজ্ঞান বা আয়ুৰ্বেদিক চিকিৎসাত উল্লেখ পোৱাৰ লগতে আমি দৈনন্দিন জীৱনটো প্ৰত্যেকেই ব্যৱহাৰ কৰি পাইছো। ঠিক সেইদৰে জ্বৰ বা কাহ হ'লে আদা, জালুক, জালুকৰ পাত, পিপলী, দালছেনি আদি তুলসী পাতৰ সৈতে মিহলাই থেতেলিয়াই বা ৰস উলিয়াই খালে এই ৰোগৰ পৰা নিৰ্মূল হোৱা আমি দেখি আহিছোঁ। পান অসমীয়া সমাজ জীৱনত দৈনন্দিন ব্যৱহৃত এবিধ সামগ্ৰী। সেইদৰে তেজহাগনী বা পেটৰ অসুখ হ'লে মিঠা মধুৰীৰ আগ ছোবাই বা থেতেলিয়াই ইয়াৰ ৰস খালে আৰাম পোৱা যায় আৰু এনে ৰোগত ৰূপহী থেকেৰাৰ পাতো কিছু কিছু লোকে ব্যৱহাৰ কৰা কথা সমাজত প্ৰচলন আছে। *এক কথাত ক'বলৈ গ'লে চাউলৰ উপৰিও বিভিন্ন ঔষধী গছৰ পাতেৰে প্ৰস্তুত কৰে বাবে সাজ ঔষধী গুণেৰে ভৰপুৰ।* [৬]

বহু উপকাৰী গুণেৰে ভৰপুৰ সাজৰ অপকাৰীতাও নিশ্চয় নথকা নহয়। সাজৰ পিঠা প্ৰস্তুত কৰাৰ সময়ত নিচা বঢ়াবৰ বাবে কোনো কোনোৱে উৰহীৰ শিপা আৰু অতিৰিক্ত পৰিমাণৰ ধপাত গছৰ শিপাও প্ৰয়োগ কৰা কথা শুনা যায়। কিন্তু এনে অপকাৰী বস্তু প্ৰয়োগ কৰা অনুচিত। তদুপৰি সাজত যিহেতু নিচাজাতীয় জুতি আছে বেছিকৈ খাই নিচা লাগিলে স্বাস্থ্যৰ ক্ষতি হোৱাৰ সম্ভাৱনা আছে। কাৰণ নিচা (Alcohol)ৰ অতিৰিক্ত সেৱনে মানুহৰ দেহৰ হৃদযন্ত্ৰ, লিভাৰ আৰু স্নায়ুতন্ত্ৰত ৰোগে দেখা দিয়ে লগতে নিচালাগি থকা অৱস্থাত যিকোনো অবাঞ্চিত আচৰণ কৰিলে সমাজত গৰিমা ক্ষুণ্ণ হোৱাৰ আশংকা থাকে। *লাওপানী সকাম-নিকাম উৎস-পাৰ্বন, আলহী-অতিথি সৎকাৰ সকলো দৈনন্দিন কামতে অপৰিহাৰ্য বস্তু আছিল বাবেই আহোমৰ ছশ বছৰীয়া বুৰঞ্জীত ক'তো মদাহী আৰু মাতলামিৰ কথা উল্লেখ নাই। লাওপানীক অনেকে জলপান হিচাপেও ব্যৱহাৰ কৰিছিল। কাৰণ ভাতৰ পৰা পোনপটীয়াকৈ তৈয়াৰ হোৱাৰ বাবে তাত যথেষ্ট খাদ্যপ্ৰাণ আছিল।* [৭] অৰ্থাৎ আমি একেযাৰে ক'ব পাৰোঁ যে অতিৰিক্ত সেৱন নকৰি নিয়মিত পৰিমাণে খালে একো খাদ্যই আমাৰ দেহত ক্ষতি সাধন কৰিব নোৱাৰে।

সামৰণি ঃ

সাজ প্ৰস্তুত কৰা কামত বিশেষভাৱে মহিলাসকল জড়িত হৈ থাকে, কিন্তু বৰ্তমান সময়ত আধুনিক জীৱনশৈলীত এই কামবোৰ যেন লাহে লাহে কমি গৈছে। প্ৰস্তুত প্ৰণালীটো যথেষ্ট দীঘলীয়া বাবেই সময়ৰ অভাৱ। সাজৰ পিঠাত ব্যৱহাৰ কৰা দৰৱসমূহ সকলোৱে চিনি নাপাই আৰু সহজে পাবলৈও নাই। এই দৰৱসমূহৰ কোনজোপা গছৰ পাত কিমান পৰিমাণৰ ব্যৱহাৰ কৰিব লাগে সেই কথাও জানিবলগীয়া আৰু কিমান পৰিমাণৰ ভাতৰ লগত কিমান পৰিমাণৰ পিঠা হানিলে সাজ জুতি লগা হ'ব এই কথাও লক্ষ্য কৰিবলগীয়া, কাৰণ ইয়াৰ কোনো নিৰ্দিষ্ট জোখ নাই। দীৰ্ঘদিন ধৰি সাজ বা সাজৰ পিঠা প্ৰস্তুতকৰণৰ লগত জড়িত অভিজ্ঞ ব্যক্তিয়েহে এই কথা অনুমান কৰিব পাৰে। এই দৰৱৰ পৰিমাণ কম বেছি হ'লেই ইয়াৰ জুতিও বেলেগ হয়, এই কথা মন কৰিবলগীয়া। সাজৰ পিঠাত ব্যৱহাৰ কৰা ঔষধী গুণযুক্ত গছ লতাবোৰ সংৰক্ষণৰ অতি আৱশ্যক। কিয়নো এইবোৰ আমাৰ দৈনন্দিন জীৱনৰ খাদ্য প্ৰণালীত কেতিয়াবা মছলা হিচাপে বা সৰু সুৰা ৰোগৰ দৰৱ হিচাপে ব্যৱহাৰ হৈ আহিছে। সংৰক্ষণ নকৰিলে হয়তো লুপ্ত হোৱাৰ সম্ভাৱনা থাকে। ❑

আন্ত্যটীকা ঃ

১) শইকীয়া, নগেন ঃ অসমীয়া মানুহৰ ইতিহাস, পৃষ্ঠা ১৯৬।
২) গগৈ লীলা অসমৰ সংস্কৃতি, পৃষ্ঠা ৭১
৩) http://devashruborgohain.blogs.
৪) অসমৰ বিভিন্ন জনগোষ্ঠীৰ ঋতুকালীন উৎসৱ- অনুষ্ঠান, ১৯২ পৃষ্ঠা
৫) অসমীয়া মানুহৰ ইতিহাস গ্ৰন্থত পৃষ্ঠা ৩১৪
৬) অসমীয়া মানুহৰ ইতিহাস গ্ৰন্থত পৃষ্ঠা ৩১৪
৭) গগৈ লীলা ঃ অসমৰ সংস্কৃতি, পৃষ্ঠা ৭১

সহায়ক আলোচনী ঃ

১) বৰুৱা, প্ৰদীপ (সম্পা) ঃ *প্ৰান্তিক*, ২০০১, মাৰ্চ।

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

১) কায়স্থ পুতলী (সা আৰু সম্পা) ঃ *অসমৰ বিভিন্ন জনগোষ্ঠীৰ ঋতুকালীন উৎসৱ- অনুষ্ঠান,* ষ্টুডেণ্ট ষ্টৰছ, গুৱাহাটী, প্ৰথম প্ৰকাশ, জুলাই ২০১৬
২) গগৈ, লীলা ঃ *অসমৰ সংস্কৃতি,* বনলতা, ৬ ষ্ঠ সংস্কৰণ ২০০৬, পানবজাৰ, গুৱাহাটী-০১
৩) দিহিঙীয়া, পুতুল বৰুৱা ঃ *আহোম যুগৰ ইতিহাসৰ সোনালী সফুঁৰা,* কৌস্তুভ প্ৰকাশ, প্ৰথম প্ৰকাশ, মাৰ্চ ২০০৮(৪)
ৰাজখোৱা, ড০ অজন্তা (সম্পা) ঃ *উত্তৰ পূৰ্বাঞ্চলৰ বস্তু সংস্কৃতি* -১, ভৱানী অফছেট, গুৱাহাটী -০৭ প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১৬
৪) শইকীয়া, নগেন ঃ *অসমীয়া মানুহৰ ইতিহাস,* কথা পাব্লিকেচনচ, প্ৰথম প্ৰকাশ, গুৱাহাটী, নবেম্বৰ ২০১৩
৫) শৰ্মা নবীন চন্দ্ৰ ঃ *অসমীয়া লোকসংস্কৃতিৰ আভাস,* গুৱাহাটী- বাণী প্ৰকাশ, ১৯৯৫
৬) Gogo Rudreswar, ঃ *Folk Culture of North-East India,* Saikia Printing works, Kalayan Jyot Khanikar (Edited by) First published, April 2017.
৭) Gogoi, Lila (1991) (en ভাষাত) ঃ *The History of the system Ahom administration*, Punthi Pustak, পৃষ্ঠা- 207. https : // books. gogole. co.in/books? id = VtCSAAAAIAAJ
৮) Session, North East India History Association (2003) (en ভাষাত). *Proceedings of North East India History Association The Association*. পৃষ্ঠা 113., https://books.google.co.in/books? id=eDluAAAAMAAJ.
৯) Gogoi, Lila (1991) (en ভাষাত). *The History of the system of Ahom administration*. Punthi Pustak. পৃষ্ঠা 209. https://books.google.co.in/books? id=VtcsAAAAIAAJ.
১০) Gogoi, Pushpa (1996) (en ভাষাত). *Tai of North East India*. Chumphra Printers and Publishers. পৃষ্ঠা 120. https://books.google.co.in/books? id=EBJuAAAAMAAJE.

তথ্য দাতা

	নাম	বয়স	বৃত্তি	স্থান
১)	হয়েন্তী চমুৱা শইকীয়া	৮২	গৃহিনী,	লখিমপুৰ
২)	ক্ষীৰধৰ শইকীয়া	৭৬	অৱসৰপ্ৰাপ্ত অধ্যক্ষ	লখিমপুৰ
৩)	বগেন বুঢ়াগোহাঁই	৪৫	—	ঢকুৱাখনা

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

শৈলীবিজ্ঞানৰ তত্ত্বৰ আধাৰত ‘সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ’ উপন্যাসৰ এটি আলোচনা

মিথুন দাস

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
অসম বিশ্ববিদ্যালয়
ডিফু চৌহদ-৭৮২৪৬২
৯১০১৮৮৮১৫০
mithundasmajuli@gmail.com

শিৱানী দাস

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
কুমাৰ ভাস্কৰবৰ্মা সংস্কৃত আৰু পুৰাতন অধ্যয়ন বিশ্ববিদ্যালয়
৮৬৩৮৮০৫২৭৪
sibanidas4735@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসমীয়া সাহিত্যৰ বিভিন্ন বিধাসমূহৰ ভিতৰত উপন্যাস অন্যতম। সমাজৰ বাস্তৱ ঘটনাক কল্পনাৰ জৰিয়তে সুসংহত ৰূপ প্ৰদান কৰি অসমীয়া উপন্যাসৰ সৃষ্টি হৈছে। অৰুণোদই আলোচনীৰ পাততে প্ৰথম অসমীয়া উপন্যাসধৰ্মী লেখা সৃষ্টি হৈছিল যদিও জোনাকী আলোচনীৰ পাততহে প্ৰকৃত অসমীয়া উপন্যাসৰ জন্ম আৰু বিকাশ হৈছিল বুলি ক'ব পাৰি। উপন্যাসৰ আঙ্গিক আৰু কলা-কৌশলৰ দিশৰ পৰা চাবলৈ গ'লে পদ্মনাথ গোহাঞিবৰুৱাৰ ভানুমতী প্ৰথম অসমীয়া উপন্যাস। পৰৱৰ্তী সময়ত লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা, ৰজনীকান্ত বৰদলৈ, দৈৱচন্দ্ৰ তালুকদাৰ,শৰৎ চন্দ্ৰ গোস্বামী, বিৰিঞ্চি কুমাৰ বৰুৱা আদিকে ধৰি বিভিন্ন জন ঔপন্যাসিকৰ উপন্যাস সাহিত্য দেখিবলৈ পোৱা যায় লগতে তেওঁলোকৰ সৃষ্টিৰাজিয়ে অসমীয়া উপন্যাসৰ ভঁৰাল চহকী কৰি গৈছে।

বৰ্তমান অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ অন্যতম এগৰাকী লেখত ল'বলগীয়া ঔপন্যাসিক হৈছে অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰী। একাধাৰে গল্পকাৰ আৰু ঔপন্যাসিক হিচাপে পৰিচিত অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰীয়ে হৃদয় এক বিজ্ঞাপন নামৰ উপন্যাসৰ জৰিয়তে ঔপন্যাসিক হিচাপে আত্মপ্ৰকাশ লাভ কৰে। ইয়াৰ পাছতে তেখেতে ভালেকেইখন উপন্যাস লিখি অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যলৈ অৱদান আগবঢ়াইছে। এই আলোচনাত শৈলীবিজ্ঞানৰ দৃষ্টিৰে সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ উপন্যাস খনৰ ভাষা প্ৰয়োগৰ কৌশল সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হ'ব।

বীজ শব্দ ঃ

উপন্যাস সাহিত্য, সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ, শৈলী,বাক্য, ধ্বনি, ৰূপতত্ত্ব আদি।

অৱতৰণিকা ঃ

বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ অতি সাম্প্ৰতিক সময়ৰ এটি জনপ্ৰিয় নাম হৈছে অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰী। তেখেতৰ উপন্যাসৰ স্বকীয় বিশেষত্ব দেখা যায়। আধুনিকতা আৰু প্ৰাচীনতাৰ মাজত সংঘাত, নাৰী মনস্তত্ত্ব, নৰ-নাৰীৰ প্ৰেম আদি তেওঁৰ উপন্যাসত দেখা যায়। তেওঁৰ উপন্যাসত পৰিৱেশ অনুযায়ী আৰু চৰিত্ৰৰ কাৰ্যকলাপ অনুযায়ী ভাষাৰ ভিন্ন ৰূপ প্ৰয়োগ কৰা দেখা যায়। সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ উপন্যাস খনৰ জৰিয়তে

অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰীৰ ভাষাৰ বিচাৰ কৰাৰ যথেষ্ট থল আছে।

অসমীয়া ভাষাৰ শৈলী শব্দটো ইংৰাজী Style শব্দৰ প্ৰতিশব্দ। শৈলী হৈছে ভাব প্ৰকাশৰ ধৰণ। ব্যক্তি অনুসৰি বা সাহিত্যৰ বিভিন্ন ভাগ অনুসৰি ভাষিক প্ৰকাশভংগী সুকীয়া হয়। শৈলীৰ জৰিয়তে লেখকৰ স্বকীয় পৰিচয় বহন কৰা দেখা যায়। শৈলীৰ দ্বাৰা এজন লেখকৰ আনযুগৰ এজন লেখকতকৈ পৃথকতা স্পষ্ট হৈ পৰে। শৈলী প্ৰকৃতপক্ষে এক তাত্বিক নিৰ্মিতি ই লেখকৰ ৰচনাশৈলীৰ বিশ্লেষণৰ এক বৈজ্ঞানিক পদ্ধতি। ভাষাৰ প্ৰয়োগ আৰু বিন্যাসৰ অভিনৱত্ব আলোচনা কৰাই শৈলীৰ মূল উদ্দেশ্য। আমাৰ এই আলোচনাৰ জৰিয়তে অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰীৰ সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ উপন্যাস খনৰ ভাষা শৈলী বিচাৰ কৰা হ'ব।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

(ক) অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰীৰ উপন্যাসৰ শিল্পগুণ ৰীতি, ভাববিষয়ক অৰ্থময় ৰূপত প্ৰকাশ কৰিবলৈ ঔপন্যাসিকে শব্দ নিৰ্বাচনৰ কৌশল, বাক্যৰ চাতুৰ্যতাই কিদৰে পাঠকক আৰ্কষণ কৰিছে সেয়া অধ্যয়ন কৰা।

(খ) অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰীৰ উপন্যাসত কিদৰে ধ্বনিগত উপাদনৰ প্ৰয়োগ কৰিছে তাৰ পদ্ধতিগত অধ্যয়ন কৰা।

(গ) অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰীৰ উপন্যাসৰ ভাষাৰ স্বকীয়তা আৰু বৈশিষ্ট্য নিৰ্ণয় কৰা।

অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

এই আলোচনাৰ জৰিয়তে অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰীৰ "সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ" উপন্যাস খনৰ ভাষিক প্ৰসংগৰ দিশটো শৈলী বিজ্ঞানৰ দৃষ্টিৰে আলোচনা কৰা হ'ব।

বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ উপন্যাসৰ ভাষিক প্ৰসংগ-

ভাষাশৈলী ঃ অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰীৰ উপন্যাসৰ ভাষাশৈলী স্বকীয় বৈশিষ্ট্য বিদ্যমান। বিভিন্ন ভাষাৰ প্ৰয়োগ, চৰিত্ৰই দাবী কৰা অনুযায়ী ভাষা লগতে পৰিস্থিতি অনুসৰি ভিন্ন ভাষা প্ৰয়োগ দেখা যায়।

উপন্যাসখনৰ গদ্যশৈলীৰ উদাহৰণ ঃ

বৰ্ণনাত্মক শৈলী ঃ "পাণবজাৰৰ কাউৰীকেইটা নিলাজ আৰু সাহসিয়ালো। বিহাৰীবাবুৰে গুমটিৰ ভিতৰৰ পৰা দীঘল ঝাড়ুটো আনি খেদোতেও কাউৰীকেইটাই উৰিবলৈ মন নকৰি

প্ৰায় খোজ কাঢ়ি বিৰক্তিৰে আঁতৰি দিলে। কাউৰীকেইটা দেখি শেখৰৰ হাঁহি উঠি গ'ল। বিহাৰীবাবুৰে বাল্টিৰ পৰা মগেৰে পানী লৈ ফুটপাথৰ চাৰিওফালে ছটিয়ালে আৰু গুমটিৰ ভিতৰৰ পৰা ধূপৰ পেকেট এটা উলিয়াই আনিলে। পাণবজাৰৰ আন দোকানবোৰৰ শ্বাটাৰ তেতিয়াও বন্ধ।" (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ,পৃষ্ঠা ১৫)

বৰ্ণনাত্মক চিত্ৰধৰ্মী শৈলী ঃ শেখৰে কেনেকৈ ক'ব, এই টো খেলা চুলিখিনিয়ে তাৰ মাজে মাজে টোপনি হৰে বুলি। শেখৰক এনেদৰে নিমাতে থকা দেখিলে চকু ডাঙৰ কৰি প্ৰণামীয়ে সোধে-কি হ'ল-- কি ভেবা লাগি চাইছা? শেখৰে প্ৰণামীৰ আই-লাইনাৰে তীক্ষ্ণ আৰু চঞ্চল কৰি তোলা চকুহালৰ মাজত কাজলবিহীন আজলী চকুহাল বিচাৰি ফুৰে তেতিয়া। (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ,পৃষ্ঠা ১৯)

চিন্তামূলক শৈলী ঃ এজ্মা ৰোগী মাকে সংসাৰ, চাকৰি আৰু নিজৰ অসুখ একেলগেই চম্ভালিছে। শেখৰে সৰুৰে পৰাই এই সকলোবোৰ দেখিছে। সি যেতিয়া মেট্ৰিকত নৰৈ

শতাংশ পাই পাছ কৰিছিল, মাকে মূৰত হাত ফুৰাই কৈছিল-- তই নিজে কি ভাব সেয়াহে ডাঙৰ কথা বাচা, আমি সহায়হে কৰিব পাৰিম। পঢ়া কালছোৱাত আগলৈ কিমান টকা ঘটিম, সেই ভাবি নপঢ়িবি। জীৱনত সকলো পাব পাৰি, সুখ পাবলৈহে টান। সন্তানৰ সুখেই আমাৰ পৰম সুখ। শেখৰে মাকৰ এই কথাকেইটা মাজে মাজে মনত পেলায়। (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ,পৃষ্ঠা ২২)

যুক্তিনিষ্ঠ শৈলী ঃ উফ্, পঢ়া নহয় যেন ঘোঁৰাৰ ৰে'চ। মেট্ৰিক দিয়াৰে পৰা ময়ো এইবোৰ শুনি শুনি বলিয়া হৈ যাম যেন লাগিছে। কেতিয়াবা ইচ্ছা হয়, এই সমাজৰ পৰা পলাই যাওঁ। --শিখাৰ দৰে শান্ত ছোৱালী এজনীয়ে হঠাতে এইদৰে কথাবোৰ কৈ দিয়াত সকলো আচৰিত হ'ল। প্ৰণামীয়ে হাত-চাপৰি বজাই ক'লে--বাহ্, আজিহে বহ্নিশিখা নামটো সাৰ্থক হৈছে। আমি এনেয়ে জোকাইছিলো,নিমাতীৰ নাম কেনেকৈ বহ্নিশিখা হ'ল বুলি। (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ,পৃষ্ঠা ২৬)

নাটকীয় শৈলী ঃ

ঃ একো নাই হোৱা, এনেকৈ মোক মোৰ মা-দেউতায়ো চোৱা নাই আজিলৈকে ---নহ'লে...।

ঃ নহ'লে কি? সি হাঁহি হাঁহি সুধিছিল।

ঃ নহ'লে মোৰ ওপৰত ইমান খং নহ'লহেঁতেন..

ঃ মাক-দেউতাকে নিজৰ ছোৱালীক খং নকৰে...

ঃ কৰে, দাবী পূৰণ কৰিব নোৱাৰিলে মাক-দেউতাক হতাশ হয়। তোমাৰ কোনো দাবী নাই নেকি মোৰ ওচৰত? (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ,পৃষ্ঠা ৩১)

কথোপকথন শৈলী ঃ

ঃ তুমি কি ক'ব খুজিছা শেখৰ।

ঃ একো ক'ব খোজা নাই, ছিংৰা আৰু খাবা নেকি? বাই দা ৰে তুমি দিল্লীলৈ কেতিয়া যাবা?

ঃ একে লগে দুটা প্ৰশ্ন কৰিছা যে - ছিংৰা নাখাওঁ। মই তোমাক লগ নাপাম। আজি ৰাতি যাম দিল্লীলৈ। মোৰ সৈতে মোৰ মামা যাব।

ঃ মোক কিয় লগ পাই যাব লাগে? শেখৰে প্ৰণামীলৈ নোচোৱাকৈ চাহত চুমুক দি সুধিলে।

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ, পৃষ্ঠা ৫৪)

প্ৰশ্নবোধক শৈলী ঃ

ঃ কি পঢ়িলা?

ঃ মই আৰ্টছ গ্ৰেজুৱেট। তুমি গ্ৰেজুৱেচন ল'লা নেকি?

ঃ নাই লোৱা, আৰু কেইমাহমানৰ পিছত ল'ম। ইক'নমিক্স মোৰ বিষয়।

ঃ ভাল---বৰ ভাল। এমিলিয়ে মূৰ জোকাৰি ক'লে। কিন্তু তাৰ লগে লগেই সুধিলে,ইংৰাজবোৰৰ ওপৰত তোমালোকৰ কি ধাৰণা? (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ,পৃষ্ঠা ৭০)

ভাষাবৈজ্ঞানিক প্ৰসঙ্গ ঃ

(ক) ধ্বনিতাত্ত্বিক প্ৰসঙ্গ

(খ) ৰূপতাত্ত্বিক প্ৰসঙ্গ

(গ) শব্দগত প্ৰসঙ্গ

(ঘ) বাক্যগত প্ৰসঙ্গ

(ক) ধ্বনিৰ মিল অমিল - উপন্যাস খনৰ মাজেৰে ব্যৱহাৰ কৰা ছান্দিক পংক্তিবোৰ আৱয়বিক ৰূপৰ ক্ষেত্ৰত শেষৰ ধ্বনি মিল থকাটো সাধাৰণ বৈশিষ্ট্য -

(ক) সকলো পানী চালি মোক শুনালা
আদৰ্শ আৰু নীতিৰ পৱিত্ৰতা
(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ, ৫০)

(খ) জেৰুজালেমৰ পৰা মক্কালৈ
গংগাৰ পৰা লুইতলৈ
(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ, ৫০)

অমিল-

(ক) বোকাৰ কঁঠীয়াৰ দৰে
দেৱদূত হ'ব নোখোজো
(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ. ৫০)

(খ) জোনাকীৰ দৰে
দেখিমনে তোমাৰ মন।
(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ. ১৬৭)

(গ) বুকুৰ শূন্যতাত ওলমিল
বসন্তই এৰি অহা
হালধি ৰঙী সপোন।
(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ ,১৬৭)

ধ্বনি পৰিৱৰ্তন প্ৰক্ৰিয়া ঃ

ধ্বনিলোপ -

মান্যভাষা	উপন্যাসৰ ভাষা
দেউতা	দে'তা (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ,৬৭)
গুৱাহাটী	গৌহাটী (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ ,৬১)

স্বত অনুনাসিকীভৱন ঃ

হৰ্ষ > হাঁহি (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ ,৬০)

ওষ্ঠ > ওঁঠ (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ ,২৩)

পৰাগত সমীভৱন ঃ

ন- থাক-এ --নাথাকে (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ ,১৮০)

ন - যাওঁ --নাযাওঁ (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ ,১৮২)

ধ্বন্যাত্মক প্ৰয়োগ –

১) মাত-বোল ঃ বহুপৰলৈ মাত-বোল নাছিল সিহঁতৰ, (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ, ৩৪)

ওচৰা-ওচৰিকৈ ঃ ওচৰা-ওচৰিকৈ বহি অহাৰ শিহৰণত দুয়ো বাক্‌ৰুদ্ধ হৈ পৰিছিল।

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ.৩৪)

ঘামি-জামি ঃ তাই ভয়ত নে গৰমত ঘামি-জামি ৰঙা পৰি আছিল। (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ , ৩৪)

ৰূপতাত্ত্বিক প্ৰসঙ্গ ঃ

বিশেষণৰ প্ৰয়োগ-

মিঠাবৰণীয়া ছোৱালী (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ. ১৮)

লাফাংগা ল'ৰা (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ. ২৪)

সৰুফুটীয়া সাংবাদিক (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ. ৩০)

নিৰ্দিষ্টতাবাচক প্ৰত্যয়ৰ প্ৰয়োগ ঃ

দুই চৰ মাৰিম (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ. ৪৭)

চকু দুটা ৰঙা (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ.৪৭)

তিনিটা শ্ৰেণী (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.৪৮)

মেনু এখন (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ. ৫২)

অনিৰ্দিষ্টতাবাচক প্ৰত্যয়ৰ প্ৰয়োগ ঃ

ঘৰবোৰ (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ.৭৭)

চৰাইবোৰ (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ.৭৭)

নাওবোৰ (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ.৭৭)

বহুবচনাত্মক প্ৰত্যয়ৰ ব্যৱহাৰ ঃ

এইবোৰ (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ. ৪০)

সিহঁত (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ. ৪৫)

তহঁত (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰপৃ. ৪৪) আদি

লিঙ্গবাচক শব্দৰ প্ৰয়োগ ঃ

উপন্যাসখনত লিঙ্গবাচক শব্দৰ বহুকেইটা উদাহৰণ পোৱা গৈছে। তাৰ ভিতৰত -

পু	**স্ত্ৰী**
মা	দেউতা
ল'ৰা	ছোৱালী
পতি	পত্নী
ভাই	ভনী
পিতৃ	মাতৃ
পেহা	পেহী আদি

শব্দগত প্ৰয়োগ ঃ

উপন্যাসখনৰ মাজেৰে ভিন ভিন ভাষাৰ শব্দ প্ৰয়োগ ঘটিছে। তাৰ ভিতৰত-

হিন্দী শব্দ - আৰে কি ফটাবি, দাণ্ডা লগাবি, আকল কা কচ্চা,অপনা , জিগৰ কা টুকৰা্

ইংৰাজী শব্দ - মেক আপ,অফ্ কৰ্ছ, ইন্টাৰেষ্টিং, বিউটিফুল, নাথিং, ড'ন্ট বিলিভ, ইনছাল্ট, ক্ৰিমিনেলছ আদি।

সংখ্যাবাচক শব্দ-এইট্টি ফাইভ,এঘাৰটা যোল্ল, চাৰি হেজাৰ, সত্তৰ শতাংশ আদি।

যুৱীয়া শব্দৰ প্ৰয়োগ ঃ

উপন্যাসখনৰ মাজেৰে ভালেখিনি যুৱীয়া শব্দৰ প্ৰয়োগ ঘটিছে। তেনে কিছুমান শব্দ তলত দিয়াধৰণৰ-

দৌৰা-দৌৰি

বয়-বস্তু

ঠায়ে-ঠায়ে

মুখে-মুখে

ৰাম-ৰাম আদি।

ফকৰাৰ ব্যৱহাৰ ঃ

গৰুৰ আগত টোকাৰী বজোৱা

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ,পৃ. ২৩)

বান্দৰে নাৰিকলৰ মোল নুবুজা

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ,পৃ. ২৩)

গছত গৰু উঠা কথা

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ,পৃ. ৪০) আদি।

বাক্যগত প্ৰসংগ ঃ

কৰ্তা + কৰ্ম + ক্ৰিয়া

মই মানে যোৱা মাহত গুৱাহাটীলৈ আহোতে তেওঁক লগ পাইছিলো। (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ,পৃ. ৩৩)

কৰ্ম +কৰ্তা +ক্ৰিয়া

মানুহজনী ভিতৰলৈ সোমাই যাব খুজি উভতি চাই ক'লে (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.৩২)

ক্ৰিয়া + কৰ্ম +ক্ৰিয়া

ব'লক মেডাম আপুনি আমাৰ অফিচত বহিব

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.২৮)

কৰ্তাহীন বাক্যৰ প্ৰয়োগ ঃ

পৰীক্ষাৰ ৰিজাল্টৰ বাবে বোধ হয়.....

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.২৮)

সৰল বাক্য ঃ

ল'ৰাজন ইমান ভাল - বিদিশাই চকু ঘোপা কৰি মৈত্ৰীলৈ চালে। (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.৯২)

যৌগিক বাক্য ঃ

আচৰিত তই - ৰাজদ্বীপৰ বন্ধু তেওঁ। মোৰ নিজৰ জীৱন, নিজা সিদ্ধান্ত, নিজা পছন্দ বেলেগ হ'ব পাৰে। মই এতিয়া একো নাভাবিবও পাৰো। ইজ ইট আ মাৰ্কেট - জাষ্ট ছী এণ্ড বাই - এনিৱে, বৰ ভাল লাগিল আপোনাক লগ পাই। (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.৯২)

তই বাৰু ঘৰৰ পছন্দ মতেই বিয়া হ'নি নীৰা - তাৰ পিচত এদিন লক্ষ্মী বোৱাৰী হৈ স্বামী আৰাধনা কৰি চকু মুদি থাকোতে দেখিবি,ঘৰৰ বনকৰা ছোৱালীজনী প্ৰেগ্‌নেণ্ট - হাঁ-হাঁকৈ হাঁহি সুলেখাই নীৰাক জোকালে। (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ. ৯৫)

প্ৰশ্নসূচক বাক্য ঃ

ইমান ফাষ্ট হোৱাটো জানো ভাল কথা ?

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.৮৬)

ভোক লগা নাইনে ? (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ. ৮২)

উলিয়াম ৰবিনছন তোমালোকৰ কিবা সম্পৰ্কীয় নেকি ?

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.৭৬)

অলংকাৰিক প্ৰয়োগ ঃ

ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ শীতল জলৰাশি আৰু দিগন্ত ব্যাপী থকা নীলিম ৰেখাডাল। (সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.৭৭)

গুলপীয়া কোমল আঙুলিৰে কাঁহৰ কাঁহীৰ কাষত দিয়া খাৰ, পিটিকা আনি জিভাত দি চুপি খোৱাৰ দৃশ্য, ইন্টাৰনেটৰ পৰা শিকা অসমীয়া 'মোৰ ভাল', 'ক'ত যাম'?

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.৮৪)

মধুযামিনীৰ অৱসাদ ভাঙি এৰামুৰি দিয়া কইনাৰ দৰেই ৰাতিপুৱাৰ পাণবজাৰ,সপ্ৰতিভ হৈ উঠা নাই তেতিয়াও।

(সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ পৃ.১৫)

উপসংহাৰ ঃ

অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰীৰ ভাষাশৈলী স্বকীয় বৈশিষ্ট্যৰে পূৰ্ণ। ভাষাৰে ভাৱক স্পষ্টৰূপত ফুটাই তোলা দেখা যায়। উপন্যাসৰ অন্তনিহিত বিষয় বস্তু সঠিক ৰূপত প্ৰকাশ কৰিবলৈ উপযুক্ত ভাৱৰ লগত সংগতি থকা ধ্বনি, ৰূপ, শব্দ আৰু বাক্যৰ ব্যৱহাৰ দেখা যায়। অনুৰাধা শৰ্মা পূজাৰীৰ উপন্যাসৰ উপস্থাপন শৈলীয়ে একক আৰু অনন্য ৰূপ প্ৰদান কৰিছে। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

কোঁৱৰ, অৰ্পণা। *ভাষাবিজ্ঞান উপক্ৰমণিকা*। ডিব্ৰুগড় ঃ বনলতা। পঞ্চম সংস্কৰণ, ২০০৮

দত্ত বৰুৱা, ফণীন্দ্ৰ নাৰায়ন। *প্ৰয়োগ ভাষাবিজ্ঞানৰ ৰূপৰেখা*। গুৱাহাটী ঃ বিশাল প্ৰকাশন। প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৯১

নেওগ, সুব্ৰত জ্যোতি। *শৈলীবিজ্ঞান আৰু অসমীয়া সাহিত্যৰ শৈলী*। গুৱাহাটী ঃ বনলতা। প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১৫

পূজাৰী, অনুৰাধা শৰ্মা। *সোণ হৰিণৰ চেঁকুৰ*। গুৱাহাটী ঃ চন্দ্ৰপাকাশ। অষ্টম প্ৰকাশ, ২০২২

শৰ্মা,অনুৰাধা। *শৈলী আৰু শৈলীবিজ্ঞান*। গুৱাহাটী ঃ বান্ধৱ। তৃতীয় সংস্কৰণ, ২০১৫

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমৰ খাদ্য সুৰক্ষা ব্যৱস্থা আৰু মহিলাৰ ওপৰত গুৰুত্ব

ৰূপালী তালুকদাৰ

সহকাৰী অধ্যাপিকা, অৰ্থনীতি বিভাগ
খাগৰিজান মহাবিদ্যালয়, নগাঁও-৭৮২০০৩
৯১০১০২৬৫১৯
rupalitalukdar1992@gmail.com

ড° পৰাগ দত্ত

সহযোগী অধ্যাপক, অৰ্থনীতি বিভাগ
কৃষ্ণ কান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়
খানাপাৰা, গুৱাহাটী-৭৮১০১৭
৮৪৮৬৮৮১৪৩২

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসম ৰাজ্যৰ শিশু আৰু মহিলাসকলৰ মাজত পুষ্টিহীনতা জনস্বাস্থ্যৰ এক উল্লেখযোগ্য চিন্তাৰ বিষয়। ইয়াক কেন্দ্ৰ কৰি অসম চৰকাৰে ৰাজ্যিক ভাৱে বিভিন্ন আঁচনি ৰূপায়ণ কৰি আহিছে। অসম চৰকাৰৰ অৰুণোদয় আঁচনি হৈছে তেনে এক আঁচনি। এই আঁচনিৰ লক্ষ্য হৈছে দৰিদ্ৰ পৰিয়ালৰ মহিলাসকলক লক্ষ্য কৰা, মহিলাসকলক উন্নত পুষ্টি লাভ কৰিবলৈ সক্ষম কৰা। অসম চৰকাৰে ২০২০ চনৰ ২ অক্টোবৰ মাহত আৰম্ভ কৰা অৰুণোদয় আঁচনিখনে দৰিদ্ৰ পৰিয়াল, বিশেষকৈ তেনে পৰিয়ালৰ মহিলাসকলক লক্ষ্য কৰি তেওঁলোকৰ পুষ্টিৰ পৰিমাণ বৃদ্ধিৰ লক্ষ্য কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰিছে। ৰাজহুৱা বিতৰণ ব্যৱস্থা (Public Distribution System) ৰ দ্বাৰা পৰম্পৰাগত খাদ্য ৰাজসাহায্যৰ ব্যৱস্থায়ে মূলতঃ সীমিত সংখ্যক খাদ্য যেনে - চাউল, ঘেঁহু আৰু চেনি আগবঢ়ায়, যিটো বৈচিত্ৰময় খাদ্যৰ পুষ্টিৰ বাবে অপৰ্যাপ্ত। এই ব্যৱধান পূৰ্ণ কৰি অসমৰ চৰকাৰে আৰ্থিক সাহায্য (Direct Benefit Transfer)ক পৰিপূৰক হিচাপে লৈ দৰিদ্ৰ পৰিয়ালসমূহে শাক-পাচলি, দাইল, ফল-মূল আদি অত্যাৱশ্যকীয় পুষ্টিকৰ সামগ্ৰী ক্ৰয় কৰিবলৈ সক্ষম কৰাৰ প্ৰয়াস কৰিছে। আঁচনিখনৰ সফলতা হিতাধিকাৰীসকলে এই ধনৰ ফলপ্ৰসু ব্যৱহাৰৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল। এই অধ্যয়নে অৰুণোদয় আঁচনিৰ বৰ্ণনাত্মক বিশ্লেষণ আগবঢ়াবলৈ চেষ্টা কৰিছে।

সূচক শব্দ ঃ

অৰুণোদয় আঁচনি, খাদ্য ৰাজসাহায্য, ৰাজহুৱা বিতৰণ ব্যৱস্থা, আৰ্থিক সাহায্য।

অৱতৰণিকা ঃ

বিশ্বৰ বহু উন্নয়নশীল দেশে খাদ্যৰ ওপৰত ৰাজসাহায্য (Subsidy) প্ৰদান কৰে সেয়া মূলতে বস্তুগত বা নগদ ধনৰ ৰূপত হোৱা দেখা যায়। ১৯৪২ চনৰ পৰা ৰাজহুৱা বিতৰণ ব্যৱস্থা (Public Distribution System)ৰ বিকাশৰ পৰা বহু বছৰ অতিক্ৰম কৰা ভাৰতৰো এই ক্ষেত্ৰত স্থান হ'ল অন্যতম। কিন্তু ভাৰতত খাদ্য ৰাজসাহায্য (Food Subsidy) বস্তুগত ৰূপত প্ৰদান কৰাৰ এক যুগ পুৰণি পৰম্পৰা আছে। আকৌ ভাৰতত খাদ্য ৰাজসাহায্য মূলতঃ শস্যৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি দিয়া হয়। আমাৰ খাদ্য ৰাজসাহায্য কাৰ্যসূচীৰ বিভিন্ন দিশত সমালোচনা হৈ থকা পৰিলক্ষিত হয় আৰু তাৰে এটা হ'ল ইয়াৰ সীমিত খাদ্যৰ টোপোলা। খাদ্য ৰাজসাহায্যৰ ব্যৱস্থাৰ দ্বাৰা খাদ্য সুৰক্ষা লাভৰ দিশত লক্ষ্য স্থাপন কৰাৰ সমান্তৰালভাৱে খাদ্য সুৰক্ষাৰ (Food Subsidy) মানক সংজ্ঞাটো প্ৰথমে বুজাটো অতিকৈ গুৰুত্বপূৰ্ণ। ৰাষ্ট্ৰসংঘৰ খাদ্য আৰু কৃষি সংস্থাই (FAO) খাদ্য

সুৰক্ষাক এনে পৰিস্থিতি হিচাপে সংজ্ঞায়িত কৰে যেতিয়া সকলো লোকে, সকলো সময়তে, পৰ্যাপ্ত, নিৰাপদ আৰু পুষ্টিকৰ খাদ্যৰ শাৰীৰিক, সামাজিক আৰু অৰ্থনৈতিক সুবিধা লাভ কৰে যিয়ে তেওঁলোকৰ খাদ্যৰ প্ৰয়োজনীয়তা আৰু সক্ৰিয় এজনৰ বাবে খাদ্যৰ পছন্দ পূৰণ কৰে আৰু সুস্থ জীৱন প্ৰদান কৰে। সেয়ে ভাৰতৰ একাংশ ৰাজ্যই এতিয়া কেন্দ্ৰীয় খাদ্য ৰাজসাহায্যৰ টোপোলাৰ সমান্তৰালভাৱে ৰাজ্যিক বাজেটৰ পৰা খাদ্য ৰাজসাহায্যৰ ক্ষেত্ৰত সাধাৰণ পৰম্পৰাগত খাদ্য যেনে চাউল, দাইল ইত্যাদিৰ উপৰিও অন্য পুষ্টিকৰ খাদ্য বস্তু অন্তৰ্ভুক্ত কৰাৰ চেষ্টা চলাইছে। অসম চৰকাৰেও কেন্দ্ৰীয় ৰাজসাহায্যৰ সমান্তৰালভাৱে ৰাজ্যিক বাজেটৰ পৰা অতিৰিক্ত খাদ্য ৰাজসাহায্য প্ৰদানৰ চেষ্টা চলাই আহিছে। শেহতীয়াকৈ অসম চৰকাৰে কিছুমান বিশেষ শ্ৰেণীৰ হিতাধিকাৰীক খাদ্য ৰাজসাহায্য প্ৰদানৰ বাবে সৰ্ববৃহৎ প্ৰত্যক্ষ সুবিধা হস্তান্তৰ আঁচনি (Direct Benefit Transfer) অৰুণোদয় আঁচনি প্ৰৱৰ্তন কৰিছে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ মহিলাৰ পুষ্টিৰ ওপৰত অৰুণোদয় আঁচনিৰ প্ৰয়োজনীয়তা সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ এই অধ্যয়নটো হৈছে অসমৰ মহিলাৰ পুষ্টি আৰু স্বাস্থ্যৰ ওপৰত অৰুণোদয় আঁচনিৰ সম্ভাব্য প্ৰভাৱ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাৰ লক্ষ্যৰে এক বিশ্লেষাণাত্মক অনুসন্ধান। আঁচনিখনৰ ৰূপায়নৰ বিভিন্ন দিশ আৰু ইয়াৰ প্ৰয়োজনীয়তা পৰীক্ষা কৰি এই অধ্যয়নে আৰ্থিক সাহায্যই অসমৰ মহিলাসকসলৰ মংগলৰ ওপৰত কেনে প্ৰভাৱ পেলায় তাৰ এক বিস্তৃত মূল্যায়ন প্ৰদান কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ মূল বিষয়বস্তু ঃ ভাৰতত খাদ্য সুৰক্ষাক বস্তুগত খাদ্য ৰাজসাহায্যৰ জৰিয়তে প্ৰসাৰ কৰাৰ দীৰ্ঘদিনীয়া পৰম্পৰা আছে, বিশেষকৈ ৰাজহুৱা বিতৰণ ব্যৱস্থা (Public Distribution System)ৰ ই প্ৰধান লক্ষ্য। ৰাজসাহায্যযুক্ত মূল্যত দৰিদ্ৰ লোকৰ বাবে খাদ্য শস্যৰ উপলব্ধতা নিশ্চিত কৰিবলৈ প্ৰৱৰ্তন কৰা ৰাজহুৱা বিতৰণ ব্যৱস্থা (Public Distribution System)ত এতিয়ালৈ চৰকাৰে বিভিন্ন সংস্কাৰ সাধন কৰি আহিছে।

ভাৰতত খাদ্য ৰাজসাহায্য কিয় এক প্ৰয়োজনীয় বিষয়? এই প্ৰশ্নটোৰ উত্তৰ পাবলৈ হ'লে আমি প্ৰথমে ভাৰতৰ বিভিন্ন পুষ্টিৰ দিশসমূহ ভালদৰে জানি লোৱাটো জৰুৰী। ২০১৫ চনৰ ১৭ টা লক্ষ্যৰে আৰম্ভ কৰা বহনক্ষম উন্নয়নৰ লক্ষ্যসমূহে মানৱ উন্নয়নৰ তিনিটা দিশৰ ওপৰত গুৰুত্ব প্ৰদান কৰে। এই দিশসমূহ হ'ল সামাজিক, অৰ্থনৈতিক আৰু পৰিৱেশিগত। অধিক নিৰ্দ্দিষ্টভাৱে ক'বলৈ গ'লে দ্বিতীয় লক্ষ্যটোৱে শূণ্য ক্ষুধা, খাদ্য সুৰক্ষা, উন্নত পুষ্টি আৰু বহনক্ষম কৃষিক লক্ষ্য কৰি লৈছে। ক্ষুধাৰ অন্ত পেলাবলৈ আৰু খাদ্য সুৰক্ষা লাভৰ বাবে গুৰুত্বপূৰ্ণ মাত্ৰাসমূহ হ'ল খাদ্য শস্যৰ উপলব্ধতা, খাদ্য শস্যৰ সুবিধা আৰু খাদ্যৰ ব্যৱহাৰ। খাদ্য শস্যৰ উপলব্ধতাৰ ভিত্তিত সফলতা বিচাৰি পোৱাৰ সমান্তৰালভাৱে ভাৰতে বৰ্তমান ঘৰুৱা উৎপাদনেৰে স্বাৱলম্বীতা লাভ কৰিছে। ১৯৬০ চনৰ ভাৰতৰ বিশাল সেউজ বিপ্লৱ কাৰ্যসূচীৰ সফলতাৰ লগে লগে এয়া সম্ভৱ হৈ উঠে। তাৰ বাবেই ১৯৭০ চনৰ পৰা ভাৰতে নিজৰ ঘৰুৱা উৎপাদনৰ পৰা ৰাজসাহায্যযুক্ত খাদ্য শস্য যোগান ধৰাত সম্পূৰ্ণ স্বাধীন হৈ পৰে। সেয়েহে খাদ্য ৰাজসাহায্যৰ ব্যয়ও ১৯৭০ চনৰ পৰা যথেষ্ট হৈ উঠিছিল। খাদ্যৰ সুলভতা হ'ল খাদ্য সুৰক্ষা আৰু শূণ্য ক্ষুধা লাভৰ আন এক পদক্ষেপ। খাদ্যৰ প্ৰাপ্তিৰ অৰ্থ হ'ল খোৱাৰ বাবে খাদ্য লাভ কৰাৰ ক্ষেত্ৰত মানুহৰ সামৰ্থ্য। এই ক্ষেত্ৰত ভাৰত চৰকাৰে সমাজৰ দৰিদ্ৰ আৰু দুৰ্বল শ্ৰেণীৰ লোকসকলক খাদ্যৰ ক্ষেত্ৰত ৰাজসাহায্য প্ৰদান কৰে, কাৰণ তেওঁলোকে নিজৰ বাজেটৰ পৰা খাদ্য পৰ্যাপ্ত পৰিমাণে লাভ কৰিব নোৱাৰে। সেয়েহে, ভাৰত চৰকাৰে বিভিন্ন খাদ্য ৰাজসাহায্য কাৰ্যসূচী ৰূপায়ণ কৰিছে। কাৰ্যসূচীসমূহক ৰাজহুৱা বিতৰণ ব্যৱস্থা (Public Distribution System) আৰু অন্যান্য কল্যাণমূলক আঁচনিসমূহত (Welfare Scjhemes) ব্যাপকভাৱে শ্ৰেণীভুক্ত কৰিব পাৰি।

ভাৰতৰ খাদ্য ৰাজসাহায্য কাৰ্যসূচী বিশ্বৰ এক অন্যতম বৃহৎ খাদ্য ৰাজসাহায্য কাৰ্যসূচী। ই আমাৰ দেশৰ মুঠ জনসংখ্যাৰ প্ৰায় দুই তৃতীয়াংশ সামৰি লৈছে। আমাৰ খাদ্য ৰাজসাহায্য কাৰ্যসূচীয়ে সমাজৰ দৰিদ্ৰ আৰু দুৰ্বল শ্ৰেণীৰ লোকসকলৰ বাবে খাদ্য শস্যৰ সুলভতা বৃদ্ধি কৰে। ভাৰতে ১৯৪২ চনত ৰাজহুৱা বিতৰণ ব্যৱস্থা আৰম্ভ কৰিছিল যাৰ অধীনত খাদ্য ৰাজসাহায্যৰ প্ৰধান অংশ দৰিদ্ৰ লোকসকলৰ হাতলৈ গৈছিল। এই বছৰটোৰ পৰা দেশখনে কিছু পৰিমাণে ভোকৰ সমস্যা সমাধানৰ ক্ষেত্ৰত লক্ষণীয়ভাৱে অগ্ৰগতি লাভ কৰিছে। কিন্তু, এতিয়াও ২০২০ চনত বিশ্ব ক্ষুধা সূচকাংকত (World Hunger Index) ১০৭ খন দেশৰ ভিতৰত দেশখন ৯৪ নম্বৰ স্থানত আছে। ভাৰতত খাদ্য ৰাজসাহায্য কাৰ্যসূচী মূলতঃ সীমিত শস্যকেন্দ্ৰিক। গতিকে খাদ্য সুৰক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত দেশখন সঁচা অৰ্থত সফল হৈছে নে নাই সেয়া সদায়

প্ৰশ্নবোধক। এইটো সঁচা যে আমাৰ শস্যকেন্দ্ৰিক খাদ্য ৰাজসাহায্য কাৰ্যসূচীয়ে হিতাধিকাৰীসকলৰ লক্ষ্য নিৰ্ধাৰণ কৰা অংশটোক কাৰ্বহাইড্ৰেট লাভ কৰাত সহায় কৰিব পাৰে। কিন্তু সেইবোৰ শস্যত সাধাৰণতে অণুপুষ্টিকৰ (Micronutrients) উপাদান কম থাকে। পৰ্যাপ্ত অণুপুষ্টিকৰ পদাৰ্থ শোষণ কৰাৰ দুৰ্গমতা হৈছে এক প্ৰকাৰৰ অদৃশ্য ভোকৰ অৱস্থা। অণুপুষ্টিকৰ উপাদানৰ অভাৱ দেশত ক্ৰমাৎ চিন্তাৰ বিষয় হৈ পৰিছে কাৰণ ইয়াৰ ফলত স্বাস্থ্যৰ অৱনতি ঘটে, ৰোগ আৰু উৎপাদনশীলতা কম হয়। খাদ্যত অণুপুষ্টিকৰ অভাৱৰ সমস্যাটো সমাধান কৰিবলৈ খাদ্যৰ বৈচিত্ৰ্য অৰ্থাৎ খাদ্যৰ টোপোলাটোত ভিন্ন খাদ্যৰ উপস্থিতি দৰকাৰী। খাদ্যৰ বৈচিত্ৰ্যতা কেৱল মানুহে খাদ্যৰ টোপোলাটোৰ বৈচিত্ৰ্যতা প্ৰদানৰ জৰিয়তেহে সম্ভৱ। গতিকে আমাৰ খাদ্য ৰাজসাহায্য কাৰ্যসূচীয়ে প্ৰকৃত অৰ্থত খাদ্য সুৰক্ষা লাভ কৰিবলৈ ডাঙৰৰ লগতে সৰু পুষ্টি দুয়োটাৰ প্ৰয়োজনীয়তা পূৰণ কৰাৰ চেষ্টা কৰা উচিত।

খাদ্য ৰাজসাহায্য আৰু অৰ্থ ৰাজসাহায্যৰ অসমত সংমিশ্ৰিত অৱদান ঃ

ভাৰতৰ খাদ্য ৰাজসাহায্য ব্যৱস্থাটো মূলতঃ কেন্দ্ৰীয় চৰকাৰে পৰিচালনা কৰে যদিও ১৯৯৭ চনৰ পৰা বিকেন্দ্ৰীকৃত ক্ৰয় আঁচনিৰ দ্বাৰা খাদ্য শস্য ক্ৰয় ব্যৱস্থাৰ প্ৰক্ৰিয়াত জড়িত হ'বলৈ ৰাজ্যসমূহ প্ৰেৰিত হয়। বৰ্তমান ভাৰতৰ ১৭ খন ৰাজ্যই বিকেন্দ্ৰীকৃত ক্ৰয় ব্যৱস্থা আৰম্ভ কৰিছে।

সাধাৰণতে, যিবোৰ ৰাজ্যৰ ধান বা ঘেঁহুৰ পৰ্যাপ্ত উৎপাদন থাকে, সেইবোৰ ৰাজাই এই ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰে। অসম এই ব্যৱস্থাৰ অধীনত বৰ্তমানেও অহা নাই। কিন্তু ৰাজ্যখনে খাদ্য ৰাজসাহায্যৰ টোপোলাটো বৃদ্ধি কৰাৰ প্ৰয়াস কৰিছে। অসম চৰকাৰে ২০১৯ বৰ্ষত ANNA (Affordable Nutrition and Nourishment Assistance) আঁচনি প্ৰৱৰ্তন কৰিছিল। এই আঁচনিৰ বাবে ৰাজ্যৰ বাজেট আবণ্টন ৫০ লাখ টকাৰ পৰা বৃদ্ধি কৰা হৈছে। ২০১৯-২০ বৰ্ষৰ ভিতৰত ৩৩০ কোটি টকা আৰু ২০২০-২১ বৰ্ষৰ ভিতৰত ৪৭২ কোটি টকা খৰচ ধাৰ্য্য কৰা হৈছিল। ৰাজহুৱা বিতৰণ ব্যৱস্থা (Public Distribution System) কেন্দ্ৰীয় আঁচনিৰ সমান্তৰালভাৱে হিতাধিকাৰীসকলক খাদ্য ৰাজসাহায্য প্ৰদানৰ বাবে অসম চৰকাৰে আৰম্ভ কৰিছে সৰ্ববৃহৎ প্ৰত্যক্ষ লাভ হস্তান্তৰ (DBT)ৰ অধীনত অৰুণোদয় আঁচনি। প্ৰত্যক্ষ লাভ হস্তান্তৰ জৰিয়তে ৰাজসাহায্য প্ৰদানৰ ওপৰত কিছুমান বিশেষ শ্ৰেণীৰ হিতাধিকাৰীৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি অৰুণোদয় আঁচনিখন নিৰ্মাণ কৰা হৈছে। ৰাজ্যখনৰ ১৭ লাখৰো অধিক পৰিয়ালক সামৰি লোৱাৰ লক্ষ্য নিৰ্ধাৰণ কৰা হৈছে এই আঁচনিখনে। ইয়াক মহিলাকেন্দ্ৰিক কাৰ্যসূচী বুলিও ক'ব পাৰি কাৰণ ইয়াৰ সুবিধাসমূহ ঘৰৰ এগৰাকী মহিলা সদস্যক প্ৰদান কৰা হয়। এই আঁচনিখনে বিশেষভাৱে বিধৱা, দিব্যাংগ, অবিবাহিত ছোৱালী আদিক হিতাধিকাৰী হিচাপে লক্ষ্য কৰি লৈছে। ২০২১ চনত অসম বিধানসভা নিৰ্বাচনৰ বাবে ৰাজ্যখনে প্ৰস্তুতি চলাই থকাৰ সময়তে ২০২০ চনৰ ২ অক্টোবৰত অসমত এই আঁচনি আৰম্ভ কৰা হৈছিল, হিতাধিকাৰীক বেংক একাউণ্টৰ জৰিয়তে প্ৰতিমাহে ৮৩০ টকা দিয়াৰ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰা হৈছে। এই আৰ্থিক সাহায্যক বিভিন্ন দৰকাৰী দ্ৰব্য ক্ৰয়ৰ ক্ষেত্ৰত বিশেষভাৱে ভাগ কৰা হৈছে। ৪০০ টকাৰ দৰৱ বা স্বাস্থ্যজনিত খৰচ, ২০০ টকাৰ মগুজাতীয় দ্ৰব্য, ১৫০ টকাৰ ফলমূল আৰু পাচলি আৰু ৮০ টকাৰ চেনী কিনিবলৈ মুঠ ৮৩০ টকা বিভিন্ন ভাগত ভাগ কৰা হৈছে। ২০২১-২২ বিত্তীয় বৰ্ষৰ সময়ছোৱাত এই ধনৰাশিৰ পৰিমাণ ১০০০ টকালৈ বৃদ্ধি কৰা হৈছিল। ২০২২-২৩ বৰ্ষত অতিৰিক্ত ২৫০ টকা মাহিলী বিজুলী মাছুলৰ বাবদ দিয়াৰ বাবদ এই টকাৰ পৰিমাণ ১২৫০ টকালৈ বৃদ্ধি কৰাৰ ব্যৱস্থা কৰিছে। ২০২৩-২৪ বৰ্ষত এই আঁচনিখন 'অৰুণোদয় - ২.০' হিচাপে অসম চৰকাৰে নামাকৰণ কৰিছে। আকৌ ২০২৪-২৫ বৰ্ষত এই আঁচনিখনৰ বাবে অসম চৰকাৰে মুঠ ৩৮০০ কোটি টকা ধাৰ্য কৰিছে। লগতে ইয়াৰ অধীনত বিকলাংগ আৰু তৃতীয় লিংগৰ ব্যক্তিক সামৰি লোৱাৰ ব্যৱস্থা কৰা হৈছে। এইদৰে ২০২০ চনত অসম চৰকাৰে আৰম্ভ কৰা 'অৰুণোদয়' আঁচনিখন বৰ্তমান সময়লৈ উল্লেখনীয় সংস্কাৰমূলক বিস্তৃতি আনিবলৈ চৰকাৰে প্ৰয়াস কৰা পৰিলক্ষিত হৈছে। এইদৰে আঁচনিখনে দৰিদ্ৰ আৰু দুৰ্বল পৰিয়ালসমূহৰ পুষ্টিৰ অৱস্থা উন্নত কৰাৰ বাবেই বিভিন্ন দিশসমূহ সামৰি লৈছে। এই কেন্দ্ৰীয় ৰাজহুৱা বিতৰণ ব্যৱস্থা (Public Distribution System) আঁচনিখন হৈছে এক বস্তুগত খাদ্য ৰাজসাহায্য কাৰ্যসূচী, কিন্তু কেৱল পৰম্পৰাগত শস্য ভিত্তিক খাদ্যৰ টোপোলাত মনোনিবেশ কৰাৰ বাবে ই প্ৰকৃত অৰ্থত খাদ্য সুৰক্ষা লাভ পূৰণ কৰিবলৈ যথেষ্ট সফল নহ'বও পাৰে। সেয়েহে, 'অৰুণোদয়' আঁচনিখনে খাদ্য সুৰক্ষা লাভ কৰিবলৈ প্ৰয়োজনীয় পুষ্টিকৰ উপাদান পূৰণ কৰিব বুলি আশা কৰা হৈছে। যিহেতু 'অৰুণোদয়' আঁচনিখন প্ৰত্যক্ষ সুবিধা হস্তান্তৰ (DBT) আঁচনি, সেইবাবে এই আঁচনিৰ

জৰিয়তে হস্তান্তৰ কৰা ধনখিনি ব্যৱহাৰ কৰাৰ দায়িত্ব হিতাধিকাৰী পৰিয়ালসমূহৰ ওপৰত থাকে আৰু সেই বিষয়ত লাভ কৰা আয় নিৰ্দিষ্ট খাদ্য সামগ্ৰীৰ ওপৰত ব্যৱহাৰ কৰিব নে নকৰে সেয়া নিৰ্ভৰ কৰে হিতাধিকাৰীৰ ওপৰত। যদিহে আঁচনিখন সঠিকভাৱে ৰূপায়ন কৰা হয়, তেন্তে আঁচনিখনে সুস্থ জীৱনৰ বাবে পুষ্টিৰ সুৰক্ষা লাভ কৰাত সহায় কৰিব। এই আশাৰে ৰাজ্য চৰকাৰে এই আঁচনিখন প্ৰৱৰ্তন কৰিছে।

সামৰণি ঃ

অসমৰ অৰুণোদয় আঁচনিখনে ইয়াৰ হিতাধিকাৰীসকলক যথেষ্ট সুবিধা প্ৰদানৰ চেষ্টা কৰিছে। সুলভ মূল্যৰ দোকানৰ পৰা পৰম্পৰাগত ৰাজহুৱা বিতৰণ ব্যৱস্থা (Public Distribution System)ৰ জৰিয়তে খাদ্য সামগ্ৰী মুলতে চাউল বিনামূলীয়াকৈ লাভ কৰাৰ উপৰিও অৰুণোদয় আঁচনিৰ অধীনত হিতাধিকাৰীসকলে চৰকাৰৰ পৰা আৰ্থিক সাহায্য লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। এই আৰ্থিক সাহায্যই তেওঁলোকক অতিৰিক্ত খাদ্য সামগ্ৰী ক্ৰয় কৰাত সহায় কৰে আৰু তেওঁলোকৰ চিকিৎসা খৰচৰ এটা অংশও বহন কৰে। এই সাহায্য অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ, কাৰণ অসম পুষ্টিৰ প্ৰত্যাহ্বানৰ সন্মুখীন হোৱাৰ লগতে ভাৰতীয় গড়ৰ তুলনাত অসমত জনগণৰ ক্ৰয় ক্ষমতাও কম। অৰুণোদয় আঁচনিৰ এই অতিৰিক্ত ধনে পৰিয়ালসমূহক সুষম খাদ্য গ্ৰহণ কৰাত সহায় নিশ্চিত কৰিছে। যাৰ ফলত অসমত সামগ্ৰিক জীৱনৰ মান উন্নত আৰু পুষ্টি আৰু অৰ্থনৈতিক অভাৱসমূহ দূৰ হোৱাৰ আশা কৰিব পাৰি। ❑

লিখনিৰ উৎসসমূহ ঃ

Assam Budget Analysis 2024-25. https://prsindia.org/budgets/states/assam-budget-analysis-2024-25)

Assam Orunodoi Scheme . (2023, October 2). https://assam.gov.in/scheme-page/15

Deaprtment of Food, Civil Supplies and Consumer Affairs, Government of Assam. (2023, July 4). (https://pds.assam.gov.in)

Department of Food and Public Distribution. (2022, October 15). (https://dfpd.gov.in)

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

পাৰিপাৰ্শ্বিক (Eco-Criticism) দৃষ্টিৰে প্ৰভাত গোস্বামীৰ উপন্যাস 'শুকুলা হাতীৰ খোজ'

ৰেৱত মহন্ত

পৰিচয় ঃ

Eco-Criticism বৰ্তমান সময়ত এটি চৰ্চিত শব্দ। ১৯৯০ চনৰ শেষৰফালে ইংৰাজী সাহিত্যত বিশেষভাৱে জনপ্ৰিয়তা অৰ্জন কৰা ইক'ক্ৰিটিছিজমৰ জন্মদাতা আছিল Cheryll Glotfelty। অসমীয়া সাহিত্যত এই মতবাদৰ চৰ্চা যিহেতু কম সেয়ে হয়তো ইয়াৰ পৰিভাষা হিচাপে এটা অৰ্থ প্ৰয়োগ কৰিব নোৱাৰি। Criticism শব্দৰ পোনপতীয়া অৰ্থ সমালোচনা। Eco-feminism শব্দক অসমীয়াত যেনেকৈ ইক'নাৰীবাদ বুলি অভিহিত কৰিব পাৰি এই দিশৰ পৰা চালে ইক'ক্ৰিটিছিজমক ইক' সমালোচনা বুলি অভিহিত কৰাৰ থল আছে। এক কথাত ক'বলৈ গ'লে— Eco-Criticism is the study of the Relationship between Literature and Physical Enviroment। এই দৃষ্টিৰে চালে আমি পৰিৱেশ সমালোচনা তত্ত্ব বা পাৰিপাৰ্শ্বিকতাবাদ বুলি ক'ব পাৰো। আমাৰ গৱেষণা পত্ৰত 'পাৰিপাৰ্শ্বিক দিশেৰে শুকুলা হাতীৰ খোজ' উপন্যাসখন আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰিছো।

বিষয়ৰ পৰিসৰ ঃ

পৰিৱৰ্তিত আৰ্থসামাজিক পৃষ্ঠভূমিৰ পৰিপেক্ষিতত সাহিত্যৰ সামাজিক দায়বদ্ধতাৰ ধাৰণাটোৱে নতুন নতুন বিষয়বস্তুসমূহক ইয়াক আওঁতাত সামৰি লৈছে। সৃষ্টিশীল সাহিত্যই যিদৰে বিষয়বস্তু বৈচিত্ৰই পঢ়ুৱৈক নতুন পঠনৰ অভিজ্ঞতাক সোৱাদ দিছে, ঠিক সেইদৰে সাহিত্যৰ গৱেষণাৰ ক্ষেত্ৰখনতো সামাজিক, ৰাজনৈতিক অথবা সাংস্কৃতিক পৰিৱৰ্তনৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত নতুন তত্ব বাদৰ আৰ্বিভাৱ ঘটিছে। পৰিৱেশ সমালোচনা তত্ব বা পৰিৱেশ সংৰক্ষণতাৰ প্ৰয়োজনীয়তা সাম্প্ৰতিক সময়ৰ চৰ্চিত বিষয়বস্তুসমূহৰ ভিতৰত অন্যতম। এই কম পৰিসৰৰ ভিতৰত পাৰিপাৰ্শ্বিক দিশেৰে প্ৰভাত গোস্বামীৰ শুকুলা হাতীৰ খোজ উপন্যাস সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰিম।

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
চৰকাৰী আদৰ্শ মহাবিদ্যালয়
কাজিৰঙা-৭৮৫৬০৯
৮৬৩৮৯৭৩৮৫২
rebatmahanta12@gmail.com

বিষয়ৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

সাহিত্যৰ জনপ্ৰিয় ধাৰণাৰ আওঁতাত প্ৰকৃতি অথবা প্ৰাকৃতিক উপাদানসমূহক সাধাৰণতে এক ধৰণৰ ৰোমাণ্টিক দৃষ্টিভংগীৰে আলোচনা কৰা হয় অথবা নদ-নদী, পৰ্বত, বননি, ফুল, চৰাই আদিবোৰ মূল কাহিনীৰ পৃষ্ঠভূমি হিচাপেহে আলোচনাত স্থান পোৱা দেখা যায়। কিন্তু ঊণবিংশ শতিকাৰ শেষৰফালৰ পৰা আৰম্ভ হোৱা

প্ৰাকৃতিক অৱক্ষয় আৰু ক্ষয়ংকাৰী প্ৰভাৱে যেতিয়া বিশ্বত ত্ৰাসৰ সৃষ্টি কৰিলে, তেতিয়া সাহিত্যৰ প্ৰায়বোৰে প্ৰকৃতি সংৰক্ষণ অথবা পৰিৱেশ সচেতনতাবোধৰ প্ৰতি দায়িত্বশীল হৈ উঠিল। ইয়াৰ সমান্তৰালভাৱে গৱেষণা অথবা সমালোচনাৰ ক্ষেত্ৰখনতো পৰিৱেশ সচেতনতাক মূল বিষয় হিচাপে লৈ ইক'ক্ৰিটিছিজমৰ দৰে সংবেদনশীল আৰু দায়বদ্ধ তাত্বিক আলোচনাৰ বাট মুকলি হ'ল। মানৱসৃষ্ট প্ৰাকৃতিক বিপৰ্যয়, প্ৰকৃতিৰ ওপৰত মানুহৰ অধিকাৰৰ পৰিসীমা, সাহিত্যৰ সামাজিক দায়বদ্ধতাৰ অংশ হিচাপে পৰিৱেশ সচেতনতাবোধৰ সাহিত্যিক উপস্থাপন, বিষয়টোৰ প্ৰতি পঢ়ুৱৈৰ সজাগতা সৃষ্টি আদিবোৰক ইক'ক্ৰিটিছিজিম অথবা পৰিৱেশ সমালোচনা তত্বৰ মুখ্য উদ্দেশ্য হিচাপে ঠাৰৰ কৰা হৈছে। বৰ্তমান সময়ত ইয়াৰ গুৰুত্ব অধিক। প্ৰভাত গোস্বামীৰ শুকুলা হাতীৰ খোজ উপন্যাসখন পাৰিপাৰ্শ্বিক দিশেৰে বিচাৰ কৰি চোৱাই এই আলোচনাৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য।

বিষয়বস্তুৰ পদ্ধতি ঃ

আলোচনা পত্ৰৰ বিষয়ৰ পদ্ধতি বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক।

তথ্য আহৰণৰ উৎস ঃ

১। মুখ্য উৎস ২। গৌণ উৎস

মুখ্য উৎস হিচাপেআৰু গৌণ উৎস হিচাপে বিভিন্ন প্ৰসংগ পুথিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

পৰিৱেশ সমালোচনা (Eco Criticism) **তত্ত্ব বা পাৰিপাৰ্শ্বিক তত্ত্বৰ ধাৰণা ঃ**

১৯৯০ চনৰ শেষৰফালে ইংৰাজী সাহিত্যত বিশেষভাৱে জনপ্ৰিয়তা অৰ্জন কৰা ইক'ক্ৰিটিছিজমৰ জন্মদাতা আছিল Cheryll Glotfelty। ইক'ক্ৰিটিছিজমক অসমীয়াত পৰিৱেশ সমালোচনা তত্ব অথবা পাৰিপাৰ্শ্বিক তত্ব বুলি অভিহিত কৰিব পাৰি। পাৰিপাৰ্শ্বিকতা তত্বৰ বিভিন্ন দৃষ্টিকোণৰ ভিতৰত এটা উল্লেখযোগ্য দিশ হ'ল যে মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ সম্পৰ্কৰ বিষয়ত ই পৰম্পৰাগত বিশ্বাসৰ ওপৰত প্ৰশ্ন তোলে।পৃথিৱীৰ গৰিষ্ঠসংখ্যক সভ্যতা,ধৰ্ম অথবা দৰ্শনে মানুহতকৈ প্ৰকৃতি শ্ৰেষ্ঠ আৰু প্ৰকৃতি মানুহৰ ভোগ-বিলাসৰ সামগ্ৰী জাতীয় এক ধাৰনা সৃষ্টি কৰি আহিছে। ইক'ক্ৰিটিছিজমৰ উদ্ভাৱকসকলে এই হাজাৰ বছৰীয়া কৰ্তৃত্বৰ ওপৰত প্ৰশ্ন তুলি এক সমানুপাতিক সম্পৰ্কহে সূচনা কৰে। অৰ্থাৎ মানুহৰ দৰে প্ৰকৃতিৰো নিজা জীৱন আৰু মূল্য আছে। সেয়েহে কৰ্তৃত্ব অথবা শ্ৰেষ্ঠতকৈ সমতাহে দুয়োৰে মাজৰ সম্পৰ্ক হোৱা উচিত। পৰিৱৰ্তিত আৰ্থ-সামাজিক পৃষ্ঠভূমিৰ পৰিপেক্ষিতত সাহিত্যৰ সামাজিক দায়বদ্ধতাৰ ধাৰণাটোৱে নতুন নতুন বিষয়বস্তুসমূহক ইয়াৰ আওতাত সামৰি লৈছে।এটা কথা সৰ্বজনস্বীকৃত যে সমগ্ৰ বিশ্বত দেখা দিয়া পৰিৱেশতান্ত্ৰিক সমস্যা মূলতঃমানৱসৃষ্ট। অৰ্থাৎ প্ৰাকৃতিক অথবা পাৰিৱেশিক শক্তিৰ তুলনাত মানৱ জাতিৰ ক্ৰমাৎ বৃদ্ধি পোৱা আৰ্থিক,বৌদ্ধিক,শাৰীৰিক আৰু কাৰিকৰী শক্তিৰ জড়িয়তে প্ৰকৃতিৰ ওপৰত মানুহৰ দখল আৰু কৰ্তৃত্ব বৃদ্ধি পাই আহিছে। এই কথা সৰ্বজনস্বীকৃত যে মানৱজাতিৰ অন্তহীন অভাৱ পূৰণৰ বাবে প্ৰকৃতি আৰু ইয়াৰ সম্পদ সমূহেই সবাটৌকৈ বেছি ব্যৱহৃত হৈ আহিছে।অভাৱ আৰু ভোগৰ এই প্ৰক্ৰিয়াৰ ফলত পৃথিৱীত প্ৰদূষণ,গোলকীয় উষ্ণতা বৃদ্ধি,বনাঞ্চল ধ্বংস,জল সম্পদৰ অভাৱ,বিভিন্ন প্ৰজাতিৰ বিলুপ্তি আদি সমস্যাই দেখা দিছে। ইতিমধ্যে সাধাৰণ জনতাৰ পৰা শিক্ষাবিদ,নীতি নিৰ্ধাৰণ কৰা আমোলা বিষয়াৰ পৰ্য্যায়লৈকে এই সমস্যাবোৰৰ আলোচনা চলিছে।নে এক পৰিপেক্ষিতত ৰাজনৈতিক অথবা বৈজ্ঞানিক আলোচনাবোৰৰ সমান্তৰালভাৱে সাংস্কৃতিক অথবা সাহিত্যিক জগতখনতো পৰিৱেশ,পৰিৱেশজনিত নতুন সমস্যাবোৰক এক সংবেদনশীল দৃষ্টিভংগীৰে চোৱা,আলোচনা কৰা,উপস্থাপন কৰা আৰু সচেতন কৰাৰ প্ৰয়াস চলিছে। ইয়াৰ পৰিপেক্ষিততে সাহিত্যতনো পৰিৱেশ উপস্থাপনৰ দিশটো কেনে,এই ধাৰাই পৰিৱেশক কেৱল পৃষ্ঠভূমিতে ৰাখে নে সহমৰ্মিতাৰ দৃষ্টিৰেও চাব খোজে অথবা গতানুগতিক দৃষ্টিভংগীৰ ধাৰাটোৰ পৰা প্ৰকৃতি সম্পৰ্কে আমাৰ মনঃস্তাত্বিক ধ্যন-ধাৰণাবোৰ কৰ্তৃত্বশীল নে উদাৰ এনে চেতনাবোধক দিশবোৰ আলোচনা কৰাৰ এক বিশ্বজনীন প্ৰক্ৰিয়া আৰম্ভ হৈছে। এই প্ৰক্ৰিয়াই তাত্বিক নামাকৰণ হৈছে ইক'ক্ৰিটিছিজম। এক কথাত ক'বলৈ গ'লে- Eco-criticism is the study of the relation between literature and physical Environment (Arthur,Lovejoy:Eco-criticism:The Nature in Literary theory *and Practice*) ।ইক'ক্ৰিটিছিজমে সাহিত্য অথবা সাহিত্যৰ গঠন উদ্দেশ্যক প্ৰকৃতিৰ স্বাৰ্থক আগত ৰাখি পৰীক্ষা কৰিব খোজে। গল্টফেল্টীৰ মতে-ইক'ক্ৰিটিছিজৰ অধীনত সাধাৰণতে নিম্নোক্ত ধৰণে সাহিত্যৰ সম্পৰীক্ষা কৰা হয়—

ক) কোনো নিৰ্দিষ্ট সাহিত্যত (গল্প/নাটক/কবিতা/উপন্যাস)প্ৰকৃতি অথবা প্ৰাকৃতিক সম্পদ অথবা প্ৰকৃতিৰ

উপাদানৰ উপস্থাপনৰ ধাৰণাটো কেনেকুৱা ?

খ) এক বুৰঞ্জীমূলক তথ্যগত দৃষ্টিৰে প্ৰকৃতি সম্পৰ্কে যুগ,দশক বছৰ অথবা সভ্যতা বিশেষে মানুহৰ দৃষ্টিভংগীৰ কেনেধৰণৰ তাৰতম্য ঘটিছে?

গ) প্ৰকৃতি সম্পৰ্কীয় অধ্যয়ন কেৱল বিজ্ঞানভিত্তিক তথ্যসমৃদ্ধ আলোচনা হোৱা উচিত নে মানুহৰ অধিক ওচৰ চপা জনমুখী এক সাহিত্যিক চৰিত্ৰৰেও প্ৰকৃতি অধ্যয়ন কৰা উচিত।

ঘ) বিজ্ঞান অথবা গৱেষণাগাৰত উপলব্ধ প্ৰকৃতি বিজ্ঞানৰ তথ্য অথবা জ্ঞানক সমাজ বিজ্ঞানৰ অধীনৰ বুৰঞ্জী, দৰ্শন, মনোবিজ্ঞান অথবা ৰাজনীতি বিজ্ঞানৰ তথ্যৰ সৈতে মিলাই প্ৰকৃতি অধ্যয়নৰ এক নতুন ধাৰা সম্ভৱনে ?

দেখা যায়,সচেতনতা,সজাগতাৰ সমান্তৰালভাৱে মানৱ জাতিৰ সাংস্কৃতিক, বৌদ্ধিক, আৰ্থিক দৃষ্টি কোণৰ পৰা পৰিৱেশ সম্পৰ্কীয় দৃষ্টিকোণৰ চৰিত্ৰ বাচি উলিয়াই সিবোৰৰ বস্তুনিষ্ঠ আলোচনা কৰিব খোজে।

পাৰিপাৰ্শ্বিক দৃষ্টিৰে প্ৰভাত গোস্বামীৰ শুকুলা হাতীৰ খোজ ঃ

২০১২ চনত প্ৰকাশিত প্ৰভাত গোস্বামীৰ শুকুলা হাতীৰ খোজ এখন চৰ্চিত উপন্যাস। বাস্তৱ পটভূমিত ৰচনা কৰা উপন্যাসখনৰ পট অসম যদিও উপন্যাসখনত বৰ্ণিত চৰিত্ৰসমূহ কাল্পনিক। শুকুলা হাতীৰ খোজ উপন্যাসখনত ৰচনা কৰোতে ঔপন্যাসিকে পৰিৱেশ সমালোচনা তত্বৰ বিভিন্ন উদ্দেশ্য আগত ৰাখি ৰচনা কৰা যেন অনুমান হয়। উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিতে 'জন্মযন্ত্ৰণা' শীৰ্ষক ঔপন্যাসিকে দিয়া বৰ্ণনাই ঔপন্যাসিকে উপন্যাসখন লিখাৰ আঁৰত থকা নিজৰ পাৰিপাৰ্শ্বিক মিছন তথা পৰিৱেশ সমালোচনা তত্বৰ দিশসমূহৰ কথা উনুকিয়াই। বিংশ শতিকাৰ মাজভাগৰ পৰা বিশ্ব সহিত্যত আলোচিত হোৱা ইকফিকশ্যনক অসমীয়া সাহিত্যত পৰিচয় কৰাই দিয়াৰ যি প্ৰৱণতা সেয়া গোস্বামীৰ উপন্যাসৰ পৰা উপলব্ধি কৰিব পাৰি।পৰিবেশৰ ওপৰত হোৱা অন্যায় অত্যাচাৰে লেখকৰ মনত সৃষ্টি কৰোৱা যন্ত্ৰণাৰ প্ৰতিফল হিতাপে সৃষ্টি হোৱা 'শুকুলা হাতীৰ খোজ' উপন্যাসখন অন্যান্য ভাষাত ৰচনা Eco-fiction হোৱাৰ দৰে অসমীয়া সাহিত্যৰো এক নতুন সংযোজন। যন্ত্ৰণা দেখি ক্ষোভত ৰচিত হোৱা শুকুলা হাতীৰ খোজ সম্পৰ্কত ঔপন্যাসিকে জন্মযন্ত্ৰণা শীৰ্ষক পাতনিত কৈছে—

"যন্ত্ৰণাত চকুপানী ওলায়, বৰ কষ্ট হয়, কিন্তু কৰিব একো নোৱাৰো। ক্ষোভত তেজ উতলে, কৰিব একো নোৱাৰোঁ, মায়ামৃগৰ সন্ধানত যোৱাবাৰলৈ পুতৌ হয়। মোৰ হাতত একো নাই। মাত্ৰ কলমটো।"এটা যন্ত্ৰণাৰ পৰাই জন্ম হৈছে 'শুকুলা হাতীৰ খোজ' এই যন্ত্ৰণা কিন্তু জন্মৰ যন্ত্ৰণা নহয়। গৰ্ভধাৰণৰ আগৰ যন্ত্ৰণা। কুমাৰী পৃথিৱীৰ কৌমাৰ্য হৰণ দেখাৰ যন্ত্ৰণা। বহুতৰ দৰে ময়ো বহুত দিনৰ পৰাই এই যন্ত্ৰণা দেখি আহিছো। বুকুৰ মাজতে কঢ়িয়াই লৈ ফুৰিছো এই অবুজ যাতনা।" (জন্মযন্ত্ৰণা পাতনি)

এই যন্ত্ৰণাসমূহ তেওঁ অনুভৱ কৰিছে। কেৱল এজন মানুহ হিচাপে ক্ষান্ত নাথাকি পাৰিপাৰ্শ্বিক এক অংগ হিচাপে মৰ্মে মৰ্মে উপলব্ধি কৰিছে। নৃকেন্দ্ৰিক দৃষ্টিভংগীৰ বিপৰীতে জৈৱকেন্দ্ৰিক দৃষ্টিভংগী সৃষ্টি হোৱা উপন্যাস শুকুলা হাতীৰ খোজ ঔপন্যাসিকাৰ যন্ত্ৰণাৰ সমাহাৰ। এই যন্ত্ৰণা ঔপন্যাসিকৰ চৌপাশে ঘটা পৰিৱেশৰ ধ্বংস, প্ৰকৃতিৰ ওপৰত মানুহৰ অত্যাচাৰ, প্ৰকৃতিক মানুহে কৰা ভোগৰ সামগ্ৰীৰ প্ৰতিফলন। উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিৰ পৰা শেষলৈ এই পৰিপাৰ্শ্ব মিছন আগত ৰাখি ৰচনা কৰা উপন্যাসখন সেউজ অধ্যয়ন (Green Reading)ৰ জৰিয়তে বিচাৰ কৰি চাব পাৰি—

মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ সম্পৰ্কৰ উপস্থাপন ঃ

পৰিৱেশ সমালোচনা তত্বৰ মূল বিষয় সাহিত্য আৰু ভৌতিক পৰিৱেশৰ সম্পৰ্কৰ বিচাৰ কৰা। সাহিত্যত মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ সম্পৰ্কে কিদৰে উপস্থাপিত হৈছে পৰিৱেশ সমালোচনা তত্বই তাৰ অধ্যয়ন কৰে। গোস্বামীৰ শুকুলা হাতীৰ খোজ উপন্যাসলৈ মন কৰিলে দেখা যায়, চহা সমাজৰ পটভূমিত মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ যি সহাৱস্থান কথা উল্লেখ আছে। সেই সহাৱস্থানৰ আলমত উপন্যাসখনত প্ৰকৃতি আৰু মানুহৰ এক শান্তিপূৰ্ণ সহাৱস্থানৰ ছবি বৰ্ণিত হৈছে। এইক্ষিনতে Gerg Gusued ইংৰাজী সাহিত্যত ব্যৱহাৰ কৰা (Pastoral) পেষ্টৰেল শব্দটোৰ প্ৰসংগ আহি পৰে।

ক) চহা জীৱনৰ প্ৰত্যক্ষ আৰু পৰোক্ষ পাৰ্থক্যক য'ত নগৰ-চহৰ জীৱনৰ সৈতে উপস্থাপিত হয়।

খ) নগৰৰ পৰা চহা পটভুমিলৈ হোৱা প্ৰত্যাগমন পৰিলক্ষিত হয়।

গ) চহা জীৱনৰ মূল চালিকা শক্তি শ্ৰম আৰু কষ্টক অৱজ্ঞা।

অবৈধ প্ৰব্ৰজনৰ ইতিহাস আৰু বনাঞ্চল বেদখলৰ চিত্ৰণ ঃ

সাহিত্যত বিশেষকৈ উত্তৰ ঔপনিৱেশিকে উপন্যাস সাহিত্যলৈ চকু ফুৰালে মূলৰ পৰা বিচ্ছিন্ন হোৱা প্ৰব্ৰজিত মানুহৰ বৰ্ণনাই প্ৰসংগৰ উল্লেখ পোৱা যায়। এই প্ৰব্ৰজনে সততে যি সমস্যাৰ সৃষ্টি কৰে সেই সমস্যা মানৱসৃষ্ট যদিও পৰিৱেশৰ ওপৰত

বিৰূপ প্ৰভাৱ পেলায়। মোৰে বুকচিনে (Muray Bookchin) কোৱাৰ দৰে— Newly all ecological problems are social problems। প্ৰভাত গোস্বামীৰ শুকুলা হাতীৰ খোজত অসমলৈ প্ৰত্যাগমন হোৱা অবৈধ প্ৰব্ৰজনে অসমৰ জনগাঁথনিৰ সাল-সলনি কৰাৰ লগতে সামাজিক সমস্যা আৰু বিভিন্ন পাৰিপাৰ্শ্বিক সমস্যাৰ সৃষ্টি কৰিছে। উপন্যাসখনত এই অবৈধ প্ৰব্ৰজনৰ ঐতিহাসিক কাৰণ, তাৰ পটভূমি আৰু গতি প্ৰকৃতিৰ লগতে অবৈধ প্ৰব্ৰজনৰ প্ৰভাৱৰো উল্লেখ আছে। পৰিৱেশ সমালোচনা তত্ব অনুসৰি সামাজিক পৰিবেশতন্ত্ৰই স্বীকাৰ কৰে যে মানুহে সৃষ্টি কৰা সমস্যাসমূহত সমস্যাৰ বৃদ্ধি কৰে। ফলত সামাজিক দিশটোক অনুধাৱন নকৰাকৈ পৰিবেশকেন্দ্ৰিক সমস্যাসমূহৰ সমাধান অসম্ভৱ। উপন্যাসখনত অবৈধ প্ৰব্ৰজনে কিদৰে পৰিৱেশৰ ওপৰত প্ৰভাৱ পেলাইছে তাৰ বৰ্ণনা এনেদৰে দিছে— বিট্ৰি ছৰ তললৈ যোৱাৰ পাছতো এই অঞ্চলবোৰত হাবি ভাঙি বিশেষ মানুহ বহা নাছিল। কাৰণ, অসমীয়া মানুহৰ বাবে অসমৰ সকলো ঠাইতে বিস্তৰ মাটি পৰি আছিল। প্ৰয়োজনবোৰ আছিল কম। মাত্ৰ দুবেলা দুমুঠি সুখেৰে খাবলৈ পোৱাটোৱেই অসমীয়া মানুহৰ একমাত্ৰ লক্ষ্য আছিল।... বোধকৰো ঊনৈশ শ পাঁচ চনমানতেই হ'ব, ব্ৰিটিছ শাসনৰ সুবিধাৰ বাবে পূৰ্ববংগক পশ্চিমবংগৰ পৰা ফালৰি কটাই আনি পূৰ্ববংগক অসম নাম দি নতুন প্ৰদেশ গঠন কৰিলে। ৰাজধানী কৰিলে ঢাকা। তাৰ পাছতেই আৰম্ভ হ'ল অসমলৈ মানুহৰ আগমন। জমিদাৰৰ অত্যাচাৰ আৰু মাটিৰ নাটনিয়ে বহুতক টানি আনিলে অসমলৈ। অসমলৈ আহি দেখিলে সোণসেৰীয়া অসমৰ মাটি। লাহে লাহে অসমৰ চৰ চাপৰি আৰু আবাদী মাটিত বহিবলৈ ল'লে এই মানুহবোৰ। এতিয়া স্বাধীন হৈহে দুখন দেশ হ'ল, আজি কিছুদিনলৈকে একেখন দেশৰেই আছিল সিহঁত।" (পৃ. ৯-১০)

হাতী মানুহৰ সংঘাতৰ ছবি ৰূপায়ণ ঃ

হাতী মানুহৰ সংঘাতৰ মূল হিচাপে লৈ ৰচিত উপন্যাস শুকুলা হাতীৰ খোজত প্ৰভাত গোস্বামীয়ে পৰিৱেশ সমালোচনা তত্বৰ ভালেমান দিশ প্ৰতিফলিত কৰিছে। বিভিন্ন সময়ত হাতী মানুহৰ সংঘাতে দেখা দিয়া দেখিছো। এই সংঘাত বাঢ়ি যোৱাৰ মুখ্যত কাৰণ অৰণ্যভূমিৰ সংকোচন আৰু খাদ্যভূমিৰ অভাৱ। এই অভাৱে কেৱল শস্যভূমিৰ অনিষ্ট কৰাই নহয়, মানুহৰ সহৰস্থানত সংঘাতৰ সৃষ্টি কৰিছে। উপন্যাসখনত পৰিৱেশ সমালোচনা তত্বৰ আওতাত ৰচনা কৰাৰ বাবেই ইয়াৰ অন্তৰ্গত ভালেমান দিশ প্ৰতিফলিত হৈছে। খুব সম্ভৱ শুকুলা হাতীৰ খোজেই একমাত্ৰ উপন্যাস য'ত হাতীক কেন্দ্ৰ কৰি সবিশেষ বৰ্ণনা উপন্যাসিকে দাঙি ধৰিছে। উপন্যাসখনত কৈছে— "অসম হাতীৰ দেশ বাবেই নেকি ইয়াৰ প্ৰায়বোৰ উপজাতিয়েই হাতীৰ লগত জড়িত।" (পৃ.৩৩৭) উপন্যাসখনত হাতীৰ সৈতে ভিন্ন জাতি উপজাতিৰ সম্পৰ্ক, হাতীৰ সৈতে জড়িত বিশ্বাস, হাতীৰ সৈতে জীৱিকা, হাতী ধৰাৰ কৌশল আদি ভালেমান দিশ বৰ্ণিত হৈছে। হাতীৰ সমাজখনৰ বৰ্ণনা প্ৰসংগত জনজাতীয় সমাজত হাতীৰ যি স্থান তাক ঔপন্যাসিকে বৰ্ণনা কৰিছে এইদৰে—

"ভৈয়ামৰ মিৰিসকলৰ কথাই কওঁ। তেওঁলোকে হাতী বেছিকৈ পোহে, হাতীৰ দ্বাৰাই কাম কাজো কৰায়। তেওঁলোকে হাতীক কেতিয়াও জন্তু বুলি নাভাবি দেৱতাৰ দৰেই ব্যৱহাৰ কৰে। হাতীক 'খেড়া' বুলি এটা বস্তু খুৱায়। আচলতে সেইবোৰ মদ তৈয়াৰ কৰা ভাত। ইয়াৰ বাবে হাতীয়ে তেওঁলোকৰ ঘৰ নেৰে। পাহাৰত থকা মিকিৰসকলেও হাতী পোহে আৰু তেওঁলোকেও যথেষ্ট সন্মান কৰে। পাহাৰত খাছীয়াসকলে হাতীৰ ব্যৱহাৰ নাজানে। কাৰণ, নংপুৰ ওপৰলৈ হাতী নাযায়। কিন্তু অলপ তলত বাস কৰা খাছীয়াসকলেও হাতীক সন্মান কৰে। ক্ষেত বাতি অনিষ্ট কৰিলেও হাত নোতোলে। ধূপ-ধূনা দি পূজাহে কৰে। আহিলে চাকি আৰু ধূপ-ধূণা জ্বলাই দিয়ে, হাতীয়ে জুই দেখি আঁতৰি যায়। তেওঁলোকে ভাবে যে পূজা কৰাৰ বাবে আঁতৰি গ'ল। গাৰোবিলাকেও হাতীক যথেষ্ট ভক্তি কৰে। গাঁৱত হাতী সোমালে গণমাচাঙত আশ্ৰয় লয়। দেৱতাক পূজা দি হাতীৰ কবলৰ পৰা ৰক্ষা পাবলৈ বিচাৰে। গাৰোবিলাকে হাতী অহা ৰাস্তাত মুৰ্গী পোৱালি এটা এৰি দিয়ে। যাৰ দ্বাৰা হাতি অহা কমে বুলি বিশ্বাস কৰে। তাৰ পাছতে মেছ বা বড়োসকল। তেওঁলোকৰ মাজত গণেশ পূজা আৰু ওজাৰ প্ৰচলন আছে। হাতীয়ে ক্ষেত নষ্ট কৰিলে তেওঁলোকে ওজাৰ আশ্ৰয় লয়। ওজাই মন্ত্ৰ মাতি হাতী ক্ষেদব পাৰে বুলি বিশ্বাস কৰে। (পৃ. ৩৩৭-৩৩৮)

কাঠৰ অবৈধ ব্যৱসায় ঃ

শুকুলা হাতীৰ খোজ উপন্যাসৰ মূল বিষয় যদিও হাতী মানুহৰ সংঘাত তাৰ অংগাংগীভাবে বনাঞ্চল ধ্বংস আৰু কাঠৰ অবৈধ ব্যৱসায়ৰ কথাও বৰ্ণনা কৰিছে। বনাঞ্চল ধ্বংস কৰি কাঠৰ ব্যৱসায়ে সততে হাতী মানুহৰ সংঘাতক বৃদ্ধি কৰোৱাইছে। এফালে মাটি বেদখল কৰা আনফালে চোৰাং কাঠ কাটি বেচা, জন্তু জানোৱাৰ মৰা - এইসমূহেই যেন এচাম মানুহৰ জীৱন জীয়াৰ মুখ্য কাম—

'চা কাঠ কাটো আমি। হাবিতে ফালো, আঁৰি দি, আমাৰ মানুহ আছে। বাঘ মাৰো, হৰিণ মাৰো, গুঁই মাৰো। মুঠতে চব কাম কৰো। সুবিধা পালে হাতীও মাৰো। তই চুপ থাকিবি। কিবা খবৰ থাকিলে দিবি। মাল পাবি। আৰু আমাৰ লগত থাকিবি।" (পৃ. ৭০)

সাধাৰণ মানুহচামৰ যি মানসিকতা, তাক বাধা দিয়াৰ প্ৰৱণতা খুব কম। বৰঞ্চ ৰাজনৈতিক নেতাৰ সহযোগত অসমৰ বনাঞ্চল সংৰক্ষণৰ পৰিৱৰ্তে ধ্বংসৰ গৰাহলৈহে ঠেলি নিছে এই অবৈধ ব্যৱসায় কেৱল অসমতেই নহয়, অসমৰ বাহিৰতো যোগান ধৰা হয়। পিল্লা সিঙক সহায় কৰা মধুৰ দৰে ৰাজনীতিবিদৰ চৰিত্ৰ উদঙাই দেখুৱাইছে—

"পিল্লাই অকল যে কাঠৰ কামেই কৰে এনে নহয়। অসমৰ হাবিত পাব পৰা সকলো বস্তুৰেই চোৰাং ব্যৱসায় কৰে। তাৰ অসমত কোনো স্থায়ী বাসস্থান নাই। তেজপুৰ, ডিব্ৰুগড়, ডিমাপুৰ সকলোতে তাৰ থকাৰ ঠাই আছে। মাজে মাজে গুৱাহাটীতো থাকে। বাহিৰৰ পৰা অৰ্ডাৰ মতে সি মাল যোগান ধৰে। সি হাতীৰ দাঁতেই হওক, বাঘৰ ছালেই হওক বা গঁড়ৰ খৰ্গই হওক, তাৰ বাহিৰেও কাঠ। সি বাহিৰত দেখুৱায় কাঠৰ কাৰবাৰী। কিন্তু সি আচলতে চোৰাং কাঠৰ কাৰবাৰীহে। অৱশ্যে মাজে মাজে সম্পূৰ্ণ নিয়মত অসমৰ বাহিৰলৈ কাঠ পঠিয়ায়। ৰেলত বা ট্ৰাকত অসমৰ পৰা কুন্দা বা ফলা কাঠ পঠিয়ায়। সাধাৰণতে বোলে ৰেলত দুই নম্বৰী কাঠ পঠিয়াবলৈ সুবিধা বেছি।" (পৃ. ১০৩)

মানুহ জন্তুৰ আন্তৰিক সম্পৰ্ক ঃ

সমালোচকে লৰেঞ্চ বুৱেলৰ মতে মানৱ জীৱন আৰু প্ৰকৃতি ইটো সিটোৰ লগত এনেদৰে সংপৃক্ত যে, এটাৰ অবিহনে আন এটাৰ অধ্যয়ন অসম্ভৱ। প্ৰভাত গোস্বামীয়েও শুকুলা হাতীৰ খোজ উপন্যাসত মানুহ - পৰিৱেশ আৰু তাত বসবাস কৰা জীৱ-জন্তুৰ সৈতে মানুহৰ আত্মিক সম্পৰ্কৰ কথা বৰ্ণনা কৰিছে। মহেন্দ্ৰ উপন্যাসৰ এটি মুখ্য চৰিত্ৰ। তেনেই দুখীয়া মহেন্দ্ৰই নিজৰ ভাতমুঠিৰ বাবে আনৰ ঘৰত থকাৰ কথা ভাবিছে সি প্ৰথমেই আকৰ্ষিত হৈছে মৌজাদাৰৰ ঘৰৰ প্ৰতি—

"মহেন্দ্ৰৰ কিন্তু মৌজাদাৰৰ ঘৰৰ প্ৰতিহে আকৰ্ষণটো বেছি আছিল। তাৰ আচল কাৰণ মৌজাদাৰৰ হাতী দুটা।" (পৃ. ৩৩) ইয়াতেই মহেন্দ্ৰৰ মাজেৰে মানুহ আৰু জন্তুৰ আন্তৰিক সম্পৰ্কটো দৃঢ় হৈ পৰিছে। শৈশৱৰ পৰা হাতীৰ প্ৰতি থকা আকৰ্ষণে এটা সময়ত মহেন্দ্ৰক পিছলৈ হাতীৰ ফান্দী, মাউত ৰূপ লাভ কৰিছে। হাতীৰ সৈতে তাৰ যি সম্পৰ্ক গঢ় লৈ উঠিছে সেয়া আত্মিক সম্পৰ্ক—

দহদিন যোৱাৰ পাছত সি হাতীটোৰ লগত যেন এটা সম্পৰ্ক গঢ়ি তুলিছে।... নিজতকৈও বেছিকৈ হাতীটোৰ যত্ন লয়। তাৰ লগত যেন এটা আত্মিক সম্পৰ্ক গঢ়ি উঠিছে হাতীটোৰ, ঠিক বৰুৱাৰ লগত গঢ়ি উঠাৰ দৰেই। বৰুৱা পশুৰ ডাক্তৰ, পশুৰ লগতেই তেওঁ বেছি সময় পাৰ কৰে, কিন্তু তেওঁ উপলব্ধি কৰিছে যে এই পশুবোৰেও মানুহৰ মন, মৰম বুজি পায়। কুকুৰ, গৰু, ছাগলী আনকি চৰাই চিৰিকটিয়েও মানুহৰ লগত সম্পৰ্ক গঢ়ি তুলিব জানে। সিহঁতেতো নাজানে যে আমি মানুহ জাতিটো ইমান স্বাৰ্থপৰ যে জীৱ-জন্তুবোৰক মাত্ৰ স্বাৰ্থ ৰক্ষাৰ বাবেহে ব্যৱহাৰ কৰো। অৱশ্যে ঘৰত পোহা জীৱ জন্তুটোৰ প্ৰতি মৰম এটা সোমাই যায়। এই দঁতাল জয়বাহাদুৰ প্ৰতিও এটা মৰম সোমাইছে তেওঁৰ। (পৃ. ১৩৯) কেৱল মহেন্দ্ৰৰে নহয় হাতীটোৰো মহেন্দ্ৰৰ প্ৰেমত বাউল হোৱা দেখা যায়—হাতীটোৱে এতিয়া মহেন্দ্ৰৰ কথাবোৰ মানিবলৈ আৰম্ভ কৰিছে। (পৃ. ১৩৮)

ব্যৱসায়কেন্দ্ৰিক মনোবৃত্তিৰে বনাঞ্চল ধ্বংস ঃ

প্ৰভাত গোস্বামীৰ শুকুলা হাতীৰ খোজ উপন্যাসত বনাঞ্চলক ধ্বংস আৰু তাৰ মাজেৰে সৃষ্ট হোৱা সমস্যাক দাঙি ধৰিছে। পৰিৱেশ সমালোচনা তত্ব অনুসৰি মানুহৰ দৰে প্ৰকৃতিৰো নিজা জীৱন আৰু মূল্য আছে আৰু সেয়ে কৰ্তৃত্ব অথবা শ্ৰেষ্ঠত্বকৈ সমতাহে দুয়োৰে মাজৰ সম্পৰ্ক মূল ভেটি হোৱা উচিত। এই মূল্যবোধৰ পৰিৱৰ্তনৰ সংগ্ৰামকো পৰিৱেশ সমালোচনা তত্বৰ এক প্ৰধান উদ্দেশ্য বুলি গণ্য কৰিব পাৰো। দেখা যায় বনাঞ্চল ধ্বংসৰ ইতিহাসে উপন্যাসখনক প্ৰকৃতি অথবা প্ৰাকৃতিক উপাদানক মানুহৰ ভোগৰ অধিকাৰ হিচাপে অংকিত হৈছে। ব্যৱসায়িক মনোবৃত্তি তথা বনাঞ্চলক ব্যৱসায়িকতাৰ লাভালাভৰ মাধ্যম হিচাপে অংকিত হৈছে। ব্যৱসায়িক মনোবৃত্তি তথা বনাঞ্চলক ব্যৱসায়িকতাৰ লাভালাভাৰ মাধ্যম হিচাপে লোৱা দেখা যায়—

"মই ব্যৱসায় কৰিম, কাঠৰ ব্যৱসায়" (পৃ. ২৫)

ব্যৱসায়ৰ বাবে প্ৰকৃতিক ধ্বংস কৰাৰ যি মনোবৃত্তি সেয়া মানুহ চামৰ লালসা আৰু ভোগৰ পৰিণাম। দূৰ দূৰণিৰ পৰা আহি ব্যক্তিগত লাভালাভ আৰু মুনাফা অৰ্জনৰ কথা উপন্যাসখনত স্পষ্ট—

"এইবোৰ হাবি-বননিৰ কথা চিন্তা কৰিলে ব্যৱসায় ধ্বংস

হ'ব। মাত্ৰ এটাই চিন্তা কৰিব লাগিব যে লাভ কেনেকৈ হয়।" (পৃ. ১১১)

বনাঞ্চলখনেই সিহঁতৰ বাবে হৈ পৰিছে একমাত্ৰ সম্বল। য'ত বনাঞ্চলসমূহ ধ্বংস কৰি আত্মসন্তুষ্টিৰ কৈছে— "মই অকণমান ব্যৱসায়ত ধৰিছিলো।

এই জংঘল লৈ ব্যৱসায়।" (পৃ. ১২৩)

সামৰণি আৰু সিদ্ধান্ত ঃ

প্ৰভাত গোস্বামীৰ শুকুলা হাতীৰ খোজ উপন্যাসখনৰ মূল বিষয় হাতী মানুহৰ সংঘাত হ'লেও ঔপন্যাসিকে ঔপনিৱেশিক সময়ৰ পৰা বিংশ শতিকাৰ শেষলৈকে অসমত উদ্ভৱ হোৱা পাৰিবেশিক সমস্যাবোৰ উলিয়াই আগত ৰাখি সেই সময়ছোৱাৰ সামাজিক প্ৰেক্ষাপটত অৰ্থনৈতিক সমস্যা, সাংস্কৃতিক সমস্যা আদিয়েও মূলৰ সৈতে একাকাৰ হৈ পৰিছে। অসমৰ ইতিহাসৰ এছোৱা দীঘল সময়ক জনসমাজৰ মাজলৈ ইমান স্পষ্টভাৱে আগবঢ়াই দি সৃষ্টি কৰা প্ৰভাত গোস্বামীৰ শুকুলা হাতীৰ খোজ নিঃসন্দেহ উপন্যাসখনৰ সফলতাৰ কথাকে ইংগিত দিয়ে।

ক) বিংশ শতিকাৰ শেষৰফালে আলোচিত হোৱা সাহিত্য সমালোচনাৰ পৰিৱেশ সমালোচনা তত্ত্বৰ দৃষ্টিৰে বিশ্বসাহিত্যৰ নৱমূল্যায়ন হোৱা দেখা গৈছে। ভাৰতীয় সাহিত্যতো ইয়াৰ অধ্যয়ন পৰিলক্ষিত হয়। অসমীয়া সাহিত্যতো শংকৰীযুগত পৰিৱেশ সচেতনতাৰ এটি স্ৰোত দেখিবলৈ পোৱা যায়। সময়ৰ লগে লগে সচেতনভাৱেই হওক বা অসচেতনভাৱেই হওক আধুনিক সাহিত্যত এই সচেতনতাই এক নতুন দৃষ্টিভংগীৰে সাহিত্যৰ মাজত সোমাই পৰিল। এই তত্বক আধাৰ হিচাপে লৈ অসমীয়া সাহিত্যৰ অধ্যয়নৰ উপযোগিতা আৰু প্ৰাসংগিকতা নুই কৰিব নোৱাৰি। অসমীয়া সাহিত্যৰ সমালোচনা অথবা গৱেষণাৰ ক্ষেত্ৰখনত পৰিৱেশ সমালোচনা তত্ত্বৰ উপযোগিতা আৰু প্ৰাসংগিকতা কিমান ইয়াক তাত্বিক বিচাৰ আৰু বিশ্লেষণৰ জড়িয়তে শুকুলা হাতীৰ খোজ উপন্যাসখন বিচাৰ কৰি চোৱা হৈছে।

খ) বৰ্তমান সময়ৰ সাহিত্যৰ তত্বসমূহৰ ভিতৰত এক উল্লেখযোগ্য তত্ব পৰিৱেশ সমালোচনা তত্ত্ব অথবা Eco-criticism সাহিত্যৰ ধাৰাসমূহৰ মাজত এই তত্বক অন্তৰ্ভুক্ত কৰি অসমীয়া সাহিত্যৰ আওতাত Green Writings অৰ্থাৎ সেউজ লিখনক এক স্বতন্ত্ৰীয় সাহিত্যিক শাখা হিচাপে গঢ়ি তোলাৰ প্ৰয়াস কৰিব পৰাটো এক বিচাৰ্য্যৰ বিষয়। এই ক্ষেত্ৰত শুকুলা হাতীৰ খোজ এক্ষন সফল আৰু সাৰ্থক উপন্যাস।

গ) ঔপন্যাসিক গোস্বামীয়ে সচেতনভাৱে কিদৰে বৰ্তমানৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত পৰিৱেশতাত্বিক সমস্যাসমূহ ব্যক্ত কৰিছে অথবা কিদৰে সজাগতা বৃদ্ধিৰ প্ৰয়াস কৰিছে, কিদৰে পাঠক সকলক এটি নতুন বাৰ্তা প্ৰেৰণ কৰিছে সেয়া উপন্যাসখন পঠনৰ দ্বাৰা গম পোৱা যায়। পাৰিপাৰ্শ্বিক সচেতনতা দিশটোৰ প্ৰতি প্ৰদান কৰা বাৰ্তাটো উপন্যাসখনৰ জড়িয়তে আলোচনা কৰা হৈছে। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

মুখ্য গ্ৰন্থঃ

গোস্বামী, প্ৰভাত ঃ শুকুলা হাতীৰ খোজ, বনলতা, ২০১২

গৌণ গ্ৰন্থ ঃ

অসমীয়া

কটকী, প্ৰফুল্ল ঃ সাহিত্য সংজ্ঞাকোষ, জ্যোতি প্ৰকাশন, গুৱাহাটী, ২০০৫

চমুৱা, নৰকুমাৰ ঃ অসমত সেউজ সংৰক্ষণ চেতনা আৰু সাহিত্য, নকসা প্ৰিণ্ট এণ্ড পাব্লিকেশ্যন,২০১৭

ডেকা, ৰাতুল ঃ সাহিত্য সমালোচনা তত্ব পৰিচয় আৰু প্ৰয়োগ, সম্প্ৰীতি প্ৰকাশন, ২০১৭

প্ৰবন্ধ

মহন্ত, সন্তুলন ঃ নৰকান্ত বৰুৱা ঃ পাৰিপাৰ্শক দৃষ্টিকোণেৰে, সাতসৰী, নৱেম্বৰ, ২০১৯

ইংৰাজী

Arthur, Lovejoy:Eco-criticism : The Nature in Literary theory and Practice,Fulcrum,1989

P.D. Sharma : Ecology and Environment,Meerut:Rastogi Publication,2007

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

উজনি অসমৰ মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত প্ৰচলিত লোকাচাৰ আৰু লোকবিশ্বাস

গায়ত্ৰী খাৰঘৰীয়া

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
জৱাহৰলাল নেহৰু মহাবিদ্যালয়
বকো-৭৮১১২৩
৮৮২২০৬৭৩৩০
gayatrikharghoriadu@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসমৰ প্ৰাচীন জনগোষ্ঠীসমূহৰ অন্যতম তথা মংগোলীয় জনগোষ্ঠীৰ অন্তৰ্গত বৃহৎ কছাৰী জনগোষ্ঠীৰ এটা শাখা হ'ল মেচ কছাৰীসকলৰ। তেওঁলোকৰ বসতি স্থান ভাৰতৰ লগতে নেপাল, ভুটান, বাংলাদেশ আদিত বিস্তৃত। ভাৰতৰ হিমালয়ৰ পাদদেশ, পশ্চিমবঙ্গ, মেঘালয় আৰু অসমত মেচসকলৰ অৱস্থিতি দেখা যায়। অসমৰ বিভিন্ন জিলাৰ ভিতৰত মূলতঃ তিনিচুকীয়া, ডিব্ৰুগড়, শিৱসাগৰ, যোৰহাট, গোলাঘাট, কাৰ্বি আংলং, শোণিতপুৰ, নগাঁও, ধেমাজি, লখিমপুৰ, আৰু গোৱালপাৰা জিলাত মেচসকলৰ প্ৰধান বসতি দেখা যায়। সামাজিক-সাংস্কৃতিক দিশত মেচসকল চহকী বুলিব পাৰি। সংস্কৃতিৰ লগত জড়িত হৈ থাকে বিবিধ সংস্কাৰিত কৃত্য। উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ পৰা আৰম্ভ কৰি লোকপৰিৱেশ্য কলালৈকে সামৰি লোৱা সংস্কৃতিৰ বিভিন্ন উপাদানৰ মাজত লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস সম্পৃক্ত হৈ থাকে। একোখন সমাজ তথা সেই সমাজৰ সাংস্কৃতিক বাতাবৰণক স্বকীয়তা প্ৰদান কৰাত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে লোকাচাৰ আৰু লোকবিশ্বাসে। এই আলোচনাত উজনি অসমৰ অন্যতম জনগোষ্ঠী মেচ কছাৰীসকলৰৰ মাজত ৰক্ষিত লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস বিষয়ে সামগ্ৰিক অধ্যয়ন আগবঢ়োৱা হৈছে।

এই বিষয়টো আলোচনা কৰোঁতে মূলতঃ বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। তথ্য আহৰণৰ বাবে ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ লগতে বিভিন্ন কিতাপ-পত্ৰৰ সহায় লোৱা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

মেচ কছাৰী, লোকাচাৰ, লোকবিশ্বাস, পৰম্পৰা।

০.০ অৱতৰণিকা

প্ৰত্যেক জাতি-জনগোষ্ঠীৰ লোকসংস্কৃতিৰ লগত সামাজিক লোকাচাৰ আৰু সামাজিক অনুষ্ঠান জড়িত হৈ থাকে। তাৰ লগত সম্পৃক্ত হৈ থাকে জনগোষ্ঠীটোৰ মাজত প্ৰচলিত লোকবিশ্বাস, পৰম্পৰা, ধৰ্মীয় ধ্যান-ধাৰণা। লোকবিশ্বাস বুলিলে জনজীৱনত পৰম্পৰাগত ভাৱে চলি অহা বা মানি অহা ধ্যান-ধাৰণাকে বুজা যায়। লোকবিশ্বাসসমূহৰ মাজত সোমাই থাকে লোকমনৰ বিস্ময়, ভয় আৰু ৰহস্যময় মনৰ আভাস। তাৎপৰ্যপূৰ্ণ যে, প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি থকা সহজাত ভয়ো লোকবিশ্বাস জন্মৰ অন্য এক কাৰণ হ'ব পাৰে। লগতে লোকবিশ্বাসৰ কিছুমান ধাৰণাই অন্ধবিশ্বাসকো কঢ়িয়াই ফুৰা যেন বোধ হয়। লোকবিশ্বাস লোকমনৰ সৃষ্টি। যাৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত কিছু ক্ষেত্ৰত

যুক্তিহীন ধাৰণা-প্ৰত্যয়ক কেন্দ্ৰ কৰিও লোকবিশ্বাসসমূহ বৰ্তি থাকে। অৱশ্যে কোনো কোনো ক্ষেত্ৰত এনে বিশ্বাস-পৰম্পৰাই জনগোষ্ঠী একোটাৰ স্বকীয়তাও বহন কৰা পৰিলক্ষিত হয়। তাৎপৰ্যপূৰ্ণ যে, একে বিষয়ৰ ঘটনাৰ পুনৰাবৃত্তিৰ সময়ত একেসময়তে ঘটা কোনো বিপদৰ বা ঘটনাৰ কাকতলীয় সংযোগ; এনেবোৰ ঘটনাৰ অস্বাভাৱিকতাই লোকমনত সৃষ্টি কৰা ৰহস্যময়তা, বিস্ময় আৰু ভয় এনে ঘটনাৰ লগত জড়িত বিশ্বাসৰ মাজত ফুটি উঠে।[৩]

লোকবিশ্বাসৰ লগত জড়িত অন্য এটা দিশ হ'ল লোকাচাৰ। এক অৰ্থত ক'বলৈ গ'লে লোকাচাৰৰ আধাৰ হৈছে লোকবিশ্বাস। লোকাচাৰসমূহ হৈছে একপ্ৰকাৰৰ সংস্কাৰ। মানৱ জীৱন আৰু সমাজ জীৱনত সংস্কাৰৰ প্ৰয়োজনৰ লগতে তাৎপৰ্য আছে। সংস্কাৰৰ জৰিয়তে উত্তৰণ ঘটে। এনে উত্তৰণে ব্যক্তি এজনক সামাজিক স্তৰত মৰ্যদা প্ৰদান কৰে।

লোকাচাৰ আৰু লোকবিশ্বাস পৰস্পৰৰ পৰিপূৰক। এই দুই ধাৰণাৰ লগত বিভিন্ন কৃত্য জড়িত হৈ থাকে। সকলো জাতি-জনজাতিৰ মাজতে কম বেছি পৰিমাণে এনে সংস্কাৰমূলক কৃত্যৰ প্ৰচলন লক্ষ্য কৰা হয়। মাত্ৰ সময়ৰ লগত খাপ খুৱাই কিছুমান কৃত্য সংমিশ্ৰিত হয়, কিছুমানক পৰিত্যাগ কৰা হয় তথা অন্য কিছুমান পৰিগ্ৰহণ কৰা হয়। এই আলোচনাত উজনি অসমৰ মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত ৰক্ষিত বিভিন্ন লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস সম্পৰ্কে সামগ্ৰিক আলোচনাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

০.১ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু গুৰুত্ব

মেচ কছাৰীসকলৰ লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস শীৰ্ষক বিষয়টো আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে কেইটামান উদ্দেশ্য আগত ৰাখি লোৱা হৈছিল। সেয়ে হ'ল—

ক) মেচসকলৰ মাজত ৰক্ষিত বিভিন্ন লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাসৰ বিষয়ে জনাৰ উদ্দেশ্য

খ) এই লোকাচাৰ লোকবিশ্বাসসমূহে জনগোষ্ঠীটোৰ স্বকীয়তা ৰক্ষা কৰিব পাৰিছে নে নাই তাক জনাৰ উদ্দেশ্য।

গ) কি কি ধৰণৰ লোকাচাৰ লোকবিশ্বাস বৰ্তমানেও মেচসকলৰ মাজত ৰক্ষিত আছে তাক জনাৰ উদ্দেশ্য।

এনে বিষয়ৰ আলোচনাৰ গুৰুত্বৰ ক্ষেত্ৰত ক'ব পাৰি যে, এনে আলোচনা তথা অধ্যয়নৰদ্বাৰা সততে আলোচনাৰ আওতাৰ পৰা আঁতৰি থকা উজনি অসমৰ পুৰণি জনগোষ্ঠী মেচসকলৰ বিষয়ে ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ লগতে সংস্কৃতি অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত আগ্ৰহী গৱেষকৰ দৃষ্টি আকৰ্ষণ কৰিব পাৰিব পৰা যাব। লগতে এনে অধ্যয়নৰ বিদ্যায়তনিক গুৰুত্বও আছে।

১.০০ মেচ কছাৰীসকলৰৰ মাজত প্ৰচলিত লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস ঃ

মেচ কছাৰী সমাজতো দৈনন্দিন জীৱনৰ বিভিন্ন সময়ত তথা জীৱনৰ বিভিন্ন স্তৰত পালন কৰা বিভিন্ন সামাজিক কৃত্যৰ লগত লোকাচাৰ আৰু লোকবিশ্বাস জড়িত হৈ থকা দেখিবলৈ পোৱা যায়। এইসমূহ কৃত্যৰ জনগোষ্ঠীটোৰ স্বকীয়তাক সামৰি ৰাখে। মেচ কছাৰীসকলৰৰ মাজত ৰক্ষিত লোকাচাৰ আৰু লোকবিশ্বাসৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে সেইসমূহক তলত দিয়াৰ দৰে শৃংখলাবদ্ধভাৱে ভাগ কৰি লোৱা হৈছে—

১) জন্মসংক্ৰান্তীয় লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস
২) মৃত্যুসম্পৰ্কীয় লোকাচাৰ-লাকবিশ্বাস
৩) বিবাহকেন্দ্ৰিক লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস
- তোলনী বিয়াকেন্দ্ৰিক লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস
- বৰ বিয়াকেন্দ্ৰিক লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস

৪) কৃষিকেন্দ্ৰিক লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস
৫) অন্যান্য লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস

১.০২.১ জন্মসংক্ৰান্তীয় লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস ঃ

অসমৰ বিভিন্ন জনগোষ্ঠীৰ মাজত প্ৰচলিত জন্মৰ লগত জড়িত লোকাচাৰ- লোকবিশ্বাসৰ মাজত সাদৃশ্য দেখিবলৈ পোৱা যায়। তাৰ মূল কাৰণহ'ল এটা সংস্কৃতিৰ ওপৰত পৰা অন্য এক সংস্কৃতিৰ প্ৰভাব।

মেচ কছাৰী সমাজত কেঁচুৱা জন্মাৰ আগত সন্তানসম্ভৱা মহিলা এগৰাকীক কেন্দ্ৰ কৰিও বিভিন্ন আচাৰ-অনুষ্ঠান পালন কৰা হয়। সন্তানসম্ভৱা মহিলাগৰাকীক পাঁচ মাহত পঞ্চামৃত খুওৱা হয়। এই নিয়ম মহিলাগৰাকীৰ মাকৰ ঘৰত কৰা হয়। পঞ্চামৃতত ঘিঁউ, মৌ, দৈ গাখীৰ, এঁৰা গাখীৰ, চেনি আদিৰে পায়স তৈয়াৰ কৰি গৰ্ভৱতী মহিলাগৰাকীক খাবলৈ দিয়া হয়। এই নিয়মৰ বাবে দিন-বাৰ ধৰি দিয়া হয়। লোকবিশ্বাস অনুসৰি, এইদৰে লোকাচাৰ পালন কৰিলে গৰ্ভত থকা সন্তানটো সুস্থ, সবল হয়। একেদৰে সাত মাহত বা ন মাহত 'গোপিনী সবাহ' পাতে। ইয়াত সাতগৰাকী গোপিনীক নিমন্ত্ৰণ কৰি গৰ্ভৱতী মহিলাগৰাকীক পিঠাগুৰি, কল, গাখীৰ, গুৰ, ঘিউ আদি সানি খাবলৈ দিয়ে। এইয়াও গৰ্ভৱতী মহিলা আৰু সন্তানৰ স্বাস্থ্য ভালে ৰাখিবলৈ পতা অনুষ্ঠান।

গৰ্ভৱতী অৱস্থাত মহিলাগৰাকীক বিভিন্ন নিয়ম-নীতিৰ মাজেৰে থাকিবলৈ দিয়া হয়। এই সময়চোৱাত মহিলাগৰাকীয়ে নিজকে নেতিবাচক বিষয়ৰপৰা পাৰ্যমানে আঁতৰাই ৰাখিব লাগে। একেদৰে, মেচ কছাৰীসমাজত এগৰাকী গৰ্ভৱতী মহিলাই গৰুৰ পঘা বা তেনেদৰে পৰি থকা ৰছীৰ ওপৰেৰে পাৰ হৈ যোৱাতো নিষেধ, লোকবিশ্বাস অনুসৰি এনে কৰিলে গৰ্ভত থকা সন্তানক নাড়ীয়ে মেৰিয়াই ধৰিব বুলি আশংকা কৰা হয়।[২] লগতে এই সময়ত মহিলাগৰাকীক জান-জুৰি, নদী পাৰ হোৱা, ডাঙৰ গছৰ তললৈ যোৱা, শ্মশানলৈ যোৱা, সদ্য মৃত ব্যক্তিৰ ঘৰলৈ খবৰ কৰিবলৈ যোৱা আদি কামৰ পৰা বিৰত ৰখা হয়। এনে কাৰ্য কৰিলে ভুমিষ্ঠ হ'বলগা সন্তানটোৰ ক্ষেত্ৰত বেয়া প্ৰভাব পৰে বুলি বিশ্বাস কৰা হয় গৰ্ভৱতী মহিলাক যজা কল খাবলৈ দিয়া নহয় এনে কল খালে যজা সন্তান জন্ম হয় বুলি ভবা হয়। লগতে গৰ্ভৱতী মহিলাই গৰু-ছাগলী বান্ধিব নাপায়, গৰ্ভৱতী মহিলাই চুলি মেলি থাকিব নাপায় আদি লোকবিশ্বাস মনা হয়। এই লোকবিশ্বাসৰ আঁৰত অপদেৱতাৰ বিশ্বাস জড়িত হৈ আছে। এই কামবোৰ কৰিলে গৰ্ভৱতী মহিলা এগৰাকী অপদেৱতাৰ ৰোষত পৰে বুলি বিশ্বাস কৰা হয়।

মেচ কছাৰীসকলে কেঁচুৱা জন্মৰ পাছতো বহুবোৰ কৃত্য সম্পন্ন কৰে। সন্তান জন্ম হোৱাৰ পিছত নাড়ী (নাই) সৰিলেহে কেঁচুৱা আৰু কেঁচুৱা মাকক বাজলৈ উলিয়াই নিয়ম কৰে। তাৰ আগলৈকে মাক আৰু সন্তান দুয়ো ঘৰৰ ভিতৰতে থাকিব লগা হয়। ই এক প্ৰকাৰৰ লোকাচাৰ। ইয়াৰ লগত জড়িত লোকবিশ্বাস এইয়ে যে নাই (নাড়ী) নসৰা পৰ্যন্ত নৱজাতক বাহিৰলৈ ওলাব নাপায়। বাজলৈ উলিওৱাৰ দিনা কেঁচুৱাটিক এখন চালপীৰা বা তামুলী পীৰা (ঠায়ে ঠায়ে কিছু বেলেগ উপকৰণত)ত পূবমুৱাকৈ শুৱাই লয়। পীৰাখনৰ কাষতে এখন কাঁহীত আৰৈ চাউল অলপ দি তাত সোণৰ আঙুঠি, কিতাপ, কলম, পইচা আদি সজাই থোৱা হয়।[৩] লোকবিশ্বাস অনুসৰি, বাজলৈ ওলোৱা কেঁচুৱাটিৰ হাতত এইসমূহ ধৰাই দিলে ভবিষ্যতে কেঁচুৱাটি ধনবান, জ্ঞানবান, বিত্তবান হয়। পীৰাখনত কেঁচুৱাটো শুৱাই চাৰিটা চুকত চাৰিবাৰ জোৰেৰে খুন্দিয়াই কোৱা হয়, "পানীলৈ ভয় কৰিবি, জুইলৈ ভয় কৰিবি, পিতামতালৈ ভয় কৰিবি, দেৱ দেৱতালৈ ভয় কৰিবি।"[৪] এনেদৰে কৰাৰ আঁৰত এই বিশ্বাস আছে যে এনেদৰে কৰিলে উচপ খুৱালে কেঁচুৱাটিয়ে ডাঙৰ হৈও পানী, জুই, পিতৃ-মাতৃ আৰু দেৱতালৈ ভয় কৰি সমীহ কৰি থাকিব। সন্তান বা কেঁচুৱা বাজলৈ ওলোৱাৰ এমাহৰ পিছত গাঁৱৰ সাদুংগাৱাৰ জৰিয়তে শুদ্ধিকৰণ অনুষ্ঠান পতা হয়। ইয়াত সাদুংগাৱাই শান্তিয়নী পানী খুৱাই মাকৰ লগতে গোটেই পৰিয়াল টোকে শুদ্ধি কৰে। সেইদিনা ঘৰখন ভালদৰে চাফা চিকুণ কৰি মাক আৰু কেঁচুৱাই গা ধুই অহাৰ পিছত চাকি জ্বলাই আগলটি কলপাতত ফুল দি পূব দিশলৈ মাকে সন্তানে সেৱা কৰে। সেইদিনাই মিতুক (মৃতকক)ক জলপান দিয়া হয়। লোকবিশ্বাস আছে যে সকলো শুভকাৰ্যৰ আগত মিতুকক স্মৰণ কৰিলে অপায়-অমংগল দূৰ হয়। শুদ্ধিকৰণৰ দিনাই কেঁচুৱাটিৰ নামাকৰণো কৰা হয়।

১.০২.০২ মৃত্যুসম্পৰ্কীয় লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস ঃ

জীৱন সংক্ৰান্তীয় অন্যতম এক লোকাচাৰ হ'ল মৃত্যুৰ লগত জড়িত লোকাচাৰ। মৃত্যুৰ পিছতো মৃতকৰ সম্পূৰ্ণ জীৱনৰ বাবে তথা মুক্তিৰ বাবে শ্ৰাদ্ধকৰ্ম বা পিণ্ডদান সকলো সমাজতে কৰা হয়। প্ৰত্যেক জাতি-জনগোষ্ঠী, সমাজে বিশ্বাস কৰে যে, মৃতকৰ শ্ৰাদ্ধ সম্পন্ন নকৰিলে মৃতকৰ আত্মাই শান্তি নাপায়, মুক্তি লাভ নকৰে তথা স্বৰ্গত ঠাই নাপায়। তাৰে পৰিপ্ৰেক্ষিতত মৃত্যুকেন্দ্ৰিক লোকাচাৰ লোকবিশ্বাস পৰম্পৰাগতভাৱে সমাজ একোখনত প্ৰচলিত হৈ আহিছে। মেচসকলৰ মাজতো কেতবোৰ মৃত্যুসংক্ৰান্তীয় লোকাচাৰ পালন কৰা হয়।

মেচ কছাৰীসকলৰ সমাজত মৃত ব্যক্তিজনক সমাজৰ মানুহ অহাৰ পিছত গা-পা ধুৱাই নতুন কাপোৰ পিন্ধোৱাই ভাত খোওৱাৰ নিয়ম আছে। লোকবিশ্বাস অনুসৰি, মৃতকক সদায় বাওঁহাতেৰে অন্ন বা পানী দিব লাগে। অন্যথা মৃতকে গ্ৰহণ নকৰে।[৫] লগতে মৃতকক ভাত দিয়া কলপাতখন ওলোটাকৈ পাৰি দিব লাগে। জন্ম-মৃত্যুৰ বিপৰীত অৱস্থাটোৱে এই নিয়মৰ কাৰণ হোৱাৰ সম্ভাৱনা আছে। মৃতকক চাংগ্ৰা বা চাণ্ডিত তুলি পুৰুষ হ'লে পাঁচবাৰ আৰু মহিলা হ'লে ছবাৰ লৰাই কান্ধত তোলা হয়। লগতে বৰ ঘৰৰ দুৱাৰত পুৰুষ হ'লে পাঁচবাৰ আৰু মহিলা হ'লে সাতবাৰ খুন্দিয়াই ওলাই যোৱাৰ নিয়ম আছে। শ্মশানত মৃতকক উত্তৰমুৱাকৈ থোৱা হয়। মেচ কুৰীসকলৰ লোকবিশ্বাস মতে উত্তৰ দিশ প্ৰস্থানৰ দিশ।

মৃতকৰ চাংগ্ৰাখন শ্মশানৰ বাবে উলিয়াই নিয়াৰ পিছতে চাংগ্ৰা থোৱা ঠাইখন গাহেনবাৰি (উড়ালত খুন্দিবলৈ ব্যৱহাৰ কৰা মাৰি), ছাই আৰু পানী ঢালি পৰিস্কাৰ কৰে। মৃতকৰ শ্মশান যাত্ৰাৰ সময়তে তেওঁলোকৰ কোনো আত্মীয়ই কলপুলি, তামোল পুলি, তুলসী পুলি

লগত লৈ লয়। শৱ দাহৰ পিছত সেই পুলি বুই দিয়া হয়। মেচ কুৰীসকলে বিশ্বাস কৰে যে এই গছপুলিবোৰে শ্মশানত মৃতকক ছাঁ দিব। শ্মশানৰ পৰা অহাৰ সময়ত সকলোৱে মাটিত তিনিটা আঁক মাৰি থৈ আহে। ইয়াৰ লগত এই লোকবিশ্বাস জড়িত আছে যে, এনেদৰে কৰিলে মৃতকৰ আত্মাই সেই আঁচ তিনিডাল পাৰ হৈ পুনৰ আহিব নোৱাৰে। উল্লেখযোগ্য যে, মেচ কছাৰীসকলে মৃতকক স্মৰণ কৰি পতা সকলো অনুষ্ঠানতে বাওঁ হাতেৰে জৌ বা অন্যান্য সামগ্ৰী মৃতকৰ বাবে আগবঢ়ায়। কাৰণ মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত লোকবিশ্বাস আছে যে মৃতকে বাওঁহাতেৰে দিয়া দ্ৰব্যহে গ্ৰহণ কৰে। মৃত্যুৰ দিনৰপৰা শ্ৰাদ্ধ হোৱালৈকে বিভিন্ন নীতি নিয়মেৰে মেচসকলে অনুষ্ঠান পালন কৰে। এই অনুষ্ঠানসমূহে বিভিন্ন আচাৰ-ৰীতি, নীতি ধৰি ৰাখে।

১.০২.০৩ বিবাহকেন্দ্ৰিক লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস ঃ

মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত বহু ধৰণৰ বিবাহৰ প্ৰচলন আছে যদিও ইয়াত কেৱল তোলনী বিয়া আৰু বৰ বিয়াক কেন্দ্ৰ কৰি থকা লোকাচাৰ আৰু লোকবিশ্বাসসমূহকে ইয়াত উল্লেখ কৰা হৈছে।

ক) তোলনী বিয়াৰ লগত জড়িত লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস ঃ

অসমৰ অন্যান্য সমাজৰ দৰে মেচ কছাৰী সমাজতো ছোৱালীয়ে কন্যাকাল পোৱাৰ সময়ত বা প্ৰথম ঋতুমতী হওঁতে কেতবোৰ লোকাচাৰ পালন কৰে। এই লোকাচাৰসমূহৰ লগত বহুবোৰ বিশ্বাস জড়িত হৈ থাকে। এগৰাকী ছোৱালী পুষ্পিতা হৈছে বুলি জনাৰ লগে লগে ওচৰৰ দুই-চাৰিগৰাকী আয়তীক মাতি অনা হয়। সকলোৱে মিলি আছুতীয়া কোঠা এটাত খেৰৰ বিচনা সাজে আৰু কন্যাগৰাকীক মেখেলা-চাদৰ বা থিনথাই পিন্ধোৱাই সেই বিছনাতে বহোৱাই ৰাখে। এই লোকাচাৰ পালন কৰোঁতে আয়তীসকলে উৰুলি দিয়ে আৰু কন্যাগৰাকী হাতত লোৰ কটাৰী এখনৰ লগতে সৰিয়হ অলপ ৰুমাল এখনত বান্ধি লৈ থাকিবলৈ দিয়ে। ইয়াৰদ্বাৰা ন কৈ গাভৰু হোৱা কন্যাৰ কাষলৈ অপশক্তি আহিব নোৱাৰে বুলি বিশ্বাস কৰা হয়। কন্যাগৰাকীক চাৰি দিনলৈ বেলিৰ পোহৰ তথা কোনো পুৰুষৰ মুখ চাবলৈ দিয়া নহয়। লোকবিশ্বাস অনুসৰি এই সময়ত ছোৱালী গৰাকীয়ে পুৰুষৰ মুখ দেখিলে অমংগল হ'ব পাৰে।

চাৰিদিনৰ দিনা ছোৱালীগৰাকীক কলৰ তলত গা ধুওৱাৰ লোকাচাৰ পালন কৰা হয়। কন্যা গৰাকীক গা ধুওৱাৰ সময়ত বাঁহ এডালেৰে ধনু কাঁড় সজা হয়। আৰু কাঁড়ডালত এটা কলডিল গুজি দিয়া হয়। লোকবিশ্বাস অনুসৰি, ধনু কাঁড়ডাল যিফালে হালি যায় সেইফালে কন্যাগৰাকী বিয়া হয় বুলি ভবা হয়। মেচ কছাৰীসকলে ঋতুমতী ছোৱালীজনীক প্ৰতীকী অৰ্থত এটা কলপুলিক দৰা সাজি সেইটোৰ লগত বিয়া দিয়াৰো লোকাচাৰ পালন কৰে। সেই কলপুলিটো পৰৱৰ্তী সময়ত বাৰীৰ এটা চুকত ৰুই দিয়া হয়। মেচ কছাৰীসকলে বিশ্বাস কৰে যে কলজোপা যদি পুলিয়ে পোখাই বাঢ়ি আহে তেনে ভৱিষ্যত জীৱনত কন্যাগৰাকীও এনেদৰেই উৰ্বৰা ৰূপেৰে সমৃদ্ধ হৈ উঠিব। এক অৰ্থত কলপুলিটো কন্যাগৰাকীৰ দাম্পত্য জীৱনৰ প্ৰতীক।

খ) বৰ বিয়াৰ লগত জড়িত লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস ঃ

মেচ কছাৰী সমাজত বাল্য বিবাহ, বহু বিবাহ, যৌতুক প্ৰথা, বহুপত্নী বিবাহ আৰু নিজ আত্মীয়ৰ মাজত বিবাহ আদি নিষেধ। অৱশ্যে তাৰ লগতে বিধৱা বিবাহৰ প্ৰচলন মেচ কছাৰী সমাজত দেখা যায়। মেচ কছাৰীসকলে সকলো অনুষ্ঠানতে মৃতকক স্মৰণ কৰে। বৰ বিয়াতো বিয়াৰ এদিন বা দুদিনৰ আগত দৰা ঘৰ আৰু কইনা ঘৰ উভয়তে মৃতকক স্মৰণ কৰি নৈবেদ্য আগবঢ়ায়। 'মিতুক দিয়া' নামেৰে পালন কৰা এই লোকচাৰৰ লগত জড়িত লোকবিশ্বাস অনুসৰি এনে কৰিলে মৃতকে শুভ কাৰ্যত কোনো বাধাৰ সৃষ্টি নকৰে। দৰা আদৰাৰ পিছত কিবা অমংগল থাকিলে নাশ হ'বৰ বাবে মেচ কছাৰীসকলে লোক বিশ্বাস অনুসৰি কুকুৰাৰ কণী মাটিত মাৰি ভাঙে।

দৰাৰ মাকে কইনা আদৰোতে মূল ঘৰৰ দুৱাৰমুখত দুটা কণী আৰু দুগছ চাকি জ্বলাই ৰাখে। দৰা আৰু কইনাই কণী দুটা গছকি ভাঙি ঘৰৰ ভিতৰলৈ সোমাই যায়। এই লোকচাৰৰ লগত উৰ্বৰতা আৰু প্ৰজনন সম্পৰ্কীয় লোকবিশ্বাস লুকাই আছে। এনে কৰিলে পৰৱৰ্তী সময়ত বংশবৃদ্ধিত কোনো কেৰোণ নাথাকে বুলি বিশ্বাস কৰা হয়।

১.০২.০৪ কৃষিকেন্দ্ৰিক লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস ঃ

অসমৰ সকলো জনগোষ্ঠীৰে মূল জীৱিকা হ'ল কৃষি। কৃষক কেন্দ্ৰ কৰিয়ে বিবিধ আচাৰ-অনুষ্ঠান পালন কৰা হয়। লগতে কৃষৰ লগত বহুতো বিশ্বাসো জড়িত

হৈ থাকে। মেচ কছাৰীসকলে পূৰ্বৰে পৰা কৃষক কেন্দ্ৰ কৰি জীৱন নিৰ্বাহ কৰি আহিছে। যাৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত বহুবোৰ বিশ্বাস তেওঁলোকৰ মাজত দেখা পোৱা যায়। মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত প্ৰচলিত কেতবোৰ কৃষকেন্দ্ৰিক লোকবিশ্বাস হ'ল—

• কঠীয়া ৰুৱাৰ দিনা বা ন ভুঁইৰ দিনা পথাৰত লক্ষ্মী দেৱীৰ প্ৰতি সেৱা জনাই আগলতি কলপাতত পূবমুৱাকৈ তামোল-পাণ, ফল লগা গছৰ পুলি, কণী আদি আগবঢ়াই পূজা কৰে। ফল লগা গছ, কণী আদি উৰ্বৰতাৰ প্ৰতীক। তেওঁলোকে বিশ্বাস কৰে যে এনেধৰণৰ সামগ্ৰী দিলে শস্য পথাৰ নদন বদন হৈ পৰে।

• লোকবিশ্বাস অনুসৰি, ৰোৱনীয়ে কঠিয়া ৰুই আহি শুব নালাগে। শুলে ধানবোৰো হাউলি পৰি যায় বুলি বিশ্বাস কৰা হয়।[৬]

• কছাৰীসকলৰ মাজত বিশ্বাস আছে যে অমাৱস্যা বা আউসীত হাল বাব নালাগে। এই দিনত হাল বালে শস্য পথাৰে কষ্ট পায়।

• ধান দোৱাৰ সময়ত প্ৰথম ধানথোক চৌকাৰ ওপৰত আঁৰি লক্ষ্মী দেৱীলৈ উৎসৰ্গা কৰা হয়। বিশ্বাস অনুসৰি এনেদৰে লখিমীদেৱীলৈ উৎসৰ্গা নকৰিলে দেৱী অসন্তুষ্ট হয়।

১.০২.০৫ অন্যান্য লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস ঃ

দৈনন্দিন জীৱনৰ লগত জড়িত বিভিন্ন ক্ষেত্ৰৰ লগত প্ৰত্যেক জনগোষ্ঠীৰে বহুবোৰ লোকবিশ্বাস জড়িত হৈ থাকে। মেচ কছাৰীসকলৰ মাজতো বিভিন্ন ক্ষেত্ৰত বিভিন্ন লোকবিশ্বাস জড়িত হৈ আছে। জীৱ-জন্তুকেন্দ্ৰিক বিশ্বাস, উৎসৱ-অনুষ্ঠানকেন্দ্ৰিক বিশ্বাসৰ লগতে জীৱনকেন্দ্ৰিক বহুবোৰ লোকবিশ্বাস মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত প্ৰচলিত হৈ থকা দেখা যায়। কেতবোৰ লোকবিশ্বাসক কেন্দ্ৰ কৰি লোকাচাৰ গঢ়ি উঠিলেও কিছুমান লোকবিশ্বাসত লোকাচাৰ দেখা নাযায়।। মাত্ৰ পৰম্পৰা অনুসৰি বিশ্বাস কিছুমানহে ৰক্ষিত হৈ থাকে। এই বিশ্বাসসমূহৰ বৈজ্ঞানিক ভিত্তিও বহুসময়ত থকা দেখা নাযায়। এই লোকবিশ্বাসসমূহক একেলগ কৰি ইয়াত উল্লেখ কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে।

• বহাগ মাহ সোমোৱাৰ আগেয়ে বা গৰু বিহুৰ আগত বিচনীৰ ব্যৱহাৰ কৰিলে বিভিন্ন ৰোগ হয় বুলি মেচ কছাৰীসকলে বিশ্বাস কৰে। গতিকে মেচসকলে গৰু বিহুৰ দিনা গৰুৰ গোহালিত 'গোহালি পূজা'[৭] স্পালন কৰি প্ৰথম বিচনীৰ ব্যৱহাৰ কৰে।

• বহাগ বিহুত আমৰলী পৰুৱাৰ টোপ খালে বংশবৃদ্ধি হয় বুলি লোকবিশ্বাস প্ৰচলন আছে।

• গৰু বিহুৰ দিনা মাহ-হালধি দি গা ধুলে খৰ-খজটি নহয় বুলি বিশ্বাস কৰা হয়।

• মেচ কছাৰীসকলে কাতি বিহুৰ দিনৰ পৰাই কেঁচা বা কুমলীয়া তামোলৰ ব্যৱহাৰ কৰে। লোকবিশ্বাস অনুসৰি, কাতি বিহুত লখিমীৰ আৰাধনাত কেঁচা তামোল ব্যৱহাৰ কৰিলে লখিমী দেৱী সন্তুষ্ট হয়।

• মাঘৰ বিহুৰ মেজিৰ জুই সেক সকলোৱে লয়। ইয়াৰ লগত এই বিশ্বাস জড়িত আছে যে মেজিৰ জুইৰ তাপ ল'লে বছৰটোলৈ ছালৰ অসুখ নহয়।

• মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত উদ্‌যাপন হোৱা এক পূজা হ'ল— বাট ভেটা পূজা। এই পূজা গাঁৱখনৰ মংগলৰ বাবে কৰা হয়। লোকবিশ্বাস আছে যে, বাট ভেটা পূজাত বলিৰ বাবে অনা কুকুৰাই যদি পূজাৰ আগ মুহূৰ্তত খাবলৈ দিয়া বুট-মগু খাই তেনে গাঁওখনৰ মংগল।

• বসন্ত ঋতুৰ সময়ত পালন কৰা মা ভাগৱতী বা শীতলা আইৰ পূজাৰ লগতো বহু লোকবিশ্বাস জড়িত আছে। বসন্ত ৰোগক মেচ কছাৰীসকলে বৰ্তমানেও দেৱী হিচাপেই মানি আহিছে। ই এক প্ৰকাৰৰ অন্ধবিশ্বাস।

• জীৱ-জন্তুক কেন্দ্ৰ কৰিও বা জীৱ-জন্তুৰ আচাৰ-আচৰণক কেন্দ্ৰ কৰিও মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত বহুবোৰ লোকবিশ্বাস প্ৰচলন আছে। যেনে— মেকুৰীয়ে ৰাতি বেছিকৈ চিঞৰিলে বা কান্দিলে ঘৰৰ অমংগল হয় বুলি ভবা হয়। মাইকী কুকুৰাই ডাক দিলেও অমংগল হয় বুলি বিশ্বাস কৰা হয়। আনকি মাইকী কুকুৰাই ডাক দিলে লগালগ কুকুৰাজনী মাৰি পেলোৱা হয়। একেদৰে ফেঁচা-মেকুৰী আদিক অমংগল বুলি ভবা হয়। জীৱ-জন্তুসমূহ নিজে নিজে আহি নিজৰ গঁৱাল বা গোহালিত সোমালে প্ৰাকৃতিক দুৰ্যোগ হ'ব বুলি আশংকা কৰা হয়।

• মেচ কছাৰীসকলে ডেকা ল'ৰাই বাঁহৰ পুলি কাটিব নাপাই বুলি বিশ্বাস কৰা হয়। তেওঁলোকৰ মতে এনেদৰে উঠি অহা বাঁহৰ পুলি কাটিলে ভৱিষ্যতে ডেকাজনৰো বংশ নাশ হোৱাৰ আশংকা থাকে।

• পত্নী গৰ্ভৱতী হৈ থাকিলে পতিয়ে জীৱ-জন্তু বধ কৰিলে গৰ্ভত থকা সন্তানটিৰ অমংগল হয় বুলি বিশ্বাস কৰা হয়।

• কেৱল মহিলাক কেন্দ্ৰ কৰিও মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত বিভিন্ন লোকবিশ্বাস প্ৰচলন হৈ আছে। উদাহৰণস্বৰূপে, কোনো ছোৱালীৰ চুলি কেঁকুৰা আৰু দাঁত উছলা হ'লে সেইয়া দুৰ্ভাগ্য বা কুলক্ষণৰ চিন বুলি ভবা হয়। ঋতুমতী নাৰীক অশুচি বুলি ভবা হয়। সেয়ে এনে সময়ত নাৰীয়ে গছৰপৰা ফল-পাত চিঙা নিষেধ, স্নানতপথাৰ বা তামোল-পাণৰ বাৰীত সোমোৱা নিষেধ। এনে অৱস্থাত এইসমূহ কাম কৰিলে অমংগল হয় বুলি ভবা হয়। লগতে গছৰ ফল-পাত ছিঙিলে গছজোপা মৰি যায় বুলি ভবা হয়। এই সময়ত ছোৱালী বা মহিলা এগৰাকীক নিলগাই থোৱা হয়। তেওঁলোকে এই সময়ত যিকোনো বস্তুত হাত দিলে সেই বস্তুটো 'চুৱা' হয় বুলিও ভবা হয়।

লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাসত জনগোষ্ঠী একোটাৰ স্বকীয়ত্ব ৰক্ষিত হৈ থাকে। মেচ কছাৰীসকল যিহেতু অসমৰ প্ৰাচীন জনগোষ্ঠী গতিকে বহুবোৰ লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস অসমৰ অন্যান্য সমাজৰ মাজত প্ৰচলিত লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাসৰ লগত মিল থকা দেখা যায়। তাৰ মূল কাৰণ হ'ল প্ৰভাৱ আৰু সমাহৰণ । এই প্ৰভাৱ সামাজিক, সাংস্কৃতিক প্ৰভাৱ। মেচ কছাৰীসকলৰ কিছু লোকবিশ্বাসৰ মাজত অন্ধবিশ্বাসো জড়িত হৈ থকাও পৰিলক্ষিত হয়। উদাহৰণ স্বৰূপে ঋতুমতী কলপুলিৰ লগত বিয়া পতা, বসন্ত ৰোগক আই বুলি মানি পূজা কৰা আদিৰ কথা ক'ব পাৰি। একেদৰে ফেঁচা, মেকুৰী, মাইকী কুকুৰাৰ ডাক আদিক অমংগল বুলি ভবাটো অন্ধবিশ্বাস লুকাই আছে বুলিব পাৰি।

মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত দৈনন্দিন জীৱনৰ লগত জড়িত বহুবোৰ দিশৰ লগত লোকাচাৰ লোকবিশ্বাস জড়িত হৈ থকা দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। বিশেষকৈ জন্ম-মৃত্যু-বিবাহকেন্দ্ৰিক লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাসসমূহে মেচ কছাৰীসকলক স্বকীয়তা প্ৰদান কৰিছে। যুক্তিহীন আৰু যুক্তিগ্ৰাহ্য বহুবোৰ লোকাচাৰ- লোকবিশ্বাসে মেচ কছাৰীসকলৰ সংস্কৃতিক অন্য এক মাত্ৰা প্ৰদান কৰিছে বুলিব পাৰি। ❑

প্ৰসংগসুচী ঃ

১) নগেন শইকীয়া, অসমীয়া মানুহৰ ইতিহাস, ২০১৩, পৃঃ ৩০৭

২) তথ্যদাতা- দীপিকা মেচ, গৃহিণী, বয়স-৪৫, বকপাৰা মেচ গাঁও, ডিব্ৰুগড়

৩) সমিৰণ মেচ, মেচ-কছাৰী জনগোষ্ঠী আৰু সমাজ-সংস্কৃতিৰ চমু পৰিচয়, ২০১৩,পৃ: ৭০

৪) সমিৰণ মেচ, সদ্যোক্ত, পৃ: ৭১

৫) তথ্যদাতা- ৰ'জীমাই মেচ, গৃহিণী, বয়স-৬৫, পাৰখোৱা

৬) তথ্যদাতা- প্ৰিয়ংকা মেচ, বয়স-৩০, শিল্পী, ডিব্ৰুগড়

৭) গোহালি পূজা গৰু বিহুৰ দিনা সন্ধিয়া গোহালিত পালন কৰা হয়। হাবিয়ে বননিয়ে চৰিবলৈ যাওঁতে অন্য কোনো হিংস্ৰ জন্তু বা অপদেৱতাই যাতে অনিষ্ট কৰিব নোৱাৰে তাৰবাবে প্ৰাৰ্থনা কৰি এওঁ পূজা কৰা হয়। এই পূজাত ৰঙা মতা মুৰ্গী এটা বলি দিয়া হয়। তথ্যদাতা- আমিন মেচ, শিল্পী, বয়স-৫৫, পাৰখোৱা, কাৰ্বি আংলং

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

কলিতা, নিৰঞ্জন আৰু পম্পী হাজং (সম্পা.)। *অসমৰ বৰ্ণাঢ্য গোষ্ঠীজীৱন*। ১ম প্ৰকাশ। গুৱাহাটী; ৰেখা প্ৰকাশন, ২০২২। মুদ্ৰিত

কায়স্থ, পুতলী (সম্পা.)। *অসমৰ বিভিন্ন জনগোষ্ঠীৰ জন্ম-মৃত্যু সম্পৰ্কীয় লোকাচাৰ*। ১ম প্ৰকাশ। গুৱাহাটী, অলক প্ৰকাশন; ২০১১ মুদ্ৰিত

মেচ, সমিৰণ। *মেচ জনগোষ্ঠী আৰু সমাজ সংস্কৃতিৰ চমু পৰিচয়*। ১ম প্ৰকাশ। শিৱসাগৰ; মেচ কছাৰী উন্নয়ন পৰিষদ, ২০১৩। মুদ্ৰিত

শইকীয়া, নগেন। *অসমীয়া মানুহৰ ইতিহাস*। ১ম প্ৰকাশ। ২০১৩। মুদ্ৰিত স্মৃতিগ্ৰন্থ-

মেচ নিতুল (সম্পা.)। *শালস্তম্ভ*, স্মৃতিগ্ৰন্থ, দ্বিতীয় মেচ কছাৰী সাংস্কৃতিক মহোৎসৱ। নুমলীগড়, গোলাঘাট। ২০১৪। মুদ্ৰিত

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

সন্তোষ কুমাৰ কৰ্মকাৰৰ ‘প্ৰভাতী সূৰ্যৰ দেশ’ উপন্যাসত প্ৰতিফলিত ঊনবিংশ শতিকাৰ শৈক্ষিক দিশ আৰু সমাজ সংস্কাৰৰ চিত্ৰ

সংগীতা দেৱী
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
অসম-৭৮১০১৪
৬৯০০৫৭৫১৪৫
nsangita015@gmail.com

ড° প্ৰসন্ন কুমাৰ নাথ
সহযোগী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
ছিপাঝাৰ মহাবিদ্যালয়
ছিপাঝাৰ (দৰং) অসম-৭৮৪১৪৫
৮৬৩৮৫২৬০৩০
prasannabangnoi@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

সৃষ্টিশীল সাহিত্যৰ মাজেৰে প্ৰধানতঃ বাস্তৱৰ চিন্তা আৰু কৰ্মই চৰিত্ৰৰ মাজেৰে লেখকে অংকন কৰে। এই সৃষ্টিশীল সাহিত্যৰে এটা প্ৰধান অংগ হ'ল উপন্যাস। মূলতঃ ব্যক্তি আৰু সমাজৰ চিত্ৰণেই উপন্যাসৰ মূল উপজীব্য। পাশ্চাত্য সাহিত্যত আৰম্ভ হোৱা উপন্যাসে আজি পৃথিৱীৰ চুকে-কোণে প্ৰসাৰিত হৈ আহি সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনত এক সুকীয়া আসন অধিকাৰ কৰি আহিছে। উপন্যাস যদিও লেখকৰ কল্পনাৰ সৃষ্টি তথাপি বাস্তৱৰ জীয়া চৰিত্ৰ এটিক কল্পনাৰ জৰিয়তে ঔপন্যাসিকে উপন্যাসৰ ৰূপ দিয়ে। এনেদৰে ব্যক্তিৰ জীৱনক লৈ ৰচিত কল্প-কাহিনীয়ে জীৱনীভিত্তিক উপন্যাস। সমাজত এনে কিছুমান ব্যক্তি আছে যাৰ জীৱন-কাহিনী কোনো কাল্পনিক চৰিত্ৰতকৈ কম বৈচিত্ৰ্যময় নহয়। ঐতিহাসিকভাৱেও এনে ব্যক্তিসকলৰ বিশেষ গুৰুত্ব থকা পৰিলক্ষিত হয়। আলোচিত প্ৰবন্ধটিত তেনে এগৰাকী ব্যক্তিৰ জীৱনক লৈ ৰচিত কাহিনীকে আলোচনা কৰা হ'ব। নিজ জাতিৰ জাতীয় স্বাভিমান ৰক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত এইগৰাকী স্বনামধন্য ব্যক্তিয়ে যিক্ষিণ কৰি থৈ গৈছে সেয়া সদায়েই প্ৰাতঃস্মৰণীয় হৈ থাকিব। এনে এগৰাকী ব্যক্তি আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ জীৱনকলৈ ঔপন্যাসিক সন্তোষ কুমাৰ কৰ্মকাৰে *প্ৰভাতী সূৰ্যৰ দেশ* (২০১৭) শীৰ্ষক উপন্যাস ৰচনা কৰি উলিয়াইছে। অসম আৰু অসমীয়া জাতিৰ সংকটৰ কালত, জাতিটোৰ অস্তিত্ব ৰক্ষাৰ স্বাৰ্থত এই গৰাকী ব্যক্তিয়ে সদায় নিজৰ মত প্ৰতিষ্ঠা কৰি আহিছিল। সেয়ে এই ব্যক্তিগৰাকীৰ জীৱনকালত কৰা কৰ্মৰাজিৰ উচিত মূল্যায়নৰ বাবে তেওঁৰ জীৱন কৃতিৰ বিষয়ে অধ্যয়ন কৰা প্ৰয়োজন। ইয়াৰোপৰি ঔপন্যাসিকে মূল ব্যক্তিগৰাকীৰ জীৱন চৰিত্ৰ কিদৰে উপন্যাসখনৰ মাজেৰে উত্থাপন কৰিছে তাৰ অধ্যয়ন কৰাও আমাৰ উদ্দেশ্য।

বীজ শব্দ ঃ

প্ৰভাতী সূৰ্যৰ দেশ, আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন, ঊনবিংশ শতিকাৰ শৈক্ষিক দিশ।

অৱতৰণিকা ঃ

সন্তোষ কুমাৰ কৰ্মকাৰৰ *প্ৰভাতী সূৰ্যৰ দেশ* উপন্যাসখন আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ জীৱনক কেন্দ্ৰ কৰি ৰচনা কৰা হৈছে। উপন্যাসখনত ঔপন্যাসিকে আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ জন্মৰ পৰা মৃত্যুলৈকে আৰু সেই সময়ৰ সমাজৰ পাৰিপাৰ্শ্বিক অৱস্থাৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা দেখা যায়। অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যৰ চৰম দুৰ্যোগৰ সময়ত

যিসকল স্বনামধন্য ব্যক্তিয়ে ভাষাটোৰ অস্তিত্বক ধৰি ৰাখিবলৈ মৰণপণ কষ্ট কৰিছিল তাৰ ভিতৰত আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন অন্যতম। তেনে এজন ব্যক্তিৰ জীৱন-দৰ্শন, তেওঁৰ সাংসাৰিক জীৱন, ইংৰাজ চৰকাৰৰ অধীনত আমাৰ ৰাজ্যৰ লোকসকল কিদৰে শোষিত হৈছিল, অসমীয়া লোকৰ নিজ জাতি- ভাষাৰ প্ৰতি অনীহা, সেই সময়ৰ দেশখনৰ মুখ্য চহৰ কলিকতা কিদৰে বঙালীভাষী লোকসকলৰ নিষ্ঠা আৰু দূৰদৰ্শিতাৰ বাবে দোপতদোপে আগবাঢ়ি যাবলৈ সক্ষম হৈছিল তাক ঔপন্যাসিকগৰাকীয়ে স্পষ্ট ৰূপত উপন্যাসখনত উপস্থাপন কৰিছে। এইবোৰৰ উপৰিও আনন্দৰামে অসমৰ স্কুল, আদালতত অসমীয়া ভাষা প্ৰৱৰ্তন কৰাৰ বাবে যিবোৰ পদক্ষেপ হাতত লৈছিল সেইবোৰো ঔপন্যাসিকে অতি হৃদয়গ্ৰাহীকৈ উপন্যাসখনত উত্থাপন কৰিছে। সেয়ে আমাৰ আলোচনাত উপন্যাসখনত প্ৰতিফলিত ঊনবিংশ শতিকাৰ শৈক্ষিক দিশ আৰু সমাজ সংস্কাৰৰ চিত্ৰ ঔপন্যাসিকে কিদৰে উপস্থাপন কৰিছে সেই বিষয়ে এক বিশ্লেষণ আগবঢ়োৱাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

অসমৰ শৈক্ষিক জগতখনৰ অন্ধকাৰ সময়ছোৱাত যিকেইগৰাকী ব্যক্তিয়ে অসমীয়া ভাষাটোক উদ্ধাৰৰ হেতু অহোপুৰুষাৰ্থ কৰিছিল তাৰ ভিতৰত আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন অন্যতম। ঔপন্যাসিক কৰ্মকাৰে উপন্যাসখনৰ বাবে নিৰ্বাচন কৰা মুখ্য চৰিত্ৰ আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন ব্ৰিটিছ চৰকাৰৰ উচ্চ পদস্থ বিষয়া হৈয়ো অসম আৰু অসমীয়া ভাষা-সংস্কৃতিলৈ অমূল্য অৱদান তেওঁৰ চমু জীৱনকালৰ ভিতৰতে আগবঢ়াই থৈ গৈছিল। সেইহেতু এইগৰাকী ব্যক্তিৰ বৰ্ণময় জীৱন সন্দৰ্ভত আলোকপাত কৰাই আমাৰ এই অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

আলোচনা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰিৰ বাবে বিশ্লেষণাত্মক আৰু বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হ'ব।

অধ্যয়নৰ উৎস ঃ

আলোচনা পত্ৰক্ষন প্ৰস্তুত কৰিবৰ বাবে মুখ্য আৰু গৌণ দুয়োটা উৎসৰ সহায় লোৱা হৈছে। মুখ্য উৎসত সন্তোষ কুমাৰ কৰ্মকাৰৰ *প্ৰভাতী সূৰ্যৰ দেশ* উপন্যাসখন আৰু গৌণ উৎসত গুণাভিৰাম বৰুৱাৰ *আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ জীৱন চৰিত*কে সামৰি প্ৰাসংগিক কেইখানো গ্ৰন্থৰ সহায় লোৱা হৈছে।

মূল বিষয় ঃ

১৮২৬ চনৰ ইয়াণ্ডাবু সন্ধিৰ চৰ্ত অনুসৰি অসম ইংৰাজৰ অধীনলৈ যায়। ইংৰাজে অত্যাচাৰী মানক স্বেদ বৃটিছ ৰাজত্ব প্ৰতিষ্ঠা কৰিলে আৰু অসমীয়া মানুহেও ভৱিষ্যতৰ কথা চিন্তা নকৰি মানৰ অত্যাচাৰৰ পৰা ৰক্ষা পোৱাৰ স্বস্তিতে ইংৰাজৰ শাসন মানি লৈছিল। মানে লুণ্ঠন কৰি থৈ যোৱা অসম সাধাৰণ প্ৰজাৰ বাবে কাম কৰি জীয়াই থকাটোৱেই এক ডাঙৰ প্ৰত্যাহ্বান হৈ পৰিছিল। এনে দুৰ্যোগপূৰ্ণ অৱস্থাত শিক্ষা আৰু সাহিত্যলৈ চাবলৈ কাৰো আহৰি নাছিল। "গতিকে দেখা যায় যে ১৮১৫ চন মানৰ পৰা অৰ্থাৎ মানৰ আক্ৰমণৰ সময়ৰ পৰা ইংৰাজে অসম অধিকাৰ কৰাৰ ১৫/২০ বছৰ মানলৈকে অসমীয়া মানুহে ভাষা, সাহিত্য আদি সাংস্কৃতিক দিশৰ প্ৰতি চকু দিয়াৰ কোনো অৱসৰ পোৱা নাছিল।" (শৰ্মা ২৪৫)

প্ৰথমাৱস্থাত ইংৰাজেও ৰাজ্যৰ শাসন ব্যৱস্থাক এক সুস্থিৰ অৱস্থালৈ অনাৰ কামত ব্যস্ত থাকিবলগীয়া হৈছিল সেয়েহে দেশৰ শিক্ষা, ভাষা, আৰ্থিক অৱস্থা আদিলৈ মন দিয়া নাছিল। তাৰোপৰি ইংৰাজে দেশৰ শাসন ব্যৱস্থা চলাবলৈ বঙ্গদেশৰ পৰা বঙালী কেৰাণী, মহৰি আমদানি কৰি আনে।

তাৰেই সুযোগ লৈ বঙালী কেৰাণী, মহৰিবোৰে আত্মস্বাৰ্থ সংৰক্ষণ কৰিবৰ কাৰণে আৰু ভৱিষ্যতেও তেওঁলোকৰ স্থান অব্যাহত ৰাখিবৰ উদ্দেশ্যে ইংৰাজ বিষয়াসকলক অসমীয়া যে এটা স্বতন্ত্ৰীয় ভাষা নহয়, বঙালীৰে এক অপভ্ৰংশহে মাত্ৰ তাক পতিয়ন নিয়াই। ইংৰাজেও সেই বিষয়টো চালি-জাৰি নাচাই বঙালী এচাম কেৰাণী, মহৰিৰ প্ৰৰোচনাত ১৮৩৬ খ্ৰীষ্টাব্দত স্কুল-কছাৰি আদিত অসমীয়া ভাষাৰ পৰিৱৰ্তে বঙলা ভাষাক প্ৰৱৰ্তন কৰিলে। "১৮৩৬ খ্ৰীষ্টাব্দৰ পৰা ১৮৭৩ খ্ৰীষ্টাব্দলৈকে প্ৰায় দুকুৰি বছৰ বঙালীয়ে অসমৰ পঢ়াশালি আৰু আদালতত আধিপত্য লাভ কৰাৰ ফলত অসমৰ শিক্ষা আৰু সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰত অশেষ ক্ষতি সাধিত হ'ল আৰু ফলস্বৰূপে অসমীয়া মানুহ পঞ্চাছ বছৰ কালৰ পশ্চাদগামী হ'ব লগাত পৰিল।" (শৰ্মা ২৪৬)

ব্ৰিটিছ শাসনৰ আৰম্ভণিৰ কালছোৱাত শিক্ষাৰ মাধ্যম বঙলা আৰু ইংৰাজী হোৱা বাবে সৰ্বসাধাৰণ লোকৰ ভাষাৰ প্ৰায়োগিক দিশৰ ক্ষেত্ৰত যথেষ্ট সমস্যাৰ সৃষ্টি হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। ইংৰাজ অহাৰ আগলৈকে অসমত টোলবোৰতহে শিক্ষা দিয়া হৈছিল। য'ত কেৱল বেদ-বেদান্ত আৰু সংস্কৃত সাহিত্যৰ চৰ্চাহে কৰা হৈছিল। সেয়েহে দেশৰ শিক্ষিত শ্ৰেণীৰ লোকসকলৰো চিন্তা-চৰ্চাৰ বিকাশ তথা পৰিৱৰ্তন দেখা নাযায়। কোনোবাই স্ব-ইচ্ছাৰে ইংৰাজী শিকিলেও তেওঁৰ জাত যোৱা বুলি একধৰণৰ ধাৰণাই সেই সময়ৰ মানুহৰ মনত শিপাই আছিল। "হলিৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ পিতৃ পৰশুৰামে বংশৰ প্ৰথম পুত্ৰই পিতৃৰ পিণ্ডদান কৰিব লাগে বুলি হলিৰামক 'যাৱনিক' ভাষা ইংৰাজী শিক্ষা দিয়া নাছিল।" (কৰ্মকাৰ ৪) মানক স্কন্দ ইংৰাজে লোৱা কেতবোৰ পদক্ষেপৰ ভিতৰত শিক্ষাৰ প্ৰচাৰ আৰু প্ৰসাৰ অন্যতম আছিল। কোম্পানীৰ এজেন্ট ডেভিড স্কট চাহাবে গুৱাহাটীত এখন স্কুল পাতিছিল; য'ত বঙলা আৰু ইংৰাজী পঢ়ুওৱা হৈছিল। অধিকাংশ শিক্ষক বঙলাভাষী হোৱাৰ লগতে পাঠ্যপুথিসমূহো বঙলা ভাষাৰে আছিল। এইদৰে চলি থাকিলে ভৱিষ্যতে অসমীয়া ল'ৰাই অসমীয়া ভাষা নোকোৱা হ'ব আৰু এনেদৰে এদিন অসমীয়া ভাষাৰ মৃত্যু হ'ব বুলি তীৰ্থনাথ শৰ্মা আৰু হলিৰাম ঢেকিয়াল ফুকনে আক্ষেপ কৰিছে। ইয়াৰ মাজতে আকৌ আন এচাম অসমীয়া শিক্ষিত মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীয়ে কলিকতীয়া বঙালী অভিজাত সংস্কৃতিৰ প্ৰতি অনুৰক্ত হৈ পৰিছিল। সেই কথা মৌজাদাৰৰ পুতেক মুক্তাৰামৰ কথা প্ৰসংগত তীৰ্থনাথে কোৱা বক্তব্যৰ পৰা প্ৰকাশিত হৈছে এনেদৰে,

"কি তাৰ ভাব, কি তাৰ কথা ! এতিয়া তাৰ সকলোতে বঙালী; বঙালীৰ চাল-চলন, বঙালীৰ যাত্ৰা গান, বঙালীৰ খানা! মুঠতে সি বঙালীৰ অন্ধভক্ত হৈ পৰিছে। তাতকৈ দুভাৰ্গ্যৰ কথা কি জাননে? এতিয়া সি নিজকে অসমীয়া বুলি পৰিচয় দিবলৈ লাজ পায়। তাৰ মতে, অসমীয়া ভাষাৰ হেনো ভৱিষ্যত নাই।" (কৰ্মকাৰ ১৪)

হলিৰাম ঢেকিয়াল ফুকনে এই সময়ছোৱাতে বঙলা ভাষাত বুৰঞ্জী লিক্ষিছিল যদিও মাতৃভাষাৰ যে গুৰুত্ব আছে সেই কথা তেওঁৰ মন্তব্যৰ পৰা জানিব পাৰি,

"বঙলাত বুৰঞ্জী লিখিলোঁ বুলি আমাক মাতৃভাষা নালাগে, এয়া মোৰ কথা নহয়। অসমীয়া ভাষা আৰু অসমীয়াৰ ভৱিষ্যত লৈ চিন্তা কৰি আশংকা ভুগি থাকোঁ। আমাৰ এচামে মাতৃভাষা এৰি বঙলাত বন্ধু-বান্ধৱলৈ পত্ৰ লিখে বুলি শুনি ময়ো কষ্ট পাওঁ।" (কৰ্মকাৰ ১৫)

তথাপি সেই সময়ত হলিৰামে মাতৃভাষা এৰি বঙালী ভাষাত কিয় বুৰঞ্জী লিখিবলগীয়া হ'ল সেই কথা তেওঁ স্পষ্টকৈ প্ৰকাশ কৰা নাই। অসমীয়া ভাষাত ভট্টদেৱৰ হাতত ইতিমধ্যে গদ্যই এক সু-সংগঠিত ৰূপ পোৱাৰ পিছতো হলিৰামে কিয় বঙলাত বুৰঞ্জী লিখিবলগীয়া সেয়া এক চিন্তনীয় বিষয়।

যি সময়ত অসমত স্কুল এখন প্ৰতিষ্ঠা হোৱাটোৱেই এক গুৰুত্বপূৰ্ণ কৰ্ম আছিল তেতিয়া তাত কি মাধ্যমত শিক্ষা প্ৰদান কৰা হৈছে সেই লৈ ইমান বেছি চিন্তা কৰাটো অমূলক যেন বিবেচিত হৈছিল। সেয়ে হলিৰামে বা তীৰ্থনাথে বঙলা আৰু ইংৰাজীত শিক্ষাদানৰ বিষয়টোক লৈ আক্ষেপ প্ৰকাশ কৰিলেও সেয়াই যে সত্য আৰু সেই সময়ত ইয়াৰ যে পৰিৱৰ্তন হোৱাৰ অৱকাশ নাই সেই কথা স্বীকাৰ কৰিছিল। কিন্তু পৰৱৰ্তী সময়ত আনন্দৰাম আৰু পৰশুৰামে শিক্ষাৰ মাধ্যম বঙলাৰ পৰা মাতৃভাষালৈ কিদৰে সলনি কৰিব পাৰি তাক লৈ চিন্তা কৰিছে। সেয়েহে বালক আনন্দৰামৰ চিন্তা-ধাৰাই পৈণত ৰূপ লাভ নকৰোতেই তেওঁ কৈছে, "কলিকতা ভাৰতৰ ৰাজধানী। কলিকতাৰ পৰাই এইবোৰ হৈ থাকে। এইবোৰ কথা জানিবৰ বাবে, ভালকৈ বুজিবৰ বাবেও আমি কলিকতালৈ যাব লাগে।" (কৰ্মকাৰ ৩৯) তেতিয়াহে পঢ়ি-শুনি ডাঙৰ হৈ মাতৃভাষাৰ স্বাৰ্থত যুঁজ দিব পাৰিব। ইমান কম বয়সতে এনেধৰণৰ দুৰদৰ্শী চিন্তাই আনন্দৰামৰ নিজ ভাষা-সংস্কৃতিৰ প্ৰতি থকা প্ৰেমক অতি সুন্দৰ ৰূপত ঔপন্যাসিকে উপন্যাসখনত উপস্থাপন কৰিছে।

অসমত বঙলা ভাষাৰ প্ৰৱৰ্তন যে বঙালী এচাম লোকেই ইংৰাজৰ হতুৱাই কৰাইছিল সেই কথা সৰ্বজ্ঞাত। কিন্তু বঙালীভাষী লোকসকলে তাক সহজে স্বীকাৰ কৰিব নিবিচাৰে। মতিলাল শীলৰ মন্তব্যৰ পৰাই এই কথা স্পষ্টকৈ বুজিব পৰি। "বাংলাভাষী কিছু চৰকাৰী কৰ্মচাৰীৰ কথা শুনে এই সিদ্ধান্ত নিয়েছে ! না না, তা কৰবেন কেন? আমিতো মনে কৰি, ইংৰাজৰা যা কৰে ভাবে-চিন্তেই কৰে।" (কৰ্মকাৰ ৬৫) বঙালীভাষীসকলে অসমীয়া ভাষাৰ স্বতন্ত্ৰতা স্বীকাৰ যে নকৰে সেই কথা ভাষাটোক লৈও তেখেতসকলৰ ইতিকিংসূচক মন্তব্যৰ প্ৰকাশ পায়।

অসমত অসমীয়াসকলে বঙলা ভাষা প্ৰচলনক লৈ বিদ্বেষ প্ৰকাশ কৰিলেও তেতিয়া সংস্কৃতিৱান সকলো পৰিয়ালেই বঙলা ভাষা-সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ অনুৰাগী আছিল। বঙালী সংস্কৃতিৰ লগত একাত্ম হৈয়ে সকলোৱে মাতৃভাষাৰ উন্নতিৰ বাবে চিন্তা কৰিছিল। সকলোৰে মনত লক্ষ্য এটাই আছিল নিজৰ মাতৃভাষাৰ উন্নতি সাধন কৰা। বঙালী লোকসকলৰ কৰ্মস্পৃহা, নিজ ভাষা-সংস্কৃতিৰ উন্নতিৰ বাবে কৰা অহোপুৰুষাৰ্থই সেই সময়ত শিক্ষিত অসমীয়াৰ মনত একধৰণৰ আলোড়নৰ সৃষ্টি কৰিছিল আৰু ইয়ে অসমীয়া ভাষাটোক মৃত্যুৰ দুৱাৰডলিৰ পৰা উদ্ধাৰ কৰাত বিশেষভাৱে অনুপ্ৰেৰণা যোগাইছিল।

"বংগীয় নৱজাগৰণে, আধুনিক বাংলা সাহিত্য আৰু সংস্কৃতিয়ে কলিকতাত অধ্যয়নৰত অসমীয়া ছাত্ৰসকলৰ মনত সাঁচ বহুৱায়। আধুনিক দাৰ্শনিক, সাহিত্যিক আৰু সাংস্কৃতিক ধাৰা আৰু প্ৰৱণতাসমূহৰ লগত কলিকতাই তেওঁলোকক পৰিচিত কৰালে আৰু একে সময়তে নিজৰ ভাষা আৰু সাহিত্য আৰু সংস্কৃতিৰ শোচনীয় অৱস্থাৰ প্ৰতিও সজাগ কৰি তুলিলে।" (শইকীয়া ৮৪)

আনন্দৰামে কলিকতাত গৈ শিক্ষা গ্ৰহণ কৰাৰ সময়ত সেই সময়ত বংগৰ লোকসকলৰ মাজত পাশ্চাত্য শিক্ষা-সংস্কৃতিৰ সম্প্ৰসাৰণৰ দ্বাৰা আধুনিক যুগৰ সূচনা হোৱাটো প্ৰত্যক্ষভাৱে উপলব্ধি কৰিছিল। কিন্তু ভাগ্যৰ দুৰ্বিপাকত সম্পত্তিক লৈ হোৱা গৃহ কন্দলৰ বাবে শিক্ষা আধাতে সামৰি স্ব-গৃহলৈ প্ৰত্যাৱৰ্তন কৰিবলগীয়া হ'ল। "আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনে উচ্চশিক্ষা শেষ নকৰাকৈ ১৮৪৫ চনত কলিকতাৰ পৰা ঘূৰি আহি গুৱাহাটীতে স্থায়ীভাৱে আছিল। তেতিয়াৰ পৰাই অসমত তথাকথিত নৱজাগৰণ আৰম্ভ হৈছিল বুলি কোৱা হয়।" (মহন্ত ১৮২)

খ্ৰীষ্টধৰ্ম প্ৰচাৰ কৰিবলৈ অসমলৈ অহা আমেৰিকান বেপ্টিষ্ট মিছনেৰীসকলৰ দ্বাৰা *অৰুনোদই* আলোচনীৰ প্ৰকাশ সেই শতিকাটোৰ এটা বিস্ময়কৰ ঘটনা আছিল। যিটো সময়ত অসমত অসমীয়া ভাষা কেৱল অসমীয়া লোকসকলৰ মাজত কথিত ৰূপতহে প্ৰচলিত আছিল সেই সময়ত সুদূৰ আমেৰিকাৰ পৰা মিছনেৰীসকল আহি অসমত থাকি অসমীয়া ভাষা শিকি অসমীয়া ভাষাত আলোচনী ছপা কৰি উলিওৱা কাৰ্যটো একধৰণৰ বিস্ময়কৰ কাৰ্যই। যাতায়াত, যোগাযোগৰ কোনো সুচল ব্যৱস্থা নথকা এই সময়ছোৱাত সাত সাগৰ তেৰ নদী পাৰ হৈ আহি এদল লোকে যে অচিন ঠাইত থাকি কোনোকালে নুশুনা ভাষা এটাক আয়ত্ব কৰি অভিধান, ব্যাকৰণ, পাঠ্যপুথি ৰচনা কৰিব, আলোচনী প্ৰকাশ কৰি উলিয়াব এয়া কোনেও কল্পনাই কৰিব পৰা নাছিল। সি যি কি নহওক মিছনেৰীসকলৰ সকলো অৱদানৰ ভিতৰত শ্ৰেষ্ঠতম অৱদান হ'ল *অৰুনোদই*। "শিৱসাগৰৰ 'মিশ্যন প্ৰেছ'ৰ পৰাই ১৮৪৬ চনত ছপা হৈ ওলায় অসমৰ প্ৰথম বাৰ্তালোচনী 'অৰুনোদই'।" (চৌধুৰী ৪) মিছনেৰীসকলে এই বাৰ্তালোচনীখনৰ যোগেদি অসমীয়া ভাষা আৰু সাহিত্যক সঞ্জীৱনী শক্তি প্ৰদান কৰিছিল। তেওঁলোকে নিজাকৈ অসমত স্কুল প্ৰতিষ্ঠাও কৰিলে আৰু সেই স্কুলত অসমীয়াত পাঠদান কৰাৰ সিদ্ধান্ত ল'লে যদিও পাঠ্যপুথিৰ অভাৱ। সেয়ে তেওঁলোকে ভাষাটোৰ এটা গঠনাত্মক ৰূপ দিবৰ বাবে ব্যাকৰণ, অভিধান লগতে বিভিন্ন বিষয়ৰ পাঠ্যপুথি ৰচনা কৰি উলিয়ালে। যদিও তেওঁলোকৰ সকলো কৰ্মৰ মূলতে আছিল অসমৰ মানুহক খ্ৰীষ্টধৰ্মত দীক্ষিত কৰা তথাপি অসমীয়া ভাষাৰ বৰগছডাল উঘালি পৰাৰ সময়ত সেই গছৰ বীজবোৰ আনি সিঁচি দি যি অসাধাৰণ কাম কৰিলে সেয়া সৰ্বদা স্মৰণীয়। স্বাৰ্থ যিয়েই নহওক ভাষাটোক পোহৰলৈ গতি দিয়াত তেওঁলোকৰ যি অৱদান তাক কোনো কালেই অস্বীকাৰ কৰিব নোৱাৰি। সেই সময়ত *অৰুনোদই* আলোচনীখনৰ প্ৰকাশে সকলোকে ৰোমাঞ্চিত কৰি তুলিছিল। সেই কথা আনন্দৰামে গুণাভিৰামৰ হাতত অসমীয়া ভাষাত লিখা আলোচনীখন পাই উচ্ছ্বাসত আবেগিক হৈ পৰাৰ পৰা বুজিব পাৰি। সেয়ে তেওঁ প্ৰথম সংখ্যা *অৰুনোদই* পঢ়িয়েই সম্পাদকলৈ অভিনন্দন পত্ৰ লিখে। ঢেকিয়াল ফুকনেও সম্পাদক নাথান ব্ৰাউনৰ অনুৰোধ মৰ্মে আৰু এজন সচেতন

অসমীয়া হিচাপে নিজৰ দায়িত্ব পালন কৰি *অৰুনোদইলৈ* লেখা পঠিয়ায়। "ইংলেণ্ডৰ বিৱৰণেই হ'ল *অৰুনোদইত* প্ৰকাশ পোৱা আনন্দৰামৰ প্ৰথম লেখা।" (কৰ্মকাৰ ১৩০)

আনন্দৰাম নিজ দেশৰ, নিজ মাতৃভাষাৰ উন্নতিৰ বাবে সদা সচেতন আছিল আৰু তাৰ বাবে তেওঁ বিভিন্ন কাৰ্যপন্থাও হাতত লৈছিল। *অৰুনোদইত* প্ৰকাশিত 'ইংলেণ্ডৰ বিৱৰণ' প্ৰবন্ধটিত ইংলেণ্ড দেশৰ মানুহবোৰৰ কৰ্মস্পৃহাৰ বাবে সেই দেশৰ অৱস্থা কিদৰে উন্নত হৈছে তাক বুজাই দি অসম দেশৰ লোকসকলকো তেওঁলোকক অনুসৰণ কৰি সভ্য, গিয়ানি আৰু ধাৰ্মিক হ'বলৈ আহ্বান কৰিছিল। তেওঁ অসমীয়া ল'ৰাক বিশ্বৰ অতুল জ্ঞান-ভাণ্ডাৰৰ আভাস দিয়াৰ বাবেই ইংৰাজী ভাষা-সাহিত্যত সিচঁৰতি হৈ থকা জানিবলগীয়া অনেক জ্ঞানদায়ক বিষয় চয়ন কৰি *অসমীয়া ল'ৰাৰ মিত্ৰ* লিখি উলিয়ায়। কেৱল কেইজনমান মানুহেই জ্ঞান অৰ্জন কৰি যে দেশ বা জাতি এটাক ৰক্ষা কৰিব নোৱাৰি সেই কথা তেওঁ মৰ্মে মৰ্মে উপলব্ধি কৰিছিল সেয়ে সৰ্বোতপ্ৰকাৰে দেশৰ উন্নতিৰ অৰ্থে তেওঁ যথাসাধ্যে চেষ্টা কৰিছিল।

ইংৰাজসকলে যদিও এচাম বঙালী কৰ্মচাৰীৰ প্ৰৰোচনাত অসমত বঙলা ভাষা প্ৰৱৰ্তন কৰিছিল তথাপি তেওঁলোকৰ অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰতি যে ইমান হেয় মনোভাৱ নাছিল সেই কথা আনন্দৰামে *অসমীয়া ল'ৰাৰ মিত্ৰ* ছপাওতে ডেপুটী কমিছনাৰ মেথী আৰু কেপ্টেইন জেনিছ চাহাবে আৰ্থিক-মানসিক দুয়ো ক্ষেত্ৰতে কৰা সহায়ৰ পৰা জানিব পাৰি। আনন্দৰামে মেথী চাহাবৰ আগত কিতাপখন প্ৰকাশৰ ক্ষেত্ৰত আৰ্থিক সমস্যাৰ বিষয়ে অৱগত কৰোঁতে তেওঁ সকলোৰে পৰা ধন সংগ্ৰহৰ পৰামৰ্শ দিয়াৰ উপৰিও আনন্দৰামক সাহস প্ৰদান কৰি কৈছে, "ইট ইজ নট ইউৰ পাৰ্ছনেল ৱাৰ্ক। দিজ ৱাৰ্ক ইজ নট ফৰ ইউৰ পাৰ্ছনেল বেনিফিট। ইটছ এ ৱাৰ্ক ফৰ ইউৰ মাদাৰ টাং, ফৰ ইউৰ নেশ্যন।" (কৰ্মকাৰ ১৪৫) ইয়াৰ বিপৰীতে আকৌ অসমীয়া ভদ্ৰলোক কিছুমানে অসমীয়াত কিতাপ ছপা কৰা বিষয়টো ইমান আন্তৰিকতাৰে গ্ৰহণ কৰিব পৰা নাছিল। শ্ৰীযুত চন্দ্ৰসেন চৌধুৰী আৰু কীৰ্তিনাথ বৰুৱাৰ ওচৰলৈ বৰঙণিৰ বাবে যাঁওতে কৰা মন্তব্যৰ পৰা সেই কথা স্পষ্ট হৈ পৰে, "শ্ৰীযুত চন্দ্ৰসেন চৌধুৰীয়ে ধন দিওঁতে ক'লে,'আপোনাৰ প্ৰচেষ্টাৰ বাবে শলাগ লৈছোঁ। পিছে অসমীয়া ভাষাত গ্ৰন্থ ছপা কৰা অসমীয়া ভাষাৰ জানো ভৱিষ্যত আছে?" (কৰ্মকাৰ ১৪৭) অৱশ্যে এনে লোকৰ উপৰিও আন এচাম দেশ জাতি ভাষাৰ হিত চিন্তাকাৰী লোক আছিল, যাৰ বাবে নানা বাধা-বিঘিনীৰ অন্ততো গ্ৰন্থখনে প্ৰকাশৰ মুখ দেখিবলৈ সক্ষম হ'ল। গোপীকান্ত বৰুৱাৰ পুত্ৰ কীৰ্তিকান্তই কলিকতাত থাকি পঢ়া-শুনা কৰা বাবে আনন্দৰামে কিতাপ দুখনৰ প্ৰুফ চাই দিবৰ বাবে কলিকতালৈ যাবলৈ অনুৰোধ কৰাৰ বাবে কীৰ্তিকান্তই নৱবিবাহিতা ভাৰ্যাক এৰি থৈ হ'লেও কলিকতালৈ গৈ কলিকতাত থাকি *অসমীয়া ল'ৰাৰ মিত্ৰৰ* দুটা কাণ্ড ছপাই আনিছিল।

১৮৫১ চনৰ ১১ ডিচেম্বৰ তাৰিখে কলিকতা মেডিকেল কলেজৰ প্ৰেক্ষাগৃহত ডাঃ এফ. জে. মৌৱাটৰ সভাপতিত্বত এখন আলোচনা সভা অনুষ্ঠিত হয়। য'ত ছুপ্ৰিম কাউঞ্চিলৰ লেজিজলেটিভ মেম্বাৰ, গৱৰ্ণমেন্ট অৱ এডুকেছনৰ সভাপতি, কলিকতাত স্ত্ৰী-শিক্ষা প্ৰসাৰৰ অন্যতম উদ্যোক্তা জন এলিয়ট ডিঙ্কভাটাৰ বেথুনক সন্মান জনোৱাৰ অৰ্থে এখন অৰাজনৈতিক উদাৰতাবাদী সমাজ গঠন কৰিবলৈ প্ৰস্তুতি চলাইছিল। এই সমাজখনক বংগৰ বিদ্বৎ সমাজে 'বেথুন ছ'চাইটী' বুলি নামকৰণ কৰিছিল। "এইখনৰ কাৰ্যক্ৰমণিকা হ'ব প্ৰাচ্য-পাশ্চাত্যৰ সাহিত্য-সংস্কৃতি বিজ্ঞান-দৰ্শন চৰ্চা কৰাৰ লগতে ইউৰোপিয়ান আৰু দেশীয়সকলৰ মাজত সৌভ্ৰাতৃত্বৰ সেতু বন্ধন কৰা।" (কৰ্মকাৰ ১৮৯) এই সভাখনত অসমৰ পৰা কেৱল আনন্দৰামেহে যোগদান কৰিছিল আৰু তেখেতে সেই সভাতে বেথুন ছ'চাইটীৰ এগৰাকী সদস্য হিচাপে মনোনীত হয়। এই সভাখনত বেথুন ছ'চাইটীৰ প্ৰধান ৰূপকাৰ ডাঃ মৌৱাটে এই ছ'চাইটীখন গঠনৰ প্ৰাসংগিকতা সম্পৰ্কে বক্তব্য দাঙি ধৰে। বক্তব্যত তেওঁ ইউৰোপীয় নৱজাগৰণৰ ফলত শিল্প-সংস্কৃতি, সাহিত্য-দৰ্শনৰ অনন্য সাধাৰণ সৃষ্টিৰ লগতে অৰ্থনৈতিক জীৱনলৈ অহা বৈপ্লৱিক পৰিৱৰ্তনে, বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ সফল প্ৰয়োগ, ধৰ্মীয় আচাৰ-আচৰণৰ ক্ষেত্ৰত মানুহৰ স্বচ্ছ আৰু যুক্তিপূৰ্ণ দৃষ্টিভংগী গ্ৰহণৰ বিষয়ে উল্লেখ কৰে। এই নৱজাগৰণে সমগ্ৰ ইউৰোপলৈ এক যুগান্তকাৰী পৰিৱৰ্তন আনিলে। ডাঃ মৌৱাটৰ লগতে সভাত ৰেভাৰেণ্ড কৃষ্ণমোহন বেনাৰ্জী, দেৱেন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰে বক্তব্য প্ৰদান কৰে। সভাৰ মূল উদ্দেশ্য আছিল আধুনিক শিক্ষা-সংস্কৃতিৰে উন্নত মন লৈ সু-সমন্বয়ৰে জাতীয় জীৱনক গঢ়ি তোলা।

"ভাৰতবৰ্ষৰ প্ৰত্যেক প্ৰান্তৰ প্ৰতিটো জাতিসত্তাই আপোন স্বকীয়তা ৰক্ষা কৰি ইংৰাজী শিক্ষাৰ জৰিয়তে

পশ্চিমত বিকাশপ্ৰাপ্ত আধুনিক বিজ্ঞান, সাহিত্য আৰু দৰ্শনৰ লগত পৰিচিত হ'ব লাগিব। সেই অনুসৰি আমাৰ স্কুল-কলেজ-বিশ্ববিদ্যালয়ত পাঠ্যসূচী ৰচনা কৰি আমাৰ নতুন প্ৰজন্মক শিক্ষিত কৰি তুলিব লাগিব।" (কৰ্মকাৰ ১৯৯)

পাশ্চাত্যৰ দেশবোৰত যিদৰে নৱজাগৰণে এক নতুন দিগন্ত উন্মোচিত কৰিছিল সেইদৰে অসমতো পঞ্চদশ শতিকাতে শংকৰদেৱে সংস্কাৰ আন্দোলন আৰম্ভ কৰিছিল। সামাজিক, সাংস্কৃতিক দিশত সংস্কাৰ সাধন কৰাৰ উপৰিও অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যকো এক নতুন ৰূপত গঢ় দিছিল। ইয়ে অসমীয়া জাতিটোক এক নতুন গতি প্ৰদান কৰিছিল। "শংকৰোত্তৰ কালত ভট্টদেৱে (বৈকুণ্ঠনাথ ভট্টাচাৰ্য ১৫৫৮-১৬৩৮) প্ৰকৃত অসমীয়া গদ্য ৰচনা কৰিছিল। আহোম ৰজা ৰুদ্ৰ সিংহ, শিৱ সিংহৰ ৰাজত্বকালটোও ৰাজনৈতিক স্থিতিশীলতাৰ যুগ, উন্নতিৰ যুগ।" (কৰ্মকাৰ ২০২) এনেকুৱা এখন ঐতিহ্যশালী দেশৰ নাগৰিকে আজি নিজ জাতি-ভাষাক লৈ সন্ধিহান হৈ পৰিবলগা অৱস্থাত উপনীত হৈছেহি। ইয়াকে আনন্দৰামে গুণাভিৰামৰ আগত কৈ নিজ জাতি-ভাষাৰ দুৰ্দশাক লৈ ভোগা চৰম অস্থিৰতা প্ৰকাশ কৰিছে। আনন্দৰামৰ এনে অস্থিৰতাই অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যৰ ঐতিহ্যশালী ৰূপৰ দুখ লগা ৰূপকে প্ৰকাশিত কৰিছে।

ঢেকিয়াল ফুকনে ব্ৰিটিছ চৰকাৰৰ অধীনত চাকৰি কৰিছিল যদিও ব্ৰিটিছ চৰকাৰে লোৱা সকলোবোৰ সিদ্ধান্ত তেওঁ একাষাৰে মানি লোৱা নাছিল। অসম আৰু অসমীয়া জাতিৰ স্বাৰ্থত তেখেতে ব্ৰিটিছ চৰকাৰী বিষয়াক অভিযোগো দাখিল কৰিছিল। অসমৰ কছাৰী আৰু স্কুলত বঙলা ভাষা প্ৰৱৰ্তনক লৈ তেখেতে সদায় প্ৰতিবাদ কৰি আহিছিল আৰু কিদৰে স্কুল, কছাৰীত অসমীয়া ভাষা প্ৰৱৰ্তন কৰিব পাৰি তাৰ উপায় বিচাৰি ফুৰিছিল। সেই সময়ৰ ব্ৰিটিছ বিষয়াসকলেও যে বঙলা ভাষা প্ৰৱৰ্তনৰ কথাটো ভাল হোৱা নাছিল সেইটো বুজি পাইছিল। কেপ্টেইন জেমছ মেথী ডেপুটী কমিছনাৰ পদৰ পৰা অপসাৰিত হোৱাৰ পিছত আনন্দৰামে মেথী চাহাবৰ ওচৰলৈ যোৱাত তেওঁ কৈছিল,

"আনন্দৰাম, এইখন তোমালোকৰ দেশ। আছামিজ ইজ ইউৰ মাদাৰ টাং। মোৰ কথাবোৰে তোমাক হাৰ্ট কৰিলেও ক'বলৈ বাধ্য হৈছোঁ, আনৰ ওপৰত দোষ নিদি তোমালোকে ভাবিব লাগে যে ইউ আৰ দ্য কজ অৱ ইউৰ পিপলছ ছাপ্ৰেছন, অপ্ৰেৰছন, এক্সপ্লইটেছন। এণ্ড ইট ইজ ইুৰ ৰেছপনছিবিলিটি টু ৰিভাইৱ এণ্ড ৰিএষ্টাব্লিছ ইউৰ মাদাৰ টাং ইন ইউৰ ষ্টেট।" (কৰ্মকাৰ ২১৮)

১৮৫৩ চনৰ এপ্ৰিল মাহত গৰ্ৱনৰ জেনেৰেলে বিচাৰপতি মফট মিলছক অসমলৈ প্ৰেৰণ কৰিলে ক্ষেত্ৰভিত্তিক অনুসন্ধানৰ জৰিয়তে অসমৰ অৰ্থনৈতিক, সামাজিক, ভাষিক, সাংস্কৃতিক দিশবোৰ অনুসন্ধানৰ বাবে। এই খবৰটোৱে আনন্দৰামক এক সোণালী সুযোগহে প্ৰদান কৰিলে। সেয়ে তেওঁ নিজে অসমৰ সামাজিক, অৰ্থনৈতিক দুৰৱস্থাৰ বিষয়ে জনাই সেই অৱস্থাৰ পৰা অসমখনক কেনেকৈ মুক্ত কৰিব পাৰি তাৰে পৰামৰ্শ কিছুমান আগবঢ়াই এখন প্ৰতিবেদন প্ৰস্তুত কৰিলে। বিচাৰপতি মিলছ অসমলৈ অহাত তেওঁ তিৰাশী পিঠিয়া স্মাৰক পত্ৰ *অৱজাৰভেছন অন দ্য এডমিনিষ্ট্ৰেছন অৱ দ্য প্ৰভিন্স অৱ আছামখন* মিলছক দিলে। মিলছেও আনন্দৰামৰ স্মাৰক পত্ৰখনকে জুমুঠি হিচাপে লৈ অসমৰ বিষয়ে *ৰিপৰ্ট অন দ্য প্ৰভিন্স অৱ আছাম* শীৰ্ষক প্ৰতিবেদন প্ৰস্তুত কৰে। য'ত বঙলা ভাষাই অসমৰ শৈক্ষিক দিশটোত কিদৰে অসুবিধাৰ সৃষ্টি কৰিছে সেই বিষয়ে উল্লেখ কৰি তেওঁ গৰ্ৱনৰ জেনেৰেলক দাখিল কৰে। মিলছক দিয়া স্মাৰক পত্ৰখন পঢ়ি খ্ৰীষ্টান মিছনেৰী ড০ ব্ৰনছনে আনন্দৰামক অসমীয়া ভাষা উদ্ধাৰৰ বাবে বহলভাৱে লিখিবলৈ এইদৰে পৰামৰ্শ আগবঢ়ায়।

"অসমীয়া যে 'বেংগলীৰ উপভাষা', 'বেংগলীৰ লিংগুৱা ফ্ৰাংকা', অসমীয়া ভাষাটো যে এটা 'আনকোথ ডায়েলেক্ট' নহয়; অসমীয়া ভাষাৰো যে এটা হিষ্ট্ৰী আছে আৰু নিজস্ব আইডেনটিটী আছে, ছুইটনেছ ছিম্পলিচিটী আছে এইবোৰ ব্যাখ্যা দাঙি ধৰি এনে এখন ডকুমেন্ট প্ৰস্তুত কৰক, যাতে অসমীয়া ভাষা সম্পৰ্কে তেনেকুৱা ধাৰণা লৈ থকাসকলৰ বোধোদয় হয় আৰু ব্ৰিটিছ গৰ্ৱনমেন্টে নিজৰ ভুলটো বুজিব পাৰে।"(কৰ্মকাৰ ২৪৮)

ড০ ব্ৰনছন মিছনেৰী হ'লেও অসমত অসমীয়া ভাষা প্ৰৱৰ্তনত বিশেষভাৱে জোৰ দিছিল। "১৮৫৪ চনত ড০ ব্ৰনছনে মিছনেৰীসকলৰ সহযোগত আমেৰিকান 'ব'ৰ্ড অৱ কমিছন ফৰ ফ'ৰেন মিছন'ৰ ছেক্ৰেটাৰী ছলোমন পেকৰ লগত আলোচনা কৰি অসমৰ মিছনেৰী পঢ়াশালিত বাংলাৰ পৰিৱৰ্তে অসমীয়া

ভাষাত শিক্ষাদানৰ সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ কৰিলে।” (কৰ্মকাৰ ২৫৬)

ব্ৰিটিছৰ তলতীয়া কৰ্মচাৰী হিচাপে সেই সময়ত অসমীয়া জাতিটোৰ স্বাৰ্থত কাম কৰিবলৈ ভালেমান সুযোগো লাভ কৰিছিল। ১৮৫৫ চনৰ ৪ মে'ত নগাঁও জিলাৰ জিলাধিপতি মেজৰ জন বাটলাৰে অসমৰ কমিছনাৰ জেনকিনছৰ অনুমতি সাপেক্ষে আনন্দৰামক নগাঁও জিলাৰ স্কুলবোৰ পৰিদৰ্শনৰ বাবে ডেপুটেছন মানে প্ৰতিনিযুক্তিত পঠোৱাৰ সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ কৰিলে। সেইমতে আনন্দৰামে নাৰিকলি স্কুল আৰু ৰূপাইবাৰী স্কুল পৰিদৰ্শন কৰে। স্কুলবোৰৰ আন্তঃগাঁথনি অতি নিম্নমানৰ হোৱাৰ উপৰিও স্কুলৰ ছাত্ৰৰ উপস্থিতিৰ সংখ্যাও অতি সীমিত। তাৰোপৰি স্কুলত বঙলা ভাষাত শিক্ষা দিয়া কাৰণে অসমীয়া ছাত্ৰসকলে অসমীয়া, বঙলা একো ভাষাই ভালদৰে আয়ত্ব কৰিব পৰা নাই। ফলস্বৰূপে জ্ঞান আহৰণত ভাষাই এক ডাঙৰ প্ৰত্যাহ্বান ৰূপে থিয় দিছে। “অসমৰ শাসনভাৰ লৈ ইংৰাজে জিলাই জিলাই স্কুল স্থাপন কৰি শিক্ষাদানৰ উদ্যোগ ল'লেও অসমীয়া ছাত্ৰবিলাকে বিগত চৌবিছটা বছৰত প্ৰকৃতাৰ্থত একোৱেই শিকা নাই। অথচ বংগ তথা ভাৰতৰ আন আন প্ৰদেশৰ ছাত্ৰবিলাকে মাতৃভাষাত শিক্ষা গ্ৰহণ কৰি বহুত আগবাঢ়িলে।” (কৰ্মকাৰ ২৬১) স্কুলকেইখন পৰিদৰ্শন কৰি আনন্দৰামে দেখিলে অসমৰ শিক্ষা ব্যৱস্থা অতিকে শোচনীয়। ইয়াৰ প্ৰতিকাৰ এতিয়াই নকৰিলে উত্তৰ পুৰুষৰ বাবে ইয়াৰ ফল আৰু বেছি ভয়ংকৰ হৈ পৰিব। সেয়ে আনন্দৰামে মাতৃভাষাৰ স্বতন্ত্ৰতা প্ৰমাণ কৰি স্ব-মহিমাৰে প্ৰতিষ্ঠা কৰিবৰ বাবে প্ৰমাণিক তথ্যৰে এখন পত্ৰ প্ৰস্তুত কৰিব বুলি থিৰাং কৰিলে। পত্ৰখনত তেওঁ অসমীয়া ভাষাৰ স্বতন্ত্ৰতা প্ৰতিপন্ন কৰিবৰ বাবে উদাহৰণেৰে সৈতে বঙলা আৰু অসমীয়া ভাষাৰ তুলনামূলক বিশ্লেষণ আগবঢ়াইছে। একে অৰ্থ থকা বঙলা আৰু অসমীয়া ভাষাৰ দুটা অনুচ্ছেদৰ পৰা নিভাঁজ অসমীয়া শব্দবোৰ বাছি উলিয়াই সেই শব্দবোৰৰ সৈতে যে বঙলা শব্দৰ কোনো ধৰণৰ মিল নাই তাক স্পষ্টকৈ বুজাই দিছে। ইয়াৰ লগতে অতীতৰ পৰা বৰ্তমানলৈকে অসমীয়া ভাষাত প্ৰকাশ পোৱা ধৰ্ম, বুৰঞ্জী, চিকিৎসা-শাস্ত্ৰ, নাটক, গণিত, ভুগোল, অভিধান, আইন আৰু স্কুলীয়া ছাত্ৰসকলৰ বাবে যুগুতাই উলিওৱা পাঠ্যপুথিৰ দীঘল তালিকা প্ৰস্তুত কৰি পত্ৰখনত সংলগ্ন কৰে। এনেদৰেই ঢেকিয়াল ফুকনে অসমীয়া ভাষাৰ স্বতন্ত্ৰতা দাবী কৰিব পৰা পৰ্যাপ্ত প্ৰমাণেৰে গৱেষণা পত্ৰ এখন প্ৰস্তুত কৰিছিল। যিখন ড০ মাইলছ ব্ৰনছনৰ উদ্যোগত শিৱসাগৰ মিছনেৰী প্ৰেছত ‘এ নেটিভ’ ছদ্মনামত *এ ফিউ ৰেমাৰ্কছ অন দ্য আছামিছ লেংগুৱেজ এণ্ড অন দ্য ভাৰ্ণাকুলাৰ এডুকেছন ইন আছাম* শীৰ্ষক ১০০ খন পুস্তিকা ছপা কৰি চৰকাৰক দিয়াৰ লগতে প্ৰশাসনৰ বিশেষ বিশেষ বিষয়া, শিক্ষিত অসমীয়া আৰু বঙালীসকলৰ মাজত বিলাই দি সেই মানুহক্সিনৰ মাজত সচেতনতা সৃষ্টি কৰিবৰ প্ৰয়াস কৰিছিল।

ঊনবিংশ শতিকাৰ সেই সময়ছোৱাত অসমত স্ত্ৰী-শিক্ষাৰ বিষয়ে একো প্ৰচাৰ বা প্ৰসাৰ হোৱা নাছিল। কলিকতাৰ পৰা প্ৰাচ্য-পাশ্চাত্যৰ শিক্ষা লৈ অহা আনন্দৰামে স্ত্ৰী-শিক্ষাৰো যে প্ৰয়োজনীয়তা আছে সেই কথা উপলব্ধি কৰিছে। ঔপন্যাসিকে এই কথাৰ অৱতাৰণা কৰিছে এনেদৰে, ‘এইখন দেশত এতিয়াও পিতৃগৃহত কন্যাক শিক্ষা দিয়া নহয়। অথচ নাৰীক শিক্ষা দান কৰাটো যে কিমান আৱশ্যক, কলিকতালৈ গৈ আনন্দৰামে উপলব্ধি কৰিছে। “মাহিন্দ্ৰীৰ বাবে তেওঁ কিতাপ কিনি আনিলে। বলৰাম, গংগাৰাম আৰু গুণাভিৰামৰ লগতে তেওঁকো পঢ়ুৱাবলৈ ধৰিলে। মাহিন্দ্ৰীয়ে পঢ়িবলৈ লোৱা দেখি ঘৰৰ আন ছোৱালীহঁতো কিতাপ পঢ়িবলৈ আগ্ৰহী হৈ উঠিল।” (কৰ্মকাৰ ১২৫) আনন্দৰামৰ *অৰুনোদই*ত ছপা হোৱা প্ৰথমটো লেখা ‘ইংলেণ্ডৰ বিৱৰণ’ প্ৰবন্ধটো মাহিন্দ্ৰীয়ে ঘৰৰ সকলোৰে আগত পঢ়ি শুনোৱা কথাটোত আনন্দৰামৰ ঘৰখনত যে স্ত্ৰী-পুৰুষ সকলোৱে সমান অধিকাৰ পাইছিল সেই কথা বুজিব পাৰি। এনেদৰেই আনন্দৰামে নিজৰ ঘৰখনৰ পৰাই নিজা উদ্যোগত অসমত স্ত্ৰী-শিক্ষাৰ এক শুভ বাৰ্তা কঢ়িয়াই অনা বুলি ক'ব পাৰি।

উপসংহাৰ ঃ

আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন স্বল্পায়ু আছিল যদিও তেওঁৰ জীৱনটো আছিল ঘটনাবহুল। *প্ৰভাতী সূৰ্যৰ দেশ* উপন্যাসখনত ঔপন্যাসিকগৰাকীয়ে ঢেকিয়াল ফুকনৰ এই ঘটনাবহুল জীৱনটোক অতি সূক্ষ্মভাৱে নিৰীক্ষণ কৰি উপন্যাসৰ পাতত দাঙি ধৰিছে। ঔপন্যাসিকগৰাকীয়ে নায়কৰ জীৱনৰ লগত সম্পৰ্কিত প্ৰতিটো সৰু-বৰ ঘটনাই নিখুঁতভাৱে চন তাৰিখসহ আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰিছে। সকলোবোৰ ঘটনাৰ এনে তথ্যমূলক বিশ্লেষণে কেতিয়াবা উপন্যাসখন জীৱনীলৈ স্থানান্তৰিত হোৱা যেনো অনুভূত হয় যদিও

ঔপন্যাসিকে পৰিস্থিতিৰ সু-সংগঠিত উপস্থাপনেৰে ইয়াক উপন্যাসৰ শাৰীলৈ পৰ্যবসিত কৰাইছে। তৃতীয় পুৰুষত উপস্থাপিত বৰ্ণনাধৰ্মী কাহিনীৰ জৰিয়তে ঔপন্যাসিকে এক সাৱলীলতা ৰক্ষা কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। উপন্যাসখন অসংখ্য ঐতিহাসিক আৰু সামাজিক তথ্য আৰু ঘটনাৰে সমৃদ্ধ হ'লেও এই তথ্যসমূহৰ সমাহাৰে উপন্যাসৰ কাহিনীক গতিশীলতা প্ৰদান কৰাতহে সহায়ক হৈছে। জীৱনীমূলক উপন্যাস কল্পনা আৰু বাস্তৱৰ সমাহাৰ হ'লেও কল্পনাক নিয়ন্ত্ৰিত ৰূপত উপস্থাপন কৰা বাবে উপন্যাসখনৰ উপস্থাপন শৈলী মনোমোহা হৈ উঠিছে।*প্ৰভাতী সূৰ্যৰ দেশ* উপন্যাসখনৰ আলোচনাৰ পৰা দেখা যায় যে আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনে অসমৰ শৈক্ষিক দিশটোত বিশেষভাৱে অৱদান আগবঢ়াই আহিছে। অসমীয়া ভাষাক অসমত পুনঃ প্ৰতিষ্ঠাৰ বাবে তেওঁ যিক্ষিণ কৰ্ম কৰি গৈছে সেয়া প্ৰতিজন অসমীয়াই আজিও শ্ৰদ্ধাৰে স্মৰণ কৰে। ঢেকিয়াল ফুকনে কলিকতালৈ পঢ়িবলৈ গ'লেও কেৱল পাঠ্যপুথিতে নিমগ্ন নাথাকি সেই সময়ৰ বংগৰ সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ জৰিয়তে যি নৱজাগৰণৰ উত্তৰণ হৈছিল সেয়া প্ৰত্যক্ষভাৱে দৰ্শন কৰিছিল আৰু অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যতো তেওঁ এক নৱজাগৰণ আনিবলৈ প্ৰয়াস কৰিছিল। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

কৰ্মকাৰ, সন্তোষ কুমাৰ। *প্ৰভাতী সূৰ্যৰ দেশ*। গুৱাহাটী, পেপিৰাছ, প্ৰথম প্ৰকাশ ঃ ২০১৭

গোস্বামী, ৰঞ্জিত কুমাৰ দেৱ। *প্ৰবন্ধ*। গুৱাহাটী, লয়াৰ্ছ বুক ষ্টল, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, পুনৰ মুদ্ৰণ ঃ ২০২৩

চলিহা, সুমন্ত (সম্পা.)। *যোগেন্দ্ৰনাৰায়ণ ভূএগ্রাৰ ৰচনাৱলী*। গুৱাহাটী, অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, প্ৰথম সংস্কৰণ ঃ ২০২০

চৌধুৰী, প্ৰসেনজিৎ। *অৰুনোদই*। গুৱাহাটী, ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্টৰ্চ, প্ৰথম প্ৰকাশ ঃ ২০১৪

নেওগ, মিলন। *অন্বেষণ, ঊনবিংশ শতিকা আৰু অন্যান্য*। গুৱাহাটী, পূৰ্বায়ণ, প্ৰথম প্ৰকাশ ঃ ২০২০

বৰুৱা, গুণাভিৰাম। *আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ জীৱন চৰিত্ৰ*। গুৱাহাটী, অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, পঞ্চম সংস্কৰণ ঃ ২০০৭

মহন্ত, প্ৰফুল্ল। *অসমীয়া মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীৰ ইতিহাস*। গুৱাহাটী, পূৰ্বাঞ্চল প্ৰকাশ, চতুৰ্থ সংস্কৰণ ঃ জানুৱাৰী, ২০২১

শইকীয়া, নগেন। *ঊনবিংশ শতিকাৰ পোহৰত আধুনিক অসমীয়া সাহিত্য*। ডিব্ৰুগড়, কৌস্তুভ প্ৰকাশন, পুনমুদ্ৰণ ঃ ২০১৯

শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*। গুৱাহাটী, সৌমাৰ প্ৰকাশ, দশম সংস্কৰণ ঃ জুন, ২০১৩

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ গীতত চাৰিত্ৰিক মনোজগতৰ চিত্ৰণ

(“শোণিত কুঁৱৰী” আৰু “কাৰেঙৰ লিগিৰী” নাটকৰ বিশেষ উল্লিখনসহ)

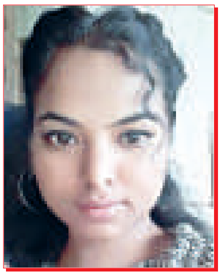

জুমি বৰ্মন

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালা আধুনিক অসমীয়া নাটকৰ এক উল্লেখযোগ্য নক্ষত্ৰ। জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ নাটকৰ এক আকৰ্ষণীয় বিষয় হ'ল গীত। *শোণিত কুঁৱৰী* নাটকেৰে নাট্য জীৱন আৰম্ভ কৰা আগৰৱালাৰ নাটকৰ এটা উল্লেখযোগ্য দিশ হ'ল নাটকত সন্নিবিষ্ট গীতসমূহ। জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাই শোণিত কুঁৱৰীকে ধৰি *কাৰেঙৰ লিগিৰী, ৰূপালীম, লভিতা,* আদি কেইবাখনো নাট ৰচনা কৰি ৰসগ্ৰাহী দৰ্শক-পাঠকক ৰসাস্বাদন কৰাত সুবিধা কৰি দিয়ে। নাটকীয় ঘটনাৰ বিকাশ, পৰিৱেশ চিত্ৰণ, চৰিত্ৰৰ মানসিক অৱস্থাৰ চিত্ৰণত গীতৰ ভূমিকা উল্লেখযোগ্য। গীতে মানুহৰ মনত আবেগৰ সঞ্চাৰ কৰে। কথাতকৈ গীতে মানুহক সহজতে আকৰ্ষণ কৰিব পাৰে বাবে নাটকীয় বিষয়বস্তুৰ উপস্থাপন বা ঘটনাৰ বিন্যাস, পৰিৱেশ সৃষ্টি, চৰিত্ৰ চিত্ৰণত গীতে সহায়কাৰী ভূমিকা পালন কৰে। তদুপৰি নাটকীয় সংলাপৰ মাজে মাজে সুমধুৰ গীতৰ তৰঙ্গৰাশিয়ে দৰ্শকক মনোৰঞ্জন দিয়াৰ লগতে অৱসাদ দূৰ কৰে। নাটকীয় চৰিত্ৰৰ মানৱীয় আৱেগ-অনুভূতিৰ যথাযথ প্ৰয়োগ কৰি চৰিত্ৰসমূহ জীৱন্ত কৰি তোলাৰ ক্ষেত্ৰত গীতৰ ভূমিকা নুই কৰিব নোৱাৰি। একোখন নাটক সৰ্বাঙ্গ সুন্দৰ কৰাৰ ক্ষেত্ৰত নাটকীয় অন্যান্য উপাদানৰ লগতে গীতৰ ভূমিকাও গুৰুত্বপূৰ্ণ। আমাৰ অধ্যয়নত জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ নাটকৰ গীতত চৰিত্ৰৰ মনোজগতৰ চিত্ৰণ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

নাটক, গীত, শোণিত কুঁৱৰী, কাৰেঙৰ লিগিৰী, চৰিত্ৰ, মানসিক অৱস্থা।

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
অসম- ৭৮১০১৪
৮০৯৯২৮৭৭২৪
barmanjumi76@gmail.com

বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালা আছিল ৰূপান্তৰৰ সাধক। এইজনা সাহিত্যিকে অসমীয়া নাট্য জগতলৈ পৰিৱৰ্তনৰ সোঁত বোৱাই আনি এক নতুন দিগন্তৰ সূচনা কৰে। অসমীয়া নাট আৰু গীতৰ ওপৰত বঙ্গীয় নাট্যাদৰ্শ আৰু গীতৰ যি সুদূৰপ্ৰসাৰী প্ৰভাৱ সেই প্ৰভাৱৰ পৰা মুক্ত কৰাৰ বাবে জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাই অহোপুৰুষাৰ্থ কৰিছিল। নিজ দেশৰ বহুমূলীয়া সম্পত্তি থলুৱা গীত-মাতক আধাৰ হিচাপে লৈ তেওঁ গীত ৰচনাত মনোনিৱেশ কৰিলে। সমাজত তেওঁৰ গীতসমূহে যথেষ্ট সমাদৰ লাভ কৰিলে। জ্যোতিপ্ৰসাদ

আগৰৱালাই নাটকত অৱতাৰণা কৰা গীতসমূহত আইনাম, বিয়ানাম, বিহুগীত, বনগীত আদিৰ সুৰ ধ্বনিত হয়। তদুপৰি তেওঁৰ গীতসমূহত থলুৱা গীতৰ সুৰৰ লগত পাশ্চাত্য কলা-কৌশল আৰু হিন্দুস্থানী ৰাগ-সংগীতৰ অপূৰ্ব সংমিশ্ৰণ ঘটে। এনে নতুনত্বই অসমীয়া সংগীতক এক নতুন মাত্ৰা প্ৰদান কৰিলে। জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ নাটকত সন্নিৱিষ্ট গীতসমূহে মুলতঃ দুটা প্ৰয়োজন সাধন কৰিছে —পৰিৱেশ পৰিস্থিতিৰ উপযোগিতা সাধন আৰু চৰিত্ৰৰ মানসিক অৱস্থাৰ চিত্ৰণ।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ গীতত চাৰিত্ৰিক মনোজগতৰ চিত্ৰণ (“শোণিত কুঁৱৰী” আৰু “কাৰেঙৰ লিগিৰী” নাটকৰ বিশেষ উল্লিখনসহ) শীৰ্ষক বিষয়টো অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য হ’ল জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ নাটকত গীতৰ গুৰুত্ব আৰু চৰিত্ৰ মনোজগত উদ্ভাসিত কৰাৰ লগতে নাটকীয় সৌন্দৰ্য বৰ্দ্ধনৰ ক্ষেত্ৰত গীতৰ ভূমিকা সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা।

পৰিসৰ ঃ

জ্যোাতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ নাটকৰ গীতসমূহৰ মাজেৰে নাটকত অংকিত চৰিত্ৰসমূহৰ মনোজগতৰ চিত্ৰ উদ্ভাসিত হৈ উঠে। নাটকীয় চৰিত্ৰৰ মনৰ সুখ-দুখ, হাঁহি-কান্দোন, আৱেগ-অনুভূতিৰ প্ৰকাশত গীতসমূহে বিশেষভাৱে সহায় কৰে।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰণত ঘাইকৈ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে। মুখ্য উৎস হিচাপে “জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ নাটক” শীৰ্ষক আগৰৱালাৰ নাটকৰ একত্ৰিত সংকলনৰ পৰা লোৱা হৈছে। গৌণ উৎস হিচাপে বিষয়ৰ লগত সম্পৰ্ক থকা বিভিন্ন গ্ৰন্থ, আলোচনী, প্ৰবন্ধ আদিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

আধুনিক অসমীয়া নাটকৰ প্ৰধান হোতা জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালা। জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ গীতৰ ভাববস্তু, ৰূপবস্তু, সুৰ আদি সকলো ক্ষেত্ৰতে চিৰ নতুন। থলুৱা গীতৰ লগত জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাই পাশ্চাত্য সুৰৰ অভিনৱ সংযোজন কৰি অসমীয়া নাট্যজগতলৈ এক নব্য দৃষ্টিভংগী তথা আৰ্হি সংযোগ কৰে যি অসমীয়া লোকৰ বাবে প্ৰথমাৱস্থাত একেবাৰে আচহুৱা ধৰণৰ আছিল। পাছলৈ সমাজত তেওঁৰ গীতে যি সমাদৰ লাভ কৰিছিল সেই সমাদৰ আজিৰ দৰে অদূৰ ভৱিষ্যতেও একেই থাকিব। অসমীয়া সাহিত্যজগতত জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ নাটকসমূহ অতি মূল্যবান সম্পদ। নাটকসমূহৰ দৰে নাটকত সন্নিৱিষ্ট গীতসমূহো সাহিত্য তথা সংগীত জগতত এক বিশেষ মূল্য আছে। এনে এগৰাকী শিল্পী সাহিত্যিকৰ অন্যান্য গীতৰ দৰে নাটকত সংযোজন কৰা গীতসমূহৰো প্ৰণালীবদ্ধ অধ্যয়নৰ প্ৰয়োজনীয়তা আছে। সেয়ে সংগীত সাধক গৰাকীৰ নাটকৰ

গীতত চৰিত্ৰৰ মনোজগতৰ চিত্ৰণ সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

'শোণিত কুঁৱৰী' জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ প্ৰথম নাটক। নাটকখনৰ বিষয়বস্তু পৌৰাণিক আখ্যান আধাৰিত। শোণিতপুৰৰ ৰজা বাণৰ উপযুক্ত প্ৰতিযোদ্ধাৰ সন্ধান আৰু জীয়ৰী উষাৰ উপযুক্ত স্বামী লাভৰ আকাংক্ষাই *শোণিত কুঁৱৰী* নাটকৰ মূল উপজীব্য। *শোণিত কুঁৱৰী* নাটকত মুঠ তেৰটা গীত সন্নিবিষ্ট হৈছে। *শোণিত কুঁৱৰী* নাটকত সন্নিবিষ্ট গীতসমূহ নাট্য কাহিনীৰ অবিচ্ছেদ্য অঙ্গ। এই নাটখনৰ জৰিয়তেই নাট্যকাৰে প্ৰাচ্য আৰু পাশ্চাত্য সুমধুৰ সঙ্গীতৰ অপূৰ্ব সংমিশ্ৰণ ঘটাই নাটখনক এক সুকীয়া বিশেষত্ব প্ৰদান কৰিছে। গীতৰ ছন্দে ছন্দে নাট্যকাহিনীয়ে গতি লাভ কৰিছে। নাটকখনত অৱতাৰণা কৰা ভালেমান গীতে চৰিত্ৰৰ মানসিক অৱস্থাৰ সুগভীৰ প্ৰকাশ ঘটাইছে। তলত *শোণিতকুঁৱৰী* নাটকত সংযোজন কৰা গীতসমূহে চৰিত্ৰৰ ভাৱ অনুভূতিৰ প্ৰকাশ কেনেদৰে ঘটাইছে তাৰ এটা আভাস দাঙি ধৰা হ'ল।

শোণিত কুঁৱৰী নাটকৰ আৰম্ভণিতে দিয়া পদুমকলি নৃত্যৰ গীতটি উল্লেখযোগ্য। গীতটোৰ মাজেদি সূৰ্য আৰু পদুমৰ প্ৰণয়ৰ চিত্ৰ এখন অংকিত হৈছে আৰু তাৰ লগে লগে নাটকীয় কাহিনীৰ পূৰ্বাভাস দাঙি ধৰিছে। উষাৰ চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট্য অত্যুজ্জ্বল কৰি তোলাত পদুমকলি গীতটোৱে বিশেষ ভূমিকা পালন কৰিছে। গীতটোৰ প্ৰথম তৰঙ্গৰ ভাৱৰাশিত যৌৱনপ্ৰাপ্ত উষাৰ অব্যক্ত বুকুৰ ভাষাও ভাস্বৰ হৈ উঠিছে বুলি ভবাৰ অৱকাশ আছে।

পদুমনিক্ষম শুৱনি কৰিলে
কুমলীয়া এটি কলিয়ে
ভাব তাৰ আছে বুকুতে লুকাই।
ভাষা তাৰ আছে
মুখ ওপচাই
নিচুকি আছিল - সময় তাৰ
আহিছেনে নাই বুলিয়ে (গোহাঁই সাম্পা.১২)

শোণিত কুঁৱৰী নাটকৰ দ্বিতীয় অংকৰ প্ৰথম দৰ্শনত সংযোগ কৰা গীতটোৱে উষা চৰিত্ৰৰ মানসিক জগতখন উন্মুক্ত কৰিছে। উষাৰ মুখত দিয়া এই গীতটোৰ জৰিয়তে প্ৰথম যৌৱনৰ কোবাল বতাহে কোবাই যোৱা উষাৰ মনৰ চঞ্চলতা আৰু অস্থিৰতা প্ৰকাশ পাইছে। যৌৱনৰ দুৰ্বাৰদলিত ভৰি দিয়া প্ৰত্যেক ব্যক্তিয়ে বিপৰীত লিঙ্গৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত হয়। উষাও তাৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। পুত্ৰীক অগ্নিগড়ত আৱদ্ধ কৰি ৰখা বাণৰজাই উষাৰ মনৰ দুৱাৰ কিন্তু বন্ধ কৰি ৰাখিব পৰা নাছিল। যৌৱনত ভৰি দিয়া উষাৰ হিয়াত প্ৰেমৰ সুৰ ঝংকাৰিত হৈছে,সেয়ে তাইৰ মনে প্ৰাণৰ আলহী বিচাৰি হাহাকাৰ কৰিছে—

গুমৰি উঠিছে হিয়া অভিনৰ তানে।
যৌৱনৰ প্ৰথম পুৱাত আজি
ক'ত আছে প্ৰাণৰ আলহী
কোনে কৈয়ে দিব
কোনে জানে।" (প্ৰাগুক্ত ১৯)

নাটকখনৰ তৃতীয় অংকত উষাৰ সখী পত্ৰৰ মুখত দিয়া অন্য এটা গীতে উষাৰ মনোজগতৰ সন্ধান দিছে।

গীতটোৰ মাজেৰে স্বপ্নৰ ৰাজকুমাৰে যৌৱন জাগ্ৰত কৰা উষাৰ মানসিক অৱস্থাৰ চিত্ৰ সুন্দৰভাৱে ফুটাই তুলিছে। উষা প্ৰথম যৌৱনা। এক নতুন অনুভৱে তাইৰ দেহ মন পুলকিত কৰি ৰাখে। বুকুৰ গোপন কোণত কাৰোবাৰ উপস্থিতি একান্তমনে কামনা কৰে। এনে সময়তে স্বপ্নত কোনোবা অচিনা অজানা পুৰুষ মূৰ্তিয়ে আহি উষাৰ মন প্ৰাণ হৰণ কৰি লৈ যায়। সেই পুৰুষ মূৰ্তিৰ ছবি তাইৰ হিয়াত খোদিত হৈ ৰয়। সপোনৰ কোঁৱৰৰ চুমা পৰশে উষাক দিঠকতো ব্যাকুল কৰি তোলে। চঞ্চল, উন্মাদ ফাগুনে কঢ়িয়াই আনে বসন্তৰ আগলি বতৰা। সেই উন্মাদ ফাগুনৰ বতাহে চঞ্চলা উষাৰ জীৱনলৈও কঢ়িয়াই আনে নৱ বসন্তৰ ঠিকনা। ৰোমান্টিক ভাবাৱেশপূৰ্ণ গীতটোৰ জৰিয়তে সপোনত অনিৰুদ্ধ কোঁৱৰক দেখি দিঠকতো তেওঁক পাবলৈ হাবিয়াস কৰা উষাৰ হৃদয়ৰ বিৰহ বেদনা ফুটাই তুলিছে—

আমাৰে সখিয়া আকুল বিয়াকুলে
সপোনৰ হাঁহিটি চাই,
সপোনত কোঁৱৰে আহুদি আনিলে
মতলীয়া সখী খাই।
দিঠকৰ বাতৰি সপোনত মিলিলে
আছিল সখী বাটে চাই।
ফাগুনৰ বতাহে গাতে ছাটি মাৰে
গাতে ছাটি মাৰি যায়।

(হাঁহি) চুমা পৰশনৰ জুতি পাই সখীয়াৰ
গাতে উৰাদিহে নাই।
সখীয়াৰে গাতে উৰাদিহ নাই। (প্ৰাগুক্ত ৩২)

" অ' সখী আহিব পিয়া" গীতটোৰ মাজেৰে সপোন কোঁৱৰক দিঠকত নাপাই বিৰহ বেদনাত কাতৰ হোৱা উষাৰ অশান্ত মনক সান্ত্বনা দিবলৈ সখীয়েকসকলে গাইছে। সপোনত মধুৰ মুহূৰ্ত কটাই সপোন শেষ হোৱাৰ লগে লগে বিচ্ছেদে ভাৰাক্ৰান্ত কৰি তুলিছে। মিলনত উদ্বাউল আৰু বিৰহে উদাস কৰা উষাৰ হৃদয়ৰ ৰাগ গীতটোৰ মাজেৰে ধ্বনিত হৈছে—

" অ' সখী আহিব পিয়া
ৰূপহী জোনৰে
কিৰণ জিকেমিকাই
বিৰিখৰ পা আহিব পিয়া
সখীৰে চকুৰে নিয়ৰ জিকেমিকাই
লাৱনী গালতে আহিব পিয়া
আমাৰে সখীয়ে
ইনাই বিনাই
বিৰহ বেদনাতে
মিলন বাসনাতে আহিব পিয়া" (প্ৰাগুক্ত ৫০)

বাণৰজাই উষাক অনিৰুদ্ধৰ হাতত অৰ্পণ কৰাৰ প্ৰাক মুহূৰ্তত চিত্ৰলেখাৰ মুখত দিয়া গীতটো চিত্ৰলেখাৰ বন্ধু বিচ্ছেদৰ কাৰুণ্যৰে ভাৰাক্ৰান্ত। মিলন মধুৰ, বিচ্ছেদ গধুৰ। বিদায় কাৰো কাম্য নহয়। অথচ সময়ে কেতিয়াবা বুকুৰ আপোনসকলৰ পৰা বিদায় ল'ব লগা পৰিস্থিতিৰ সৃষ্টি কৰে। চঞ্চলা চপলা উষা সখীয়েকসকলৰ লগত উমলি-জামলি ডাঙৰ হয়। হাঁহি-মাতি ৰং-ধেমালিৰে সিহঁতৰ জীৱন অত্যন্ত মধুৰ আছিল। অনিৰুদ্ধৰ লগত মিলনৰ পিছত উষা বাণৰ নগৰ এৰি বিদায় ল'বলগীয়া হয়। এঘৰৰ ছোৱালী অন্য এঘৰলৈ উলিয়াই দিয়াটো কিমান কষ্টকৰ সেই কথাটো জ্যোতিপ্ৰসাদে গীতৰ মাধ্যমেৰে মৰ্মস্পৰ্শীভাৱে ফুটাই তুলিছে—

উষা জিৰণীয়া
পাই লগৰীয়া
সন্ধিয়াৰ দেশলৈ যায়;
অকলশৰীয়া
কৰি মোক সখীয়া
গ'লা মোক মিলনৰে নিশাটি পাই।" (প্ৰাগুক্ত ৭৭)

উষাৰ অনুপস্থিতিত চিত্ৰলেখাই কেৱল অকলশৰীয়া নহয়, গোটেই বাণৰ নগৰ শুদা হৈ পৰিব। বিদায় নিঠুৰ মুহূৰ্তত সখীয়েকহঁতৰ অন্তৰ বিষাদ-বেদনাই গধুৰ কৰি তুলিছে। উষাৰ বিদায় মুহূৰ্তৰ সেই গীতে দৰ্শকৰ অন্তৰো কাৰুণ্যৰে ভৰাই পেলায়—

"বাৰীৰ পিছফালে তগৰ
সখীৰ তাঁতৰ শালে তগৰ
বহি জোলাফুলে বাছেকি তগৰ
আজি সুদা হ'ব উষাৰে নগৰ।" (প্ৰাগুক্ত ৭৯)

কাৰেঙৰ লিগিৰী জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালাৰ দ্বিতীয় নাটক। শোণিত কুঁৱৰী নাটকৰ দৰে কাৰেঙৰ লিগিৰী পূৰ্ব প্ৰস্তুত কাহিনীৰ অৱলম্বনত ৰচিত নহয়। এক কাল্পনিক কাহিনীৰ আধাৰত নাটকখনৰ কাহিনীভাগ নিৰ্মিত। নাট্যকাৰে সামন্তযুগীয় সমাজ এখনৰ পটভূমিত ৰোমাণ্টিক কাহিনী এটাৰ সংযোজন কৰিছে। দ্বন্দ, সংঘাত আদিৰ লগে লগে চিৰন্তন মানৱীয় আবেগ-অনুভূতিৰ বাস্তৱ প্ৰকাশেই নাটকখনক অভিনৱত্ব প্ৰদান কৰিছে। *কাৰেঙৰ লিগিৰী* নাটকত নাট্যকাৰে সাতোটা গীতৰ সংযোজন ঘটাইছে। গীতসমূহৰ মাজেৰে চৰিত্ৰৰ মনোজগতখন বলিষ্ঠ ৰূপত প্ৰকাশি উঠিছে।

সোণৰে পালেঙত অ' মনেতৰা
সোণৰে পালেঙত ঘুমটি নাহিলে
কপাহৰে তলিচা পৰা মনেতৰা
সোণৰে-
চাতোনৰ দলিচা পাৰি দিম শুবলৈ অ' মনেতৰা
বগলীৰ পাখিৰে গাৰু দিম শুবলৈ অ ' মনেতৰা
ওপৰে তৰি দিম ম'ৰাৰে পাখিৰে
চান্দোৱা তৰাফুল বছা মনেতৰা
সোণৰে-
পদুমৰ পাহিৰে গুঁঠি দিম বিচনী
বা দিম সুৰভি ভৰা মনেতৰা
কাষতে লিগিৰী বহিনো নামে গাম
কোনোবা বিতোপন দেশৰে সাধু ক'ম
নিশাটো কাষতে বহি মনেতৰা
টোপনি টোপনি অ' মনেতৰা
আহিব টোপনি অ' মনেতৰা। (প্ৰাগুক্ত ৯১-৯২)

গীতটোৰ মাজেৰে শেৱালিৰ বুকুৰ গোপন কোণৰ অনুভৱ নিগৰি ওলাইছে। শেৱালিয়ে যি কথা কোনোকালে কোনোপধ্যে ব্যক্ত কৰিব নোৱাৰে, সেই কথা গীতৰ মাজেৰে মূৰ্ত হৈ উঠে। সুন্দৰ কোঁৱৰৰ কোঠা সজাই, পালেং সজাই

সুখ সপোনত লিগিৰী শেৰালি আত্মহাৰা হয়। সেই অনুভৱে তাইক আত্মবিভোৰ কৰি তোলে। তাই জানে কাৰেঙত তাইৰ স্থান ক'ত। তথাপিও বুকুৰ কোনোবাক্ষিনত কোঁৱৰৰ সতে একাত্ম হোৱাৰ বাসনা পুহি ৰাখে। গোটেই নিশাটো কোঁৱৰৰ কাষতে বহি কটোৱাৰ স্বপ্ন ৰচে। চাতোনৰ দলিচা পৰা পালেঙত শুভ্ৰ গাৰুত শুবলৈ দি পদুম পাহিৰ বিচনীৰ সুবাস ভৰা বা দিয়াৰ কল্পনা কৰে।

শেৰালি য'তেই নাথাকক তাইৰ অন্তৰ সুন্দৰৰ প্ৰতি থকা প্ৰেমেৰে পৰিপূৰ্ণ। তাৰ বিনিময়ত প্ৰেমাস্পদৰ পৰা কোনো ধৰণৰ প্ৰতিদান তাই নিবিচাৰে। মনৰ মাজতে কোঁৱৰক নিচুকাই শুৱাই থোৱাৰ, দুবাহুৰ মাজত জিৰণি লোৱাৰ আকাংক্ষা জাগৃত হ'লেও সেই হেঁপাহ, সেই আকাংক্ষা মনৰ মাজতে মাৰ যায়। সুন্দৰ তাইৰ মন আকাশৰ পূৰ্ণিমাৰ জোন। তই যাকচাব পাৰে কিন্তু চুব নোৱাৰে। সেই জোনৰ শীতল ছাঁত কেৱল জুৰ ল'ব পাৰে। নগা পাহাৰত নিৰ্বাসিত শেৰালিৰ সুন্দৰৰ পৰা আঁতৰি থকাৰ বাবে কোনো ধৰণৰ আক্ষেপ নাই। সুন্দৰৰ স্মৃতিৰে তাইৰ জীৱন ঐশ্বৰ্যময়,সৌন্দৰ্যময়, সুখময়।

যাউতি যুগীয়া ধনে মোৰ অ'।
প্ৰাণত দিলা মোক মৰম কুমলীয়া
মনত সোঁৱৰণি সুৰদীয়া
বুকুত ভালেপোৱা অ' প্ৰাণৰে ধনে
যাউতি যুগীয়া ধনে মোৰ অ'।
স্মৃতিৰ ছবিক্ষিন প্ৰণয় ফুটুকীয়া
কল্পনা পুৰাই দিলা মোক অ'
যাউতি যুগীয়া ধনে মোৰ অ'।
ভাৱত অগণনে হুমুনিয়া
অময়া সৌন্দৰ্য্য জীৱন ওপচোৱা
থৱলৈকে ঠায়ে নোজোৰে অ'
যাউতি যুগীয়া ধনে মোৰ অ'।
সুখ বিনন্দীয়া মৰণতে বাকি
সৰগী সপোন টোপনিতে গঢ়ি দিলা মোক অ'
যাউতি যুগীয়া ধনে মোৰ অ'।
বুজা-নুবুজাৰে হাঁহি-কান্দোনৰে
জীৱনত পাতিলা মেলা মোৰ অ'
যাউতি যুগীয়া ধনে মোৰ অ'। (প্ৰাগুক্ত ১৩৯)

বাৰিষাৰ আকাশৰ ঘনঘোৰ অন্ধকাৰে শেৰালিৰ বুকুৰ পোৰণি দুগুণে বঢ়াইছে। নিস্বাৰ্থ পবিত্ৰ প্ৰেমৰ বিনিময়ত তাই ৰাজ কাৰেঙৰ গভীৰ ষড়যন্ত্ৰৰ বলী হয়। কোঁৱৰক তাই নাপালেও সেই একেক্ষিন ছবিয়েই তাইৰ হিয়াৰ মাজত দুলি থাকে। প্ৰাপ্তিৰ মোহ তাইৰ কোনো কালেই নাছিল যদিও কাৰেঙৰ পৰা নিৰ্বাসিত হৈ তাইৰ জীৱনৰ শূণ্যতাক্ষিন বাৰুকৈয়ে উপলব্ধি কৰিছে। শেৰালিৰ কণ্ঠত দিয়া এই গীতটোৱে দৰ্শকৰ মন আকাশো ডাৱৰেৰে ভৰাই পেলায়।

বাৰিষাৰে ঘন ঘোৰ
বজালি প্ৰাণত মোৰ
কিনো উদাসীন সুৰ?
পৱন অ' উৰুৱাই তাক
নিবিনো কত দূৰ?
শূইন জীৱন অ' মোৰ
উটি যাব কোনো ফালে
কোন আকুলতে পাবি কূল?
আকাশ পৱন জোৱা
একেক্ষিন ছবি অ'
কৰি থবি মোৰ এই
জীৱনকে বিয়াকুল (প্ৰাগুক্ত ১৩০)

কাৰেঙৰ লিগিৰী নাটকৰ সমাপতি দৃশ্যত সন্নিবিষ্ট গীতটোত সুন্দৰ কোঁৱৰৰ ব্যথা ভৰা জীৱনৰ কৰুণ আৰ্তনাদ ধ্বনিত হৈছে। আদিতে নাৰী বিদ্বেষী কোঁৱৰ শেৰালিৰ প্ৰেমৰ ত্যাগ আৰু মহত্ব দেখি অভিভুত হয়। শেৰালিৰ কৰুণ মৃত্যুত সুন্দৰৰ হৃদয়ত বিৰহৰ অগনি যে দাউ দাউ জ্বলি আছিল সেই কথা স্পষ্ট হৈ ওলাইছে। কোঁৱৰৰ জীৱনত মাথো ৰয় সুখৰ আলফুল স্মৃতি অথবা নিৰ্বাক অতীতৰ ব্যথা। বুকুৰ পোৰণি শাঁত পেলাব নোৱাৰা, হিয়াৰ অগনি নুমুৱাব নোৱাৰাৰ বিষাদ ঘন সুৰ এই গীতটোৰ মাজেদি ফুটি উঠিছে।

অ' সোঁৱৰণি
সমিধান দিয়া,
শাঁত কৰি প্ৰাণৰ অগনি।
নিৰ্ব্বাক অতীতৰ,
গোপন কুঞ্জ এৰি,
আহাঁ মৌসনা সোঁৱৰণি।
উৰুৱাই মনৰ মাজলৈ
সুৱৰ্ণৰে পাখী।
পাহৰণি- পদুমৰ মন্ত্ৰদূত,
পাহি মেলি মেলি।" (প্ৰাগুক্ত ১৪৮)

সামৰণি ঃ

গীত হ'ল ব্যক্তিৰ মানসিক উৎকৰ্ষ সাধনৰ এক অন্যতম আহিলা। গীতে মানুহৰ মনৰ ক্লান্তি, অৱসাদ দূৰ কৰি আহ্লাদ প্ৰদান কৰে। নাটকীয় চৰিত্ৰৰ লগত একাত্ম হৈ দৰ্শকো চৰিত্ৰৰ সুখ-দুখৰ সমভাগী হয়। তদুপৰি ঘটনা বিন্যাসৰ মাজে মাজে গীতৰ প্ৰয়োগে দৰ্শকক মনোৰঞ্জনো দিয়ে। জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালা এই ক্ষেত্ৰত সদাসচেতন আছিল। আগৰৱালাৰ নাটকৰ গীতে দৰ্শকক আমোদ দিয়াৰ লগতে নাটকীয় চৰিত্ৰ অধিক জীৱন্ত আৰু গতিশীল ৰূপ প্ৰদান কৰে। তদুপৰি গীতসমূহে চৰিত্ৰৰ মানসিক অৱস্থাৰো বৰ্ণনা কৰে। চৰিত্ৰৰ মনৰ ভাব-অনুভূতি প্ৰকাশৰ ক্ষেত্ৰত কোনো কোনো সময়ত যে সংলাপতকৈও গীত অধিক শক্তিশালী হ'ব পাৰে সেই কথা জ্যোতিপ্ৰসাদৰ নাটত স্পষ্ট হৈ উঠে। থলুৱা আৰ্হিত গীত ৰচনা কৰি যে কাহিনী আগবঢ়াই নি নাটকীয় সৌন্দৰ্য বৃদ্ধি কৰিব পাৰি সেইকথাও নাট্যকাৰ গৰাকীয়ে পোন প্ৰথম বাৰৰ বাবে উপলব্ধি কৰায়। *শোণিত কুঁৱৰী* নাটকৰ উষা, চিত্ৰলেখা,পত্ৰলেখা,আৰু *কাৰেঙৰ লিগিৰী* নাটকৰ শেৱালি, সুদৰ্শন, আদিৰ মুখত দিয়া গীতসমূহ চৰিত্ৰসমূহৰ মানৱীয় অনুভূতিৰ অভিনৱ প্ৰকাশ। নাটক দুখনত ব্যৱহৃত গীতসমূহে চৰিত্ৰসমূহ অধিক জীৱন্ত ৰূপত তুলি ধৰাৰ লগতে নাটকীয় সৌন্দৰ্য বৃদ্ধিত অৰিহণা যোগাইছে। পৰিৱৰ্তনকামী ফুল ফুলাই অসমীয়া নাট্য সাহিত্য জাতিস্কাৰ কৰাৰ বাবে আৰু তেওঁৰ গীতৰ মাধুৰ্যৰ বাবে অসমীয়া নাট্য জগতত জ্যোতিপ্ৰসাদ আগৰৱালা সদায়ে জিলিকি থাকিব। ❑

প্ৰসঙ্গ সূত্ৰ ঃ

গোহাঁই সাম্পা. জ্যোতিপ্ৰসাদৰ নাটক, পৃ. ১২
প্ৰাগুক্ত, পৃ.১৯
প্ৰাগুক্ত,পৃ. ৩২
প্ৰাগুক্ত,পৃ. ৫০
প্ৰাগুক্ত,পৃ. ৭৭
প্ৰাগুক্ত,পৃ. ৭৯
প্ৰাগুক্ত,পৃ. ৯১-৯২
প্ৰাগুক্ত,পৃ.১৩৯
প্ৰাগুক্ত,পৃ. ১৩০
প্ৰাগুক্ত ১৪৮

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

আগৰৱালা, জ্যোতিপ্ৰসাদ। *কাৰেঙৰ লিগিৰী*। অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ১৯৯৪
গোহাঁই, হীৰেন সম্পা.। *জ্যোতিপ্ৰসাদৰ নাটক*। অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০০৪
গোহাঁই, হীৰেন সম্পা.। *জ্যোতিপ্ৰসাদ ৰচনাৱলী*। অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০০৭
নেওগ, মহেশ্বৰ। *অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা* । চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, ১৯৯৫
বৰুৱা, প্ৰহ্লাদ কুমাৰ। *জ্যোতিমনীষা*। বনলতা, ২০০৯
শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*। সৌমাৰ প্ৰকাশ, ২০০০
শৰ্মা, হেমন্ত কুমাৰ। *অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত*। বীণা লাইব্ৰেৰী, ২০০৭
প্ৰাগুক্ত ১৪৮

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

আগৰৱালা, জ্যোতিপ্ৰসাদ। *কাৰেঙৰ লিগিৰী*। অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ১৯৯৪
গোহাঁই, হীৰেন (সম্পা)। *জ্যোতিপ্ৰসাদৰ নাটক*। অসম প্ৰকাশন পৰিষদ,২০০৪
গোহাঁই, হীৰেন (সম্পা)। *জ্যোতিপ্ৰসাদ ৰচনাৱলী*। অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০০৭
নেওগ, মহেশ্বৰ। *অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা* । চন্দ্ৰ প্ৰকাশ,১৯৯৫
বৰুৱা, প্ৰহ্লাদ কুমাৰ। *জ্যোতিমনীষা*। বনলতা, ২০০৯
ভট্টাচাৰ্য, বসন্ত কুমাৰ। *অসমীয়া নাটকৰ সমীক্ষা*। জাৰ্ণাল এম্প'ৰিয়াম,২০০২
ভৰালী, শৈলেন। *নাটক আৰু অসমীয়া নাটক*। বাণী প্ৰকাশ, ২০০৩
শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*। সৌমাৰ প্ৰকাশ, ২০২২
শৰ্মা, হেমন্ত কুমাৰ। *অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত*। বীণা লাইব্ৰেৰী, ২০০৭

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

নগেন শইকীয়াৰ 'আমেৰিকাত দহদিন' ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

কস্তুৰী বৰা

গাঁও - ঘিলাধাৰী বস্তি
ডাক - বৰপাম তিনিআলি
জিলা - বিশ্বনাথ, পিন - ৭৮৪১৭৫
৭৬৩৮০৭৩৬৪৫
kasturiborah431@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

মানুহ ভ্ৰমণবিলাসী। মানৱ সভ্যতাৰ ইতিহাসলৈ লক্ষ্য কৰিলে মানুহে জীৱন-নিৰ্বাহৰ বাবে খাদ্যৰ সন্ধানত, জীৱিকা নিৰ্বাহৰ বাবে বা আত্মৰক্ষাৰ স্বাৰ্থত কিবা কাৰণতে ঠাই সলনি কৰি ফুৰিছিল। মানুহে সমাজ পাতি বসবাস কৰাৰ লগে লগে বিভিন্ন কাৰণত বহু ঠাইলৈ ভ্ৰমণ কৰিবলৈ লয়। শিক্ষাৰ এক অংগৰূপে অন্যান্য সাহিত্যৰ দৰে ভ্ৰমণ সহিত্যৰো গুৰুত্ব অধিক। ভ্ৰমণ কাহিনীবোৰৰ আলোচনাৰ মাজেৰে আমি ন ন তথ্য আহৰণ কৰিব পাৰো। যাতায়তৰ সু-ব্যৱস্থা, বিদ্যায়তনিক কাৰণ, ব্যৱসায়ৰ তাগিদা আদি বিভিন্ন কাৰণত অসমীয়া মানুহৰ ভ্ৰমণ স্পৃহা অধিক হৈছে। ভ্ৰমণ অভিজ্ঞতাৰ বহুতো লেখকৰ ডায়েৰীয়ে গ্ৰন্থৰ আকাৰ লাভ কৰিছে। বহুকেইজন সাহিত্যিকৰ কলমৰে প্ৰাণ পোৱা ভ্ৰমণ কাহিনীয়ে অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্য লৈ বিশেষ বৰঙণি আগবঢ়াইছে। দুখনকৈ ভ্ৰমণ কাহিনীৰ ৰচনাৰে অৱদান আগবঢ়োৱা এগৰাকী সহিত্যিক হ'ল নগেন শইকীয়া। তেওঁ বিদ্যাতনিক ক্ষেত্ৰত অৰ্থাৎ সাহিত্য সংস্কৃতিৰ কামত আমেৰিকা আৰু চীন দেশলৈ গৈছে। এই দেশ দুখন ভ্ৰমণ কৰি 'আমেৰিকাত দহদিন' আৰু 'মহাচীনৰ দিনলিপি' গ্ৰন্থ দুখন ৰচনা কৰিছে। এই আলোচনাটিত নগেন শইকীয়াৰ 'আমেৰিকাত দহদিন' গ্ৰন্থখনৰ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হ'ব।

বীজ শব্দ ঃ

ভ্ৰমণ, পৰিবেশ সাহিত্য, আমেৰিকা।

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

মানুহ স্বভাৱ প্ৰসূতভাৱে ভ্ৰমণ বিলাসী। সকলো মানুহৰে ভ্ৰমণৰ হাবিয়াস যথেষ্ট পৰিমাণে থাকে। অৱশ্যে প্ৰত্যেক মানুহৰে ভ্ৰমণৰ উদ্দেশ্য বেলেগ বেলেগ। পৃথিৱীৰ মানৱ সভ্যতাৰ ইতিহাসলৈ লক্ষ্য কৰিলে মানুহে জীৱন নিৰ্বাহৰ বাবে খাদ্যৰ সন্ধানত, জীৱিকা নিৰ্বাহৰ বাবে বা আত্মৰক্ষাৰ স্বাৰ্থত কিবা কাৰণত ঠাই সলনি কৰি ফুৰিছিল। মানুহে সমাজ পাতি বসবাস কৰিবলৈ লোৱাৰ পিছত আমোদ লাভৰ বাবে চিকাৰ কাৰ্য কৰিবলৈ বিভিন্ন ঠাই ভ্ৰমণ কৰিছিল। সকলো মানুহৰে ভ্ৰমণৰ দুৰ্বাৰ আকাংক্ষা থাকে। ৰজা-মহাৰজাসকলৰ দিনতো ৰাজ্য বিস্তাৰৰ খাতিৰত বেপাৰ-বাণিজ্যৰ বাবে সু-সম্পৰ্ক ৰক্ষাৰ স্বাৰ্থত ভ্ৰমণৰ ধাৰা চলি থাকিল। ক্ৰমান্বয়ে লাহে লাহে মানৱ সভ্যতাৰ বিকাশ

ঘটিল। বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তিৰ ন ন আৱিষ্কাৰৰ দ্ৰুত প্ৰসাৰে সমগ্ৰ পৃথিৱীখনৰ দূৰত্ব কমাই এখন গোলকীয় গাঁৱত পৰিণত কৰিলে। এনে হোৱাৰ ফলত কম সময়তে গোটেই পৃথিৱীখন ভ্ৰমণ কৰাত সহজ হৈ পৰিছে। মানুহৰ ভ্ৰমণৰ হেঁপাহ বিভিন্নধৰণৰ হয়, কোনোৱে ভ্ৰমণ কৰে নয়নৰ তৃপ্তিৰ বাবে, কোনোৱে শিক্ষা বা জ্ঞান লাভৰ বাবে, কোনোৱে কিবা আৱিষ্কাৰৰ আগ্ৰহত, কোনোৱে আত্মাৰ আনন্দৰ বাবে, কোনোৱে স্বাস্থ্যজনিত কাৰণত। ভ্ৰমণৰ জৰিয়তে লাভ কৰা অভিজ্ঞতাৰ সোৱাদ নিজৰ মাজতে সামৰি নাৰাখি আনক ভাগ দিয়াৰ হেঁপাহতে ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ সৃষ্টি হৈছে।

কোনো এজন লেখকে ভ্ৰমণৰ বাস্তৱ অভিজ্ঞতাক নিজস্ব ৰচনা শৈলীৰে, ভাষাৰ লালিত্যৰে সাহিত্য গুণ প্ৰয়োগ কৰি দিয়া লিখিত ৰূপক ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ অন্তৰ্গত কৰিব পাৰি। ইংৰাজীত ভ্ৰমণ বিষয়ক সাহিত্য বুজাবলৈ 'Travelogue, Travel writing, Travel Literature' আদি শব্দ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। অভিধাগত দিশৰ পৰা 'Travelogue' শব্দৰ অৰ্থ হৈছে ভ্ৰমণকাৰীৰ দ্বাৰা ভ্ৰমণ কৰা স্থান বা ভ্ৰমণৰ অভিজ্ঞতাৰ বিষয়ে প্ৰকাশ পোৱা এখন চলচ্চিত্ৰ, বা এখন কিতাপ নাইবা এটা বক্তৃতা'।[১] অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ ঐতিহ্য বৰ বেছি পুৰণি নহয়। অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ প্ৰথম নিদৰ্শন ৰূপে প্ৰাচীন যুগৰ 'বৃন্দাবন চৰিত্ৰ'ৰ কথা ক'ব পাৰি। আহোম স্বৰ্গদেউ জয়ধ্বজ সিংহৰ ৰাজত্বকালত ৰামমিশ্ৰই এই ভ্ৰমণ বিষয়ক পুথিখন ৰচনা কৰে। ৰুদ্ৰ সিংহৰ দিনত ত্ৰিপুৰা লৈ যোৱা অৰ্জুন দাস বৈৰাগী আৰু ৰত্ন কন্দলীৰ দ্বাৰা ৰচিত 'ত্ৰিপুৰা বুৰঞ্জী'ও এখন উল্লেখযোগ্য ভ্ৰমণ বিষয়ক বুৰঞ্জী সাহিত্য। আধুনিক অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্যই পাতনি মেলিছিল অৰুণোদইৰ পাতত। আধুনিক অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ পথপ্ৰদৰ্শক ৰূপে গুণাভিৰাম বৰুৱাৰ কথা উল্লেখ কৰিব পাৰো। তেওঁৰ 'সৌমাৰ ভ্ৰমণ' বুলি জোনাকীত প্ৰকাশিত ভ্ৰমণ বৃত্তান্ত, প্ৰকৃত অসমীয়া ভ্ৰমণ বিষয়ক ৰচনাৰ প্ৰথম নিদৰ্শন বুলিব লাগিব। পৰৱৰ্তী সময়ত অসমীয়া ভ্ৰমণ বিষয়ক সাহিত্যৰ ধাৰাত ভাৰত ভ্ৰমণ, বিদেশ ভ্ৰমণ সম্পৰ্কীয় বহু ৰচনাই, এই ধাৰাক সমৃদ্ধ কৰে। তাৰে ভিতৰত উল্লেখযোগ্য কেইখনমান ভ্ৰমণ কাহিনী হৈছে- জ্ঞানদাভিৰাম বৰুৱাৰ 'বিলাতৰ চিঠি', আনন্দচন্দ্ৰ আগৰৱালাৰ 'ব্ৰহ্মযাত্ৰীৰ ডায়েৰী', হেম বৰুৱাৰ 'সাগৰ দেখিছা', 'ৰঙা কৰবীৰ ফুল', বিৰিঞ্চিকুমাৰ বৰুৱাৰ 'প্ৰফেচাৰ বৰুৱাৰ চিঠি', সুব্ৰতা বৰুৱাৰ 'হিমতীৰ্থ বদ্ৰীনাথ', হেমন্ত কুমাৰ শৰ্মাৰ 'কাবেৰীৰ পাৰে পাৰে', চন্দ্ৰপ্ৰসাদ শইকীয়াৰ 'আমেৰিকাৰ চিঠি', নগেন শইকীয়াৰ 'আমেৰিকাত দহদিন' ইত্যাদি।

আধুনিক অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ ভিতৰত নগেন শইকীয়াৰ আমেৰিকা ভ্ৰমণৰ অভিজ্ঞতাৰ ওপৰত ৰচিত ভ্ৰমণ বৃত্তান্ত 'আমেৰিকাত দহদিন' এখন উল্লেখযোগ্য ভ্ৰমণ কাহিনী। বিভিন্ন অভিজ্ঞতাৰে পৰিপুষ্ট এই ভ্ৰমণ কাহিনীখনত লেখকৰ আমেৰিকাৰ সম্পৰ্কে কৰা বিৱৰণৰ আলোচনা কৰা হৈছে।

০.০১ অধ্যয়নৰ লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্য ঃ

ভ্ৰমণ সাহিত্যত সঞ্চিত হৈ থাকে লেখকৰ বিশেষ ঠাই ভ্ৰমণৰ ভৰপুৰ অভিজ্ঞতা। লেখকৰ ব্যক্তিগত অভিজ্ঞতাৰ এখন ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ যোগেদি পাঠকে কোনো এখন বিশেষ ঠাইৰ লগত চিনাকি হোৱাৰ লগতে, সেই ঠাইৰ লোকৰ জীৱন ধাৰণৰ পদ্ধতি, জীৱিকা নিৰ্বাহ, সমাজ ব্যৱস্থা, শিক্ষা-ব্যৱস্থা আদি বিভিন্ন দিশ সম্পৰ্কে জানিব পাৰে। নগেন শইকীয়াৰ 'আমেৰিকাত দহদিন' গ্ৰন্থখনটো এনে বহু দিশ উন্মোচিত হৈছে, সেই দিশসমূহৰ সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰাই আমাৰ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য।

০.০২ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ ধাৰাত নগেন শইকীয়াৰ 'আমেৰিকাত দহদিন' ভ্ৰমণ গ্ৰন্থখনত, তেওঁৰ আমেৰিকা ভ্ৰমণৰ বিভিন্ন ৰসাল অভিজ্ঞতা সন্নিৱিষ্ট হৈ আছে। ব্যক্তিগত অভিজ্ঞতাৰ সোৱাদ আনক দিবলৈ গৈ ৰচনা কৰা এই গ্ৰন্থখনত আমেৰিকাত দহদিনৰ দিনলিপিত বহুতো দিশ, তেওঁ উন্মোচিত কৰিছে। সেয়ে এই ভ্ৰমণ গ্ৰন্থখনৰ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আছে।

০.০৩ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

এই অধ্যয়নত নগেন শইকীয়াৰ 'আমেৰিকাত দহদিন' ভ্ৰমণ গ্ৰন্থখনৰ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন কৰা হ'ব।

০.০৪ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

প্ৰস্তাৱিত গৱেষণা পত্ৰখনত নগেন শইকীয়াৰ ভ্ৰমণ গ্ৰন্থ 'আমেৰিকাত দহদিন'ৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক আৰু বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

০.০৫ পূৰ্বকৃত অধ্যয়নৰ সমীক্ষা ঃ

নগেন শইকীয়াৰ ভ্ৰমণ গ্ৰন্থ 'আমেৰিকাত দহদিন'ৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে বৰ্তমান সময়লৈকে এই সম্পৰ্কে হোৱা আলোচনাৰ এটি সমীক্ষা কৰা হৈছে। এই ক্ষেত্ৰত ভূপেন শইকীয়াৰ মুখ্য সম্পাদনা আৰু চিত্ৰজিৎ

শইকীয়াৰ সম্পাদনাত প্ৰকাশিত 'অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্য সমীক্ষা' (২০১৮) গ্ৰন্থখনত নগেন শইকীয়াৰ ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ বিষয়ে আলোচনা আগবঢ়োৱা হৈছে। এই গ্ৰন্থখনৰ পিছতে ভ্ৰমণ বিষয়ক আলোচনা হোৱা গ্ৰন্থ স্মৃতিৰেখা ভূঞাৰ 'আধুনিক অসমীয়া ভ্ৰমণ ঃ ঐতিহ্য আৰু শিল্প' (২০২০)তো ভ্ৰমণ সাহিত্য সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হৈছে।

০.০১ বিষয়বস্তুৰ অধ্যয়ন ঃ

অসমীয়া সাহিত্যৰ একাধাৰে গল্পকাৰ, ঔপন্যাসিক, শিক্ষাবিদ, সমালোচক, সম্পাদক আৰু অধ্যাপক হৈছে নগেন শইকীয়া। ১৯৩৯ চনৰ ১১ ফেব্ৰুৱাৰীত গোলাঘাট জিলাৰ হাতীয়েখোৱা নামৰ ঠাইত তেখেতৰ জন্ম হয়। শৈক্ষিক জগতখনত শ্ৰম, অধ্যাৱসায়, সাধনাৰ বলত ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়ত তেওঁ সাহিত্যৰথী লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ আসন শুৱনি কৰে। নগেন শইকীয়াৰ তত্বাৱধানত বহুতো গৱেষকে বিভিন্ন বিষয়ত গৱেষণা কৰিছে। তেখেতে তথ্য সমৃদ্ধ বিভিন্ন গ্ৰন্থ সম্পাদনা কৰি উলিয়াইছে তাৰে ভিতৰত- জোনাকী, আসাম বন্ধু, বেজবৰুৱাৰ ৰচনাৱলী, মণিৰাম দেৱানৰ বুৰঞ্জী বিবেকৰত্ন আদি। সুদীৰ্ঘ দিন ধৰি তেওঁ অসম সাহিত্য সভাৰ লগত ঘনিষ্টভাৱে জড়িত। তেখেতৰ 'মিতভাষ' সাহিত্য জগতলৈ এক বিশেষ অৱদান। নগেন শইকীয়াই বিভিন্ন সময়ত দেশ তথা দেশৰ বাহিৰত বৌদ্ধিক কৰ্মৰ খাতিৰত বিভিন্ন ঠাই ভ্ৰমণ কৰিছে, সভা সমিতিত নিমন্ত্ৰিত বক্তা হিচাপে বক্তৃতা প্ৰদান কৰিছে। সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ কামৰ ক্ষেত্ৰত তেওঁ আমেৰিকা, চীন দেশ ভ্ৰমণ কৰিছে। এই দেশ দুখনৰ ভ্ৰমণৰ অভিজ্ঞতাৰ ভিত্তিতেই আমেৰিকাক লৈ 'আমেৰিকাত দহদিন' আৰু চীন দেশকলৈ 'মহাচীনৰ দিনলিপি' গ্ৰন্থ দুখন ৰচনা কৰিছে। অধ্যয়নৰ পৰিসৰলৈ লক্ষ্য ৰাখি তেখেতৰ 'আমেৰিকাত দহদিন' গ্ৰন্থখন আলোচনা কৰাৰ চেষ্টা কৰা হৈছে।

নগেন শইকীয়াৰ 'আমেৰিকাত দহদিন' গ্ৰন্থখন ১৯৯৩ চনত গ্ৰন্থ আকাৰে প্ৰকাশ পায়। তেখেতৰ গ্ৰন্থৰ পাতনিত লিখা অনুসৰি 'অগ্ৰদূত' কাকতত 'আমেৰিকাত দহদিন' ছোৱা-ছোৱাকৈ প্ৰকাশ হৈছিল, আৰু আমেৰিকাৰ সেইদিন কেইটাৰ অভিজ্ঞতা লিখোতে তেওঁ চৌৰিছ ঘন্টাই নিজকে অভিজ্ঞতা বুটলাৰ বাবে সচেতন কৰি ৰাখিছিল। তেওঁ উল্লেখ কৰা অনুসৰি আমেৰিকাৰ ভ্ৰমণসূচী তেৰদিনীয়া আছিল যদিও গ্ৰন্থখনৰ নাম শুৱনি কৰিবলৈ 'আমেৰিকাত দহদিন' বুলি নামাকৰণ কৰিছে। তেওঁৰ এই গ্ৰন্থখন ভ্ৰমণসূচীৰ অন্তত লেখা।

নগেন শইকীয়াই গ্ৰন্থখন ১৪৩ পৃষ্ঠাত প্ৰথম দিন, দ্বিতীয় দিন হিচাপে ক্ৰমে দহটা দিনৰ অভিজ্ঞতাৰ বৰ্ণনা কৰিছে। প্ৰথম দিনটোৰ বৰ্ণনাৰ আৰম্ভণি ফ্ৰষ্টৰ কবিতাৰ এটি পংক্তিৰ মাজেৰে কৰিছে। লেখকে আমেৰিকালৈ যাত্ৰা কৰাৰ আৰম্ভণিৰ সময়ছোৱাত তেওঁ ল'ৰালিত শুনা আমেৰিকাৰ কথাৰ স্মৃতিয়ে উনুকিয়াইছে-"আমাৰ দেশত যেতিয়া দিন হয়, আমেৰিকাত ৰাতি হয়।"[২] সৰুতে শিক্ষকে কোৱা আমেৰিকা বিষয়ক কথাবোৰে শিশু মনত উৎসুকতাৰ সৃষ্টি কৰিছিল। আমেৰিকালৈ যোৱাৰ আগতে তেওঁৰ ফূৰ্তি, শংকা আৰু অলপ অহংভাৱ অহাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। এই মনোভাৱ ব্যক্ত কৰিবলৈ তেওঁ এনেদৰে কৈছে-"বেজবৰুৱাৰ খহটা ডিমৰু সত্ৰৰ সত্ৰাধিকাৰৰ লগত যোৱা পাঁচনিৰ কথা মনত পৰা নাই নে সেই যে কলিকতাত ঘোঁৰা গাড়ীত উঠি মনত মিচিক-মাচক কৈ হাঁহি খিড়কীৰ মাজে মাজে চাই গৈছিল কেনেবাকৈ লগৰ ভকত কোনোবা কোনোবাই দেখা হ'লে কেনে হ'লহেঁতেন বুলি ভাবি।"[৩] লেখকে আমেৰিকা ভ্ৰমণৰ সৈতে ল'ৰালিৰ প্ৰথম ৰেলগাড়ীৰ যাত্ৰাৰ আনন্দৰ অভিজ্ঞতাক ৰিজাইছে।

অসমৰ ইমূৰৰ পৰা সিমূৰলৈ আৰু ভাৰতবৰ্ষৰ বিভিন্ন প্ৰান্তলৈ বিদ্যায়তনিক দিশত ভ্ৰমণ কৰা লেখকৰ আমেৰিকা ভ্ৰমণৰ উদ্দেশ্য আছিল-'উত্তৰ আমেৰিকা অসম সংঘ'ই উত্তৰ আমেৰিকাৰ উত্তৰ পশ্চিম চুকৰ ছিয়াটলত আয়োজন কৰা অনুষ্ঠান 'অসমীয়া ভাষা সাহিত্যলৈ আমেৰিকান মিছনেৰিসকলৰ অৱদান' সম্পৰ্কে বক্তৃতা প্ৰদান আৰু ড° কৃপানাথ বৰাৰ ব্যক্তিগত চিঠি। এই কৃপানাথ বৰাৰ প্ৰচেষ্টাতে আমেৰিকাত অসম সাহিত্য সভাৰ শাখা এটিও প্ৰতিষ্ঠিত হৈছে বুলি তেওঁ গ্ৰন্থখনত উল্লেখ কৰিছে।

আমেৰিকালৈ যিহেতু লণ্ডনৰ মাজেৰে বিমানেৰে যাব লাগে, সেয়ে লেখকৰ যাত্ৰাৰ ১২ ঘন্টাৰ আগত, ২৮ জুনৰ দিনা আবেলি ৪ বজাত তেখেতে ভিছাসহ পাছপোৰ্ট, এয়াৰ ইণ্ডিয়াৰ টিকট, ছহেজাৰ টকাৰ আমেৰিকান ডলাৰ চেক লৈ যাত্ৰাৰ বাবে সাজু হয়। লেখকৰ এই যাত্ৰাত শুভাকাংক্ষী হিচাপে বহুতে শুভেচ্ছা দিয়ে। এয়াৰ ইণ্ডিয়াত প্ৰথমবাৰৰ বাবে যাত্ৰা কৰা লেখকে যাত্ৰা পথত পাকিস্তান, আফগানিস্তান, ৰাছিয়া আৰু জাৰ্মানীৰ ওপৰেদি বিমান যোৱাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। হিন্দুকোষ পৰ্বতৰ বৰফ আবৃত চিক্‌মিকাই থকা শৃংগ, ওখ-চাপৰ শিলৰ ঢৌ, বৈ থকা নৈখন বিমানৰ পৰা তেওঁৰ ৰছীৰ দৰে লাগিছে।

এয়াৰ ইণ্ডিয়া বিমানৰ সহযাত্রী হিচাপে লেখকে লণ্ডনলৈ যোৱা ইংৰাজ ডেকা-গাভৰুৰ সৈতে কৰা কথোপকথনত তেওঁলোকে ভাৰত ফুৰাৰ অভিজ্ঞতাৰ কথা বৰ্ণনা কৰিছে। এমাহৰ ছুটিলৈ ফুৰিবলৈ অহা ডেকা-গাভৰুহালে ভাৰতত পোৱা উৎকট গৰম আৰু টেক্সিৱালা ফেৰীৱালাই টুৰিষ্টৰ নামত অধিক ধন সংগ্ৰহৰ বিৰক্তিৰ কথা কৈছে, যিটো লণ্ডনত কোনো পধ্যেই কৰিব নোৱাৰে বুলি উল্লেখ কৰিছে।

লণ্ডনৰ পৰা নিউয়ৰ্কলৈ ৬ ঘন্টা বাট যাওঁতে পঢ়িবলৈ উলিয়াই লোৱা 'The Times' বাতৰি কাকতৰ শিৰোনামাত সেই সময়ৰ- গৰ্বাচভে ঘোষণা কৰা নতুন বৈপ্লৱিক ধাৰা, ছোভিয়েট ৰাছিয়াৰ অৰ্থনৈতিক সংকট সম্পৰ্কে উল্লেখ কৰিছে। গৰ্বাচভৰ এই ঘোষণাই গণতান্ত্রিক পদ্ধতি প্রয়োগ কৰি ৰাছিয়াৰ সমাজক স্বাধীন সমাজলৈ পৰিবৰ্তন কৰিব পাৰিব, যিটো এটা ডাঙৰ পদক্ষেপ বুলি তেওঁ উল্লেখ কৰিছে।

লেখকে ৰালফ ষ্টিভেনছোৰ কবিতাৰ পংক্তিৰে দ্বিতীয় দিনৰ অভিজ্ঞতাৰ বৰ্ণনা আৰম্ভ কৰিছে। লেখকে আবেলি ৩.৪৫ বজাত আমেৰিকাত নামিয়েই অনুভৱ কৰিছে তাৰ পাৰিপাট্য আৰু শৃংখলাৰ কথা। আমেৰিকাৰ আন্তৰ্জাতিক বিমান বন্দৰৰ ৰানৱেত বহুতো বিমান শাৰীপাতি ৰখাই উৰিবলৈ সাজু কৰিছে, কিছুমান বিমান উৰিছে, উৰি থকাৰ দৃশ্য দেখি উল্লেখ কৰিছে যে ইমান ব্যস্ততাৰ মাজতো সেই ঠাইত অকণো হুলস্থুল নাই, শৃংখলাবদ্ধভাৱে সকলোৱে নিজৰ কাম কৰি আছে। বিমান বন্দৰৰ পৰা কৃপানাথ বৰাই তেওঁক নিউ জাৰ্ছিৰ বাসভৱনলৈ আগবঢ়াই লৈ যায়। লেখকে উল্লেখ কৰিছে যে গাড়ীত উঠা আগফালৰ দুজনে চিট বেল্ট মাৰিব লাগে আৰু ৫৫ কিঃমিঃ বেগতকৈ গাড়ী বেছি জোৰে চলালে পুলিচৰ ৰাডাৰত ধৰা পৰি জৰিমনা ভৰিব লগাৰ কথা কৈছে। আমেৰিকাৰ মসৃণ পথত যাত্ৰা কৰোতে লেখকৰ বাৰে বাৰে অসমৰ আলি-বাটবোৰলৈ মনত পৰিছে। লেখকে আমেৰিকাৰ নিউজাৰ্ছিলৈ যোৱাৰ বাটত তাৰ পৰিপাটিতা, পৰিচ্ছন্নতা আৰু প্রাকৃতিক সৌন্দৰ্য দেখি এক সুকীয়া শান্তি অনুভৱ কৰিছে। কৃপানাথ বৰাই তেওঁক সেইদিনাই নিউয়ৰ্ক চাবলৈ লগ লওতে, যাত্ৰাত আমেৰিকাৰ বাটবোৰ দেখি উল্লেখ কৰিছে-"মানুহৰ গাত যিমান সিৰা-উপসিৰা আছে আমেৰিকাৰ ঠাইত তাতকৈয়ো বেছি বাট-পথ আছে.....।"[৪] লেখকে উল্লেখ কৰা অনুসৰি আমেৰিকাত আমাৰ দেশৰ দৰে সঘনে আলিবাটৰ ক্রছিং নাই। ক্রছিঙৰ সলনি ফ্লাইঅভাৰ বা সুৰংগ আদি সজি সোঁহাত বাওঁহাত দুয়োফালে অহা-যোৱাৰ সুচল পথ আছে। লেখকে টুৰিষ্ট বাছেৰে নিউইয়ৰ্ক চাবলৈ যাওঁতে তেওঁৰ হাতৰ মোনাটো হেৰায়। হেৰোৱা মোনাটোত ভিছা, পাছপোৰ্ট, ঘূৰি অহাৰ টিকট আৰু ধন থকাৰ বাবে অসুবিধাত পৰাত পুলিচৰ ওচৰ চাপে আৰু আমেৰিকান পুলিচৰ তৎপৰতাত কেইঘন্টামানৰ ভিতৰতে তেখেতৰ পাছপোৰ্টৰ কাম হৈ উঠে। লেখকে আমেৰিকান পুলিচৰ তাৎক্ষণিক সহায়ৰ শলাগ লৈছে। আমেৰিকাত ডিছপ'জেল বস্তুৰ ব্যৱহাৰ অধিক। গতিকে আৱৰ্জনা সম্পৰ্কীয় সমস্যা তাত বৈছিকৈ দেখা যায়, বস্তুবোৰৰ ৰি-চাইক্লিঙৰো ব্যৱস্থা আছে। আমেৰিকাৰ ভিক্ষাৰীয়ে দুবেলা-দুমুঠি খাবলৈ ভিক্ষা কৰিব নালাগে, চৰকাৰে তেনে লোকক একোখন কাৰ্ড বনাই দিছে যাৰ জৰিয়তে তেওঁলোকে খাদ্য গ্ৰহণ কৰিব পাৰে।

হুইট্ মেনৰ কবিতাৰ ফাঁকিৰে তৃতীয় দিনৰ আমেৰিকাৰ অভিজ্ঞতা লেখকে বৰ্ণনা কৰিছে। যন্ত্রনির্ভৰ আমেৰিকা হেন দেশত ঘৰৰ সকলো কাম গৃহস্থই নিজে কৰিবলগীয়া হোৱা দেখি লেখকে আশ্চৰ্য প্ৰকাশ কৰিছে। ইয়াৰ একো একোটা অঞ্চলত থকা ঘৰবোৰৰ ৰং, বেৰৰ ৰং, টাইল্‌চৰ ৰং একে হোৱাটো বাধ্যতামূলক। আমেৰিকাত ৰেডিঅ', টেলিভিছন ব্যক্তিগত খণ্ডৰ দ্বাৰা পৰিচালিত। ইয়াত বেছিভাগ প্রতিষ্ঠানেই ব্যক্তিগতখণ্ডৰ।

এমিলি ডিকিনছনৰ কবিতাৰ পংক্তিৰে লেখকে চতুৰ্থ দিনৰ আৰম্ভণি কৰিছে। লেখকে ভাৰত আৰু আমেৰিকাৰ সমাজ ব্যৱস্থাৰ পাৰ্থক্য বিচাৰ কৰি উল্লেখ কৰি কৈছে- "আমাৰ দেশত প্ৰতিজন ব্যক্তি পৰিয়াল তথা সমাজৰ একোটা অংশ। এতেকে পৰিয়াল আৰু সমাজৰ প্রতি তেওঁৰ কৰণীয় আছে। কিন্তু, আমেৰিকাত প্রতিজন ব্যক্তিয়েই একক। সেইবাবে কাৰো ওপৰৰত পৰিয়াল বা সমাজৰ অনুশাসন নচলে, চলে কেৱল আইনৰ আৰু সামাজিক আচৰণ বিধিৰ।"[৫] আমেৰিকাত যোগ্যতাৰ ভিত্তিতহে ইয়াৰ চাকৰিৰ গুৰুত্ব থাকে। সেয়ে, তাত চাকৰিৰ ক্ষেত্ৰত নিৰাপত্তা নিশ্চিত নহয়। ওঠৰ বছৰ হ'লে আমেৰিকাত পিতৃ-মাতৃৰ পৰা আঁতৰি ল'ৰা-ছোৱালীয়ে স্বতন্ত্ৰভাৱে থকাৰ সুবিধা লাভ কৰে। লেখকে সেইদিনাই দিনৰ এক বজাত উত্তৰ আমেৰিকাৰ অসম সংঘৰ বাৰ্ষিক অধিৱেশন উপলক্ষে নিউজাৰ্ছিৰ নেৱাৰ্ক বিমান বন্দৰৰ পৰা ছিয়াটললৈ যাত্ৰা আৰম্ভ কৰে। এই যাত্ৰাত লেখকে ঠাইবোৰৰ পৰিষ্কাৰ-পৰিচ্ছন্নতাৰ কথা কৈ তাত আমাৰ দেশৰ দৰে কোনো পোষ্টাৰ, শ্ল'গান নথকাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। ট্ৰেভেলাৰ্ছ ইনৰ

চোতালৰ দ্বিতীয় মহলাত ৰিহা পিন্ধা অসমীয়া মহিলাই তেওঁক আদৰণি জনাবলৈ ৰৈ আছিল। ছান ফ্রান্সিছকো, লছ এঞ্জেলিছ, ডেষ্ট্রেইট, কোৰোলিনা, টেক্সাছ, কালিফোর্ণিয়া, চিকাগো, নিউইয়র্ক, কোনোবা নিউজার্ছি আদিৰ পৰা বিভিন্নজন অসমীয়াই জাতীয় সাজ পৰিধান কৰি সভাত উপস্থিত হৈছিল। অসমৰ পৰা অহা এই প্ৰৱাসী অসমীয়াই আমেৰিকাত এটা সংঘ গঠন কৰি অসমৰ হকে চিন্তা কৰিছে। জাতিটোৰ কুশল কামনা কৰিছে।

ৰবীন্দ্রনাথৰ কবিতাৰ পংক্তিৰে পঞ্চম দিনৰ অভিজ্ঞতা লেখকে বর্ণনা কৰিছে। লেখকে ছিয়াটলৰ সুন্দৰ প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ বর্ণনা কৰিছে। তেওঁ উল্লেখ কৰিছে যে আমেৰিকাৰ ল'ৰা-ছোৱালীয়ে পঢ়াৰ মাজতে অংশকালীনভাৱে হোটেল, ৰেষ্টোৰা বা অন্যান্য কাম কৰি নিজৰ হাত খৰছ উলিয়ায়। লেখকৰ মতে, ইয়াৰ মানুহবোৰ ইমানহেঁ ব্যস্ত যে ভাৰতৰ দৰে ৰাজনীতিৰ ক্ষেত্ৰত লাগি থাকিবলৈ তেওঁলোকৰ সময়ৰ অভাৱ হোৱা হেতু ৰেডিঅ' বা টি.ভি.ৰ বাতৰি চায়ে তেওঁলোকে দেশৰ খবৰ লয়। লেখকৰ জৰিয়তে আমি জানিব পাৰিছো যে অসমৰ হকে চিন্তা কৰা চাৰিটা অনুষ্ঠান আমেৰিকাত আছে, সেইকেইটা হৈছে- অসমীয়া মানুহৰ উত্তৰ আমেৰিকা অসম সংঘ (AANA), আছাম ফাউণ্ডেচন অৱ নৰ্থ আমেৰিকা (AFNA ঃ আফনা), আছাম ছোচাইটি অৱ আমেৰিকা (ASAঃ আছা) আৰু অসম সাহিত্য সভা। অসম আন্দোলনৰ সময়ত গঠিত হোৱা আফনাই অসমক যথা সম্ভৱ সহায় কৰিছিল। ইয়াৰ উপৰি আন্নাৰ সদস্যসকলেও পাৰে মানে সহায়ৰ হাত আগবঢ়াইছিল। আমেৰিকাত বাস কৰা প্ৰবাসী অসমীয়া সকলে বিভিন্ন প্ৰতিযোগিতামূলক বৃত্তিৰ জৰিয়তে শিক্ষাগ্ৰহণ কৰি তাৰ গ্ৰীণ কাৰ্ড হ'লডাৰ অৰ্থাৎ আমেৰিকাৰ নাগৰিক হৈছে। লেখকে উল্লেখ কৰিছে যে আমেৰিকাৰ প্ৰবাসী অসমীয়াসকলে অসমীয়া আখৰ জোঁটনিৰ সৰলীকৰণতাত উৎসাহ পাইছে। আমেৰিকাৰ পৰিৱেশত ঘৰ-দুৱাৰৰ পৰা ভাষালৈকে সকলোতে সৰলীকৃত ৰূপ বেছি। সভাত ভি.ডি.অ' কেছেটত দেখা অসমীয়া সংস্কৃতি প্ৰবাসী অসমীয়া সকলওে তাত সুন্দৰভাৱে ধৰি ৰখাৰ উল্লেখ লেখকে কৰিছে। বিহুৰ পিঠা-পনাৰ ব্যৱহাৰ কৰি, মহিলাই ৰিহা-মেখেলা পিন্ধি, পুৰুষে ধুতি-গামোচা লৈ, ঢোল-পেঁপা, গগণা বজাই একগোট হৈ নিজৰ সংস্কৃতিৰ প্ৰতি থকা অনুৰাগ প্ৰকাশ কৰে। কোনো কোনো অনুষ্ঠানত নাম প্ৰসংগও কৰে, জন্ম শুদ্ধিও পাতে।

লেখকে নিমন্ত্ৰিত অতিথি হিচাপে বক্তৃতা দিয়াৰ পাছত ষষ্ঠ দিনটোৰ অভিজ্ঞতা বৰ্ণনা কৰিছে। সেইদিনা লেখকৰ বক্তৃতাৰ বিষয় আছিল-"Contribution of the American Baptist Missionaries towards the development of Modern Assamese Language and Literature"[৬] লেখকে মূল বিষয়ৰ বক্তৃতা অসমীয়াত দিয়াৰ উপৰি সভাৰ সদস্যৰ অনুৰোধত সেই সময়ৰ অসমৰ অৱস্থাও বৰ্ণনা কৰিছে। লেখকে বক্তৃতাটোত মিছনেৰীসকলে অসমীয়া ভাষাৰ পুনৰ প্ৰতিষ্ঠাৰ ক্ষেত্ৰত, অসমীয়া ভাষাত পুথি প্ৰণয়ন কৰি, অভিধান প্ৰস্তুত কৰি ভাষাটোক পুনৰোজ্জীৱিত কৰি তুলিলে। অৰুণোদয় কাকতৰ যোগেদি মিছনেৰীসকলে সমগ্ৰ বিশ্বত অসমীয়া ভাষা সাহিত্যক চিনাকি কৰোৱা ইত্যাদি কথাৰ উপৰি আমেৰিকাত অসমীয়া জাতীয় চেতনাৰ স্বাৰ্থত গঢ়ি উঠা অনুষ্ঠান আন্না, আফনা আদিয়ে বৰ্তমানে অসমীয়া জাতিৰ উন্নতিৰ ক্ষেত্ৰত অনুপ্ৰেৰণা দিলিহে প্ৰকৃত সহায় হ'ব বুলি লেখকে উল্লেখ কৰিছে। লেখকে প্ৰবাসী অসমীয়াসকলক আমেৰিকাত থকা শিক্ষা বিষয়ক বিভিন্ন কথা জীৱিকা সম্পৰ্কীয় তথ্য, বিজ্ঞানৰ ন ন উদ্ভাৱনৰ বিষয়ে লিখি অসমীয়া মানুহক জনাৰ সুবিধা কৰি দিবলৈ অনুৰোধ জনাইছে।

লেখকে আকৌ Frost ৰ কবিতাৰ শাৰীৰে সপ্তম দিনৰ অভিজ্ঞতাৰ আৰম্ভণি কৰিছে। লেখকে ছিয়াটলৰ পৰা ষষ্ঠদিনা ৱাশ্বিংটনৰ ৰাজধানী অলিম্পিয়ালৈ যাত্ৰা কৰে। ৱাশ্বিংটন সোমোৱাৰ আগত লেখকৰ মনোভাৱ আছিল যে ৰাস্তাত গাড়ীৰ ভীৰ, দাঁতিত প্ৰাসাদৰ লানি দেখিবলৈ পাব, কিন্তু তেওঁ গাড়ী আৰু প্ৰাসাদৰ পৰিৱৰ্তে দেখিলে দেৱদাৰু, ৰেষ্টান ফাৰ, ডগলাছ আদি গছৰ অৰণ্যৰ মাজত থকা এখন কেপিটেল। লেখকে উল্লেখ কৰা অনুসৰি ৱাশ্বিংটন ৰাজ্যৰ এছেম্বলি হল জনমানসৰ পৰা আঁতৰত মাৰ্বলৰ কাৰুকাৰ্যৰে খচিত। সন্মুখত হাইকোৰ্টৰ দৰে টেম্পল অৱ জাষ্টিছ। লেখকে ড° বৰা আৰু শ্ৰীমতী বৰাৰ সৈতে সপ্তম দিনাই মাউন্ট ৰেইনিয়াৰলৈ যাত্ৰা কৰে। এই যাত্ৰাত লেখকে শস্যৰ পথাৰ, ঠায়ে ঠায়ে ছবি সদৃশ কিছুমান কাঠৰ সৰু ঘৰ, সেৰেঙা বসতি দেখি তেওঁৰ টম খুড়াৰ জুপুৰীলৈ মনত পৰিছে। আমেৰিকাৰ গাঁওবোৰ লেখকে উল্লেখ কৰা ধৰণৰেই।

অষ্টম দিনৰ অভিজ্ঞতাত লেখকে আমেৰিকাৰ মানুহে ধাৰ বা কিস্তিত সকলো বস্তু লোৱাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। দৈনন্দিন ব্যৱহাৰ্য বস্তুৰ উপৰি তাত ঘৰ-দুৱাৰো কিস্তিত লোৱাৰ সুবিধা আছে। লেখকে উল্লেখ কৰিছে আমেৰিকাৰ

স্কুলবোৰৰ সন্মুখৰ ছাইনব'ৰ্ডত 'ড্ৰাগ ফ্ৰি জ'ন স্কুল' বুলি লিখা থাকে। তেওঁ কৈছে যে আমেৰিকা ইমান ধনী দেশ হোৱা স্বত্বেও ড্ৰাগছ আসক্ত আৰু এইড্ছ ৰোগাগ্ৰস্ত মানুহৰ সংখ্যা অধিক। লেখকে সেই দিনটোতে ট্ৰেভেলাৰ্ছইন এৰি টেকোমা বিমান বন্দৰৰ পৰা উৰাজাহাজেৰে ছিয়াটলৰ পৰা নেৱাৰ্ক বিমান বন্দৰলৈ যাত্ৰা কৰিছে।

নৱম দিনাৰ অভিজ্ঞতা লেখকে এ'মাছৰ্নৰ কবিতাৰ শাৰী এটিৰ উল্লেখেৰে অৱতৰণি কৰিছে। লেখকে নৱম দিনা নেৱাৰ্ক বিমান বন্দৰৰ পৰা নিউজাৰ্ছিৰ মৰিছ প্লেইনছলৈ যাত্ৰা কৰে। ৰাতিপুৱাই ড° দেৱকুমাৰ বৰাই তেওঁক বিমান বন্দৰৰ পৰা ৰাটগাৰ্ছ বিশ্ববিদ্যালয়লৈ লৈ যায়। ড° দেৱকুমাৰ বৰা হৈছে ৰাটগাৰ্ছ বিশ্ববিদ্যালয়ৰ কুক কলেজৰ কৃষি-অভিযান্ত্ৰিক বিভাগৰ এগৰাকী সহকাৰী অধ্যাপক। লেখকে উল্লেখ কৰিছে যে ড° দেৱকুমাৰ বৰাই মিচিচিপি নদী আৰু নিউইয়ৰ্ক বন্দৰৰ খহনীয়া প্ৰতিৰোধৰ বাবে আৰ্হি প্ৰস্তুত কৰি দিছে। লেখকে, ড° বৰাক ব্ৰহ্মপুত্ৰ নদীৰ নিয়ন্ত্ৰণৰ বাবে গৱেষণা কৰিবৰ কাৰণে প্ৰস্তাৱ আগবঢ়োৱাত সেই প্ৰস্তাৱত সন্মতি জনায়। এই গৱেষণা কাৰ্যত প্ৰয়োজন হোৱা ধন, সা-সুবিধা আৰু লগতে সংশ্লিষ্ট সংস্থাটোলৈ অসম চৰকাৰৰ পক্ষৰ পৰা আৰু অসমৰ কোনো এখন ইঞ্জিনীয়াৰিং কলেজ বা বিশ্ববিদ্যালয়ৰ পৰা অনুৰোধ এটা আহিব লাগে যাতে দুমাহমানৰ ভিতৰত কামটো তেওঁলোকে কৰিব পাৰে। এই গোটেই কামবোৰৰ বাবে ড° বৰাই লেখকৰ পৰা সহায় বিচাৰিছে। লেখকেও এই ক্ষেত্ৰত তেখেতসকলৰ প্ৰস্তাৱ অসমৰ মুখ্যমন্ত্ৰী আৰু কৃষি বিশ্ববিদ্যালয়ৰ উপাচাৰ্যলৈ নিজে লৈ গৈ সহায় কৰাৰ সন্মতি প্ৰকাশ কৰিছে। ৰাটগাৰ্ছ বিশ্ববিদ্যালয়লৈ যাবলৈ সেউজীয় গছ-গছনি, ঘাঁহৰ পথাৰ পাৰ হ'ব লাগে। চৌহদৰ ভিতৰৰ ঘৰ-দুৱাৰবোৰ বৰ প্ৰকাণ্ড আৰু বিশাল নহয় যদিও তাত শৃংখলাবদ্ধতা আছে। স্নাতক আৰু স্নাতকোত্তৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ সংখ্যা বিশ্ববিদ্যালয়ত পঞ্চাশ হেজাৰ যদিও তাত কোনো হাই-উৰুমিৰ পৰিৱেশ নাই। ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলে শ্ৰেণীত বক্তৃতা শুনি বক্তৃতাত উল্লেখ কৰা প্ৰসংগ পুথি আৰু নতুন তথ্যৰ সন্ধানত পুথিভঁৰাল বা গৱেষণাগাৰত সময় কটায়। লেখকে এনে পৰিৱেশ অসমৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ মাজত হোৱাটো বিচাৰিছে। তেওঁ কৈছে- "আমাৰ দেশত জ্ঞানান্বেষণৰ এই স্পৃহা কেতিয়া হ'ব?"[৭] তাৰ স্কুল, কলেজ, বিশ্ববিদ্যালয়ত বন্ধৰ সংখ্যা কম। তেওঁলোকে উৎসৱ উদ্‌যাপনৰ নামত বন্ধ নলৈ তাৰ পৰিৱৰ্তে কোনো আলোচনা চক্ৰ, বক্তৃতা অনুষ্ঠান, কোনো বিশেষ গোটে সাংস্কৃতিক কাৰ্যসূচীৰ আয়োজন কৰে। আমেৰিকাত ৰাষ্ট্ৰীয় বন্ধৰ দিনৰ সংখ্যা মাত্ৰ ১১ টা। কলেজ আৰু বিশ্ববিদ্যালয়ত সকলো চুটি মিলাই ৩ মাহ হয়। গতিকে তেওঁলোকে ন মাহৰ দৰমহা পায়। লেখকে কবি পোপৰ নামৰ পুথিভঁৰালটো হিউমেনিটিজৰ কিতাপ থকাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। পুথিভঁৰালটোত কিতাপ বিচাৰি কাৰ্ড বা বহী চাব নালাগে, কম্পিউটাৰত বুটাম টিপিলেই কোনখন কিতাপ কোনটো খলপত আছে ওলাই পৰে। আমেৰিকাৰ সভ্যতা যে কম্পিউটাৰৰ সভ্যতা তাক লেখকে প্ৰকাশ কৰিছে। আমেৰিকাত বজাৰবোৰক 'Mall' বুলি কয়। এই 'মল'বোৰত সকলো প্ৰয়োজনীয় বস্তু পায়, যেনে শাক-পাচলি, জীয়াই থোৱা বা কটা মাছ-মাংস, কানি-কাপোৰ, জোতা-মোজা আদিত বিভিন্নধৰণৰ দামৰ টেগ লগাই বস্তুবোৰ ৰখা হয়। লেখকে আমেৰিকাৰ প্ৰবাসী অসমীয়াসকলৰ মাজত থকা মিলা-প্ৰীতি দেখি, এই আত্মীয়তাক আদৰণি জনাইছে। এই সম্পৰ্কক আৰু অধিক দৃঢ় কৰিবলৈ ANNA আৰু ASA এই সংস্থা দুটাক একেলগে আগবাঢ়িবলৈ পৰামৰ্শ আগবঢ়াইছে।

J.R. Anderson ৰ কবিতাৰ পংক্তিৰে লেখকে দশম দিনৰ অভিজ্ঞতা বৰ্ণনা কৰিছে। এই দিনটোত ড° কৃপা বৰা আৰু পৰিবাৰ শ্ৰীমতী বৰাৰ সৈতে লেখকে ৱাশ্বিংটন ডি.চি.লৈ যাত্ৰা কৰিছে। ৱাশ্বিংটন ডি.চি হৈছে আমেৰিকা যুক্তৰাষ্ট্ৰ ৰাজধানী। এটি সৰু দুমহলীয়া ঘৰ হোৱাইট-হাউছ আমেৰিকাৰ ৰাষ্ট্ৰপতিৰ চৰকাৰী বাসভৱন। বিভিন্ন কাৰুকাৰ্যৰে ক্ষচত হৈ আছে তাৰ সংসদ ভৱনটো। আমেৰিকাৰ সৰ্ববৃহৎ পুথিভঁৰাল 'লাইব্ৰেৰী অৱ কংগ্ৰেছ' এই ঠাইতে আছে। হোৱাইট হাউছৰ কাষত ৰাতি অহাটো অলপ অসুবিধাজনক, সেই ঠাইবোৰত বদমাছ, খুণী, গণিকাৰ বেহা চলে বুলি লেখকে উল্লেখ কৰিছে।

অতিৰিক্ত দুদিনৰ অভিজ্ঞতা বৰ্ণনা লেখকে ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতা এফাঁকিৰে আৰম্ভণি কৰিছে। সেই দুদিনত লেখকে ড° কৃপা বৰাৰ ঘৰত 'বৰ্তমানৰ অসমীয়া সাহিত্য' সম্পৰ্কে সমজুৱা বক্তৃতা প্ৰদান কৰিছে। তেওঁ আমেৰিকাৰ প্ৰবাসী অসমীয়া সমাজলৈ দুটা অনুৰোধ কৰিছে যে, আমেৰিকাৰ ভালক্ষিনৰ বিষয়ে অসমক জনাব লাগে আৰু অসমৰ বিষয়ে আমেৰিকাক জনোৱাটো ভাল। শেষত তেওঁৰ আনটো অনুৰোধ হৈছে-স্বচ্ছলতা আৰু যান্ত্ৰিকতাৰ মাজত হেৰাই যাবলৈ ধৰা আমেৰিকাৰ ভিতৰৰ মানুহটোক ভাৰতীয় দৰ্শনৰ পোহৰৰে বাট দেখুৱাত সহায় কৰা। লেখকে বাৰ দিনৰ দিনা

ড° দেৱ বৰাৰ ঘৰৰ পৰাই আবেলি পাঁচ বজাত জন.এফ. কেনেডী বিমান বন্দৰলৈ গৈ এয়াৰ ইণ্ডিয়া বিমানেৰে নিজ মাতৃভূমিলৈ উৰা মাৰে।

২.০০ উপসংহাৰ ঃ

কোনো এখন ঠাইৰ প্ৰাকৃতিক, সাংস্কৃতিক, সামাজিক আদি দিশৰ বৰ্ণনাই ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ সৃষ্টি নকৰে। ভ্ৰমণ সাহিত্য হ'বলৈ লেখাটোৰ সাহিত্যিক মূল্য থাকিব লাগিব। অসমীয়া সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনত ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ এক সুকীয়া স্থান আছে। সাহিত্যৰ অন্যান্য শাখাৰ দৰে এই শ্ৰেণীৰ সাহিত্যয়ো পাঠকক আনন্দ দিয়ে। ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ একো একোখন গ্ৰন্থই এখন ঠাইৰ দলিল ৰূপে প্ৰকাশিত হয়। ইয়াৰ জৰিয়তে একোখন ঠাইৰ সমাজ-সংস্কৃতিৰ আভাস পোৱা যায়। নগেন শইকীয়াৰ 'আমেৰিকাত দহদিন' গ্ৰন্থখনেও অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ ধাৰাত স্থান লাভ কৰিছে। দহদিনৰ আমেৰিকা ভ্ৰমণৰ অভিজ্ঞতাত তেওঁ আমেৰিকাৰ প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ বৰ্ণনা, ভৌগোলিক পৰিৱেশৰ বৰ্ণনাৰ মাজেৰে সমাজ-সংস্কৃতি, শিক্ষা-ব্যৱস্থা, খাদ্যভাস, আধুনিক প্ৰযুক্তিবিদ্যা, কৃষিকৰ্ম, জীৱিকা-নিৰ্বাহৰ চিত্ৰ আৰু তাত থকা প্ৰবাসী অসমীয়াসকলৰ অসমৰ প্ৰতি থকা আৱেগ ইত্যাদি স্পষ্ট ৰূপত কম কথাতে সুন্দৰভাৱে প্ৰস্ফুটিত সন্নিৱিষ্ট কৰিছে।

'নগেন শইকীয়াৰ আমেৰিকাত দহদিন ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন' শীৰ্ষক আলোচনাৰ অন্তত তলত দিয়া সিদ্ধান্ত কেইটাত উপনীত হ'ব পৰা গ'ল—

গ্ৰন্থখনত দহটা দিনৰ ভ্ৰমণৰ সৰু সৰু অভিজ্ঞতাৰে আমেৰিকাৰ লোকসকলৰ জীৱন চিত্ৰ প্ৰকাশ কৰিছে।

গ্ৰন্থখনৰ প্ৰতিটো দিনৰ অভিজ্ঞতাৰ বৰ্ণনাৰ আৰম্ভণিতে একো একো গৰাকী বিশেষ কবিৰ কবিতাৰ পংক্তি ব্যৱহাৰ কৰিছে।

গ্ৰন্থখনত আমেৰিকাত থকা প্ৰবাসী অসমীয়াৰ অসমৰ ভাষা-সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ প্ৰতি থকা আৱেগক লেখকে সাৱলীল ৰূপত প্ৰতিফলিত কৰিছে। ❑

অন্তটীকা ঃ

১। a film, book, or illustrated lecture about the places visited by or experiences of a traveller, Dictionary of Oxford Languages.

২। নগেন শইকীয়া ঃ আমেৰিকাত দহদিন, পৃ.১

৩। উল্লিখিত, পৃ.২

৪। উল্লিখিত, পৃ.২১

৫। উল্লিখিত, পৃ.৪২

৬। উল্লিখিত, পৃ.৭৪

৭। উল্লিখিত, পৃ.১১১

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

বৰা, মহেন্দ্ৰ। সাহিত্য উপক্ৰমণিকা। ডিব্ৰুগড়। বনলতা, ষষ্ঠ সংস্কৰণ-২০১২

বৰা, মহেন্দ্ৰ। গৱেষণা প্ৰণালী তত্ত্ব। ডিব্ৰুগড়। বনলতা, সংস্কৰণ-আগষ্ট- ২০০৯

বৰা, জয়ন্ত কুমাৰ। সাহিত্যৰ নানা দিশ। ডিব্ৰুগড়। বাণী মন্দিৰ, প্ৰথম প্ৰকাশ- ২০১০

ভূঞা, স্মৃতিৰেখা। আধুনিক অসমীয়া ভ্ৰমণ-সাহিত্য ঐতিহ্য আৰু শিল্প। গুৱাহাটী। পূৰ্বায়ণ প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ-ডিচেম্বৰ-২০২০

শইকীয়া, নগেন। আমেৰিকাত দহদিন। ডিব্ৰুগড়। বনলতা, তৃতীয় সংস্কৰণ- ১৯৯৮

শইকীয়া ভূপেন, চিত্ৰজিৎ শইকীয়া। সম্পা.। অসমীয়া ভ্ৰমণ-সাহিত্য সমীক্ষা। দুলীয়াজান। অসম সাহিত্য সভা, প্ৰথম প্ৰকাশ-২০১৮

শৰ্মা, সতেন্দ্ৰনাথ। অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত। গুৱাহাটী। সৌমাৰ প্ৰকাশ, দশম সংস্কৰণ পুনৰ মুদ্ৰণ-২০২৩ জুন

শৰ্মা, হেমন্ত কুমাৰ। অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত। গুৱাহাটী। বীণা লাইব্ৰেৰী, দ্বাদশ সংস্কৰণ-আগষ্ট-২০১০

M. Sachicinnanda. Travel writing and the Empire. Katha, Publised- 2nd Edition-2004.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

মনুস্মৃতি ঃ প্ৰসংগ এল জি বি টি কিউ +

মিতালী কুমাৰী

গৱেষক, আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা আৰু সাহিত্য অধ্যয়ন বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৯০৮৫১৭২১৭২
mitali.7309.mk@gmail.com

ড° ৰঞ্জন কলিতা

অধ্যক্ষ ৰঙাপৰা মহাবিদ্যালয়
শোণিতপুৰ (অসম)-৭৮৪৫০৫
৭০০২৩৫৫৫৩৯
ranjankalita@rcr.ac.in

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

ভাৰতবৰ্ষৰ ধৰ্ম, সাহিত্য, সংস্কৃতি, ঐতিহ্য, ইতিহাস আদিৰ পৰম্পৰাই ভাৰতবৰ্ষক বিশ্বৰ মাজত এক সমাদৃত আসনত বহুৱাইছে। ভাৰতীয় সভ্যতা প্ৰধানকৈ হিন্দু বা সনাতন ধৰ্মৰ ভেঁটিত প্ৰতিষ্ঠিত। ভাৰতীয় জাতীয় জীৱনৰ আদৰ্শৰ মূল ভেঁটি স্বৰূপ এই সাহিত্য-সংস্কৃতি সমগ্ৰ বিশ্বৰ মাজত চহকী। ভাৰতীয় সাহিত্যসমূহত প্ৰধানকৈ বেদ, উপনিষদ, সংহিতা, ব্ৰাহ্মণ, পুৰাণ আদিত প্ৰণীত হৈছিল সমাজৰ কৰণীয় বিধিসমূহ। বেদ-বেদাংগত সিদ্ধহস্ত ঋষিমুণিসকলে বেদৰ আধাৰত বিভিন্ন আচাৰ-ব্যৱহাৰ বিষয়ক শ্লোকসমূহক স্মৰণ কৰি যি সমূহ ৰচনা কৰিছিল সেই ৰচনাসমূহ স্মৃতি বা সংহিতা ৰূপে পৰিচিত। এই স্মৃতিসমূহত ভাৰতীয় জনজীৱনে পালন কৰিবলগীয়া সকলোবোৰ বিধিৰ পুংখানুপুংখ ব্যাখ্যা কৰা হৈছে। বেদক ভাৰতীয় ধৰ্ম মূল বুলি ভবা হয় আৰু স্মৃতিসমূহৰ আধাৰ যিহেতু বেদ, গতিকে স্মৃতিসমূহক ধৰ্মশাস্ত্ৰ নামেৰেও জনা যায়। ধৰ্মশাস্ত্ৰসমূহৰ ভিতৰত মনুৰ দ্বাৰা প্ৰণীত ধৰ্মশাস্ত্ৰখনেই সৰ্ববৃহৎ। মনুৰ দ্বাৰা ৰচিত স্মৃতিখন 'মনুস্মৃতি' নামেৰে প্ৰসিদ্ধ। উক্ত স্মৃতিখনত ভাৰতীয় সমাজ জীৱনৰ কৰণীয় দিশসমূহৰ সকলো অংগকে সন্নিবিষ্ট কৰা হৈছে।

মনুস্মৃতি গ্ৰন্থখনত বিভিন্ন বিষয়ৰ আলোচনা কৰাৰ লগতে এল জি বি টি কিউ+ সম্প্ৰদায় বিষয়ক বিভিন্ন বিধি দেখিবলৈ পোৱা যায়। এই অধ্যয়নত এল জি বি টি কিউ+ সম্প্ৰদায়ৰ (প্ৰধানকৈ নপুংসক, কিন্নৰ তথা সমকামী) প্ৰক্ষেপণ মনুস্মৃতিত কেনেদৰে কৰা হৈছে তাকেই এক বিশ্লেষণাত্মক দৃষ্টিভংগীৰে চাবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

নপুংসক, সমকামী, কিন্নৰ, সমাজ, লিংগ।

১.০০ অৱতৰণিকা ঃ

এল. জি. বি. টি. কিউ+ ৰ ধাৰণাটোৱে সম্প্ৰতি ভাৰতবৰ্ষত বিশেষ গুৰুত্ব লাভ কৰিছে। সাধাৰণ অৰ্থত এল. জি. বি. টি. কিউ+ সম্প্ৰদায়ক কেইবাটাও সম্প্ৰদায়ৰ সমষ্টি তথা বিভিন্ন লৈংগিক অভিব্যক্তি প্ৰকাশ কৰা লোকসকলৰ একত্ৰিত সমাজ বুলি ক'ব পাৰি। এই সম্প্ৰদায়ৰ পৰিসীমা যথেষ্ট বহল হোৱা দেখা যায়। এল. জি. বি. টি. কিউ+ সম্প্ৰদায়ত ক্ৰমে লেছবিয়ান (সমকামী নাৰী), গে (সমকামী পুৰুষ), বাইচেক্সুৱেল (দ্বিকামী), ট্ৰেন্সজেণ্ডাৰ (ৰূপান্তৰকামী), কুইৰ, এচেক্সুৱেল (অকামী) আদি উপসম্প্ৰদায়

জড়িত হৈ আছে। উক্ত সম্প্ৰদায়ক 'LGBTQ', 'LGBTI', 'LGBTA', 'LGBTQAI', 'GLBT' হিচাপেও জনা যায়। বৰ্তমান এই শব্দটোৱে প্ৰায় ভাগ সম্প্ৰদায়কে সামৰি লৈছে। উক্ত শব্দটো বিংশ শতিকামানৰ পৰা ব্যৱহৃত হৈ আহিছে। প্ৰথম অৱস্থাত অৰ্থাৎ প্ৰায় ১৯৫০ চনৰ পৰা আৰম্ভ কৰি ১৯৮০ চনৰ সময়ছোৱালৈ উক্ত সম্প্ৰদায়ক 'গে লিবাৰেছন' (Gay Liberation) বুলি জনা গৈছিল। কিন্তু স্বীকৃতিৰ এই আন্দোলনত গেৰ লগতে লেছবিয়ান, বাইচেক্সুৱেল, ট্ৰেন্সজেণ্ডাৰ তথা আন আন সম্প্ৰদায়ো জড়িত হৈ পৰিল।

উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ উল্লেখ প্ৰাচীন ভাৰতীয় সাহিত্যত বিদ্যমান। কিন্তু সেই সময়ত এল জি বি টি কিউ+ শব্দৰ নিশ্চয়কৈ প্ৰচলন নাছিল। প্ৰাচীন ভাৰতীয় সাহিত্যসমূহত কিন্নৰ, নপুংসক, তৃতীয় প্ৰকৃতি, সমকামী, ক্লীৱ আদি শব্দৰ প্ৰচনল দেখিবলৈ পোৱা যায়। বেদ, উপনিষদ, বিভিন্ন পুৰাণ, সংহিতা, ৰামায়ণ, মহাভাৰত, কামসূত্ৰ, অৰ্থশাস্ত্ৰ আদি গ্ৰন্থত উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ উল্লেখ থকা দেখা যায়।

সাধাৰণতে কোৱা হয় যে বৈদিক যুগৰ পৰা আৰম্ভ কৰি ঔপনিবেশিক কালৰ আগছোৱালৈ ভাৰতীয় সমাজত কিন্নৰ তথা সমগ্ৰ এল. জি. বি. টি. কিউ+ সম্প্ৰদায়ৰ অৱস্থিতি তেনেই সাধাৰণ আছিল। ব্ৰিটিছসকল অহাৰ পৰা তেওঁলোকৰ মৰ্য্যাদা, স্বীকৃতি, নাগৰিকত্ব, সন্মান আদিৰ ক্ৰমশঃ পতন হ'বলৈ ধৰে। ইয়াক নুই কৰিব নোৱাৰি। পাশ্চাত্য সংস্কৃতিয়ে ভাৰতবৰ্ষৰ বিভিন্ন চহকী সংস্কৃতি, চিন্তাধাৰাত বিৰূপ প্ৰভাৱ পেলোৱাৰ দৰে উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ অস্তিত্ব তথা সংস্কৃতিতো পাশ্চাত্য চিন্তাধাৰা তথা সংস্কৃতিৰ প্ৰভাৱ পৰা দেখা যায়। যাৰ ফলত এই লোকসকলে স্ব-ভূমিতে অপৰাধী লেখীয়া জীৱন কটাবলৈ বাধ্য হয়।

কিন্তু বিচাৰ্য বিষয় যে উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ স্থান ব্ৰিটিছপূৰ্ব ভাৰতবৰ্ষত কেনেধৰণৰ আছিল তথা এই সম্প্ৰদায়ে আন সম্প্ৰদায়ৰ দৰে গতানুগতিক জীৱন কটোৱাৰ সামান্যতম অধিকাৰ লাভ কৰিছিল নে। উত্তৰত ক'ব লাগিব যে ব্ৰিটিছপূৰ্ব ভাৰতবৰ্ষত উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ মান তেনেই নিম্ন পৰ্যায়ৰ আছিল। মনুসংহিতাৰ শ্লোকসমূহৰ দ্বাৰা এই সম্প্ৰদায়ৰ সামাজিক স্থিতি কেনেধৰণৰ আছিল তাকেই আলোচনাৰ আওতালৈ অনা হ'ব।

২.০০ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

সাধাৰণতে এল জি. বি. টি. কিউ+ সম্প্ৰদায়ৰ সামাজিক স্থিতিৰ অৱনতিৰ বাবে ব্ৰিটিছ শাসকসকলক দোষাৰোপ কৰা হয়। কিন্তু ইয়াৰ আগতে ভাৰতীয় সমাজত উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ সামাজিক স্থিতি কেনেধৰণৰ আছিল তাক জনা উচিত। মনুস্মৃতি গ্ৰন্থখনৰ দ্বাৰা প্ৰাচীন ভাৰতীয় সমাজ-জীৱনত উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ স্থান কেনেধৰণৰ আছিল তাকে প্ৰক্ষেপণ কৰা এই অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব।

এই অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্যসমূহ হৈছে—

১। মনুস্মৃতিৰ সহায়ত প্ৰাচীন ভাৰতীয় সমাজত এল জি বি টি কিউ+ সম্প্ৰদায়ৰ সামাজিক স্থিতিক বিশ্লেষণ কৰা।

২। প্ৰান্তীয়কৃত এই সম্প্ৰদায়ৰ প্ৰতি পিতৃতান্ত্ৰিক সমাজখনৰ দৃষ্টিভংগীৰ বিশ্লেষণ কৰা।

৩। পিতৃতান্ত্ৰিক সমাজখনৰ অবৰ্তমান লিংগ নিৰপেক্ষ দৃষ্টিভংগীৰ বিচাৰ কৰা।

৩.০০ অধ্যয়ন পদ্ধতি ঃ

বিষয়টো আলোচনা কৰিবলৈ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিক গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

৪.০০ বিষয় প্ৰৱেশ ঃ

ভাৰতীয় সভ্যতা সনাতন ধৰ্মৰ ভেঁটিৰ ওপৰত প্ৰতিষ্ঠিত। ভাৰতীয় সভ্যতাৰ প্ৰোন্নত দিশসমূহৰ পৃষ্ঠা লুটিয়াই চালে চাৰিবেদ, উপনিষদ, বেদাংগ, ব্ৰাহ্মণ, পুৰাণৰ দৰে উৎকৃষ্ট সৃষ্টিৰাজি দৃষ্টিগোচৰ হয়। এই সাহিত্যৰাজিৰ পৃষ্ঠাতেই স্ৰজা হৈছিল ভাৰতীয় জনজীৱনে সমাজ-সভ্যতা ৰক্ষাৰ্থে পালন কৰিবলগীয়া বিভিন্ন ৰীতি-নীতি। এই জাজ্বল্যমান সৃষ্টিৰাজিয়ে আধ্যাত্মিক জ্ঞানৰ ক্ষেত্ৰত ভাৰতবৰ্ষক সমগ্ৰ বিশ্বৰ মাজত গৰিষ্ঠ আসনত প্ৰতিষ্ঠিত কৰিছে। সভ্যতা, সংস্কৃতি, ধৰ্ম, সাহিত্যৰাজি, প্ৰাচীন কালৰে পৰা চলি অহা ৰীতি-নীতিয়ে ভাৰতবৰ্ষক পৃথিৱীৰ আন দেশতকৈ পৃথক কৰে। বেদ, বেদাংগ, উপনিষদ, বিভিন্ন সংহিতা, শাস্ত্ৰ তথা পুৰাণ আদিত বৰ্ণিত হৈ আছিল ভাৰতীয় জীৱনৰ চানেকি।

ভাৰতীয় সংস্কৃতি বহুক্ষেত্ৰত পশ্চিমীয়া সংস্কৃতিৰ তুলনাত অধিক উন্নত। চিৰ প্ৰচলিত তিনি বান্দৰে চকু কাণে মুখে হাত থৈ বেয়া বস্তু নোচোৱা, বেয়া কথা নুশুনা, বেয়া কথা নোকোৱা পৰম্পৰা পশ্চিমীয়া সংস্কৃতিৰ অৱদান মাথো। ইয়াৰ পৰিৱৰ্তে ভাৰতীয় সংস্কৃতিত এক শ্লোকৰ ব্যৱহাৰ কৰা হয়।

"ওঁ ভদ্ৰং কৰ্ণেভি : শ্ৰৃণুয়ামা দেৱা:
ভদ্ৰং পশ্যেমাক্ষমিৰ্যজত্ৰা: ।..."

অৰ্থাৎ হে দেৱগণ! আমাক শক্তি প্ৰদান কৰক যাতে কাণেৰে শুভ বচন শুনো, চকুৰে সৎ বস্তু দৰ্শন কৰো। বাৎসায়ণ

প্ৰণিত 'কামসূত্ৰ'ই পদে পদে প্ৰমাণিত কৰে ভাৰতীয় সভ্যতা-সংস্কৃতিৰ গৌৰৱোজ্জ্বল অধ্যায়ক।

ভাৰতীয় গৌৰৱোজ্জ্বল সাহিত্যৰ এক অন্যতম নিদৰ্শন হ'ল ধৰ্মশাস্ত্ৰ বা স্মৃতিসমূহ। ধৰ্মশাস্ত্ৰসমূহৰ সংৰচনাৰ সঠিক তথ্যৰ অভাৱ যদিও ধৰ্মসূত্ৰসমূহ ধৰ্মশাস্ত্ৰৰ মূল বুলি ধাৰণা কৰা হয়। সূত্ৰ ৰূপত ৰচিত ধৰ্মশাস্ত্ৰসমূহ বেদ-বেদাংগৰ আধাৰত গঢ় লৈ উঠিছে। ধৰ্মশাস্ত্ৰৰ আন এটা নাম স্মৃতি শাস্ত্ৰ বা চমুৰূপে স্মৃতি। বেদ-বেদাংগত নিপুণ মহৰ্ষিসকলে, বেদ, ব্ৰাহ্মণ, উপনিষদ আদিৰ গভীৰ অধ্যয়নেৰে আচৰণ বিধিকে আদি কৰি বিভিন্ন বিষয়ক স্মৰণ কৰি সেইবোৰৰ আধাৰত ৰচনা কৰা শাস্ত্ৰসমূহেই ধৰ্মশাস্ত্ৰ/স্মৃতিশাস্ত্ৰ বা স্মৃতি ৰূপে পৰিচিত।

আলবেৰুণীৰ মতে ব্ৰহ্মাৰ বিশ গৰাকী পুত্ৰ ক্ৰমে আপস্তম্ব, পৰাশৰ, শতপথ, সামৱৰ্ত, দক্ষ, বশিষ্ঠ, অংগিৰস, যম, বিষ্ণু, মনু, যাজ্ঞবল্ক্য, অনী হাৰীতি, লিখিত, শংখ, গৌতম, বৃহস্পতি, কাত্যায়ন, ব্যাস আৰু উশনসে মুঠ বিশখন স্মৃতি ৰচনা কৰিছে। কোনো পণ্ডিতৰ মতে স্মৃতি বিশখন আন কোনোৰ মতে পঞ্চাশখন যদিও মনু, যাজ্ঞবল্ক্য, বশিষ্ঠ, কাত্যায়ন, নাৰদ, শংখৰ স্মৃতিয়ে বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য।

সকলো স্মৃতিৰ ভিতৰত মনুস্মৃতি সবাতোকৈ প্ৰাচীন। মনুৰ দ্বাৰা প্ৰথিত স্মৃতিখন মনুস্মৃতি নামে পৰিচিত। মনুস্মৃতিক মনুসংহিতা বুলিও কোৱা হয়। য'ত ত'ত বিক্ষিপ্ত হৈ থকা অসংখ্য শ্লোকসমূহৰ একত্ৰিকৰণেৰে সংহিতাৰ ৰূপ দিয়াৰ বাবে সম্ভৱত মনুস্মৃতি মনুসংহিতাৰ নামেৰেও লব্ধপ্ৰতিষ্ঠ হয়।

মনুস্মৃতিৰ ৰচনাকাল সম্পৰ্কে বিভিন্ন পণ্ডিতে বিভিন্ন মত পোষণ কৰে যদিও পণ্ডিতসকলৰ মতৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি ইয়াৰ সময়সীমা প্ৰায় খ্ৰীঃ পূঃ চতুৰ্থ শতিকাৰ পৰা আৰম্ভ কৰি খ্ৰীঃ প্ৰথম শতিকাত শেষ বুলি ঠাৱৰ কৰা হৈছে।

ধৰ্মশাস্ত্ৰ বা স্মৃতিসমূহৰ ভিতৰত মনুৰ দ্বাৰা প্ৰথিত স্মৃতিখনকে সৰ্ববৃহৎ তথা সৰ্বশ্ৰেষ্ঠ আখ্যা দিয়া হৈছে। মনুস্মৃতিয়ে ভাৰতীয় সমাজ ব্যৱস্থা, সনাতন ধৰ্ম, ভাৰতীয় জীৱনৰ আদৰ্শৰ কথা অতি মননশীলভাৱে সূঐতাৰে বিচাৰ কৰিছে। মনুস্মৃতি বাৰটা অধ্যায়ত বিভক্ত। ইয়াত বৰ্ণব্যৱস্থা, নাৰীৰ মৰ্যাদা, নাৰীৰ শিক্ষা, শিক্ষা, ৰাজনীতি, দণ্ডনীতি, বাণিজ্যনীতি, পশু-পক্ষী, গছ-গছনি আদিকে কৰি ভাৰতীয় সমাজৰ প্ৰায় সকলোবোৰ দিশকে সামৰি লোৱা হৈছে।

মনুস্মৃতিৰ প্ৰধান বৈশিষ্ট্য হ'ল যে গ্ৰন্থখনে নাৰী আৰু পুৰুষৰ লগতে সমকামী (Homosexual) তথা ট্ৰেন্সজেণ্ডাৰ (Transgender)-কো সাঙুৰি লৈছে। মনুস্মৃতি ভাৰতীয় সাহিত্যিক পৰম্পৰা, সমাজ তথা সংস্কৃতিৰ এক অনন্য অংগ যদিও মনুস্মৃতিয়ে সেই সময়ৰ পিতৃতান্ত্ৰিক সমাজৰ পক্ষে উকালতি কৰা যেন বোধ হয়। ভাৰতীয় সমাজৰ নাৰীৰ প্ৰতি মনুৰ দৃষ্টিভংগী অমানৱীয় তথা অবৈয়াল। মনুস্মৃতিত কেৱল এক লিংগৰলোকক মূৰ দাঙি সমাজত স-সন্মানেৰে জীয়াই থকাৰ অধিকাৰ প্ৰদান কৰা হৈছে। নাৰী, সমকামী তথা নাৰী-পুৰুষৰ সংজ্ঞাৰ আৱেষ্টনীৰ মাজত স্থিতি লোৱা লিংগধাৰীসকলৰ বাবে মনুৱে দিয়া বিধান অত্যন্ত অপমানসূচক। মনুৱে অকপটভাৱে লৈংগিক সমতাক চূৰ্ণ-বিচূৰ্ণ কৰি পেলাইছে। নাৰীৰ লগত হোৱা পক্ষপাতিত্বমূলক ব্যৱহাৰৰ বিষয়ে ইতিমধ্যে বিভিন্ন লেখ দেখিবলৈ পোৱা যায়। কিন্তু আলোচনা পত্ৰখনত প্ৰধানকৈ নাৰী-পুৰুষৰ পৰিসীমাত খাপ নোখোৱা লৈংগিক অভিব্যক্তিবোৰক প্ৰাধান্য দিয়া হ'ব।

মনুৰ নাৰীৰ প্ৰতি যেনে দৃষ্টিভংগী আছিল ঠিক তেনেই বা তাতোকৈ অধিক অনমনীয় দৃষ্টিভংগী আছিল সমকামী কথা ট্ৰেন্সজেণ্ডাৰৰ অন্তৰ্গত কিন্নৰসকলৰ প্ৰতি।

প্ৰথম অধ্যায়ৰ ঊনচল্লিছ নং শ্লোকত মনুৱে কিন্নৰৰ অৱয়ব সম্পৰ্কে বৰ্ণনা কৰিছে—

"কিন্নৰান্ ৱানৰন্মৎস্যান্ ৱিৱিধাংশ ৱিহংগমান।
পশূন্ মৃগান্মনুষ্যাংশ ৱ্যালংশ্চোভয়তোদত।।"

অৰ্থাৎ কিন্নৰ, বান্দৰ, অনেক প্ৰকাৰৰ মাছ, চৰাই, পশু, হৰিণ, সিংহ, বাঘ আদি দুপাৰি দাঁত থকা জন্তুসমূহ। ইয়াত কিন্নৰক জন্তুৰূপে বৰ্ণনা কৰা হৈছে। অৱশ্যে জন্তু কিন্নৰ আৰু মানৱ কিন্নৰ সম্পৰ্কে প্ৰশ্ন উত্থাপিত হোৱাৰ আগতে এই বিভ্ৰান্তি গুচাবৰ প্ৰয়াস কৰা হ'ল।

কিন্নৰ শব্দৰ ইতিহাস অতি প্ৰাচীন। 'কিন্নৰ' হ'ল ট্ৰেন্সজেণ্ডাৰ সম্প্ৰদায়ৰ অন্তৰ্গত এক সুকীয়া সম্প্ৰদায়। 'অমৰ কোষতো' ইয়াৰ উল্লেখ পোৱা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে—

"বিদ্যাধৰোস্পৰসো যক্ষৰক্ষোগন্ধৰ্বকিন্নৰা ঃ
পশচাগুহয়কসিদ্ধঃ ভূত দেবযোনয়ঃ।।"

গন্ধৰ্ব তথা কিন্নৰসকল নৃত্য-গীতত পাৰ্গত আছিল। দেৱতাসকলৰ সমৰ্থক কিন্নৰসকলে মনোৰঞ্জন কৰিছিল। বায়ুপুৰাণ অনুসৰি কাশ্যপ মুনি আৰু অৰিষ্টাৰ (মনুষ্যৰ দৰে আচৰণ কৰা দানৱ তথা সংগীতত পাকৈত) দ্বাৰা কিন্নৰ জাতিৰ

উৎপত্তি হৈছিল। হিমালয়ৰ পৱিত্ৰ শিখৰ কৈলাশ পৰ্বতত কিন্নৰসকলে বাস কৰাৰ লগতে ভগৱান শিৱৰ আৰাধনা কৰিছিল। তেওঁলোকে যক্ষ তথা গন্ধৰ্ব জাতিৰ দৰে নৃত্য-গীতত পাকৈত আছিল। চিত্ৰৰথ আছিল তেওঁলোকৰ প্ৰধান অধিপতি। 'শতপথ ব্ৰাহ্মণ'ত অশ্বমুখী মানৱ শৰীৰ ৰূপী কিন্নৰৰ উল্লেখ আছে। 'ৰামায়ণ' মহাকাব্যত 'কিম্পুৰুষী' (কিন্নৰ)সকলৰ উৎপত্তিৰ বিৱৰণ আছে। অজন্তা তথা বাঘ গুহাত নৃত্য-গীত পৰিবেশন কৰা যক্ষ-যখিনী, গন্ধৰ্ব, কিন্নৰ তথা অপ্সৰাৰ চিত্ৰ খোদিত কৰা আছে। কিন্নৰসকল অশ্বমুখী অৰ্থাৎ মুখমণ্ডল ঘোঁৰা সদৃশ আৰু কায় মানুহৰ দৰে আছিল।

সংস্কৃত ভাষাত 'কিম' আৰু 'নৰ' সংযোজিত হৈ কিন্নৰ শব্দৰ উৎপত্তি হৈছিল। ইয়াত 'কিম' শব্দই 'কুৎসিত' আৰু 'নাকাৰাত্মক মনুষ্য' বা 'বেয়া মানুহ'ৰ অৰ্থ বহন কৰিছে। 'কিন্নৰেশ' ধনৰ ৰজা 'কুবেৰ' শব্দৰ এক বিশেষণ। কিম + নৰেশ বা কিন্নৰ+ইশ শব্দ জড়িত হৈ 'কিন্নৰেশ' শব্দৰ গঠন হৈছে। প্ৰথম 'কিম' শব্দই অনুত্তম ৰজাক সূচায় তথা দ্বিতীয় 'কিন্নৰ' শব্দই কেৱল ৰজাক সূচায়। মোনিয়েৰ উইলিয়ামসৰ মতে কুবেৰে প্ৰথমাৱস্থাত কু-শক্তি থকা তথা পৰৱৰ্তী সময়ত ধনৰ দেৱতা হিচাপে পৰিচয় লাভ কৰে।

বৌদ্ধ সংস্কৃতিত মানৱমুখী পক্ষীক 'কিন্নৰ' আখ্যা দিয়া হৈছে। মানসাৰত কিন্নৰৰ গৰুড়মুখী, মানৱমুখী পখী ৰূপৰ বৰ্ণনা আছে। দক্ষিণ-পূৱ এছিয়াৰ বৌদ্ধ পৌৰাণিক কথাসমূহত কিন্নৰক অৰ্ধ পক্ষী-অৰ্ধ মানুহ, অৰ্ধ নাৰী আৰু পক্ষী আদি ৰূপত বৰ্ণনা কৰা হৈছে। কিন্নৰসকলৰ মূৰ, বাহু নাৰীৰ দৰে আৰু পাখি, নেজ আৰু ভৰি হাঁহ বা আন পক্ষীৰ দৰে। নৃত্য-গীত তথা কবিতাৰ বাবে প্ৰসিদ্ধ আছিল। কিন্নৰসকল নাৰীসুলভ সৌন্দৰ্য্য, মহানুভৱতা, পাৰদৰ্শীতা তথা পৰিপক্কতাৰ প্ৰতীক আছিল। এডৱাৰ্ড এইচ. চেফাৰ (Edward H. Schafer) য়ে মন্তব্য অনুসৰি পূৰ্বী এছিয়াৰ ধাৰ্মিক কলাত কিন্নৰসকলক 'কলাভিংকা'ৰ লগত জড়িত কৰা হয়। কিন্তু দুয়োৰে মাজত পাৰ্থক্য অক্লেদ্য।

এই ক্ষেত্ৰত ক'ব পাৰি যে কোনো অস্তিত্বৰ (মানৱ, জীৱ-জন্তু, পক্ষী আদি) অৰ্ধ অৰ্ধ স্বৰূপে কিন্নৰক সূচোৱাৰ পৰাই সম্ভৱত অৰ্ধ নাৰী-অৰ্ধ পুৰুষৰ স্বৰূপে কিন্নৰে পৰিচিতি লাভ কৰে। অৰ্ধ মানৱ-অৰ্ধপক্ষী, অৰ্ধ জন্তু, শৈৱভক্ত আদিৰে পৰিচিতি লাভ কৰা কিন্নৰে বৰ্তমান অৰ্ধ নাৰী-অৰ্ধ পুৰুষ বা পুৰুষ দেহত আৱদ্ধ হৈ থকা নাৰী মনক বুজায়। কিন্নৰ শব্দৰ ৰূপৰ সালসলনি ঘটিছিল যদিও 'কিন্নৰ' শব্দৰ প্ৰকৃত অৰ্থ প্ৰায় একে আছে।

দ্বিতীয় অধ্যায়ৰ এশ আঠাৰন্ন নং শ্লোকত মনুৱে নপুংসকক উদ্দেশ্যি এনেধৰণৰ মন্তব্য প্ৰদান কৰিছে—

"যথা ষণ্ঢেহফলঃ স্ত্ৰীযু যথা গৌৰ্গৱি চাফলা।
যথা চাজ্ঞেহফলং দানং তথা বিপ্ৰোহনৃচোহফলঃ।।"

যেনেকৈ নপুংসকৰ নাৰী সহবাস নিষ্ফল, গাই গৰুৱে গাই গৰুৱে সংগম নিষ্ফল, যেনেকৈ অজ্ঞলোকক দিয়া দান নিষ্ফল। তেনেকৈ বেদাধ্যয়হীন ব্ৰাহ্মণো নিষ্ফল (অৰ্থাৎ কোনো কামৰ নহয়)।

এই শ্লোক অনুসৰি নপুংসক ব্যক্তি কোনো কামৰ নহয়। এগৰাকী নপুংসক ব্যক্তিক অকপটভাৱে গৰু, অজ্ঞলোক আদিৰ লগত তুলনা কৰা হৈছে। কোনো ব্ৰাহ্মণৰ বেদৰ জ্ঞানৰ পৰিসৰ ধাৰ্য্য কৰা-নকৰা এক পৃথক বিষয়। কিন্তু এক ব্যক্তিৰ জ্ঞানৰ পৰিসৰ ধাৰ্য্য কৰিবলৈ আন ব্যক্তিক জন্তু বা অজ্ঞলোকৰ লগত তুলনা কৰা অতি গৰ্হনীয়।

মনুয়ে নপুংসক শিশুৰ জন্ম কিদৰে হয় তাৰ বাখ্যাও আগবঢ়াইছে। তৃতীয় অধ্যায়ৰ ঊনপঞ্চাছ নং শ্লোক অনুসৰি —

"পুমান্ পুংসোহধিকে শুক্ৰে স্ত্ৰী ভৱত্যধিকে স্ত্ৰিয়াঃ।
সমেহপুনাম্ পুংস্ত্ৰিয়ৌ বা ক্ষীণেহল্পে চ বিপৰ্যয়।।"

অৰ্থাৎ পুৰুষৰ বীৰ্য অধিক হ'লে (বিষম ৰাতিতো) পুত্ৰ, স্ত্ৰীবীজ অৰ্থাৎ ৰজঃ অধিক হ'লে (সমৰাতিতো) কন্যা আৰু পুংবীজ তথা স্ত্ৰীবীজ সমান হ'লে নপুংসক অথবা যমজ সন্তান জন্ম হয়। দুয়োজনৰ বীৰ্য কম হ'লে গৰ্ভ ধাৰণ নহয়।

সমাজত উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ নিম্ন স্থানৰ উল্লেখ মনুৰ বিভিন্ন শ্লোকত দেখিবলৈ পোৱা যায়। তৃতীয় অধ্যায়ৰ এশ পঞ্চাছ নং শ্লোক অনুসৰি—

"যে স্তেনপতিতক্লীৱা যে চ নাস্তিকৱত্তয়ঃ।
তান্ হব্যকব্যয়োৰ্বিপ্ৰাননৰ্হান্ মনুৰব্ৰৱীৎ।।"

অৰ্থাৎ চোৰ, পতিত, নপুংসক, নাস্তিক (অৰ্থাৎ যিয়ে পৰলোকত বিশ্বাস নকৰে) ব্ৰাহ্মণ দেৱকাৰ্য আৰু পিতৃকাৰ্য দুয়োৰে অযোগ্য বুলি মনুৱে কৈছে।

তৃতীয় অধ্যায়ৰ এশ পঁষষ্ঠি নং শ্লোকত মনুৱে এনেদৰে বাখ্যা কৰিছে—

"আচাৰহীনঃ ক্লীৱশ্চ নিত্যং যাচনকস্তথা।
কৃষিজীৱি শ্লীপদী চ সদ্ভিৰ্নিন্দিত এৱ চ।।"

অৰ্থাৎ সদাচাৰ ৰহিত, নপুংসক, সদায় খুজি ফুৰা, কৃষিজীৱি, গোধাৰোগী আৰু যিজন সাধু সমাজগৰ্হিত।

উপৰোক্ত শ্লোক দুটিৰ পৰা মনুৰ সময়ৰ সমাজখনৰ নীহকুলীয়া নপুংসক বা কিন্নৰসকলৰ বিষয়ে জানিব পৰা যায়। মনুৱে নপুংসকক চোৰ, নাস্তিক, পতিতৰ লগত তুলনা কৰি দেৱকাৰ্য বা পিতৃকাৰ্যৰ অযোগ্য নহয় বুলি কৰা বিকৃত মন্তব্য সমগ্ৰ সম্প্ৰদায়ৰ বাবেই অপমানজনক। মনুৰ বাক্য অনুসৰি নপুংসক সাধুসমাজ গৰ্হিত। তেওঁ নাৰীৰ দৰে নপুংসক সকলকো সৰ্বোতপ্ৰকাৰে কলুষিত কৰিছে। কেৱল লৈংগিক অভিব্যক্তিক কেন্দ্ৰ কৰি এনে গৰ্হি্ত মন্তব্য কোনোপধ্যে গ্ৰহণযোগ্য নহয়। বৈদিক সাহিত্য সমূহতো মনুৰ উল্লেখ আছে। যেতিয়া ৰীতি-নীতি, আচাৰ-সংস্কাৰ আদি বিষয়ক প্ৰশ্নৰ উদয় হয় তেতিয়াই মনুৰ বিধানৰ উদ্ধৃতি দি সেই প্ৰশ্নৰ সমাধানৰ বাট মুকলি কৰা হয়। ভগৱান বিষ্ণুৰ সৰ্বজ্ঞানী পুত্ৰ মনুৰ বিধান পৰম সত্য বুলি বিবেচিত কৰা হয়। তেনে স্থলত মনুৰ নপুংসকৰ প্ৰতি থকা দৃষ্টিভংগীয়ে এই সম্প্ৰদায়ৰ মান অধিক নিম্নতৰ কৰি পেলাইছে।

তৃতীয় অধ্যায়ৰ এশ ছয়ানব্বৈ নং শ্লোক অনুসৰি—

"দৈত্যদানৱযক্ষাণাং গন্ধৰ্বোৰগৰক্ষসাম্।

সুপৰ্ণকিন্নৰণাঞ্চ স্মৃতা ৱৰ্হিষদোহত্ৰিজাঃ।।"

অৰ্থাৎ অনিৰ বৰ্হিষদাদি পুত্ৰসকল; দৈত্য, দানৱ, যজ্ঞ, গন্ধৰ্ব, সৰ্প, ৰাক্ষস, সুপৰ্ণ আৰু কিন্নৰবিলাকৰ পূৰ্বপুৰুষ।

উক্ত শ্লোকত কিন্নৰ সকলকো অৰ্ধ মানৱ, অৰ্ধপক্ষী, শৈৱভক্ত কিন্নৰ বুলিয়ে উল্লেখ কৰা হৈছে। সাম্প্ৰতিক কিন্নৰৰ সংজ্ঞা সেই সময়ৰ কিন্নৰৰ সংজ্ঞাৰ সৈতে প্ৰায় একেই আছিল যদিও আদৰ্শৰ বহুল পাৰ্থক্য আছে।

তৃতীয় অধ্যায়ৰ দুশ ঊনচল্লিছ নং শ্লোক অনুসৰি—

"চাণ্ডালশ্চ ৱৰাহশ্চ কুক্কুটঃশ্বা তথৈৱ চ।

ৰাজস্বলা চ ষন্ঢশ্চ নেক্ষেৰন্নশ্নতো দ্বিজান্।।"

অৰ্থাৎ ব্ৰাহ্মণসকলে ভোজনত বহাৰ সময়ত চণ্ডাল, গাহৰি, কুকুৰা, কুকুৰ, ৰজস্বলা মহিলা আৰু নপুংসকক যাতে দেখা নাপায় তাৰ ব্যৱস্থা কৰিব। এনে বিকৃত বিধানে কেৱল নপুংসক জাতিকে নহয় সমগ্ৰ নাৰী তথা চণ্ডাল জাতিকো ঘৃণনীয় ৰূপে প্ৰতিপন্ন কৰিছে। মনু প্ৰকৃত ৰূপে নপুংসক তথা সমকামী বিদ্বেষী। ইটোৰ পিছত সিটো কদৰ্য্য মন্তব্য দিয়া মনুৰ উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ প্ৰতি নূন্যতম মানৱীয় দৃষ্টিভংগীকণো নাই। উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ প্ৰতি তেওঁৰ চিন্তাধাৰা অকীৰ্তিকৰ। নপুংসক তথা সমকামীসকলৰ প্ৰতি অসহিষ্ণু মনুৱে চতুৰ্থ অধ্যায়ৰ দুশ পাঁচ নং শ্লোকত বিধান দিছে—

"নাশ্ৰোত্ৰিয়ততে যজ্ঞে গ্ৰামযাজিকৃতে তথা।

স্ক্ৰিয়া ক্লীৱেন চ হুতে ভুঞ্জীত ব্ৰাহ্মণঃ ক্কচিৎ।।"

অৰ্থাৎ বেদজ্ঞ ব্ৰাহ্মণ ৰহিত তথা বহু যাজকৰ দ্বাৰাকৃত আৰু স্ত্ৰী তথা নপুংসকে আহুতি দিয়া যজ্ঞত ব্ৰাহ্মণে কেতিয়াও ভোজন নকৰিব।

এই শ্লোকতো ব্ৰাহ্মণ ৰহিত প্ৰায় সকলো জাতিকে অপমান কৰা হৈছে। মনু স্মৃতিত বৰ্ণব্যৱস্থাৰ কথা উল্লেখ আছে। মনুৱে ভাৰতীয় জনজীৱনৰ মূল চাৰি বৰ্ণব্যৱস্থাৰ (ব্ৰাহ্মণ, ক্ষত্ৰিয়, বৈশ্য, শূদ্ৰ) কৰ্তব্যসমূহৰ বৰ্ণনা কৰিছে। কিন্তু নপুংসক বা সমকামীসকলে এই চাৰিবৰ্ণৰ মাজতো স্থান লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হোৱা নাই। বিভিন্ন লোকৰ মতে সেই সময়ৰ সমাজব্যৱস্থাই এনে ধৰণৰ আছিল। গতিকে সাহিত্যত ই প্ৰকাশ্য হ'বই। কিন্তু সমাজত হোৱা ভেদ-ভাৱক মনুস্মৃতিয়ে উচতনি জগাইছিল।

চতুৰ্থ অধ্যায়ৰ দুশ ছয় নং শ্লোকত মনুৱে বিধান দিছে-

"অশ্লীকমেতৎ সাধূনাং যত্ৰ জুহ্বত্যমী হৱিঃ।

প্ৰতীপমেতদ্দেৱানাং তস্মাত্তৎ পৰিৱৰ্জৰেৎ।।"

উক্ত শ্লোক অনুসৰি যি যজ্ঞত (স্ত্ৰী, নপুংসক, বহুযাজক আদি) এই বিলাকে হবন কৰিছে, সেই যজ্ঞই সজ্জনৰ শ্ৰী (লশ্ৰী) নাশ কৰে আৰু ই দেৱতাৰ প্ৰতিকূল— এনেবিলাক যজ্ঞ ত্যাগ কৰিব লাগে। এই শ্লোকটোত উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ প্ৰতি থকা নেতিবাচক মানসিকতা দেখিবলৈ পোৱা যায়। সপ্তম অধ্যায় একানব্বৈ নং শ্লোক অনুসৰি—

"ন চ হন্যাৎ স্থলাৰূঢ়ংন ক্লীৱং ন কৃতাঞ্জলিম্।

ন মুক্তকেশং নাসীনং ন হৱাস্মীতি ৱাদিনম্।।"

অৰ্থাৎ (যোদ্ধাই নিজে ৰথত উঠি থাকি) মাটিত থকা, নপুংসক, হাতযোৰ কৰি থকা, মুক্তকেশ, বহি থকা, মই তোমাৰ বুলি কৈ শৰণাগত হোৱা যোদ্ধাক কেতিয়াও বধ নকৰিব।

এই শ্লোকত মনুৱে যোদ্ধাৰ কৰ্তব্য সম্পৰ্কে বিধান দিছে। ইয়াৰ দ্বাৰা নপুংসকসকল যুদ্ধৰ বাবে সমুচিত নহয় তাকেই প্ৰতিপন্ন কৰিছে। মনুৰ বাক্য অনুসৰি নপুংসক ব্যক্তি সমাজগৰ্হিত হোৱাৰ লগতে সামৰিক কৰ্তব্য পালনৰো যোগ্য নহয়।

নৱম অধ্যায়ৰ ঊনাশী নং শ্লোক মনুৱে বিধান দিছে এনেদৰে—

"উন্মত্তং পতিতং ক্লীৱমৱিজং পাপৰোগিণম্।
ন ত্যাগোহস্তি দ্বিষন্ত্যাশ্চন চ দায়াপৱৰ্তনম্।।"

অৰ্থাৎ উন্মত্ত, পতিত, ক্লীৱ, বীৰ্যহীন আৰু দুৰাৰোগ্য (কুষ্ঠাদি) ৰোগত আক্ৰান্ত পতিক যি স্ত্ৰীয়ে অৱজ্ঞা কৰে সেই স্ত্ৰীক পতিয়ে ত্যাগ কৰিব নোৱাৰিব আৰু অলংকাৰো কাঢ়ি নিব নোৱাৰিব।

মনুৰ বিধান অনুসৰি ক্লীৱ (নাৰী-পুৰুষৰ সংজ্ঞা সীমাৰ বাহিৰৰ ব্যক্তি) স্বামীয়ে পত্নীক এৰিব নোৱাৰে। মনুৰ এই বিধান উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ প্ৰতি আপত্তিজনক যেন বোধ নহয়। ক্লীৱ ব্যক্তিয়ে কোনো নাৰীৰ লগত বিবাহ পাশত আৱদ্ধ নহয়। কোনো কাৰণবশত বিবাহ পাশত আৱদ্ধ হ'লেও নাৰীগৰাকী কোনো প্ৰকাৰে প্ৰতাৰিত হোৱাটো নিশ্চিত। স্বাভাৱিকতে এনে প্ৰতাৰিত নাৰীয়ে ক্লীৱ পতিক অৱজ্ঞা কৰিলেও পতিয়ে সেই নাৰীক ত্যাগ কৰিব নোৱাৰে। মনুৱে নাৰীৰ ৰক্ষাৰ্থে এই বিধান দিয়া যেন বোধ হয়।

নৱম অধ্যায়ৰ এশ সাতষষ্ঠি নং শ্লোকত মনুৱে বিধান দিছে—

"যস্তল্পজঃ প্ৰমীতস্য ক্লীৱস্য ৰাধিতস্য ৰা।
স্বধৰ্মেণ নিযুক্তায়াং স পুত্ৰঃ ক্ষেত্ৰজঃ স্মৃত।।"

অৰ্থাৎ মৃতপ্ৰায় ৰোগী অথবা নপুংসক পুৰুষে 'নিয়োগ' বিধিমতে জন্ম দিয়া পুত্ৰক ক্ষেত্ৰজ (ভাৰ্য্যা গৰ্ভত বংশৰ কোনো লোকৰ দ্বাৰা জন্ম হোৱা সন্তান)।

নপুংসকৰ সন্তান জন্ম দিয়া ক্ষমতা নাই। কিন্তু বংশৰ শ্ৰীবৃদ্ধিৰ বাবে সন্তানৰ প্ৰয়োজন। সেইবাবে সেই সময়ৰ সমাজখনত আন কোনো লোকৰ সহায়ত সন্তান জন্ম দিয়াৰ প্ৰথা আছিল। মনুৰ দৃষ্টিত নাৰী চঞ্চল, পুৰুষক দুষিত কৰা নাৰীৰ স্বভাৱ, নাৰীক স্বাধীনতা দিব নালাগে। মুঠতে নাৰী বিদেষী মনুৱে নিজে এগৰাকী নাৰীক কেৱল সন্তান প্ৰাপ্তিৰ বাবে পৰ-পুৰুষৰ লগত সম্ভোগত লিপ্ত হোৱাৰ বিধান দিছে। এনে বিধান সৰ্ব স্বীকাৰ্য। ক'বলৈ গ'লে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজখনত সকলো নীতি-নিয়ম একপক্ষীয়। ইয়াত কেৱল এক লিংগৰ লাভ হৈছে। নৱম অধ্যায়ৰ দুশ এক নং শ্লোক অনুসৰি—

"অনংশৌ ক্লীৱপতিতৌ জাত্যন্ধবধিৰৌ তথা।
উন্মত্তজড়মূকাশ্চ যে চ কেচিন্নিৰিন্দ্ৰিয়াঃ।।"

অৰ্থাৎ নপুংসক, পতিত, জন্মান্ধ, কলা, পাগল, বোবা আৰু যি কোনো ইন্দ্ৰিয় নথকা (খোৰা, কঙা আদি) এইবোৰ সম্পত্তিৰ ভাগী নহয়। কিন্তু ভৰণ-পোষণৰ অধিকাৰী হ'ব।

নপুংসক ব্যক্তিৰ সমাজগৰ্হিত হোৱাৰ লগতে পৰিয়ালগৰ্হিত হোৱাৰো বিধান দিছে মনুৱে। মনুৰ মতে নপুংসক হোৱা এক মহা পাপ। যাৰ শাস্তি স্বৰূপে মনুৱে সম্পত্তিৰ অধিকাৰৰ পৰা নপুংসকক বিচ্ছিন্ন কৰাৰ বিধান দিছিল। ইয়াৰোপৰি দিব্যাঙ্গ লোককো এনে শাস্তি দিয়া হৈছিল। এনেদৰে হয়তো দিব্যাঙ্গ লোকৰ প্ৰতিও মানুহৰ দৃষ্টিভংগী নিম্নগামী হয়। নৱম অধ্যায়ৰ দুশ দুই নং অনুসৰি—

"সৰ্ৱেষামপি তু ন্যায্যং দাতুং শক্ত্যা মনীষিণা।
গ্ৰাসাচ্ছাদনমত্যন্তং পতিতো হ্যদদদ্ভৱেৎ।।"

অৰ্থাৎ উপযুক্ত বিলাকৰ ধন ন্যায় পথেৰে গ্ৰহণ কৰা শাস্ত্ৰজ্ঞ বিদ্বানসকলে সেই (নপুংসক আদি) বিলাকক খোৱা, পিন্ধা, যথাশক্তি প্ৰদান কৰিব, নহ'লে পতিত হ'ব।

মনুৰ এই বিধানে নপুংসক জাতিক কিছু সকাহ দিছে। অজস্ৰ ভেদভাৱ, কলংকিত মন্তব্যৰ পিছত মনুৱে নপুংসকৰ হকেও মাত দিছে। একাদশ অধ্যায়ৰ আঠষষ্ঠি নং শ্লোক অনুসৰি—

"ব্ৰাহ্মণস্য ৰুজঃ কৃত্বা ঘ্ৰাতিৰঘ্ৰেয়মদ্যয়োঃ।
জৈহ্ম্যঞ্চ মৈথুনং পুংসি জাতিভ্ৰংশকৰং স্মৃতম্।।"

অৰ্থাৎ হাত বা লাঠীৰে ব্ৰাহ্মণক পীড়িত কৰা, নুশুঙিবলগীয়া (নহৰু, পিয়াজ, মদ আদি) বস্তু শুঙা, কুটিলতা আৰু সমকামীতা— এই বিলাক জাতিভ্ৰষ্টকাৰী পাপ।

মনুৱে সমকামিতাক জাতিভ্ৰষ্টকাৰী পাপ বুলি ঘোষণা কৰিছে। মনুস্মৃতিৰ এই শ্লেকটিতে সমকামীৰ বিষয়ে উল্লেখ কৰা হৈছে। মনুৰ বিধানৰ পৰা অনুমান কৰিব পাৰি যে সেই সময়ত ভাৰতীয় সমাজত নপুংসক তথা সমকামীসকলৰ স্থান অতি নিম্ন আছিল। আজিৰ দৰে সেই সময়তো সমকামিতাক অপৰাধ ৰূপে গণ্য কৰা হৈছিল।

৫.০০ উপসংহাৰ ঃ

এল জি বি টি কিউ+ লোকৰ পতনৰ বাবে পোনছাটেই ব্ৰিটিছ চৰকাৰক দোষাৰোপ কৰা হয়। সম্ভৱত বৈদিক যুগৰ সমাজখনত উক্ত সম্প্ৰদায়ৰ স্থান নাৰীৰ দৰেই কিছু স্বাধীন আছিল। (পুৰুষ সমপৰ্যায়ৰ স্থান লাভ কৰাটো কোনো যুগতে সম্ভৱ নাছিল।) কিন্তু পিছলৈ ইয়াৰ অৱনতি ঘটে। ব্ৰিটিছসকলে ভাৰতত শাসন ভাৰ গ্ৰহণ কৰাৰ পিছত নিশ্চয়কৈ তেওঁলোকৰ মৰ্যাদা, সন্মান, স্বীকৃতি, পৰিচয়, নাগৰিকত্ব আদিৰ পতন

হৈছিল। কিন্তু ইয়াৰ একমাত্ৰ দায়ী ব্ৰিটিছ চৰকাৰ নহয়। তেওঁলোকে ‘ধাৰা ৩৭৭’ আৰু ‘ক্ৰিমিনেল ট্ৰাইব এক্ট, ১৮৭১’ দ্বাৰা পূৰ্বৰে পৰা শোষিত লাঞ্ছিত শ্ৰেণীক সম্পূৰ্ণৰূপে ধ্বংসগৰাহলৈ ঠেলি দিছে।

দুই-এঠাইত উক্ত সম্প্ৰদায়ক কেন্দ্ৰ কৰি মনুৱে ধনাত্মক বিধান দিছে যদিও অধিকাংশই আপত্তিজনক তথা গ্ৰহণযোগ্য নহয়। ভাৰতীয় সমাজত এল জি বি টি কিউ+ সম্প্ৰদায়ৰ নিম্নগামী স্থানৰ বাবে মনুস্মৃতি গ্ৰন্থখন দোষী। এই গ্ৰন্থখনে এই সম্প্ৰদায়ৰ পতনত ইন্ধন যোগাই আহিছে। মনুস্মৃতি গ্ৰন্থখন সৰ্বোতপ্ৰকাৰে লিংগ বৈষম্যমূলক গ্ৰন্থ। মনুৰ ৰচনাৰ বাবে বৰ্তমানো এই সম্প্ৰদায়ে সমাজত স-সন্মানেৰে মূৰ দাঙি থিয় হ'ব পৰা নাই। নাৰী, ট্ৰেন্সজেণ্ডাৰ তথা সমকামী বিদ্বেষী মনুৰ দৰ্শনে (কেৱল একপক্ষীয়া লৈংগিক অভিব্যক্তি শ্ৰেষ্ঠ) ভাৰতীয় সমাজক অধিক পিছুৱাই নিছে। মনুস্মৃতি এখন ধৰ্মীয় গ্ৰন্থ। সেয়েহে মানুহে ইয়াৰ বচনক ঈশ্বৰৰ বচন হিচাপে গণ্য কৰে। এনে বিশ্বাসে ধৰ্মগ্ৰন্থখনক প্ৰশ্ন কৰিবলৈ সাহস নিদিয়ে। কিন্তু এই বিষয়ে যথেষ্ট আলোচনাৰ থল আছে। ধৰ্মৰ আঁৰত সমাজত এনে বৈষম্যমূলক আচৰণক উদগণি জগাব নালাগে। ই ধৰ্মৰ মূল ধাৰণাক আঘাত হানে। অভিহিত কৰে মানৱীয়তাক। বৰ্তমান মনুস্মৃতিৰ মনুৰ বচনৰ প্ৰচলন প্ৰায় কমি আহিছে। ক্ৰমাৎ উক্ত সম্প্ৰদায়ে মূলসুঁতিৰ সমাজ ব্যৱস্থাৰ লগত সমযোজন কৰাৰ যৎপৰোনাস্তি চেষ্টা অব্যাহত ৰাখিছে। ক'ৰবাত পাৰ হৈছে, ক'ৰবাত থমকি ৰৈছে। ❑

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

অসমীয়া গ্ৰন্থ ঃ

শৰ্মা, কিৰণ। *মনুসংহিতা,* চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী-১, পঞ্চম প্ৰকাশ, অক্টোবৰ, ২০২১। মুদ্ৰিত।

শৰ্মা, ৰুদ্ৰাণী। *নাৰী পৰিসৰ,* বিশাল প্ৰকাশ, গুৱাহাটী-৩, ২০১৫। মুদ্ৰিত।

গোস্বামী, হৰমোহন দেৱ। *সংস্কৃত সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী।* জ্যোতি প্ৰকাশন, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী-১, ষষ্ঠ প্ৰকাশ (পৰিবৰ্ধিত), ছেপ্টেম্বৰ, ২০১৬। মুদ্ৰিত।

हिन्दी ग्रन्थ ঃ

वनजा, के। *क्यीर विमर्श लेस्बियन,* गे, बाई-सेक्सुअल, ट्रांसजेंडर। वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2021। मुद्रित।

डागा, शीला। *किन्नर गाथा*। वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2020। मुद्रित।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

বৃদ্ধ মনস্তত্ব আৰু শীলভদ্ৰৰ চুটিগল্প ঃ এটি অধ্যয়ন

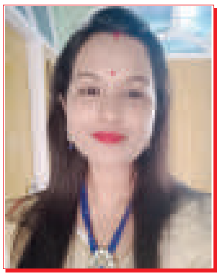

চুইটি বৰা

সাৰাংশ ঃ

বৰ্তমান সাহিত্যৰ বিধা সমূহৰ ভিতৰত এক জনপ্ৰিয় বিধা চুটিগল্প। উনবিংশ শতিকাতে আধুনিক বিশ্ব সাহিত্যত আৰম্ভ হোৱা চুটিগল্পই বৰ্তমান সকলো দিশৰ পৰাই পৰিপূৰ্ণ ৰূপ পৰিগ্ৰহণ কৰিছে। মানৱ জীৱনৰ ভিন্ ভিন্ দিশ উন্মোচন কৰা চুটিগল্পৰ মাজেৰে উদ্ভাসিত হোৱা এটি দিশ হৈছে -বৃদ্ধ মনস্তত্ব। বৃদ্ধাৱস্থাই হ'ল মানৱ জীৱনৰ একেবাৰে অন্তিম স্তৰ। এই প্ৰৌঢ়ত্ব বা বৃদ্ধাৱস্থাত মানৱ-মনৰ অন্তৰ্নিৰ্হিত বিভিন্ন ক্ৰিয়া-প্ৰতিক্ৰিয়াই হৈছে বৃদ্ধ মনস্তত্ব। অসমীয়া সাহিত্যৰ এগৰাকী আগশাৰীৰ গল্পকাৰ শীলভদ্ৰৰ (১৯২৪-২০০৮) বহুকেইটা গল্পৰ মাজেৰে বৃদ্ধমনস্তত্বৰ সাৰ্থক প্ৰতিফলন ঘটা পৰিলক্ষিত হৈছে। আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনত শীলভদ্ৰ "কোনো ক্ষোভ নাই", "চিঠি", "মোৰ বন্ধু কাইয়াম", "বুঢ়াবোৰ"-শীৰ্ষক গল্প চাৰিটাৰ মাজেৰে বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ কোনবোৰ দিশ উন্মোচিত হৈছে সেই সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ

চুটিগল্প, মনস্তত্ব, প্ৰৌঢ়ত্ব, জীৱন, মানসিকতা।

১.০০ অৱতৰণিকা ঃ

সাম্প্ৰতিক কথা সাহিত্যৰ এটি সমৃদ্ধিশালী শাখা হৈছে চুটিগল্প। উনবিংশ শতিকাৰ প্ৰথমভাগতে আমেৰিকা, ফ্ৰান্স, ৰুছ আৰু জাৰ্মান দেশৰ আলোচনীত প্ৰায় সমসাময়িক ভাৱে আৰম্ভ হোৱা চুটিগল্পই ক্ৰমান্বয়ে সমগ্ৰ বিশ্বৰ প্ৰতিখন দেশৰ প্ৰতিটো ভাষাতে জনপ্ৰিয় হৈ পৰে। ব্যস্ততাপূৰ্ণ আধুনিক জীৱনত ক্ষণিকৰ ভিতৰতে সাহিত্যৰ স্বাদ আস্বাদন কৰিবলৈ চুটিগল্পই উৎকৃষ্ট মাধ্যম। উপন্যাসৰ দৰে চুটিগল্পত বাহুল্যতা নাই আছে মাঁথো জীৱনৰ কোনো এক মুহূৰ্তৰ ব্যঞ্জনাময় চিত্ৰহে। সেয়ে মহেন্দ্ৰ বৰাই কৈছে, "চুটিগল্প যেন এটি পাখিলাহী পখিলা। নাচি নাচি উৰি আহে, এক লমহাৰ বাবে এটা ফুলৰ পাহিত বহি মৌ চোঁহে, তাৰ পাচত উৰামাৰি কোনোবাখন পায়গৈ। আমাৰ চকুৱে বন্দী কৰিব পাৰে মাথোন তাৰ এক লমহাৰ আকণ্ঠ মধুপান।" (বৰা/পৃষ্ঠাঃ ১৬৬)। উনবিংশ শতিকাৰ আৰম্ভ হোৱা চুটিগল্পই সময়ৰ গতিত ন-ন বিষয়বস্তু, আংগিক ইত্যাদিৰে সুসজ্জিত হৈ বৰ্তমান এক সমৃদ্ধিশালী ৰূপ পৰিগ্ৰহণ কৰিছে। কল্পনা আৰু যুক্তিনিষ্ঠাৰ উভয়ৰে সংমিশ্ৰণত চুটিগল্পৰ বিষয়বস্তুৰ মাজেৰে উদ্ভাসিত হৈছে মানৱজীৱনৰ ভিন্ ভিন্ বাস্তৱতা। মানৱৰ মনৰ অন্তৰ্নিৰ্হিত বিভিন্ন ক্ৰিয়া-প্ৰতিক্ৰিয়াৰ প্ৰকাশৰ জৰিয়তে

গৱেষক, বৈদেশিক ভাষা বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
সহকাৰী অধ্যাপক, দুধনৈ মহাবিদ্যালয়
গোৱালপাৰা-৭৮৩১২৪
৮৮৭৬৪৭৭৩০১
chuitytez@gmail.com

মনঃস্তাত্বিক দিশটোও সাৰ্থক ৰূপত সাম্প্ৰতিক বিভিন্ন গল্পৰ মাজেৰে উদ্ভাসিত হৈ উঠা পৰিলক্ষিত হৈছে। মানুহৰ জীৱনৰ অৰ্থাৎ মানৱ মনৰ ভিন্ ভিন্ স্তৰৰ মানসিক জগতখনৰ সন্তেদ দি নাৰী মনস্তত্ব, শিশু মনস্তত্ব, কৈশোৰ মনস্তত্ব, নৰ-নাৰী জৈৱিক বাসনা, ৰুগ্ন মনস্তত্ব, বৃদ্ধ মনস্তত্ব ইত্যাদি বিভিন্ন মনঃস্তত্বিক দৃষ্টিভংগীৰে অসমীয়া সাহিত্যত গল্প ৰচিত হৈছে। গল্পৰ চৰিত্ৰৰাজিৰ মনঃসমীক্ষাৰ জৰিয়তে বিভিন্ন মানসিক ক্ৰিয়া প্ৰতিক্ৰিয়াৰ স্বৰূপ দাঙি ধৰিলেও সৃষ্টিশীল সাহিত্য বাবেই ইয়াৰ মাজত কল্পনাৰ ৰহন নিশ্চিত ভাৱেই আহি পৰে। সেয়ে ত্ৰৈলোক্যনাথ গোস্বামীয়ে এই সম্পৰ্কে কৈছে, “গল্পৰ যোগেদি মানৱ মনৰ সূঐ বিশ্লেষণৰ চেষ্টাও দেখিবলৈ পোৱা যায়। কিন্তু এই বিশ্লেষণ মনোবিজ্ঞানৰ বিশ্লেষণ নহয়। মনোবৈজ্ঞানিক পণ্ডিতে যুক্তিৰ সহায়ত বা মানৱ-মনৰ বিশ্লেষণ কৰি শেষত কোনো সিদ্ধান্তত উপনীত হয়। গল্পত হ'লে পৰ্যবেক্ষণ আৰু কল্পনাৰ আলমত গল্পলেখকে মানৱ-মনৰ ক্ৰিয়া-প্ৰতিক্ৰিয়া ব্যক্ত কৰে।” (গোস্বমী/১৬)

মনস্তত্বমূলক গল্পৰ ধাৰাটোৰ এটি দিশ হ'ল বৃদ্ধ মনস্তত্বমূলক গল্প। বাৰ্ধক্য বা প্ৰৌঢ়ত্বই হ'ল মানৱ জীৱনৰ চৰম পৰিণতি। জীৱনৰ সমাপ্তিৰ প্ৰাক্‌মূহুৰ্তৰ এই বৃদ্ধ অৱস্থাত মানুহৰ মনৰ বিভিন্ন মানসিক ক্ৰিয়া-প্ৰতিক্ৰিয়াই হৈছে বৃদ্ধ মনস্তত্ব। জীৱনৰ বাৰেবৰণীয়া অভিজ্ঞতাৰে পুষ্ট হৈ এই স্তৰৰ মানুহে জীৱনৰ পৰা পাবলৈ একো বাকী নাথাকে, বৰং পোৱাক্ষিনৰ বা কৰাক্ষিনৰ স্মৃতি ৰোমন্থন হে কৰে। আমাৰ অসমীয়া গল্প সাহিত্যত নাৰী মনস্তত্ব বা মনস্তত্বৰ অন্যান্য দিশসমূহকলৈ যথেষ্ট সংখ্যক গল্পৰচিত হ'লেও বৃদ্ধমনস্তত্বৰ দিশটো লৈ অধিক সংখ্যক গল্প ৰচিত হোৱা পৰিলক্ষিত হোৱা নাই। তাৰ মাজত যিসকল অসমীয়া গল্পকাৰে এই বিষয়টো লৈ গল্প ৰচনা কৰিছে, তেওঁলোকৰ ভিতৰত শীলভদ্ৰ অন্যতম। অসমীয়া সাহিত্যৰ স্বনামধন্য গল্পকাৰ শীলভদ্ৰই তেওঁৰ বহুকেইটা গল্পৰ মাাজেৰে বৃদ্ধমনস্তত্বৰ দিশটো সাৰ্থক ভাৱে ফুটাই তুলিছে। “বৃদ্ধ মনস্তত্ব আৰু শীলভদ্ৰৰ চুটিগল্প” শীৰ্ষক আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনৰ মাজেৰে শীলভদ্ৰৰ নিৰ্বাচিত কেইটামান গল্পৰ মাজত বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ বিভিন্ন দিশ কেনেদৰে প্ৰতিভাত হৈছে সেই সম্পৰ্কে বিশ্লেষণ আগবঢ়োৱা হ'ব।

২.০০ গৱেষণা পত্ৰৰ পদ্ধতি ঃ

“বৃদ্ধ মনস্তত্ব আৰু শীলভদ্ৰৰ চুটিগল্প” শীৰ্ষক আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনত মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হ'ব যদিও, ঠাই বিশেষ কিছু পৰিমানে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰো সহায় লোৱা হ'ব।

৩.০০ গৱেষণা পত্ৰৰ পৰিসৰঃ

আমাৰ “বৃদ্ধ মনস্তত্ব আৰু শীলভদ্ৰৰ চুটিগল্প” শিৰোনামৰ গৱেষণা পত্ৰখনৰ পৰিসৰ ভিতৰত শীলভদ্ৰৰ চাৰিটা গল্প ‘কোনো ক্ষোভ নাই', ‘চিঠি', ‘মোৰ বন্ধু কাইয়াম' আৰু ‘বুঢ়াবোৰ' ৰ মাজেৰে বৃদ্ধমনস্তত্বৰ কেনে বোৰ দিশ ফুটি উঠিছে সেই সম্পৰ্কে বিশ্লেষণ কৰা হ'ব।

৪.০০ মূল বিষয়বস্তুৰ আলোচনাঃ

৪.০১ শীলভদ্ৰ আৰু তেওঁৰ সাহিত্যকৃতি ঃ

বিংশ শতিকাৰ ষাঠিৰ দশৰ পৰাই গল্প লিখিবলৈ আৰম্ভ কৰা শীলভদ্ৰ (১৯২৪-২০০৮) অসমীয়া গল্পসাহিত্যৰ এগৰাকী অন্যতম গল্পকাৰ। শীলভদ্ৰ ছদ্মনামেৰে সাহিত্যজগতত পৰিচিত গল্পকাৰজনৰ প্ৰকৃত নাম হ'ল ৰেৱতী মোহন দত্ত চৌধুৰী। প্ৰায় চল্লিছ বছৰ বয়সত গল্প লিখিবলৈ আৰম্ভ কৰা শীলভদ্ৰ অসমীয়া সাহিত্যত ‘লেটষ্টাৰ্টাৰ' গল্পকাৰ হিচাপে সকলোৰে মাজত জনাজাত। ১৯৬৪ চনৰ ‘অসম বাতৰি'ৰ পুজা সংখ্যাত ‘অভিযোগ' নামৰ গল্পটো লিখি গল্পকাৰ হিচাপে অসমীয়া সাহিত্যত খোজ পেলোৱা শীলভদ্ৰৰ মুঠ প্ৰকাশিত গল্প সংকলনৰ ২৫ খন। “মধুপুৰ বহুদূৰ” গল্পসংকলনটোৰ বাবে ১৯৯৪ চনত সাহিত্য অকাঁডেমী বঁটা লাভ কৰা শীলভদ্ৰৰ গল্পৰ বিষয়বস্তু, উপস্থাপন ৰীতি, আংগিক, ভাষা-শৈলী ইত্যাদি সকলো দিশতে এক সুকীয়া বৈশিষ্ট্য পৰিলক্ষিত হয়। বাস্তৱজীৱনৰ প্ৰতিটো অভিজ্ঞতাৰ পৰাই গল্পৰ বিষয়বস্তু সংগ্ৰহ কৰা শীলভদ্ৰৰ গল্পৰ ব্যতিক্ৰমী আংগিক আৰু অনুনকৰনীয় বুদ্ধিদীপ্ত কথা শৈলীয়ে পাঠকক বাৰুকৈয়ে আকৰ্ষিত কৰিছিল। এই সম্পৰ্কে প্ৰহ্লাদ কুমাৰ বৰুৱায়ো কৈছিল, “শীলভদ্ৰৰ গল্পই পাঠকক সহজে আকৰ্ষণ কৰাৰ মূল কাৰণটো হ'ল- শীলভদ্ৰৰ গল্প কোৱাৰ অনাড়ম্বৰ শৈলী আৰু অতি বাস্তৱ ধৰ্মী জীৱন চিত্ৰণ।” (বৰুৱা/২৮২) প্ৰৌঢ়ত্বৰ এক বিশেষ জিজ্ঞাসু দৃষ্টিভংগী, পৰম্পৰাগত আৰু আধুনিকতাৰ সংমিশ্ৰণত গঢ়ি উঠা এক অন্যান্য আংগিকৰ বাবে শীলভদ্ৰৰ গল্পই লাভ কৰিছিল বিশেষ মাত্ৰা। সমকালীন সমাজখনৰ শাসক, শোষক, ভণ্ড উচ্চ শ্ৰেণীৰ লোকৰ পৰা আৰম্ভ কৰি শিশু, বৃদ্ধলৈকে সকলো স্তৰৰ লোকৰ কথাই বাস্তৱসন্মত ৰূপত তুলি ধৰা গল্পকাৰ জনৰ গল্পৰ ভাষাও আছিল অতি আড়ম্বৰহীন আৰু পৰিমিত।

৪.০২ শীলভদ্ৰৰ গল্পত প্ৰতিফলিত বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ চিত্ৰ ঃ

অসমীয়া সাহিত্যত বৃদ্ধ মনস্তত্বক লৈ ৰচিত হোৱা গল্পসমূহৰ ভিতৰত অন্যতম এটি গল্প হ'ল-শীলভদ্ৰৰ 'কোনো ক্ষোভ নাই'। গল্পটিত মানৱ জীৱনৰ শেষৰটো স্তৰ বৃদ্ধাৱস্থাত সন্মুখীন হোৱা বিভিন্ন সামাজিক, পাৰিবাৰিক সমস্যা তথা প্ৰতিবন্ধকতাৰ কথা মনোৰম ৰূপত প্ৰতিফলিত হৈছে। বৃদ্ধাৱস্থাত মানুহৰ শাৰীৰিক বল শক্তি বহুপৰিমানে কমি আহিলেও মানসিকভাৱে শক্তিশালী হৈয়ে থাকে। কিন্তু পৰিয়াল বা সমাজৰ লোকে বিভিন্ন নীতি-নিয়ম, প্ৰতিবন্ধকতা আৰোপ কৰি বৃদ্ধ এজনক শাৰীৰিক-মানসিকভৱে অধিক পঙ্গু কৰি পেলাব বিচাৰে। 'কোনো ক্ষোভ নাই' গল্পটোৰ কথক ৰূপী মূল চৰিত্ৰটোৰ ক্ষেত্ৰটো এনেবোৰ সমস্যাই দেখা দিছে। কথকৰ বয়স হ'লেও তেওঁৰ খেল-ধেমালি, গান-বাজানা, গল্প-আড্ডাত চখ। কিন্তু তেওঁৰ বয়সৰ অচিলাতে ঘৰ-পৰিয়াল, সমাজ সকলোৱে তেওঁক এই সকলোৰ পৰা আঁতৰি আহি গহীন হৈ বহি থকাটোৱে বিচাৰে। নাতি-নাতিনী কেইটাই বহুদিন মাছখোৱা নাই বুলি তেওঁ চাইকেল মাৰি গৈ চৈধ্য মাইল দূৰৰ চাৰেংখোলা মাছৰ মহলৰ পৰা প্ৰকাণ্ড ৰৌ মাছ এটা আনিলেগৈ। তাকে দেখি নাতি-নাতিনী কেইটাৰ অন্তৰ উলাহে নধৰা হ'ল। কথকেও ইয়াকে দেখি পৰম সন্তুষ্টি লভিলে কিন্তু বুঢ়া মানুহটোৱে কেলৈ ইমান দূৰৰ পৰা মাছ আনিব লাগে বুলি ঘৰৰ পুত্ৰ-বোৱাৰী সকলক মুখবোৰ গভীৰ হ'ল। সেইদৰে কেতিয়াবা নাতিনীয়েৰ ফুটবল খেল এখন চাই উল্লাসত জাঁপ এটা দিলেও পুতেকহঁতৰ ৰোষত পৰিবলগীয়া হয়। বয়স গৈ আহিলেই যেন নিজৰ সকলো চখ-চৌখিনকো বিসৰ্জন দি বিচনাত পৰি কেঁকাই-গেঁথাই থাকিব লাগে। আনৰ আগত নৱ প্ৰজন্মৰ, পুতেক-বোৱাৰীয়েকৰ বদনাম গাই নাথাকি যদি সন্ধিয়া ব্ৰীজ খেলে, কাৰোবাৰ লগত চাৰ্কাচ, থিয়েটাৰ চাবলৈ যাই তেতিয়া মানুহে বেয়া পাই। কিন্তু কথকে লোকৰ কথালৈ কেতিয়াও কাণ নিদিয়ে, বৃদ্ধ বয়সতো তেওঁ নিজে ভালপোৱা, আনৰ উপকাৰ সাধন হোৱা কাম কৰিব বিচাৰে। সেয়ে তেওঁ কৈছে-

"বয়স হৈছে। নাই হোৱা বুলিতো কোৱা নাই। কৈছো জানো ? তিনি কুৰি পাৰ হ'ল। তে ? কি কৰিব লাগিব ? বিচনাত পৰি কেঁকাই-গেঁথাই থাকিব লাগিব নেকি? সেইটো কৰি থাকিলে সকলোৱে সন্তুষ্ট। তেনেকৈ মই লোকক সন্তুষ্ট কৰিব নোৱাৰো।" (শীলভদ্ৰ/৫৬)

গল্পটোত গল্পকাৰে পৰম্পৰাগত বৃদ্ধ মনস্তত্বকৈ কথকৰ চৰিত্ৰ বা মনস্তাত্বিক এক দিথক ৰূপে অংকন কৰিছে। বৃদ্ধ অৱস্থাত মানুহ সাধাৰণতে পৰিয়াল সমাজ সকলোৱে প্ৰতি অসন্তুষ্টি প্ৰকাশ কৰি, সকলোৱে বিভিন্ন দোষ বিচাৰি থাকে। কিন্তু তাৰ বিপৰীতে কথক ৰূপী গল্পটোৰ মূল চৰিত্ৰটো এগৰাকী বৃদ্ধ হ'লেও, তেওঁৰ মনত কাৰো প্ৰতি ক্ষোভ নাই। নিজে ভালপোৱা কাম কৰি তেওঁ এই বৃদ্ধাৱস্থাটোও সুন্দৰভাৱে উদযাপন কৰিব বিছাৰিছে। এদিন তেওঁ এটি শিশু ৰে'লৰ আগৰ পৰা বচাবলৈ গৈ নিজৰ এখন ভৰিও হেৰুৱাবলগীয়া হয়। পৰিয়াল-বন্ধু সকলোৱে তেওঁক বৃদ্ধ অৱস্থাত এনে বিপদ এটা চপাই লোৱাৰ বাবে কৰ্কথনা কৰিছিল কিন্তু তেওঁৰ মনত কোনো ক্ষোভ বা আক্ষেপ নাছিল, হাস্যোদ্দীপ্ত ল'ৰাটোৰ জীৱন ৰক্ষা কৰাৰ সুখে তেওঁৰ মনটো তৃপ্তিৰে ভৰাই তুলিছিল মুঠতে শীলভদ্ৰই 'কোনো ক্ষোভ নাই ' গল্পটোৰ জৰিয়তে বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ অন্য এটি দিশ উন্মোচন কৰিছে, য'ত বৃদ্ধজনে আপোনমনৰে হাঁহি-স্ফূৰ্তি কৰি জীৱন কটাব বিচাৰিলেও পৰিয়াল-সমাজৰ লোকে যেন বাধা আৰোপ কৰি প্ৰতিবন্ধকতাৰ সৃষ্টি কৰে। তেওঁক শাৰীৰিক ভাৱেই নহয় মানসিক ভাৱেও বৃদ্ধ হ'বলৈ বাধ্য কৰাব বিচাৰে। কিন্তু

গল্পটোত মূল চৰিত্ৰ কথকে এই পৰম্পৰাগত সকলো চিন্তা-ধাৰা দলিয়াই দি নিজস্ব মনেৰে জীৱন উদ্‌যাপন কৰিছে।

বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ ভিন্ন দিশৰ উন্মোচন হোৱা শীলভদ্ৰৰ আন এটি গল্প হ'ল-'চিঠি'। চহৰৰ দুজন অৱসৰ প্ৰাপ্ত বন্ধু ভূদেৱ চৌধুৰী আৰু প্ৰশান্ত শৰ্মাৰ জীৱনৰ বিয়লি বেলাৰ কিছু দৃশ্য গল্পটোৰ মাজত প্ৰতিফলিত হৈছে। দুয়োজন বন্ধু একেখন চহৰতে থাকে যদিও বিভিন্ন কাৰণত দুয়োজনৰ মাজত বহুদিন একো যোগসূত্ৰ নাছিল। কিন্তু ভূদেৱ চৌধুৰীয়ে এদিন হঠাৎ প্ৰশান্ত শৰ্মালৈ খা-খবৰ লৈ এখন সাধাৰণ চিঠি লিখিলে। কিন্তু এই চিঠিখনেই প্ৰশান্ত শৰ্মাৰ মৃত্যুৰ আগমূহুৰ্তৰ সময়ক্ষিন আনন্দেৰে ওপচাই পেলাছিল। বৃদ্ধ সয়সত সকলো মানুহেই সাধাৰণতে স্মৃতিকাতৰ হৈ উঠে। অতীত জীৱনৰ ভাললগা-বেয়ালগা মূহুৰ্তবোৰ ৰোমন্থন কৰিয়ে তেওঁলোকে জীৱনৰ মধুৰতা বিচাৰে। ভূদেৱ চৌধুৰীয়েও প্ৰশান্ত শৰ্মালৈ চিঠিখন লিখিয়ে নিজৰ জীৱনত বিভিন্ন সময়ত বিভিন্ন জনলৈ লিখা চিঠিবোৰৰ কথা ৰোমন্থন কৰি বন্ধুৰ চিঠিৰ উত্তৰলৈ অপেক্ষা কৰি থাকিল। কিন্তু তেওঁ যে বন্ধুৰ চিঠিৰ উত্তৰলৈ অপেক্ষা কৰি আছিল সেই কথা তেওঁ ঘৰৰ আন সদস্য সকলক কোৱা নাই, জানোছা তেওঁক কোনোবাই সেইকথাটোৰ কাৰণে ইতিকিং কৰে। ভূদেৱ চৌধুৰীৰ এই মনৰ অৱস্থাটোৰ সুন্দৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে গল্পটোত এইদৰে-

"ভূদেৱ চৌধুৰী আজিকালি নিজেও চিঠিৰ কাৰণে ৰৈ থাকে। তেওঁলোকৰ ফালে পিয়নজন একমান বজাত আহে। তেওঁ ঘড়ী চাই থাকে। এক বাজিবৰ হ'লে তেওঁ বাহিৰৰ কোঠাত বহি বাটৰ ফালে দৃষ্টি নিবদ্ধ কৰি ৰাখে। অৱশ্যে তেওঁ হাতত এখন কিতাপ বা আলোচনী লয়। আচলতে তেওঁ পিয়নজনৰ কাৰণে ৰৈ থকা নাই। কিবা চিঠিপত্ৰ থাকিলে তেওঁকো দি যাবই। ৰখি থাকিব লাগিছে কিয়? ৰখি থকাটো যেন লাজৰ কথা।" (শীলভদ্ৰ/৭৮)

শিশু মনস্তত্ব আৰু বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ মাজতো বহু ক্ষিন সাদৃশ্য দেখিবলৈ পোৱা যায়। শিশু এটিয়ে নিজে ভালপোৱা বস্তুটো সকলোকে দেখুৱাই মনটো যেনেকৈ আনন্দ পাই, ঠিক সেইদৰে বৃদ্ধ সকলেও নিজে ভালপোৱা বস্তুটো অথবা ভালপোৱা কথা সকলোকে দেখুৱাই বা কৈ থাকি ভাল পাই। প্ৰশান্ত শৰ্মায়ো বন্ধু ভূদেৱ চৌধুৰীৰ পৰা চিঠিখন পাই নথৈ আনন্দিত হৈছিল। ঘৰলৈ যিয়েই আহিছিল সকলোকে চিঠিখন দেখুৱাইছিল। সকলোৰে আগত বন্ধু চৌধুৰীৰ কথাকে কৈ আছিল। সেই চিঠিখন লৈয়ে মৃত্যুৰ আগমূহুৰ্তৰ সময়ক্ষিন প্ৰশান্ত শৰ্মা ব্যস্ত আছিল।

শীলভদ্ৰৰ "মোৰ বন্ধু কাইয়াম" গল্পটোৰ মাজেৰেও বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ প্ৰতিফলন ঘটা পৰিলক্ষিত হৈছে। ভদ্ৰই অৱসৰ গ্ৰহণৰ পিছত মধুপুৰলৈ আহিছিল পুৰণি শৈশৱ-কৈশোৰৰ বন্ধু-বান্ধৱ সকলৰ লগত বহি আড্ডা মাৰি কিছুদিন কটাব বুলি। কিন্তু কেইদিন মান মধুপুৰত থাকি দুই-এক পুৰণি বন্ধুক লগ ধৰিয়ে ভদ্ৰ নিৰাশ হৈ পৰিল আৰু সময়তকৈ সোনকালেই উভতি যাবলৈ ওলাল। আহিবৰ দিনা হঠাৎ পুৰণি বন্ধু আব্দুল কাইয়ামক লগ পালে আৰু শেষত এইজন বন্ধুৰ আন্তৰিকতাত তেওঁ মুগ্ধ হৈ পৰিল। মুছলমান সমাজত কাৰোবাক আন্তৰিক সম্ভাষণ জনাবলৈ গাত আতৰ অলপ লগাই দিয়ে। কাইয়ামে পৰম আন্তৰিকতাৰে ভদ্ৰৰ গাত লগাই দিয়া আতৰৰ সুগন্ধই তেওঁৰ শৰীৰেই নহয়, মনটোকো শুভাষিত কৰি তুলিলে। বয়স বাঢ়ি অহাৰ লগে লগে মানুহৰ মানসিকতাৰো পৰিবৰ্তন হৈ আহে। ডেকা কালৰ তচ্‌বজীয়া ল'ৰাবোৰো বৃদ্ধ অৱস্থাত গহীন-গম্ভীৰ হৈ এক বিপৰীত ৰূপ ধাৰণ কৰে। জীৱনৰ বিবিধ অভিজ্ঞতাৰে পুষ্ট বয়সস্থ লোক সকলৰ কোনো কথাতে বৰ বিশেষ কৌতুহ'ল নাথাকে। ভদ্ৰ বহুদিনৰ পিছত মধুপুৰলৈ আহিছে, এই কথাটোলৈয়ো কোনো এগৰাকী বয়সস্থ বন্ধুৰ মনত কৌতুহ'ল নাই। ইয়ো বৃদ্ধ মনস্তত্বৰে এটি দিশ। ভদ্ৰৰ বন্ধু শৰ্মা, নগেন, বিমল, সুশীল ইত্যাদি বহুকেইটা চৰিত্ৰৰ মাজেৰেই এই দিশটো সুন্দৰ ৰূপত বাঙ্ময় হৈ উঠিছে।

বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ প্ৰকাশ ঘটা শীলভদ্ৰৰ আন এটি গল্প হ'ল-'বুঢ়াবোৰ'। চাকৰি জীৱনৰ পৰা অৱসৰ গ্ৰহণ কৰাৰ পিছত মানুহৰ জীৱনলৈ এক অভাৱনীয় পৰিবৰ্তন আহে। অৱসৰ গ্ৰহণ কৰাৰ পিছত ভুপতি চৌধুৰীৰ সময়ো পাৰ নোহোৱা হৈছে। দিনটো কিদৰে কটাব তেওঁ ভাবি নোপোৱা হ'ল। ঘৰৰ মানুহৰ বাবেও তেওঁ অবাঞ্চিত হৈ পৰিছে, তেনে এক ভাব অৱসৰ গ্ৰহণ কৰা লোকসকলৰ মনলৈ সঘনে আহি থাকে। সেয়ে তেওঁলোকে বিভিন্ন সৰু-সুৰা কাম কৰি হ'লেও নিজকে ব্যস্ত কৰি ৰাখে। কোনো ঘৰত এনে বহি নাথাকে। ভুপতি চৌধুৰীয়ে লগৰ সকলে কি কৰিনো সময় কটাইছে বুলি অনুসন্ধান কৰোতে সেয়ে দেখিলে-

“তেওঁ দেখিলে যে আজিকালি কোনো এজন বুঢ়াই দেখোন তৎক্ষণাৎ বুঢ়া হ’বলৈ মান্তি নহয়। সকলোৰে কৰ্মদক্ষতা আৰু উৎসাহ যেন আগতকৈ বাঢ়িহে গৈছে। মহা ব্যস্ত। চৌধুৰীৰ লগৰ কিছুমান কৰ্মৰত অৱস্থাত আইন পৰীক্ষা পাছ কৰি থৈছিল, এতিয়া মহোৎসাহে ওকালতি কৰিবলৈ লৈছে। নিয়মানুৱৰ্তিতাও দহগুণ বাঢ়ি গৈছে। ....” (শীলভদ্ৰ/১৭১)

চৌধুৰীৰ লগৰ কোনোজনে যদি ওকালতি কৰিছে কোনোজনে দোকান দিছে, কোনো আকৌ ৰাজনৈতিক দলত যোগদান কৰি ৰাজনৈতিক কাৰ্য্যত ব্যস্ত হৈছে। জগন্নাথ বৰুৱাই নতুনকৈ ঘৰ সাজিছে। তেওঁৰ দুয়োগৰাকী জীয়ৰীয়ে ইতিমধ্য বিদেশৰ নাগৰিকত্ব লৈ বিদেশত থাকিবলৈ লৈছে। তথাপিও তেওঁ ঘৰটো নতুনকৈ সাজিবলৈ লৈছে, নিজকে ব্যস্ত ৰাখিবলৈ, নিজৰ অস্তিত্ব বিস্তৃত কৰিবলৈ। ৰাজেন ফুকনে জ্যোতিষ শাস্ত্ৰৰে চৰ্চা কৰিছে। ভূপতি চৌধুৰীয়ে বন্ধু সকল কিদৰে, কি কৰি আছে সেই খবৰ লৈয়ে ব্যস্ত আছে। ঘৰতে বহি থাকি ঘৰৰ সদস্যৰ অৱহেলিত ন’হবৰ বাবেই সকলোৰে বৃদ্ধ অৱস্থাতো বিভিন্ন কামত লিপ্ত হৈ পৰিছে।

৫.০০ উপসংহাৰ ঃ

বাস্তৱসমাজখনৰ তদানীতন্ত পৰিবেশ-পৰিস্থিতিৰ পৰাই প্ৰায় প্ৰতিটো গল্পৰ বিষয়বস্তু সংগ্ৰহ কৰা শীলভদ্ৰৰ গল্পৰ মাজেৰে বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ দিশটোও সাৰ্থক ৰূপত ৰূপায়িত হৈ উঠিছে বুলি আমি ভাবিব পাৰো। তেওঁ বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ বিভিন্ন দিশ, বিভিন্ন চৰিত্ৰৰ জৰিয়তে যথেষ্ট বাস্তৱসন্মত ৰূপে অংকিত কৰিছে। তেওঁ যিদৰে সমসাময়িক সমাজখনৰ প্ৰায় প্ৰতিটো দিশেই গল্পৰ মাজেৰে প্ৰস্ফুটিত কৰি তুলিছে, সেইদৰে গল্পসমূহৰ মাজেৰে নিজৰ জীৱন দৰ্শনো সফলভাৱে উদ্ভাষিত কৰিছে। বৃদ্ধাৱস্থাৰ বিভিন্ন দিশ অথবা বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ ভিন্ন দিশ সমূহ অতি সাৰ্থক ভাৱে গল্পৰ মাজেৰে বিশ্লেষণ কৰি তাৰ মাজেৰে শ্ৰোতা পাঠককো সজাগ কৰি তোলাৰ তেওঁ এক প্ৰয়াস কৰিছে। ❑

প্ৰসঙ্গ সূত্ৰ ঃ

১। বৰা, মহেন্দ্ৰ। সাহিত্য উপক্ৰমনিকা। গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেন্টচ্ ষ্ট’ৰচ্, ২০১৩। পৃ ঃ ১৬৬। মুদ্ৰিত
২। গোস্বামী, ত্ৰৈলোক্য নাথ। আধুনিক গল্প সাহিত্য। গুৱাহাটী ঃ বানী প্ৰকাশ প্ৰাইভেট লিমিটেড, ২০১৬।পৃঃ ১৬। মুদ্ৰিত
৩। বৰুৱা, প্ৰহ্লাদ কুমাৰ। অসমীয়া চুটি গল্পৰ অধ্যয়ন। গুৱাহাটী ঃ বনলতা,২০১৭।পৃ ঃ ২৮২। মুদ্ৰিত
৪। শীলভদ্ৰৰ গল্প সমগ্ৰ (প্ৰথম খণ্ড)। গুৱাহাটী ঃ বনলতা, ২০০৭।পৃ ঃ৫৬। মুদ্ৰিত।
৫। শীলভদ্ৰৰ গল্প সমগ্ৰ (দ্বিতীয় খণ্ড)। গুৱাহাটী ঃ বনলতা, ২০০৮।পৃ ঃ৭৮। মুদ্ৰিত
৬। প্ৰগুক্ত গ্ৰন্থ। পৃ ঃ১৭১

গ্ৰন্থ পঞ্জী ঃ

মুখ্য সমল ঃ

১। শীলভদ্ৰৰ গল্প সমগ্ৰ (প্ৰথম খণ্ড)। গুৱাহাটী ঃ বনলতা, ২০০৭।মুদ্ৰিত
২। শীলভদ্ৰৰ গল্প সমগ্ৰ (দ্বিতীয় খণ্ড)। গুৱাহাটী ঃ বনলতা, ২০০৮।মুদ্ৰিত

গৌণ সমল ঃ

১। আহমেদ, কামালুদ্দিন। সাহিত্য অভিব্যক্তি। গুৱাহাটী ঃ বান্ধৱ, ২০১৪। মুদ্ৰিত
২। গোস্বামী, ত্ৰৈলোক্য নাথ। আধুনিক গল্প সাহিত্য। গুৱাহাটী ঃ বানী প্ৰকাশ প্ৰইভেট লিমিটেড, ২০১৬। মুদ্ৰিত
৩। বৰগোহাঞি, হোমেন (সম্পা)। অসমীয়া গল্প সংকলন, তৃতীয় খণ্ড। গুৱাহাটী ঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ,২০০৭। মুদ্ৰিত
৪। বৰা, অপূৰ্ব। (সম্পা)। অসমীয়া চুটিগল্প ঐতিহ্য আৰু বিৱৰ্তন। যোৰহাট কেন্দ্ৰীয় মহাবিদ্যালয় প্ৰকাশন কোষ,২০১২। মুদ্ৰিত
৫। বৰা, মহেন্দ্ৰ। সাহিত্য উপক্ৰমনিকা। গুৱাহাটী ঃষ্টুডেন্টচ ষ্ট’ৰচ্, ২০১৩। মুদ্ৰিত
৬। বৰুৱা, প্ৰহলাদ কুমাৰ। অসমীয়া চুটি গল্পৰ অধ্যয়ন। গুৱাহাটী ঃ বনলতা, ২০১৭। মুদ্ৰিত

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

মনুস্মৃতিৰ বিশেষ উদ্ধৃতিৰে ধৰ্মশাস্ত্ৰত মাতৃ-পত্নীৰ স্থান ঃ এক অধ্যয়ন

গৌৰীস্মিতা বৰুৱা

গৱেষক, সংস্কৃত বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়
গুৱাহাটী, অসম-৭৮১০০১
৯৭০৬৪৪৩৭৮৪
gaurishmita@gmail.com

ড° বাগ্মিতা শাণ্ডিল্য

সহযোগী অধ্যাপিকা, সংস্কৃত বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়
গুৱাহাটী, অসম-৭৮১০০১
৯১০১৫৬৯২৯৭
bagmitasandilya@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

নাৰী হৈছে প্ৰকৃতিৰ এক অনন্য সৃষ্টি। নাৰী সমাজৰ প্ৰধান আৰু অবিচ্ছেদ্য অংগ। এগৰাকী নাৰীক দেৱী, মাতৃ, পত্নী, ভগ্নী, জীয়ৰী আদি বিভিন্ন ৰূপত দেখা পোৱা যায়। বৈদিক যুগৰ পৰাই নাৰীৰ স্থিতি সম্পৰ্কে আমি পঢ়িবলৈ পাওঁ। বৈদিক যুগত নাৰীৰ স্থান অতি উচ্চ আছিল। ঋগ্বেদত আমি বিশ্ববাৰা, অপালা, ৰোমশা, অম্ভৃনীবাক্ আদি বেদমন্ত্ৰ ৰচয়িত্ৰী ঋষিৰ নাম পাওঁ। সেই সময়ত নাৰীসকলৰ শিক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত, ধৰ্মীয় আৰু ৰাজহুৱা কাম-কাজত অংশ গ্ৰহণ, অৰ্থনৈতিক, বৃত্তিগত স্বাধীনতা আদি আছিল। পৰৱৰ্তী ধৰ্মশাস্ত্ৰৰ সময়ত নাৰীৰ মৰ্যাদা লাহে লাহে হ্ৰাস পাই কিছু পৰিৱৰ্তন ঘটিছিল। স্মৃতিক ধৰ্মশাস্ত্ৰ বুলি কোৱা হয়। মনুস্মৃতি, যাজ্ঞবল্ক্যস্মৃতি আদি উল্লেখযোগ্য স্মৃতি গ্ৰন্থ। স্মৃতি গ্ৰন্থত মানৱ জীৱনৰ আৱশ্যকীয় বিষয়বোৰ বৰ্ণনা কৰাৰ উপৰিও নাৰীৰ মৰ্যাদা, কৰ্তব্য আদিৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা আছে। মাতৃক সদায় সন্মান কৰিব লাগে আৰু তেওঁৰ চৰণ স্পৰ্শ কৰিব লাগে। পৃথিৱীয়ে যেনেকৈ সমগ্ৰ সৃষ্টিৰ ওজন বহন কৰে, ঠিক সেইদৰে এগৰাকী মাতৃয়ে নিজৰ পুত্ৰক গৰ্ভত লৈ জন্মৰ পিছতো লালন-পালন কৰি বহন কৰে। মানুহৰ জন্মৰ সময়ত মাতৃ-পিতৃয়ে যি দুখ কষ্ট সহ্য কৰে সেয়া ঋণ সন্তানে এশ বছৰতো পৰিশোধ কৰিব নোৱাৰে বুলি স্মৃতিত আছে। তাৰোপৰি যি বংশত নাৰীক পূজা কৰা হয় তাত দেৱতাই বাস কৰে বুলি ধৰ্ম শাস্ত্ৰত উল্লেখ আছে। শ্ৰীবৃদ্ধি কামনা কৰা লোকাসকলে নাৰীক সন্তুষ্টি প্ৰদান কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিব লাগে। উক্ত পত্ৰক্ষনত ধৰ্মশাস্ত্ৰত মাতৃ-পত্নীৰ স্থিতিৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

নাৰী, স্মৃতি, ধৰ্মশাস্ত্ৰ, মাতৃ, পত্নী।

প্ৰস্তাৱনা ঃ

নাৰী হৈছে প্ৰকৃতিৰ এক অনন্য সৃষ্টি। নাৰী সমাজৰ প্ৰধান আৰু অবিচ্ছেদ্য অংগ। সেয়েহে, নাৰীৰ সমাজৰ প্ৰতি আৰু সমাজৰ নাৰীৰ প্ৰতি বিশেষ মহত্ব আৰু কৰ্তব্য আছে। এগৰাকী নাৰীক দেৱী, মাতৃ, পত্নী, ভগ্নী, জীয়ৰী আদি বিভিন্ন ৰূপত দেখা পোৱা যায়। বৈদিক যুগৰ পৰাই নাৰীৰ স্থিতি সম্পৰ্কে আমি পঢ়িবলৈ পাঁও। ঋগ্বেদত বিশ্ববাৰা (৫.২৮), অপালা (৮.৯), ৰোমশা (১.১২৬), অম্ভৃনীবাক্ (১০.১২৫) আদি

বেদমন্ত্ৰ ৰচয়িত্ৰী ঋষিৰ নাম পাওঁ। ঋগ্বেদ সংহিতাৰ দিনৰ পৰা সূত্ৰ সাহিত্যৰ কাললৈকে তিনিটা উচ্চ শ্ৰেণীৰ নাৰীসকলক লগুণ দিয়া হৈছিল। পত্নীৰ অবিহনে যজ্ঞ সম্পাদন কাৰ্য সম্পন্ন কৰিব নোৱাৰিছিল। অষ্টাধ্যায়ী প্ৰণেতা পাণিনিয়ে পত্নী শব্দৰ অৰ্থ ভাঙি দেখুৱাইছে যে 'পত্যুৰ্ণঃ যজ্ঞসংযোগে' অৰ্থাৎ 'পতি' শব্দত 'ন' প্ৰত্যয় সংযোগে পতিক যজ্ঞ সম্পাদন কাৰ্যত সহায় কৰা বুজায়। শতপথব্ৰাহ্মণত স্পষ্টকৈ উল্লেখ কৰিছে যে পত্নী হ'ল যজ্ঞৰ অৰ্ধাংশ, 'অধো বা এয যজ্ঞস্য পত্নী'।[১] বৈদিক সাহিত্যৰ অধ্যয়ন কৰি দেখা পোৱা গৈছে যে বৈদিক যুগত পত্নীৰ স্থিতি শক্তিশালী আছিল। পত্নীসকলেও পৰিয়ালত পুৰুষৰ সমানে সন্মান লাভ কৰিছিল। ব্ৰহ্মচাৰী আদিয়ে পত্নীৰ সৈতে কেনে ব্যৱহাৰ আৰু সন্মান দিব লাগে তাৰ বিষয়েও বৰ্ণনা আছে। ধৰ্মসূত্ৰকাৰ গৌতমে কৈছে যে যাত্ৰাৰ পৰা উভতি অহা ব্ৰহ্মচাৰীয়ে গুৰুৰ পত্নীৰ চৰণ স্পৰ্শ কৰিব লাগে। 'বিপ্ৰোষ্যোপসঙ্‌ গ্ৰহণং গুৰু ভাৰ্যানাম্'।[২] কিন্তু কিছুমান আচাৰ্যই কৈছে যে যদি শিষ্যৰ বয়স ৰছ বছৰ হয় তেন্তে ডেকা গুৰুপত্নীৰ ভৰি স্পৰ্শ কৰিব নালাগে। 'নৈকে যুৱতীনাং ব্যৱহাৰ প্ৰাপ্তেন'।[৩] বৈদিক যুগত নাৰীৰ স্থান অতি উচ্চ আছিল। সেই সময়ছোৱাত নাৰীসকলৰ শিক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত ধৰ্মীয় আৰু ৰাজহুৱা কাম-কাজত অংশ গ্ৰহণ কৰা, নিজৰ স্বামী নিৰ্বাচন কৰাৰ স্বাধীনতা, পাৰিবাৰিক বিষয়ত অৰ্ধাঙ্গিনী হিচাপে স্বাধীনতা, সম্পত্তি আৰু উত্তৰাধিকাৰৰ অধিকাৰ, অৰ্থনৈতিক আৰু বৃত্তিগত স্বাধীনতা আদি আছিল। তাৰ পৰৱৰ্ত্তী ধৰ্মশাস্ত্ৰৰ সময়ত নাৰীৰ মৰ্যাদা লাহে লাহে হ্ৰাস পাই কিছু পৰিৱৰ্তন ঘটিল। কন্যাক আনুষ্ঠানিক শিক্ষাৰ পৰা আঁতৰাই ৰখাৰ লগতে তেওঁলোকৰ স্বাধীনতা বহু পৰিমাণে কমি গৈছিল। পুত্ৰক অধিক গুৰুত্ব দিয়া হৈছিল আৰু কন্যাক বেদ পঢ়াত বাধা দিয়া হৈছিল। নাৰীৰ এনে দুৰ্বিষহ অৱস্থাৰ বাবে দায়ী কাৰক আছিল জাতি ব্যৱস্থা, শিক্ষাৰ অভাৱ আৰু কঠোৰ নিয়ম।

'ধৰ্মশাস্ত্ৰম্ তু বৈ স্মৃতিঃ'।[৪] অৰ্থাৎ স্মৃতিক ধৰ্মশাস্ত্ৰ বুলিও কোৱা হয়। আচাৰ, ব্যৱহাৰ, প্ৰায়শ্চিত্ত আৰু ৰাজধৰ্ম ধৰ্মশাস্ত্ৰৰ প্ৰমুখ বিষয়। স্মৃতি সাহিত্যৰ ভিতৰত মনুস্মৃতি হৈছে আটাইতকৈ প্ৰাচীন স্মৃতি গ্ৰন্থ। তাৰোপৰি যাজ্ঞবল্ক্যস্মৃতি, নাৰদস্মৃতি, বিষ্ণুস্মৃতি, দক্ষস্মৃতি আদি উল্লেখযোগ্য স্মৃতি গ্ৰন্থ। স্মৃতি গ্ৰন্থসমূহত মানৱজীৱনৰ আৱশ্যকীয় বিষয়বোৰ বৰ্ণনা কৰাৰ উপৰিও নাৰীৰ মৰ্যাদা, কৰ্তব্য আদিৰ বিষয়ে বিশদভাৱে আলোচনা কৰা আছে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

যিকোনো সময়তে যিকোনো দেশৰ শাস্ত্ৰ সমালোচনাত নাৰীৰ স্থিতি গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয়। ধৰ্মশাস্ত্ৰৰ সময়ত নাৰীৰ স্থিতিক লৈ বহুতো কথা শুনিবলৈ পোৱা যায়। সেয়েহে ধৰ্মশাস্ত্ৰৰ মুখ্য গ্ৰন্থৰ আলম লৈ সেই সময়ত মাতৃ-পত্নীৰ স্থান কেনেকুৱা আছিল সেই সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা এই অধ্যয়নৰ মূল উদ্দেশ্য।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

আলোচনা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে বৰ্ণনামূলক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

মাতৃৰ স্থান ঃ

হিন্দু সংস্কৃতিত মাতৃৰ স্থান অতি উচ্চ। মাতৃ হ'ল এটা পৰিয়ালৰ শক্তিশালী অংগ যিয়ে সকলো সদস্যক সংযোগ কৰি ৰাখে। বৈদিক কালত মাতৃ শব্দটো গৌৰৱৰ বিষয় আছিল। মাতৃ পৰিয়ালৰ বাবে সদায় ত্যাগ, তপস্যা আৰু প্ৰেমৰ প্ৰতীক। বেদত মাতৃক প্ৰশংসা কৰি কৈছে যে ঈশ্বৰৰ উপাসনাত পিতৃৰ সমানে মাতৃক পূজা কৰা হয় আৰু উষাৰ বৰ্ণনাত কোৱা হৈছে যে 'তস্যাতে ৰত্নভাজ ইমাহ বয়ং স্যাম মাতুৰ্ন সুনৱঃ'[৫] অৰ্থাৎ পুত্ৰ সদায় মাতৃৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত হয়।

গৌতম ধৰ্মসূত্ৰত কৈছে যে 'আচাৰ্য ঃ শ্ৰেষ্ঠো গুৰুণাং মাতেত্যেকে'[৬] অৰ্থাৎ মাতৃক গুৰুতকৈও শ্ৰেষ্ঠ বুলি গণ্য কৰা হয় আৰু মাতৃক পৃথিৱীৰ মূৰ্তি বুলি কোৱা হয়। মনুৱে কৈছে -

উপাধ্যায়ান্দাচাৰ্য আচাৰ্য়ানাং শতং পিতা।
সহস্ৰং তু পিতৃন্মাতা গৌৰৱেণাতিৰিচ্যতে।[৭]

অৰ্থাৎ উপাধ্যায়তকৈ দহ গুণ শ্ৰেষ্ঠ হৈছে আচাৰ্য আৰু আচাৰ্যতকৈ এশ গুণ শ্ৰেষ্ঠ হৈছে পিতৃ আৰু পিতৃতকৈ হেজাৰ গুণ শ্ৰেষ্ঠা আৰু গৌৰৱযুক্তা হৈছে মাতৃ। যাজ্ঞবল্ক্যই মাতৃক দেৱতাতকৈও অধিক পূজনীয় বুলি কৈছে।

একদেশমুপাধ্যায় ঋত্বিগ্যজ্ঞকৃদুচ্যতে।
এতে মান্যা যথা পূৰ্বমেভ্যো মাতা গৰিয়সী।।[৮]

মনুৱে পিতৃক গাৰ্হপত্যাগ্নি আৰু মাতৃক দক্ষিণাগ্নি বুলি উল্লেখ কৰিছে।[৯] গৌতম ধৰ্মসূত্ৰত কোৱা আছে যে মাতৃক সদায় সন্মান কৰিব লাগে আৰু তেওঁৰ চৰণ স্পৰ্শ কৰিব লাগে। ভ্ৰমণ ইত্যাদিৰ পৰা উভতি আহিলেও মাতৃৰ ভৰি দুখন স্পৰ্শ কৰিব লাগে।

পাদোপসংগ্ৰহণং সমবায়েন্বহম্।
অভিগম্য তু বিপ্ৰোষ্য।
মাতৃপিতৃতদ্‌বন্ধুনাং পূৰ্বজানাং বিদ্যাগুৰূনাং তদ্‌গুৰূণাং চ।।[১০]

মনুৱে পুনৰ কৈছে ঘৰৰ সকলো নাৰী যেনে ঃ- বায়েক, পেহীয়েক, মাহীয়েকক মাতৃ হিচাপে সন্মান কৰা উচিত। কিন্তু মাতৃ তেওঁলোকতকৈও শ্ৰেষ্ঠ আৰু অধিক সন্মানৰ যোগ্য।

পিতুৰ্ভগিন্যাং মাতুশ্চ জ্যায়স্যাং চ স্বৰ্সয়পি।
মাতৃৱদ্ বৃত্তিমাতিষ্ঠেন্মাতা তাভ্যো গৰিয়সী।[১১]

এই সকলোবোৰ উক্তিৰ পৰাই মাতৃৰ গুৰুত্ব স্পষ্ট হৈ পৰিছে।

বোধায়ন ধৰ্মসূত্ৰত কোৱা আছে যে মাতৃ যদি পতিতা হৈ তেতিয়াও তেওঁৰ যত্ন ল'ব লাগে কিন্তু কথা পাতিব নালাগে। মাতৃক সদায় সেৱা কৰিব লাগে। 'পতিতামপি তু মাতৰং বিভৃযাদনভিভাষমাণঃ।'[১২] পৃথিৱীয়ে যেনেকৈ সমগ্ৰ সৃষ্টিৰ ওজন বহন কৰে, ঠিক সেইদৰে এগৰাকী মাতৃয়ে নিজৰ পুত্ৰক গৰ্ভত লৈ জন্মৰ পিছত লালন-পালন কৰি বহণ কৰে সেয়েহে মাতৃক সদায় শ্ৰদ্ধা কৰিব লাগে। মনুৱে এই ক্ষেত্ৰত কৈছে যে আচাৰ্য হৈছে ব্ৰহ্মাৰ মূৰ্তি, পিতা প্ৰজাপতিৰ মূৰ্তি, মাতৃ পৃথিৱীৰ আৰু ভাতৃ নিজৰ মূৰ্তি।[১৩]

ন মাতা ন পিতা নস্ত্ৰী ন পুত্ৰস্ত্যাগমৰ্হতি।
ত্যজন্ন পতিতানেতান্ ৰাজ্ঞা দণ্ড্য শতানি ষট্।।[১৪]

মানুহে মাতৃ, পিতৃ, স্ত্ৰী, পুত্ৰ এই সকলক ত্যাগ কৰিব নাপায়। অপতিত সকলক ত্যাগ কৰিলে ৰজাই প্ৰত্যেককে ছজুজু পণ দণ্ড কৰিব লাগিব বুলি মনুৱে উল্লেখ কৰিছে। অকাৰণতো মাতৃক ত্যাগ কৰিব নাপায়। মানুহৰ জন্মৰ সময়ত মাতৃ-পিতৃয়ে যি দুখ-কষ্ট সহ্য কৰে সেয়া সন্তানে এশ বছৰতো সেই দুখ-কষ্ট পৰিশোধ কৰিব নোৱাৰে।

য় মাতাপিতৰৌ ক্লেশং সহেতে সংভৱে নৃণাম্।
ন তস্য নিষ্কৃতিঃ শক্যা কৰ্তুং ৰৰ্ষশতৈৰপি।।[১৫]

যি পুৰুষে মাতা, গুৰুজনা আদিক নিন্দা কৰে আৰু তেওঁলোকৰ অহা বাটৰ পৰা আঁতৰি নিদিয়ে, তেওঁক ১০০ পণ দণ্ড দিব লাগে বুলি স্মৃতিত কোৱা আছে।[১৬] ব্ৰহ্মচাৰী এজনে উপনয়ন সংস্কাৰৰ পাছত সৰ্বপ্ৰথমে নিজৰ মাতৃক ভিক্ষা খুজিব লাগে বুলি মনুৱে কৈছে।[১৭]

মাতৃৰ সম্পত্তিৰ অধিকাৰ সন্দৰ্ভত মনুৱে মন্তব্য কৰিছে যে মাতৃৱে বিবাহৰ সময়ত পোৱা যৌতুকৰ বস্তুবোৰ অৰ্থাৎ ধন-সম্পত্তি অবিবাহিত কন্যাই লাভ কৰিব। 'মাতুস্তু যৌতুকং য়ৎ স্যাৎ কুমাৰীভাগ এৱ সঃ।[ৰজ্জ্ব] এই প্ৰসংগত যাজ্ঞৱল্ক্যই কৈছে যে মাতৃৰ ধন মাকে ঋণ পৰিশোধ কৰাৰ পিছত কন্যাৰ মাজত বিতৰণ কৰি দিব লাগে।

মাতুৰ্দুহিতৰঃ শেষমৃণাত্ তাশ্চ ঋত্যেন্যঃ।
তাভ্যো দুহিতৃভ্যো বিনা দুহিতৃণাম ভাৱে পুত্ৰাদিৰ্গৃহ্ণীয়াত।।[১৯]

পত্নীৰ স্থান ঃ

বিবাহিত নাৰীৰ বিষয়ে ধৰ্মশাস্ত্ৰত বহুতো মতামত উল্লেখ আছে। মনুৱে কৈছে যে বালিকাই হওক বা যুৱতী বা বৃদ্ধাই হওক স্ত্ৰীয়ে স্বতন্ত্ৰতাপূৰ্বক ভাৱে ঘৰৰ কোনো কাম কৰিব নাপায়। মনুস্মৃতিত উল্লেখ কৰিছে -

বালয়া বা যুৱত্যাৱা বৃদ্ধয়া ৰাপি যোষিতা।
ন স্বাতন্ত্ৰেণ কৰ্তব্যং কিঞ্চিৎ কাৰ্য্যং গৃহেষ্বপি।[২০]

এই ক্ষেত্ৰত যাজ্ঞৱল্ক্যই কৈছে যে নাৰী কেতিয়াও স্বাধীন নহয় আৰু সকলো পৰিস্থিতিতে আনৰ অধীনস্থ বুলি গণ্য কৰিছে।

ৰক্ষেত্ কন্যা পিতা পিত্ৰাং পতিঃ পুত্ৰাস্তু বাৰ্ধ কো।
অভাৱে জ্ঞাতয়স্তেষাং ন স্বাতন্ত্ৰ্যাং কিঞ্চিতস্ত্ৰিয়াঃ।।[২১]

এগৰাকী নাৰী কন্যাকালত পিতাৰ, যৌৱনাৱস্থাত পতিৰ আৰু পতিৰ মৃত্যুৰ পিছত পুত্ৰৰ অধীন হয়।

বালে পিতৃৰ্বশে তিষ্ঠেং পাণিগ্ৰাহস্য যৌৱনে।
পুত্ৰানাং ভৰ্তৰি প্ৰেতে ন ভজেৎ স্ত্ৰী স্বাতন্ত্ৰতাম্।।[২২]

এগৰাকী নাৰীয়ে কোনো কাৰণতে পিতৃ, স্বামী আৰু পুত্ৰৰ পৰা বিচ্ছিন্ন হ'বলৈ চেষ্টা কৰা উচিত নহয়। কাৰণ এই সকলৰ পৰা বেলেগে থকা নাৰীয়ে পতি-পিতৃ দুয়ো কুলকে নিন্দিত কৰে। নাৰীয়ে সদায় প্ৰসন্ন হৈ দক্ষতা সহকাৰে ঘৰৰ সকলো কাম সমাধান কৰিব লাগে। সদায় ব্যৱহাৰ কৰা সামগ্ৰীবোৰ যেনে - আভূষণ, বাচন-বৰ্তন আদি পৰিষ্কাৰ কৰি ৰাখিব লাগে আৰু যিমান পাৰি কম খৰচ কৰিব লাগে।

পিতা ভৰ্ত্ৰা সুতৈৰ্ৱাপি নেচ্ছেদ্বিৰহ মাৎত্মনঃ।
এষাং হি ৰিৰহেণ স্ত্ৰী গৰ্হ্যে কুৰ্য়াদুভে কুলে।।
য়দা প্ৰহৃষ্টয়া ভাৱ্যং গৃহকাৰ্য়েষু দক্ষয়া।
সুংস্কৃতোপস্কৰয়া ব্যয়ে চামুক্তহস্তয়া।।[২৩]

যদি স্বামী অনাচাৰী হয়, পৰস্ত্ৰী অনুৰক্ত হয় বা জ্ঞানহীন হ'লেও সাধ্বী পত্নীয়ে সদায় দেৱতাৰ দৰে নিজৰ স্বামীক সেৱা কৰিব লাগে। কিন্তু যদি পত্নীগৰাকী তেনেকুৱা হয় তেন্তে তেওঁক ত্যাগ কৰাৰ ব্যৱস্থা আছে। যাজ্ঞৱল্ক্য স্মৃতিত আছে

যে যাৰ স্বামী কিবা কাৰণত বাহিৰলৈ ওলাই গৈছে, সেই পত্নীয়ে খেলা-ধূলা, শৰীৰ সজ্জা, মানুহৰ সমাৱেশ থকা বিবাহ আদি অনুষ্ঠানত আনৰ ঘৰলৈ যোৱা আদি কামত লিপ্ত হ'ব নালাগে।

ক্রীড়া শৰীৰসংস্কাৰ সমাজ্যোৎসৱদৰ্শণম্।
হাস্যং পৰগ্ৰহে যানং ত্যজেৎপ্ৰোষিতভতৃকা।।[২৪]

মনুৱে পুনৰ কৈছে যে নাৰীৰ বাবে বেলেগকৈ কোনো যজ্ঞ, ব্ৰত আৰু উপবাস নাই। পতিৰ সেৱাৰ দ্বাৰাই তেওঁ স্বৰ্গলোকত পূজিত হয়।

নাস্তি স্ত্ৰীণাং পৃথক্ যজ্ঞো ন ব্ৰতং নাপ্যুপোষনম্।
পতিং শুশ্ৰূষতে য়েন তেন স্বৰ্গ মহীয়তে।[২৫]

বিষ্ণু স্মৃতিতো নাৰীৰ বাবে পৃথককৈ কোনো বলি, ব্ৰত আৰু উপবাসৰ বিধি নাই বুলি কৈছে। কোনো নাৰীয়ে যদি স্বামী জীয়াই থাকোতে ব্ৰত পালন কৰে তেন্তে তেওঁ স্বামীৰ প্ৰাণ কাঢ়ি নৰকলৈ লৈ যায় বুলি বৰ্ণনা কৰা আছে। স্বামীৰ ইচ্ছানুসৰি কৰ্ম কৰা সকলক সাধ্বী নাৰী বুলি কোৱা হয়। বিষ্ণুস্মৃতিত স্বামীৰ ঘৰ আৰু আত্মীয়ৰ সেৱা কৰাটো নাৰীৰ মূল কৰ্তব্য বুলি মন্তব্য কৰিছে।[২৬]

পুৰুষক দূষিত কৰাটো নাৰীৰ স্বভাৱ সেয়েহে বিদ্বান লোকে নাৰীৰ সৈতে সাবধানতাৰে বাস কৰে। নাৰীয়ে নিজৰ কামনা আৰু ক্ৰোধৰ বাবে এজন বিদ্বান পুৰুষকো কুপথলৈ নিবলৈ সমৰ্থ হয়। অৰ্থাৎ এই জগতত নাৰীয়ে স্বাভাৱিকতে পুৰুষৰ মন বিনষ্ট কৰে। বহুতো সাধু পুৰুষে নাৰীৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত হৈ কৰ্তব্যত অৱহেলা কৰা দেখা যায়। তদুপৰি পৰিয়ালৰ সকলোৱে দেহ আৰু ধৰ্মৰ কাৰণে কামুকতাৰ বশৱৰ্তী হোৱাটোও সত্য আৰু নাৰীয়ে ইচ্ছা কৰিলে বিদ্বান, মূৰ্খ সকলোকে বিপথে পৰিচালিত কৰিব পাৰে। মাতৃ, ভনীয়েক বা জীয়েকৰ লগত অকলে একে আসনত বহিব নাপায় কাৰণ বলবান ইন্দ্ৰিয় সমূহে বিদ্বানলোককো আকৰ্ষণ কৰে।

স্বভাৱ এৱ নাৰীণাং নৰাণামিহ দূষণম্।
অতোৰ্থান্ন প্ৰমাদ্যন্তি প্ৰমদাসু ৱিপশ্চিতঃ।।
অৱিদ্যাংসমলং লোকে ৱিদ্যাংসমপি ৱা পুনং
প্ৰমদাহ্যুৎপথং নেতুং কামক্ৰোধৱশানুগম্।।[২৭]

ইয়াৰ দ্বাৰা নাৰীৰ সৌন্দৰ্য আৰু ৰূপৰ মহিমা প্ৰকাশ কৰিছে।

নাৰীৰ বাবে বিবাহ পদ্ধতিকে বৈদিক সংস্কাৰ বুলি কোৱা হৈছে অৰ্থাৎ ইয়াকে বেদৰ অধ্যয়ন বুলি গণ্য কৰা হৈছে আৰু স্বামীৰ প্ৰতি কৰা কৰ্তব্যই পুৰুষৰ অগ্নি পৰিক্ৰমাৰ অৰ্থাৎ হোমৰ সমান।

বৈবাহিকো বিধিঃ স্ত্ৰীণাং সংস্কাৰো বৈদিকঃ স্মৃতঃ।
পতিসেৱা গুৰৌ ৱাসো গৃহাৰ্থোগ্নি পৰিক্ৰিয়া।।[২৮]

আপস্তম্বে নিৰ্ধাৰণ কৰিছে যে বিবাহ ৰীতি-নীতিৰ লগত জড়িত কোনো নিয়ম উলংঘা হলে পতি-পত্নী নৰকলৈ গতি কৰে।[২৯] ধৰ্মশাস্ত্ৰৰ ব্যৱস্থামতে নাৰীৰ জাতকৰ্মাদি অনুষ্ঠানত বৈদিক মন্ত্ৰৰ ব্যৱহাৰ নহয় বুলি উল্লেখ আছে। বৈদিক মন্ত্ৰহীনতাৰ বাবে নাৰীৰ স্থিতি অসত্য।

নাস্তি স্ত্ৰীণাং ক্ৰিয়া মন্ত্ৰৈৰিতি ধৰ্মে ব্যৱস্থিতি।
নিৰিন্দ্ৰিয়া হ্যমন্ত্ৰাশ্চ স্ত্ৰিয়োহ্যনৃতমিতি স্থিতিঃ।[৩০]

মনুস্মৃতিত মনুৱে বিয়াৰ বয়স নিৰ্ধাৰণ কৰি কৈছে যে ত্ৰিশ বছৰীয়া দৰাই বাৰ বছৰীয়া কন্যাৰ লগত আৰু চৌবিশ বছৰীয়া দৰাই আঠ বছৰীয়া কন্যাৰ লগত বিবাহ কৰাব লাগে।

ত্ৰিংশদ্বৰ্শোদ্বেহেৎ কন্যাং হৃদ্যাং দ্বাদশ বাৰ্ষিকীম্।
ত্ৰ্যষ্টৱৰ্ষোষ্টৱৰ্ষাং ৱা ধৰ্মে সীদতি সত্বৰঃ।।[৩১]

কুল্লুকৰ মতে, ওপৰৰ শব্দটোৰ অৰ্থ কন্যাৰ বয়স নিৰ্ণয় কৰা নহয় বৰং পত্নীৰ বয়স দৰাৰ বয়সৰ প্ৰায় এক তৃতীয়াংশ হ'ব লাগে বুলি অৱগত কৰিছে। মেধাতিথিয়ে মনুৰ এই বচনৰ বিষয়ে কৈছে যে পুৰুষে বিয়া কৰোৱা ছোৱালীজনী নিজতকৈ সৰু হ'ব লাগে। কাৰণ সংখ্যা বিষয়টো প্ৰাসংগিক নহয়। বৃহস্পতি সংহিতাতো ছোৱালীৰ বয়স আঠ বছৰ হ'ব লাগে বুলি কোৱা আছে।[৩২]

এগৰাকী নাৰীৰ প্ৰকৃত মূল্য বিবাহত আৰু মাতৃত্বত থাকে। ব্ৰহ্মাই প্ৰজননৰ কাৰণে স্ত্ৰীক আৰু স্ত্ৰীক সগৰ্ভা কৰিবৰ বাবে পুৰুষৰ সৃষ্টি কৰিলে। সেয়েহে সন্তান জন্ম দিবৰ বাবে পতি-পত্নীৰ মাজত পাৰস্পৰিক সম্পৰ্ক থাকিব লাগে বুলি শ্ৰুতিত কোৱা হৈছে। এনেদৰে -

প্ৰজনাৰ্থং স্ত্ৰিয়ঃ সৃষ্টাঃ সন্তানাৰ্থ চ মানৱাঃ।
তস্মাৎ সাধাৰণো ধৰ্মঃ শ্ৰুতৌ পত্ন্যা সহোদিতঃ।।[৩৩]

নাৰীৰ বাবে কোনো পৃথক সত্বা শাস্ত্ৰত গ্ৰহণ কৰা হোৱা নাই। পতিব্ৰতা পত্নীৰ ধৰ্মৰ বাবে বহুতো শ্লোক পোৱা যায় কিন্তু পত্নীব্ৰত আচৰণৰ বাবে একো পথ নিৰ্দেশ স্মৃতিত নাই। কিন্তু নাৰীৰ চৰিত্ৰ ৰক্ষাৰ বাবে স্মৃতিকাৰ সকলে বৃহৎ চিন্তা কৰিছে। যিকোনো পুৰুষৰ চৰিত্ৰৰ দোষতকৈ নাৰীৰ চৰিত্ৰৰ পবিত্ৰতা অধিক ভাৱে শাস্ত্ৰত বৰ্ণনা কৰা আছে।

পত্নীৰ দ্বাৰা ঋণ পৰিশোধ কৰাৰ দৰে কিছুমান বিশেষ পৰিস্থিতিত মহিলাক অধিকাৰ দিয়া হৈছিল। নাৰদে কৈছে যে আপত্তিৰ সময়ত পত্নীয়ে লোৱা ঋণ পতিয়ে পৰিশোধ কৰিব লাগে। আন সময়ত পত্নীয়ে লোৱা ঋণ স্বামীয়ে পৰিশোধ কৰিব নালাগে। তদুপৰি যদি স্বামী কৰবালৈ যায় আৰু পত্নীয়ে পৰিয়ালৰ বাবে ঋণ লয় তেন্তে সেই ঋণ স্বামীয়ে পৰিশোধ কৰিব লাগে কাৰণ পত্নী সকলৰ নিজৰ স্বামীৰ ওপৰত সম্পূৰ্ণ আস্থা থাকে আৰু পৰিয়ালৰ দায়িত্ব স্বামীৰ ওপৰত থাকে।

ন চ ভাৰ্য্যাকৃতমৃণং পত্যুৰ্বাপি কথং ভৱেৎ।
আপৎকৃতাহতে পুসাং কুটুম্বাৰ্থো হি দুষ্টৰঃ।।[৩৪]

পত্নী এগৰাকীয়ে বিবাহৰ সময়ত পিতৃ-মাতৃ আদিৰ পৰা পোৱা ধন, বিবাহ মাচুল হিচাপে দিয়া ধন, বিয়াৰ পিছত স্বামী আৰু পৰিয়ালৰ পৰা পোৱা ধনক স্ত্ৰীধন বুলি কোৱা হয় আৰু স্ত্ৰীধন থকা নাৰীয়ে যদি সন্তানহীনভাৱে মৃত্যুবৰণ কৰে তেন্তে তেওঁৰ ভাই-ভনী, স্বামী আদিয়ে সেই সম্পত্তি ভোগ কৰিব পাব।

বন্ধুদত্তং তথা শুল্কমন্বাধেযকমেব চ।
অতীতায়াম প্ৰজসি বান্ধবাস্তদবাপ্নুয়ুঃ।।[৩৫]

যাজ্ঞবল্ক্যৰ মত যে ব্ৰাহ্মৰ দৰে চাৰিবিধ বিবাহৰ জৰিয়তে বিবাহ কৰা পত্নীয়ে যদি পুত্ৰ নোহোৱাকৈ মৃত্যুবৰণ কৰে তেন্তে তেওঁৰ সেই ধন স্বামীৰ হাতলৈ যায়। কিন্তু যদি সেই পত্নীৰ পুত্ৰী থাকে তেন্তে সেই ধন পুত্ৰীয়ে লাভ কৰিব।

অপ্ৰজস্ত্ৰীধনং ভৰ্তুৰ্ব্ৰাহ্মাদিষু চতুৰ্ষ্বপি।
দুহিতৃণাং প্ৰসূতা চেচ্ছেযেষু পিতৃগামি তৎ।।[৩৬]

ইয়াৰোপৰি ধৰ্মশাস্ত্ৰত বিশেষকৈ মনুসংহিতাত বিবাহিত নাৰীৰ ওপৰত বহুতো উচ্চ মতামত আগবঢ়াইছে। বিয়াৰ সময়ত দৰা-পক্ষৰ পৰা কন্যাৰ নিমিত্তে ধন-সম্পত্তি, কাপোৰ কানি, অলংকাৰ আদি দিয়াৰ কথা বৰ্ণনা আছে। সেই সকলোবোৰ বস্তু পিতৃ, ভাই-ককাই সকলে ল'ব নালাগে, সেইহ্মিন নববিবাহিতাক সম্বৰ্ধনা জনাই ভূষণ হিচাপে প্ৰদান কৰিব লাগে। কন্যাক পূজা কৰা সকলে বহুত আশীৰ্বাদ পায়। মনুস্মৃতিত এইদৰে আছে যে -

যত্ৰ নাৰ্য্যস্তু পূজ্যন্তে ৰমন্তে তত্ৰ দেৱতাঃ।
যত্ৰৈতাস্ত ন পূজ্যন্তে সৰ্বাস্তত্ৰাফলাঃ ক্ৰিয়াঃ।।[৩৭]

অৰ্থাৎ যি বংশত নাৰীক পূজা কৰা হয় সেই বংশৰ প্ৰতি দেৱতা সন্তুষ্ট হয় আৰু যদি দেৱতা সন্তুষ্ট হয় তেন্তে আকাংক্ষিত ফলাফল পোৱা যায়। কিন্তু যি পৰিয়ালত নাৰীক পূজা নকৰি অসন্মান কৰা হয় সেই পৰিয়ালত যজ্ঞাদি কৰ্ম ও নিষ্ফল হয়। ব্ৰহ্মচৰ্যাশ্ৰম শেষ কৰি মানুহে গৃহস্থাশ্ৰমত প্ৰৱেশ কৰে। বিবাহৰ মাধ্যমেৰে স্বামী আৰু স্ত্ৰী পবিত্ৰ বন্ধনৰ দ্বাৰা বান্ধ খাই থাকে আৰু দুটা আত্মা মিলি এক হয়। গৃহস্থাশ্ৰমত ধৰ্ম, অৰ্থ আৰু কৰ্ম এই ত্ৰিবৰ্গ ভাৰ্যাৰ অধীন। গতিকে সকলোৱে নিজৰ পত্নীক যথাযথ সন্মান কৰিব লাগে। 'গৃহিণী গৃহমুচ্যতে' অৰ্থাৎ গৃহিণীক ঘৰ বুলি কোৱা হয়। দক্ষস্মৃতিত কোৱা হৈছে যে সকলো গুণেৰে সমৃদ্ধ নাৰী দেৱীস্বৰূপা।[৩৮] মনুৱে আকৌ উল্লেখ কৰিছে যে যি বংশত নববিবাহিতা জী, বোৱাৰীয়ে ক্লেশ অৰ্থাৎ দুখী আৰু অনুশোচনাত ভোগে, সেই বংশ কম সময়ৰ ভিতৰতে নষ্ট হৈ যায়। আনহাতে যিবোৰ পৰিয়ালত নববিবাহিতা জী, বোৱাৰীক সন্মান নিদিয়ে, গালি শপনিৰে জীৱনটো কটায়, সেইখন ঘৰ কোনোবাই কুমন্ত্ৰ কৰি নষ্ট হোৱাৰ দৰে নাশ হয় আৰু যিবোৰ পৰিয়ালৰ নাৰীয়ে শোক বা অনুশোচনা নকৰে সেইবোৰ পৰিয়ালৰ বংশ সমৃদ্ধিশালী হয়।

শোচন্তি জাময়ো যত্ৰ বিনশ্যতাশু তৎকুলম্।
ন শোচন্তিনু যত্ৰৈতা ৰ্ৱধতে তদ্ধি সৰ্বদা।।
জাময়ো যানি গেহানি শপন্ত্য প্ৰতি পূজিতাঃ।
তানি কৃত্যাহতানীৱ ৱিনশ্যন্তি সমন্ততঃ।।[৩৯]

সেইবাবে শ্ৰীবৃদ্ধি কামনা কৰা লোক সকলে নানা প্ৰকাৰে নাৰীক সন্তুষ্টি প্ৰদান কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিব লাগে। যি পৰিয়ালত স্বামীক পত্নীয়ে সন্তুষ্ট আৰু মৰম কৰে আৰু পত্নীক স্বামীয়ে সন্তুষ্ট আৰু মৰম কৰে অৰ্থাৎ স্বামী-স্ত্ৰীৰ মাজত পাৰস্পৰিক প্ৰেমৰ সম্পৰ্ক অক্ষত থাকে, সেই পৰিয়ালত কল্যাণ বৃদ্ধি হয়। এয়া হৈছে মনুৰ বৈবাহিক আদৰ্শ আৰু কোৱা আছে যে স্ত্ৰী যদি প্ৰসন্ন হৈ থাকে তেন্তে গোটেই বংশ আনন্দিত হয় আৰু স্ত্ৰী যদি অসন্তুষ্ট হৈ থাকে তেতিয়া গোটেই বংশ মলিন হয়।

স্ত্ৰীয়াং তু ৰোচমানায়া সৰ্বৎ তদ্ৰোচতে কুলম্।
তস্যাং ত্বৰোচ্চ মানায়াং সৰ্ৱমেৱ ন ৰোচতে।।[৪০]

নাৰী হৈছে ঘৰৰ দীপ্তি অৰ্থাৎ অলংকাৰ স্বৰূপ। নাৰীয়েহে সন্তান জন্ম দি বংশ ৰক্ষা কৰি ধন্য কৰে সেয়েহে নাৰী সকলোৱে পূজাৰ যোগ্য। ঘৰত লক্ষ্মী আৰু স্ত্ৰীৰ মাজত কোনো পাৰ্থক্য নাই অৰ্থাৎ স্ত্ৰীয়েই ঘৰৰ শ্ৰী বা লক্ষ্মী। 'স্ত্ৰিয়ঃ শ্ৰিয়শ্চ গেহেষু ন ৱিশেযোস্তি কশ্চন।'[৪১] যেতিয়া নাৰীৰ এটা সন্তান জন্ম হয় সেই সন্তানক লালন পালন কৰা, অতিথি

আহিলে আতিথ্য কৰা, পাৰিবাৰিক কাম-কাজ সঠিকভাৱে সম্পন্ন কৰাত নাৰীয়েই প্ৰধান সহায়ক। পুত্ৰৰ জন্ম ধৰ্মীয় কাম, সেৱা শুশ্ৰূষা, উত্তম প্ৰেম, পিতা-মাতা আৰু স্বামীৰ স্বৰ্গলাভৰ কৰ্ম আদি স্ত্ৰীৰ দ্বাৰাহে সম্পন্ন কৰিব পাৰি। এই সকলোবোৰ কথাৰ পৰা স্পষ্ট যে মনুৱে নাৰীক অৱহেলা কৰাৰ পৰিৱৰ্তে সমাজৰ দৃষ্টিত সম্ভ্ৰান্ত আৰু শ্ৰেষ্ঠ হিচাপে দেখুৱাইছে।

মনুৱে পুনৰ কৈছে যে যদি কোনো নাৰীক বলপূৰ্বকভাৱে ঘৰত আৱদ্ধ কৰি ৰখা হয়, তেনেকৈ নাৰীক সুৰক্ষা দিয়া নহয়। যিসকল নাৰীয়ে নিজে নিজক ৰক্ষা কৰে, সেই সকলেই সুৰক্ষিত থাকে।[৪২] নাৰীৰ কিছুমান গুৰুত্বপূৰ্ণ দায়িত্বৰ কথাও ধৰ্মশাস্ত্ৰত উল্লেখ আছে। উদাহৰণস্বৰূপে পিতৃ বা স্বামীয়ে উপাৰ্জন কৰা ধনৰ আয়-ব্যয় বিষয়ত সঠিক হিচাপ ৰখা, ঘৰুৱা সামগ্ৰী পৰিষ্কাৰ কৰি ৰখা, ধৰ্মীয় কাম-কাজৰ আয়োজন, অন্ন ব্যঞ্জন কৰা আৰু খুউৱা, ঘৰৰ পোচাক, আচবাব আদি পৰিষ্কাৰ কৰা কাৰ্যত মহিলা সকলক নিয়োগ কৰি মধ্যমীয়া আৰু নিয়মীয়া জীৱন-যাপন কৰিবলৈ উৎসাহিত কৰিব লাগে।

অৰ্থস্য সংগ্ৰহে চে নাং ব্যয়ে চৈৱ নিয়োজয়েৎ।
শৌচে ধৰ্ম্মেন্নপক্তায়াং চ পাৰিণাহ্যয় ৱেক্ষণে।।[৪৩]

নাৰীয়ে কি কৰিব নালাগে সেই বিষয়েও ধৰ্মশাস্ত্ৰত উল্লেখ আছে। মনুৱে কৈছে যে ছয় ব্যভিচাৰী পাপে নাৰীক অশুচি কৰে। সেই ছয়টা হ'ল মদ্যপাণ কৰা, দুষ্টৰ সঙ্গ, পতি-বিয়োগ, অ'ত ত'ত ঘূৰি ফুৰা, অসময়ত শোৱা আৰু বেলেগ মানুহৰ ঘৰত থকা। এই ছটা দোষে নাৰীক কলুষিত কৰে। সেয়েহে এই সকলোবোৰ বিষয়ত যাতে তেওঁলোকে নিজকে নিয়োজিত নকৰে তাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখিব লাগে।

পানং দুৰ্জনসংসৰ্গঃ পত্যা চ ৱিৰহ্যোটনম্।
স্বপ্নোন্যগেহ ৱাসশ্চ নাৰীসংদূষণানি ষট্।।[৪৪]

এই সকলোবোৰ কথা নাৰীৰ সতীত্ব ৰক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ আছিল।

স্বামীয়ে সদায় নিজৰ পত্নীৰ প্ৰতি আকৃষ্ট হৈ থাকিব লাগে। মনুৱে ব্যভিচাৰৰ বাবে পুৰুষ আৰু মহিলাৰ উভয়ৰে শাস্তি নিৰ্ধাৰণ কৰিছে। যি নাৰীয়ে নিজৰ পৰিয়ালৰ ধন-সম্পত্তিৰ বাবে বা নিজৰ সৌন্দৰ্যৰ বাবে অহংকাৰ কৰি নিজৰ স্বামীক ত্যাগ কৰি পৰ পুৰুষক বিয়া কৰায়, সেই নাৰীক ভিৰ কৰা ঠাইত কুকুৰে কামোৰাৰ বিধান আছেঁ।

ভৰ্তাৰং লংঘয়েদ্যা তু স্ত্ৰী জ্ঞাতিগুণ দৰ্পিতা।
তাং স্বভি খাদয়েদ্ৰাজা সংস্থানে বহুসংস্থিতে।।[৪৫]

যদি ভাৰ্যা সাধু হয় তাইৰ মংগলৰ ব্যৱস্থা কৰাটো স্বামীৰ পৰম কৰ্তব্য আৰু তেনে কৰিলে দেৱতা সন্তুষ্ট হয়। যদিও বিবাহ নাৰীৰ বাবে এক প্ৰধান প্ৰয়োজনীয়তা তথাপিও মূৰ্খ, গুণহীন ল'ৰাৰ ওচৰত বিয়া দিব নালাগে। নিজৰ জীয়ৰীক পিতৃ-মাতৃয়ে এজন সুদৰ্শন, উপযুক্ত দৰাৰ হাতত অৰ্পণ কৰিব লাগে। নাৰীৰ উপযুক্ত মৰ্যাদাৰ প্ৰতি যে মনুৰ সতৰ্ক দৃষ্টি এই সকলোবোৰ কথাৰ পৰাই গম পোৱা যায়। মনুৱে নাৰীৰ কৰ্তব্য, দায়িত্ব আৰু সতীত্বৰ ওপৰতো পৰামৰ্শ দিছে। নাৰীৰ বিবাহ ৰক্ষাৰ বাবে মনুৱে প্ৰায়ে কঠোৰ মনোভাৱ দেখুৱাইছে। মনুৰ মতে মন্ত্ৰৰ দ্বাৰা বিবাহ পৰিচালনা কৰা স্বামীয়ে পত্নীৰ বাবে যথোপকাৰে সুখ কঢ়িয়াই আনিব লাগে। মনুৱে বিধবা বিবাহক সমৰ্থন কৰা নাছিল। তেওঁ কৈছে যে 'ন দ্বিতীয়শ্চ সাধ্বীনাং কচিদ্বৰ্তোপ দিশ্যতেঃ[৪৬] অৰ্থাৎ ধাৰ্মিক মহিলাই দ্বিতীয় স্বামী গ্ৰহণ কৰাটো কোনো শাস্ত্ৰত নাই।

এগৰাকী নাৰীয়ে যদি নিজৰ গুণহীন পতিক ত্যাগ কৰি অন্য শ্ৰেষ্ঠ পুৰুষক বিয়া কৰায় তেন্তে তাই সমাজত নিন্দনীয় হ'ব। তেনেকুৱা নাৰীক পৰপূৰ্বা ব্যভিচাৰিণী বোলে। পৰপুৰুষৰ লগত ব্যভিচাৰ কৰিলে নাৰী সংসাৰত নিন্দিতা হয় আৰু মৰাৰ পিছতো শিয়ালী হৈ জন্ম লয় আৰু কুষ্ঠ আদি ৰোগৰ দ্বাৰা আক্ৰান্ত হব। যি নাৰীয়ে মন, বচন আৰু কৰ্তব্যৰে পতিৰ বিৰুদ্ধাচৰণ নকৰে তেওঁ পৰলোকত পতিলোক প্ৰাপ্ত হয় আৰু এই লোকত মানুহে তেওঁক পতিব্ৰতা বুলি প্ৰশংসা কৰে। যিয়ে তন, মন আৰু বচনেৰে পতিৰ সেৱা কৰে তেওঁ এই জন্মত কীৰ্তি লাভ কৰে আৰু মৃত্যুৰ পিছত পতিৰ লগত স্বৰ্গসুখ লাভ কৰিব পাৰে।[৪৭] গতিকে এগৰাকী নাৰীয়ে নিজৰ স্বামীক কেতিয়াও বিশ্বাসঘাতকতা কৰিব নালাগে।

আলোচনা ঃ

উক্ত অধ্যয়ণত ধৰ্মশাস্ত্ৰৰ সময়ত নাৰী হিচাপে এগৰাকী পত্নীৰ স্থিতি সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হৈছে। নাৰীৰ মৰ্যাদা, কৰ্তব্যৰ বিষয়ে বহুতো কথা ধৰ্মশাস্ত্ৰত বৰ্ণনা আছে। এতিয়া দিনত স্বাধীনতাৰ পিছত ভাৰতত নাৰীৰ মৰ্যাদাত বৈপ্লৱিক পৰিৱৰ্তন ঘটিছে। ভাৰতৰ সংবিধানত মহিলাৰ অৱস্থা উন্নত কৰাৰ বাবে চৰকাৰে বিশেষ পদক্ষেপ লৈছে। সামাজিক আইনৰ জৰিয়তে নাৰীৰ মৰ্যাদা দ্ৰুত আৰু ফলপ্ৰসূ পৰিৱৰ্তন কৰা হৈছে। ভাৰতৰ সংবিধানে কিছুমান মৌলিক অধিকাৰ

আৰু স্বাধীনতা যেনে - জীৱন সুৰক্ষা আৰু ব্যক্তিগত স্বাধীনতাৰ নিশ্চয়তা প্ৰদান কৰে। য'ত ভাৰতীয় পুৰুষৰ দৰেই এই অধিকাৰৰ হিতাধিকাৰী ভাৰতীয় নাৰী। উদাহৰণ স্বৰূপে ক'ব পাৰি যে মনুৱে বিবাহৰ বয়স নিৰ্ধাৰণ আৰু বিধবা বিবাহ এতিয়া সময়ত কোনো পধ্যেই মানি ল'ব নোৱাৰি। তেওঁৰ মতে ত্ৰিশ বছৰীয়া দৰাই বাৰ বছৰীয়া কন্যা আৰু চৌবিশ বছৰীয়া ল'ৰাই আঠ বছৰীয়া কন্যাক বিয়া কৰাব লাগে। এগৰাকী বাৰ বা আঠ বছৰীয়া ছোৱালীজনীয়ে যদি বিবাহত বহে তেন্তে ছোৱালীজনীৰ স্বাস্থ্য ভাল নহ'ব আৰু সেইটো বয়সত পঢ়া-শুনা কৰাৰ বয়স। তদুপৰি বাৰ বা আঠ বছৰীয়া ছোৱালীয়ে যদি বিবাহত বহে তেন্তে ই বাল্যবিবাহত পৰিব । বাল্যবিবাহ আইন মতে দণ্ডনীয়। বাল্য বিবাহ নিয়ন্ত্ৰণ আইন (ট্ৰেত্তন্থট্ৰ)ৰ মতে এজন ভাৰতীয় পুৰুষৰ বিবাহৰ বয়স ওঠৰ (ৰজ্জ) বছৰ আৰু ছোৱালীৰ বয়স চৈধ্য (১৪) হ'ব লাগে। কিন্তু ১৯৭৮ চনত পৰৱৰ্তী সময়ত এটা সংশোধনীৰ জৰিয়তে আইনখন নিয়ন্ত্ৰণ কৰা হয় যাৰ বাবে পুৰুষৰ বয়স ওঠৰ বছৰৰ পৰা একৈশ আৰু মহিলাৰ চৈধ্যৰ পৰা ওঠৰ বছৰলৈ কৰা হ'ল। ২০০৬ চনত বাল্যবিবাহ অধিনিয়মৰ নিষেধাজ্ঞা গৃহীত হৈছিল য'ত বাল্যবিবাহ সম্পূৰ্ণৰূপে নিষিদ্ধ কৰা হৈছে। মনুৱে বিধৱা বিবাহক সমৰ্থন কৰা নাছিল। এগৰাকী স্বামীৰ মৃত্যু হোৱাৰ পিছত যদি পত্নী গৰাকীয়ে নিজ ইচ্ছামতে দ্বিতীয় বিবাহত বহিব খোজে তাত কোনো আপত্তি থাকিব নালাগে। ১৮৫৬ চনত বিধৱা বিবাহ আইন প্ৰণয়ন কৰা হৈছিল যিয়ে হিন্দুসকলৰ মাজত এক বৃহৎ দৃষ্টান্ত সৃষ্টি কৰিছিল। এই আইনখনে তেওঁলোকক জীৱনটো জীয়াই থকাৰ আন এক সুযোগ দিছিল। স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতত নাৰীসকলৰ উত্থানৰ বাবে চৰকাৰে বহুতো আইন প্ৰণয়ন কৰিছে।

উপসংহাৰ ঃ

নাৰী হৈছে প্ৰকৃতিৰ এক অনন্য ৰূপ যাৰ অবিহনে জীৱনটো কল্পনা কৰিব নোৱাৰি। যাৰ অবিহনে হয়তো আমি সৃষ্টিয়েই হ'ব নোৱাৰিলেহেতেন। ব্ৰহ্মাইও সেইবাবে নাৰীৰ সৃষ্টি কৰিছিল। মাতৃ, পত্নী, ভগ্নী, জী সকলো নাৰীয়েই আমাৰ বাবে অতি মৰমৰ আৰু শ্ৰদ্ধাৰ। তেওঁলোকক সন্মান, মৰম, ৰক্ষা কৰাৰ অতি প্ৰয়োজন। মাতৃ যাৰ স্থান সকলোতকৈ উচ্চ, যিয়ে আমাক লালন-পালন কৰি বহন কৰে। পত্নী যাক অৰ্ধাঙ্গিনী বুলি কোৱা হয়। তেঁওলোকৰ অবিহনে জীৱনটো কল্পনা কৰিব নোৱাৰি। সামৰণিত এইটো ক'ব পাৰি যে বৈদিক যুগৰ পিছত নাৰীৰ অৱস্থা ক্ৰমান্বয়ে কমি আহিছিল। য'ত নাৰীক অধিকাৰ প্ৰদান কৰা হোৱা নাছিল। পুৰুষৰ তলতীয়া হৈ থাকিব লাগিছিল। কিন্তু এই প্ৰসংগত এনে কিছুমান অ-ংশও পোৱা গৈছে য'ত নাৰীক উচ্চ স্থানত ৰখা হৈছিল। সেই সময়ত নাৰীৰ মৰ্যাদা স্বাভাৱিক আছিল। কোনো কোনো ঠাইত পত্নীক নিজৰ অধিকাৰ দিয়া হৈছিল আৰু কৰ্তব্য হিচাপে কিছুমান কাম কৰিবলৈ কোৱা হৈছিল। ❑

পাদটীকা ঃ

১) বেদৰ পৰিচয়, পৃ. ২১৪
২) গৌতম ধৰ্মসূত্ৰ, ১.২.৩৯, পৃ. ২৫
৩) সদ্যোক্ত, ১.২.৯৪০, পৃ. ২৫
৪) মনুস্মৃতি, ২.১০
৫) ঋগ্বেদ, ৭.৮১.৮
৬) গৌতম ধৰ্মসূত্ৰ, ১.২.৪৬, পৃ. ২৯
৭) মনুস্মৃতি, ২.১৪৫
৮) যাজ্ঞবল্ক্য স্মৃতি, ১.৬৫
৯) মনুস্মৃতি, ২.২৩১
১০) গৌতম ধৰ্মসূত্ৰ, ১.৬.১-৩, পৃ. ৫৭
১১) মনুস্মৃতি, ২.১৩৩
১২) বোধয়ন ধৰ্মসূত্ৰ, ২.২.৪৩
১৩) মনুস্মৃতি, ২.২২৬
১৪) সদ্যোক্ত, ৮.৩৮৯
১৫) সদ্যোক্ত, ২.২২৭
১৬) সদ্যোক্ত, ৮.২৭৫
১৭) সদ্যোক্ত, ২.৫০

১৮) সদ্যোক্ত, ৯.২৫৩
১৯) যাজ্ঞবল্ক্যস্মৃতি, ২.১১৭
২০) মনুস্মৃতি, ৫.১৪৭
২১) যাজ্ঞবল্ক্যস্মৃতি, ২.২৫
২২) মনুস্মৃতি, ৫.১৪৮
২৩) সদ্যোক্ত, ৫.১৪৯-১৫০
২৪) যাজ্ঞবল্ক্যস্মৃতি, ২.৭৪
২৫) মনুস্মৃতি, ৫.১৫৫
২৬) বিষ্ণুস্মৃতি, ২৫.২
২৭) মনুস্মৃতি, ২.২১৬-২১৪
২৮) সদ্যোক্ত, ২.৬৭
২৯) আপস্তম্ব ধর্মসূত্র, ২.১০.৩৭.৬, পৃ. ৪৭৮
৩০) মনুস্মৃতি, ৯.১৮
৩১) সদ্যোক্ত, ৯.৯৪
৩২) বৃহস্পতি সংহিতা, ৪৬.৪১
৩৩) মনুস্মৃতি, ৯.৯৬
৩৪) নাৰদস্মৃতি, ৪.১৭
৩৫) যাজ্ঞবল্ক্যস্মৃতি, ২.১৪৪
৩৬) সদ্যোক্ত, ২.১৪৫
৩৭) মনুস্মৃতি, ৩.৫৬
৩৮) দক্ষ্যস্মৃতি, ৪.৪
৩৯) মনুস্মৃতি, ৩.৫৭-৫৮
৪০) সদ্যোক্ত, ৩.৬২
৪১) সদ্যোক্ত, ৯.২৬
৪২) সদ্যোক্ত, ৯.১২
৪৩) সদ্যোক্ত, ৯.১১
৪৪) সদ্যোক্ত, ৯.১৩
৪৫) সদ্যোক্ত, ৮.৩৭১
৪৬) সদ্যোক্ত, ৫.১৬২
৪৭) সদ্যোক্ত, ৫.১৬৫-১৬৬

সহায়ক গ্ৰন্থ ঃ

১) পণ্ডিত নন্দ। বিষ্ণু স্মৃতি। কেশৱ বৈজয়ন্তী টীকাৰ সৈতে, সম্পাদক ভি. কৃষ্ণাচাৰ্য, দ্যা আদিত্য লাইব্ৰেৰী এণ্ড ৰিসাৰ্চ চেন্টাৰ, ১৯৬৪। মুদ্রিত
২) পাণ্ডে উমেশচন্দ্র। গৌতম ধৰ্মসূত্ৰম্। চৌখম্ভা সংস্কৃত সংস্থান। বাৰাণসী, ২০১৬। মুদ্রিত
৩) পাণ্ডে উমেশচন্দ্র। বৌধায়ন ধৰ্মসূত্ৰম্। চৌখম্ভা প্ৰকাশন, বাৰাণসী, ২০১৭। মুদ্রিত
৪) বসু যোগীৰাজ। বেদৰ পৰিচয়। অসম প্ৰকাশন পৰিষদ। সপ্তম সংস্কৰণ। গুৱাহাটী ২০১২। মুদ্রিত
৫) শাস্ত্ৰী হৰগোবিন্দ। মনুস্মৃতি। চৌখম্ভা সংস্কৃত ভৱন, বাৰাণসী, ২০১৯। মুদ্রিত
৬) সিংহ পৰ্ণদত্ত। যাজ্ঞবল্ক্যস্মৃতি। চৌখম্বা কৃষ্ণদাস অকাডেমী, বাৰাণসী, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১৪। মুদ্রিত

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

মাধৱদেৱৰ নাটকত শিশুকৃষ্ণ ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

বিষ্ণুৰাম নাথ

সহযোগী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কেন্দ্ৰীয় মহাবিদ্যালয়
যোৰহাট-৭৮৫০১০
৭০০২০৯৮১৪৫
bishniramnath2012@gmail.com

ড° গোবিন্দ প্ৰসাদ ভূঞা

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কৃষ্ণগুৰু আধ্যাত্মিক বিশ্ববিদ্যালয়
বৰপেটা, পিন- ৭৮১৩০৭
৬০০৩৬৩০৮২৭
gpbn2022@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

সাহিত্যৰ বিভিন্ন বিধাসমূহৰ ভিতৰত নাটক সৰ্বাধিক ক্ৰিয়াশীল সাহিত্য। অসমীয়া নাট্য সাহিত্যৰ জনক শঙ্কৰদেৱে খ্ৰীঃ পঞ্চাদশ শতিকাত পুৰণি অসমীয়া (ব্ৰজাৱলী) ভাষাত নাটক ৰচনা কৰে। শঙ্কৰদেৱে 'নাটক'ৰ সমাৰ্থক হিচাপে 'যাত্ৰা' শব্দও প্ৰয়োগ কৰিছিল আৰু পৰৱৰ্তী কালত তেখেতৰ অনুগামীসকলে 'অঙ্ক' শব্দটিও একে অৰ্থতে প্ৰয়োগ কৰিছিল। শঙ্কৰদেৱৰ নিচিনাকৈ মাধৱদেৱ, গোপালদেৱ, ৰাম চৰণ ঠাকুৰ প্ৰভৃতি কেইবাগৰাকী অনুগামীয়ে একে ভাষা-শৈলীৰে নাট ৰচনা কৰিছিল আৰু সেই বিলাকক যাত্ৰা, নাট বোলাৰ উপৰিও অঙ্ক আৰু ভাওনা নামেৰে অভিহিত কৰিছিল। পৰৱৰ্তী কালত আধুনিক নাটকৰ পৰা পৃথক কৰি ৰাখিবৰ বাবে সেই শ্ৰেণী নাটকক 'অঙ্কীয়া নাট' বা 'অঙ্কীয়া ভাওনা' নামেৰে নামকৰণ কৰা হয়। শঙ্কৰদেৱৰ প্ৰপন্ন শিষ্য মাধৱদেৱে খ্ৰীষ্টপূৰ্ব ষষ্ঠদশ শতিকাতে শঙ্কৰদেৱৰ আৰ্হি গ্ৰহণ কৰিও নিজস্ব শৈলীৰে এক শ্ৰেণী অঙ্কীয়া নাট ৰচনা কৰে। চিৰকুমাৰ মাধৱদেৱে শিশুকৃষ্ণৰ লীলা বিস্তাৰ কৰি বাৎসল্য ভক্তিৰস প্ৰধান ছখন নাট ৰচনা কৰি ভক্তিধৰ্মৰ প্ৰচাৰ কৰে। শঙ্কৰদেৱ বিৰচিত পূৰ্ণাঙ্গ নাটৰ তুলনাত শিশুকৃষ্ণৰ চোৰ-চাতুৰী প্ৰধান একোটা সৰু ঘটনাক লৈ নৃত্য-গীতৰ প্ৰাচুৰ্যৰে ৰচনা কৰা মাধৱদেৱৰ নাটকেইখনক ঝুমুৰা ৰূপে অভিহিত কৰা হয়। মাধৱদেৱৰ নাটত বেদান্তৰ ব্ৰহ্মক গোৱালীয়ে পঘাৰে বান্ধিছে আৰু সেই কৃষ্ণ ঘৰে ঘৰে বিৰাজ কৰিছে। এয়া মাধৱদেৱৰ অনন্য কৃতিত্ব। শঙ্কৰদেৱৰ নাটৰ সংস্কৃত শ্লোক আৰু ব্ৰজাৱলী ভাষাৰ প্ৰয়োগ শিথিল কৰি মাধৱদেৱে ঝুমুৰাসমূহ জনমানসৰ ওচৰ চপাই আনি কৃষ্ণ ভক্তিৰ ৰস পান কৰাইছে। শিশুৰ সৰ্বাঙ্গীন বিকাশৰ বাবে প্ৰয়োজনীয় মুকলি পৰিৱেশ, গীত, নৃত্য আৰু অভিনয়েৰে মুখৰিত সাংস্কৃতিক পটভূমিত শিশুকৃষ্ণ চৰিত্ৰৰ বিকাশ লোকৰঞ্জনতকৈও লোক জ্ঞান তথা আদৰ্শ হিচাপে অধিক প্ৰাসঙ্গিক। ইয়াতে মাধৱদেৱৰ বিশাল পাণ্ডিত্য অন্তৰ্নিহিত হৈ আছে। মাধৱদেৱৰ নাটসমূহ ভাৰতীয় শিশু সাহিত্যৰো মূল্যৱান সম্পদ।

বীজ শব্দ ঃ

শিশুকৃষ্ণ, ঝুমুৰা, অৰ্জুন-ভঞ্জন, চোৰধৰা, পিম্পৰা গুচোৱা, ভোজন বেহাৰ, ভূমি লেটোৱা, ব্ৰহ্মামোহন, কৃষ্ণ কৰ্ণামৃত, গোৱালী, গোপবালক, ভক্তি, ব্ৰহ্ম।

০.০০ প্ৰস্তাৱনা ঃ

মাধৱদেৱে ৰচনা কৰা বুলি প্ৰচলিত নাট ন খন। ইয়াৰ উপৰিও গুৰুচৰিত পুথিত নৃসিংহ যাত্ৰা [১], ৰাম যাত্ৰা [২] (ৰাম ভাওনা) আৰু গোৱৰ্দ্ধন যাত্ৰা [৩] নামেৰে তিনিখন নাট মাধৱদেৱে ৰচনা কৰি অভিনয় কৰোৱাৰ কথা আছে। এই তিনিওখন নাট বৰ্তমানলৈকে উদ্ধাৰ হোৱা নাই; অৰ্থাৎ বিলুপ্ত নাট। প্ৰাপ্ত ন খন নাটৰ ভিতৰত অৰ্জুন ভঞ্জন, চোৰধৰা, পিম্পৰা গুচোৱা, ভূমি লেটোৱা আৰু ভোজন বেহাৰ— এই পাঁচখনি নাট নিঃসন্দেহে মাধৱদেৱৰ নাট হিচাপে সৰ্বজন সমাদৃত। বাকী চাৰিখন নাট— ৰাসঝুমুৰা, কোটোৰা খেলা, ভূষণ হৰণ আৰু ব্ৰহ্মামোহন মাধৱদেৱৰ দ্বাৰা ৰচিত হয়নে নহয় এই বিষয়ে সন্দেহৰ অৱকাশ আছে।

ৰাসঝুমুৰা নাটখনি শৃঙ্গাৰ ৰস প্ৰধান। ৰচনা শৈলী দুৰ্বল আৰু নাট্য কাহিনীৰ উৎস ভাগৱতৰ ৰাসলীলা আধাৰিত নহয়। মাধৱদেৱৰ গুৰু শঙ্কৰদেৱৰ কেলি গোপাল নামেৰে এখনি ৰাসলীলা বিষয়ৰ নাটো আছে। সেয়ে ৰাসঝুমুৰাখনি মাধৱদেৱৰ ৰচনা নহয়। ভূষণ হৰণ নাটখনিৰো ভাৱ, বিষয় আৰু ৰূপ ৰাসঝুমুৰাৰ সৈতে ৰজিতা খোৱা। এই নাটখনিৰ কাহিনীও শ্ৰীমদ্ভাগৱত, হৰিবংশ বা বিষ্ণুপুৰাণ আধাৰিত নহয়; সেয়ে মাধৱদেৱৰ ৰচনা বুলি বিবেচনা কৰিব নোৱাৰি। কোটোৰাখেলা নাটখনিৰ বিষয়বস্তু শ্ৰীকৃষ্ণ কীৰ্ত্তন আৰু গীত গোৱিন্দ আধাৰিত। আদি ৰসৰ পয়োভৰ আৰু নিম্ন মানৰ ৰচনা শৈলী, বঙলুৱা ঠাঁচ, লঘু শব্দৰ প্ৰয়োগ আৰু জাতিভেদ ভাৱ একেটি সংলাপতে উন্মোচিত হৈছে ঃ

গোপী বোল।। আহে বাপসবঃ হামাৰ পসাৰ চুইতে চাৰসঃ তোহো কি নামঃ কি জাতি তা কহ।।

কৃষ্ণ বোল।। তুহু গোৱালী হামো গোবাল/পৰ্বত বনত খাপোহো কাল/এনুৰা কতকত খাই আছো দই/কি সোধ তোৰ মায়েৰ পৈ।। [৪]

এইখন নাটো মাধৱদেৱৰ দ্বাৰা ৰচিত হ'ব নোৱাৰে। ব্ৰহ্মামোন নাটখনিৰ কাহিনী শ্ৰীমদ্ভাগৱত আধাৰিত। মাধৱদেৱৰ ভোজন বেহাৰ নাটখনিৰ কাহিনী ব্ৰহ্মামোহনতহে সম্পূৰ্ণ হৈছেগৈ। ভোজনবেহাৰ নাটৰ দুটি গীত ব্ৰহ্মামোহনতো আছে। এইখনি নাটৰ ৰচনাশৈলী আন তিনিখনৰ তুলনাত উন্নত মানৰ। কলিৰাম মেধিয়ে ভূষণ হৰণ, ৰাসঝুমুৰা আৰু কোটোৰা খেলা নাট তিনিখনি মাধৱদেৱৰ নহয় বুলি কৈছে কিন্তু ব্ৰহ্মামোহনখনি সম্পৰ্কে সন্দেহহে প্ৰকাশ কৰিছে।[৫] বৈষ্ণৱ পৰম্পৰা মতে 'বাৰ অঙ্ক' বা বাৰ ছোৱা নাটৰ প্ৰচলিত বিশ্বাস সম্পূৰ্ণ হ'বলৈ হ'লে মাধৱদেৱৰ নাট ছখন হ'ব লাগিব। সত্যেন্দ্ৰনাথ শৰ্মাই ভোজনবেহাৰ নাটৰ স্বাভাৱিক পৰিণতি আৰু ৰচনা-ৰীতিৰ গাম্ভীৰ্য চাই ব্ৰহ্মামোহন খনিকে মাধৱদেৱৰ ষষ্ঠখন নাট হিচাপে বিবেচনা কৰিছে। [৬] মাধৱদেৱৰ আদৰ্শ আৰু তেখেতৰ নাটৰ ভাৱ, বিষয়, ৰূপ-ৰস, পূৰ্বৰ নাটৰ লগত সম্পৰ্ক আদি সকলো বিচাৰৰ বিশ্লেষণ কৰি ব্ৰহ্মামোহনখনিকে মাধৱদেৱৰ ষষ্ঠখন নাট হিচাপে আমি বিবেচনা কৰিছোঁ। সেই অনুসাৰে মাধৱদেৱৰ নাট কেইখন হৈছে — অৰ্জুনভঞ্জন, চোৰধৰা, পিম্পৰা গুচোৱা, ভূমি লেটোৱা, ভোজন বেহাৰ আৰু ব্ৰহ্মামোহন।

মাধৱদেৱৰ অৰ্জুন ভঞ্জনৰ বাহিৰে বাকীকেইখন নাটকক 'ঝুমুৰা' বোলা হয়। 'ঝুমুৰা' সম্পৰ্কে সুকুমাৰ সেনে চণ্ডীদাসৰ কৃষ্ণকীৰ্ত্তনৰ আলোচনা প্ৰসঙ্গত লিখিছে—

দু তিনজনের সংলাপময় এধরণের আখ্যান অথবা নাট্য রচনাকে উন্নত (অর্থাৎ সংস্কৃত, প্রাকৃত, অপভ্রংশ সাহিত্যে) 'বাগবেনী' অথবা 'বাক কেলী' এবং নিম্ন স্তরের সাহিত্যে (অর্থাৎ আবহট্ঠ বাংলায়) ঝুমুর বলা হতে মনে হয়। [৭]

এনে বৈশিষ্ট্যৰ আধাৰত মাধৱদেৱৰ নাট কেইখনি ঝুমুৰা বুলিব পৰা নাযায়। মহেশ্বৰ নেওগে মাধৱদেৱৰ নাট কেইখন গীত প্ৰধান আৰু একোটি পৰিস্থিতিক লৈ ৰচনা কৰাৰ লগতে শঙ্কৰদেৱৰ নাটত থকা প্ৰস্তাৱনা, প্ৰৱেশৰ শ্লোক, পয়াৰ, মুক্তিমঙ্গল ভটিমা নিদিয়াৰ কথা উল্লেখ কৰি কৈছে ঃ "এইবিলাকৰ পৰা দেখা যায় যে মাধৱদেৱে শঙ্কৰদেৱৰ নাটকৰ লক্ষণবোৰ সম্পূৰ্ণৰূপে মানি ল'বলৈ যত্ন কৰা নাছিল আৰু এই কাৰণে তেওঁ ঝুমুৰা নামেৰে এক শ্ৰেণী নতুন অঙ্ক সৃষ্টি কৰিলে।" [৮]

সত্যেন্দ্ৰনাথ শৰ্মাই ভাৰতৰ বিভিন্ন স্থানত প্ৰচলিত ঝুমুৰ নৃত্য, ঝুমুৰ গীত, ঝুমুৰ গীতাভিনয়, প্ৰাচীন অসমীয়া ঝুমুৰী ছন্দ এইবিলাকৰ লগত মাধৱদেৱৰ নাটক বুজাবলৈ প্ৰয়োগ কৰা ঝুমুৰ শব্দটিৰ কিছুমিল দেখুৱাইছে আৰু কৈছে — "আমি মাধৱদেৱৰ চোৰধৰা পিম্পৰা গুচোৱা ভূমি লোটোৱা আৰু ভোজন বিহাৰ নাটত পূৰ্ণ ঘটনা উপাখ্যান বা কথাবস্তু নাপাওঁ, একোটি খণ্ড বা ক্ষুদ্ৰ ঘটনাহে পাওঁ। এনে ক্ষুদ্ৰ বা খণ্ড কথা বস্তু-সংযুক্ত নাটকক ঝুমুৰা আখ্যা দিয়া হৈছে।" [৯]

মাধৱদেৱৰ ছয়োখনি নাট-ঝুমুৰাত কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰটিয়ে হৈছে শিশুকৃষ্ণ। কৃষ্ণ চৰিত্ৰটি সজাওঁতে শ্ৰীমদ্ভাগৱত আৰু বিল্বমংগলৰ 'কৃষ্ণ কৰ্ণামৃত' গ্ৰন্থৰ লগত কিছু মিল পোৱা যায় আনহাতে হৰিবংশ খনিয়েই শিশুকৃষ্ণৰ বাল্য লীলাৰ মূল আধাৰ। মাধৱদেৱৰ নাট্য কাহিনীৰ লগত সুৰদাসৰ

দোহাৰো মিল পোৱা যায়। সেয়েহে মাধৱদেৱৰ শিশুকৃষ্ণৰ অনুসন্ধান প্ৰাসঙ্গিক বিষয়। 'ঝুমুৰা' শব্দটো মাধৱদেৱে প্ৰয়োগ কৰা নাই। তেখেতে 'নাট', 'অঙ্ক' আৰু 'যাত্ৰা' শব্দহে ব্যৱহাৰ কৰিছিল। পৰৱৰ্তী লিপিকাৰে ঝুমুৰা নামটি সংযোগ কৰে; কাৰণ চৰিত পুথিত ঝুমুৰা বোলা নাই। এতেকে ঝুমুৰা কেইখন বাৰ অঙ্কৰ অন্তৰ্গত শ্লোক ভটিমা আৰু কথা সূত্ৰতকৈ নৃত্য-গীতক বেছি প্ৰাধান্য দি ৰচনা কৰা পৰস্থিতি প্ৰধান খণ্ড কথাবস্তুৰে ৰচিত সংক্ষিপ্ত নাট।

০.০১ অধ্যয়নৰ লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্য ঃ

মাধৱদেৱে শিশুকৃষ্ণ চৰিত্ৰক কেন্দ্ৰকৰি ৰচনাকৰা নাট-ঝুমুৰাসমূহৰ বিষয়, ভাৱ, ৰস আৰু সৌন্দৰ্যৰ অনুসন্ধান কৰি প্ৰতিপাদ্য বিষয়ৰ প্ৰাসঙ্গিকতা বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰাই এই অধ্যয়নৰ মূল উদ্দেশ্য। মাধৱদেৱৰ নাট সম্পৰ্কে কালিৰাম মেধি, সত্যেন্দ্ৰনাথ শৰ্মা, মহেশ্বৰ নেওগ, হৰিচন্দ্ৰ ভট্টাচাৰ্য, নাৰায়ণ চন্দ্ৰ গোস্বামী প্ৰভৃতি পণ্ডিতসকলে আলোচনা কৰিছে যদিও বৰ্তমানলৈকে মাধৱদেৱ বিৰচিত নাট বা ঝুমুৰাৰ সংখ্যা নিশ্চিত হোৱা নাই। এই অধ্যয়নত মাধৱদেৱৰ দ্বাৰা ৰচিত নাট-ঝুমুৰাৰ স্বৰূপ বিশ্লেষণৰ লগতে মাধৱদেৱৰ দ্বাৰা ৰচিত ঝুমুৰাৰ সংখ্যা নিৰূপণ কৰাত সহায়ক হ'ব। এই অধ্যয়নত মাধৱদেৱে শিশুকৃষ্ণৰ চৰিত্ৰটি কেনেদৰে সজাইছে, উৎস বা মূলৰ লগত নাট্যকাৰৰ মৌলিক প্ৰতিভাৰ লগতে পাণ্ডিত্য কেনেদৰে উন্মোচিত হৈছে, শিশুকৃষ্ণৰ চৰিত্ৰ চিত্ৰণত ভাৰতীয় সাহিত্যত মাধৱদেৱৰ ভূমিকা স্পষ্ট হ'ব ইয়াৰোপৰি সুকুমাৰ কলাৰ মাধ্যমেৰে মাধৱদেৱৰ দৰ্শনৰ বিষয়ে অনুধাৱন কৰিবলৈ যত্ন কৰা হ'ব।

০.০২ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

গৱেষণাপত্ৰখনিত মাধৱদেৱৰ দ্বাৰা ৰচিত আটাইখেইখন অঙ্কীয়া নাট (ঝুমুৰা) অধ্যয়নৰ মূল উৎস হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হৈছে। নাট্য কাহিনীৰ উৎস, প্ৰাসঙ্গিক গ্ৰন্থ, আলোচনা-সমালোচনা, প্ৰকাশিত কাকত আলোচনীকো এই অধ্যয়নত সামৰি লোৱা হৈছে।

০.০৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখনিত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰে অধ্যয়ন কৰি যুগুত কৰা হৈছে। ইয়াৰ লগতে ঐতিহাসিক আৰু তুলনামূলক পদ্ধতিৰো প্ৰয়োগ কৰা হৈছে।

১.০০ মাধৱদেৱৰ নাটকত শিশুকৃষ্ণ ঃ

মাধৱদেৱৰ দ্বাৰা ৰচিত নাটকেইখনৰ ভিতৰত অৰ্জুন ভঞ্জনখনিকহে নাট হিচাপে বিবেচনা কৰা হয় বাকীকেইখন চোৰধৰা, পিম্পৰাগুচোৱা, ভোজন বেহাৰ, ভূমি লেটোৱা আৰু ব্ৰহ্মামোহনক ঝুমুৰা বুলি অভিহিত কৰা হয়। সেয়েহে আমাৰ আলোচনাত মাধৱদেৱৰ আটাইকেইখন নাটকক একত্ৰে বুজাবৰ কাৰণে স্থান বিশেষে নাট-ঝুমুৰা শব্দটি প্ৰয়োগ কৰা হৈছে। মাধৱদেৱৰ এই নাট-ঝুমুৰাসমূহৰ বিষয় বস্তু, ভাব বস্তু, ৰূপ বস্তু, ৰস আৰু সৌন্দৰ্যৰ মাজেৰে শিশুকৃষ্ণ চৰিত্ৰটি বিশ্লেষণাত্মকভাৱে প্ৰতিখন নাট-ঝুমুৰাৰ আধাৰত আলোচনা আগ বঢ়োৱা হৈছে। নাট্য কাহিনীৰ উৎস, নাট্যকাৰৰ সৃষ্টিশীলতা, সাহিত্য শাস্ত্ৰীয় সৌন্দৰ্য, সমৰূপধৰ্মী কবিৰ কাব্য বা উত্তৰাধিকাৰ সকলো গুৰুত্বৰে আলোচনা কৰিবলৈ যত্ন কৰা হৈছে।

১.০১ অৰ্জুন ভঞ্জন নাটত শিশুকৃষ্ণ ঃ

অৰ্জুন ভঞ্জন মাধৱদেৱৰ প্ৰথম নাট। শঙ্কৰদেৱ জীৱিত কালতে ১৫৩৮ খ্ৰীঃত গণক কুছিত এইখনি নাট ৰচনা কৰিছিল আৰু প্ৰথমবাৰ অভিনয় কৰোঁতে শঙ্কৰদেৱেও অংশ গ্ৰহণ কৰিছিল।[১০]

নাটখনিৰ কাহিনী দধিমথনক কেন্দ্ৰ কৰি ৰচিত হোৱা বাবে দধিমথন যাত্ৰা বুলিও কোৱা হয়। 'যাত্ৰা' শব্দটো নাটৰ শেষত সূত্ৰৰ কথাত নাট্যকাৰে প্ৰয়োগ কৰিছে। অৰ্জুন ভঞ্জন নাটখনিৰ কাহিনীভাগ নাট্যকাৰে শ্ৰীমদ্ভাগৱতৰ দশম স্কন্ধৰ নৱম, দশম আৰু একাদশ স্কন্ধৰপৰা গ্ৰহণ কৰিছে। নাট্য কাহিনী হৰিবংশ পুৰাণৰ বিষ্ণু পৰ্বৰ অষ্টম অধ্যায় আৰু বিষ্ণুপুৰাণৰ পঞ্চম খণ্ডৰ ষষ্ঠ অধ্যায়তো আছে। বিল্বমঙ্গলৰ কৃষ্ণ কৰ্ণামৃত গ্ৰন্থৰ ২১,২২,৪৩,৫২ আৰু ৬৬ নং স্তোত্ৰতো উল্লেখ আছে। বিষ্ণু পুৰাণৰ কাহিনী অতি সংক্ষিপ্ত। কৃষ্ণই এডাল মাৰিৰে মাখন থোৱা পাত্ৰ ভাঙিছে আৰু এনে দুষ্টালিৰ বাবে এডাল ৰচিৰে বান্ধি থৈছে। হৰি বংশতো কৃষ্ণৰ অতপালি সহিব নোৱাৰিহে মাকে উড়ালত বান্ধিছে। পটাগুটিৰে মথনি ভঙা আৰু গৰুৰ পঘাৰে বন্ধা, দুই আঙুলে নটাৰ কাহিনী ইয়াতো নাই। হৰিবংশত কৃষ্ণই যমল আৰু অৰ্জুন বৃক্ষ ভংগ কৰাত গোপসকলে কোৱা—

"... ঝড়নাই বৃষ্টি নাই, ব্ৰজাঘাত নাই হস্তীতেও গাত্ৰ ঘৰ্ষণ কৰে নাই, তবে কেন এ বৃক্ষ উৎপাটিত হৈল?"[১১]

এই কথাখিনিৰ লগত মাধৱদেৱৰ নাটৰ গোৱালৰ সংলাপত কোৱা—

আহে গুৱাল সব, ওহি কি তদ্ভূত, বাত নাহি, বৃষ্টি নাহি, নিৰ্ঘাত ব্ৰজপাত নাই, হস্তী সৰক বিক্ৰান্ত দোষ নাহি, অতয়ে কালক বৃক্ষ কৈছে উভৰি পৰল।[১২]

এই কথাখিনিয়ে হৰিবংশৰ প্ৰভাৱ দেখুৱায়। ভাগৱত, হৰিবংস আৰু বিষ্ণু পুৰাণত কৃষ্ণক ৰচী বা জৰীৰে বন্ধা বুলি কৈছে। নাটকত গৰুৰ পঘাৰেহে বান্ধিছে আৰু গৰুৰ পঘাৰে বন্ধা কাৰ্য বিল্বমঙ্গলৰ স্তোত্ৰত পোৱা যায় ঃ

যশোদয়া গাড় মুড়ুখলেন গোকৰ্ণ্ঠ পাশেন নিবধ্যমানঃ[১৩]

নাটখনিত গোৱালী ৰোহিণী আৰু নন্দৰ লগত যশোদাৰ গালি-গালাজ নাট্যকাৰৰ মৌলিক সংযোজন। মাধৱদেৱে শাস্ত্ৰীয় আৰু লোক উপাদানৰ সংমিশ্ৰণেৰে অৰ্জুন ভঞ্জন নাটখনি ৰচনা কৰাৰ বাবে কৃষ্ণ চৰিত্ৰটি ঐশ্বৰিক আৰু লোকশিশু দুয়োটাৰূপতে বিকশিত হৈছে।

ঐশ্বৰিক শিশুৰূপে শিশুকৃষ্ণ ঃ

নাটখনিত শিশুকৃষ্ণৰ দুটি ৰূপ ফুটি উঠিছে। এটি ঐশ্বৰিক শক্তিধৰ দেৱশিশু আৰু আনটি সাধাৰণ শ্লোকটোত কৃষ্ণক লৱণুখোৱা নন্দৰ পুত্ৰ সাধাৰণ শিশু বুলি কৈয়েই পাছতে ভূমিভাৰ হৰণৰ নিমিত্তে তেওঁ বসুদেৱৰ গৃহত জন্ম লোৱা গোপীসকলক আনন্দ প্ৰদান কৰোঁতা, যদুকুলৰ সিংহ বুলি স্মৰণ কৰিছে।

নাটখনিত ঐশ্বৰিক শিশু হিচাপে কৃযক চৰাচৰ জগতৰ গুৰু নাৰায়ণ বোলা হৈছে। তেৱেঁই ত্ৰিভুৱন মোহন ৰূপৰ গৰাকী; যাৰ চৰণত সেৱা কৰিলে ভকতৰ ভয় দূৰ হয়। পুতনা, চক্ৰবাত আদি অসুৰক নিধন কৰোঁতা কৃষ্ণই নিজেই কৈছে ঃ

হামু কোটি ব্ৰহ্মাণ্ডক নায়ক, ব্ৰহ্মাদি দেৱক পৰম দেৱতা... হামাক মহা মহা যজ্ঞে সন্তোষ কৰিতে নাহি পাৰ।...।"[১৪]

গীতটো কোৱা হৈছে যে যোগীয়েও যাক ধ্যান কৰিও নাপায় সেই পৰমাত্মা হৰিক গোপীয়ে খেদি ফুৰিছে। যিজন জগত গুৰু, যাৰ পূৰ্বাপৰ, বাহিৰ-ভিতৰ নাই, তেওঁকে যশোদাই বান্ধিছে। কৃষ্ণক বান্ধিবলৈ যিমানেই ৰচী আনে দুই আঙোলে নাটে অৱস্থা দেখি ৰোহিণীয়ে যশোদাক কৃষ্ণৰ ঐশ্বৰিক গুণ বখানিছে ঃ

"ওহি মানুস বালক নাহি।। প্ৰভাৱ দেখিয়ে হামু জানল, ওহি জগত কাৰণঃ কোটি কোটি ব্ৰহ্মাণ্ড যাহেৰ ৰোম ৰন্ধ্ৰে থিক, জগত তাৰণ কাৰণে তোহাৰি উদৰে মানুষ ৰূপে অৱতৰল।"[১৫]

যেতিয়া কৃষ্ণই নিজে বন্ধন গ্ৰহণ কৰিছে সূত্ৰই কৈছে ঃ

"যোহি কৃষ্ণ আপোন মায়া পাশে ব্ৰহ্মা আদি অখিল জগতক বন্ধন কৰিয়ে থিক, যশোদ ভকতি বলে তাহেক বান্ধয়।"[১৬]

কৃষ্ণক উৰুখল বা উড়ালত বান্ধি থোৱাৰ পাছত সূত্ৰই কৈছে—

"অৱ বেদ বিচাৰক চাৰি গোৱাৰী যশোৱাক ঘৰে সব উপনিষদ অৰ্থ ভগৱন্ত পৰমাত্মা ব্ৰহ্ম উৰুখলে নিশ্চয় বন্দী হুয়া থিক, তাহেক দেখহ, চিনহ, নিৰন্তৰে হৰিবোল হৰিবোল।"[১৭]

কৃষ্ণই ঐশ্বৰিক লীলাৰে জীৱক পৰম মুক্তি দিয়া দেখুৱাবৰ বাবে যমল আৰু অৰ্জুন গছ উভালি মনিগ্ৰীৱ আৰু নলকুবেৰক মুক্তি দিছে। দুয়োজনে কৃষ্ণক ভগৱন্ত ৰূপে স্তুতি কৰিছে। নাটখনিৰ শেষত কল্যাণ-খৰমানৰ গীতত কৃষ্ণই স্বয়ং ভগৱান, সমস্ত ঘটনা তেওঁৰ লীলা আৰু তেওঁৰ চৰণত ভক্তিয়েই জীৱৰ তৰণৰ একমাত্ৰ উপায় বুলি কোৱা হৈছে।

লোক শিশুৰূপে শিশুকৃষ্ণ ঃ

অৰ্জুন ভঞ্জন নাটখনিত মাৱধদেৱে লোক শিশুৰূপে শিশুকৃষ্ণক ইমান দক্ষতাৰে সজাইছে; যেন আমাৰ গাঁৱৰ অঘাইটং ল'ৰাটোহে। আন কি কৃষ্ণ চৰিত্ৰটিৰ মাজত পাঠক-দৰ্শকে বহু পৰিমাণে নিজৰে শৈশৱৰ প্ৰতিফলন দেখা পায়। নাটখনিত কৃষ্ণই নেৱানেপেৱাকৈ গাখীৰ খাব বিচৰা কাৰ্য শ্ৰীমদ্ভাগৱত, হৰি বংশ আৰু বিষ্ণু পুৰাণত নাই। বিল্বমঙ্গলৰ স্তোত্ৰতহে এই কথা পোৱা যায়। ৫২ নং স্তোত্ৰত কোৱা হৈছে যে এদিন ৰাতিপুৱাই যশোদাই গোৱালীসকলক মাতি আনি দধি মথিবলৈ লগাই কোলাহল কৰি কৃষ্ণৰ টোপনি ভাঙিলে। সেই খণ্ডতে উঠি আহি কৃষ্ণই গাখীৰ খাবলৈ আমনি কৰিবলৈ ধৰিলে। কিন্তু অৰ্জুন ভঞ্জন নাটকত কৃষ্ণই গাখীৰ খাব বিচাৰোঁতে কৈছে—"তোহাৰি স্তন পান কৰিতে বহুত ইচ্ছা হুয়াছে।"[১৮]

অৰ্থাৎ মোৰ ভোক লাগিছে বুলি গাখীৰ খাব বিচৰা নাই বা কন্দা, ঠেহ পতাও নাই; অতি কৌশলেৰে মাকৰ ওপৰত খং উজাৰিব বিচাৰিছে। এয়া শিশুৰ চিৰন্তন প্ৰবৃত্তি। তেওঁলোকে যদি কাৰোবাক বেছি খং কৰিব পাৰে, অভিমান কৰিব পাৰে বা গালি পাৰিব, মৰম কৰিব পাৰে সেয়া মাকৰ বাহিৰে আন কোনো হ'ব নোৱাৰে। যশোদাই আমনি সহিব নোৱাৰি আজৰি হ'বলৈকে কৃষ্ণক গাখীৰ দি থাকোঁতেই হঠাৎ গাখীৰ উতলি পৰা বুলি শুনি কৃষ্ণক থেকেচা মাৰি থোৱা কাৰ্য মাধৱদেৱেহে সৃষ্টি কৰা; কাৰণ আন কোনো গ্ৰন্থতে এইকথা নাই। যশোদাই কৃষ্ণক গুৰুত্ব দিব নিবিচৰাৰো কাৰণ আছে। কৃষ্ণই খাবলৈ পালেও চুৰ কৰি খায়, বানৰক খুৱায়, নষ্ট কৰে। সাধাৰণতে খাবলৈ নেপালে শিশুৰ গপ-ঠেহ, খং বাঢ়ে আৰু যিকোনো বস্তু দলিয়াই দিয়াতো স্বাভাৱিক কথা।

ইফালে আকৌ আধাপেটী ভোক; সেয়ে কৃষ্ণই পটাগুটি দলি মাৰি দধিৰ ভাণ্ডটোকে ভাঙি পেলালে। তাকে দেখি মাকৰ খং দুগুণ বাঢ়িল আৰু কৃষ্ণক ধৰি কোবাবলৈ খেদি গৈছে। কৃষ্ণইও মাকৰ ভয়ত পলাবলৈ দৌৰিছে। কিন্তু শিশুক মাক দেউতাকে খেদি গ'লে ৰক্ষা পৰাটো সম্ভৱ নহয়; আনহাতে বেছিকৈ দৌৰালে খং বাঢ়িব। সেয়ে কৃষ্ণ ভয়তে কান্দি বৈ দিছে।

এনেদৰে মাধৱদেৱে কৃষ্ণ চৰিত্ৰটো লোক জীৱনৰ চিৰাচৰিত শিশুৰূপে সজাইছে যদিও তেওঁকে অনন্ত কোটি ব্ৰহ্মাণ্ডৰ গৰাকী হিচাপে প্ৰতিষ্ঠা কৰিছে।

নাটখনিত যশোদাই কৃষ্ণক বন্ধাৰ বাবে ৰোহিণীয়ে যশোদাক তেনে কাৰ্য নকৰিবলৈ কাকুতি-মিনতি কৰা, গোপশিশুসকলে যশোদাক গালি পাৰি কৃষ্ণৰ কাষতে বহি থকা, গোৱালী আৰু যশোদাৰ গালি-গালাজ আৰু নাটৰ শেষত নন্দৰ লগত যশোদাৰ কাজিয়াখন মাধৱদেৱৰ মৌলিক সৃষ্টি আৰু লোক জীৱনৰ পৰিচায়ক। শ্ৰীমদ্ভাগৱতত এইখিনি কথা নাই। নন্দৰ সৈতে যশোদাৰ গালি-গালাজখিনিয়ে চৰিত্ৰ দুটিক লঘূ কৰিছে।

বাৎসল্য ভক্তি ৰসৰ সাধক চিৰ কুমাৰ মাধৱদেৱে শিশুকৃষ্ণৰ চৰিত্ৰটি অৰ্জুন ভঞ্জন নাটত ঐশ্বৰিক আৰু মানৱীয় দুয়োটা গুণেৰে ইমান নিখুঁতভাৱে সজাইছে যে ত্ৰিজগতৰ পতি কৃষ্ণ আমাৰ হৈ পৰিছে। ইয়াৰ যোগেদি কৃষ্ণ ভক্তিৰে মুকুতিৰ পথৰো সন্ধান দিছে। সুৰদাসে আঠোটা দোহাত শিশুকৃষ্ণৰ উড়াল বন্ধনৰ কাহিনী বৰ্ণনা কৰিছে। হৰিবংশ পুৰাণৰ নিচিনাকৈ সুৰদাসৰ দোহাত কৃষ্ণৰ দুষ্টালি সহিব নোৱাৰিহে যশোদাই উড়ালত বান্ধিছে ঃ

ঐসী ৰিস মৈথো ধৰি পাওঁ
কৈসে হাল কৰো ধৰি হৰিকে তুমকো
প্ৰগত দিখাও।[১৯]

অৰ্থাৎ এনেবোৰ দুষ্টালি কৰাৰ ফল কি হ'ব কৃষ্ণক আজি দেখুৱাব— বুলি কৃষ্ণক উড়ালত বান্ধি থৈছে। কৃষ্ণক মাকে বান্ধি থোৱাৰ খবৰটো গোৱালীপাৰাত বিয়পি পৰাৰ লগে লগে গোৱালীসকল আহি যশোদাক গালি পাৰি কৃষ্ণক মুকলি কৰি দিবলৈ কোৱা কথাখিনি মাধৱদেৱৰ অৰ্জুন ভঞ্জনৰ লগত মিলে—

কহা ভয়ো যো ঘৰকে লাৰিকা চোৰি মাখন খায়ে/অহো যশোদা কত শাস্তিহো য়হে কোখিকো যায়ে।[২০]

অৰ্থাৎ কি হ'লনো, নিজৰ ঘৰৰ ল'ৰাটোৱে যেনিবা মাখন চুৰ কৰি খালে, সিতো তোমাৰ কোলাতে জনম লৈছে ইমান শাস্তি দিছা যে।

ইয়াৰ প্ৰত্যুত্তৰত যশোদাই তেওঁলোকক গালি পাৰিছে—

কহন লাগি অব বঢ়ি বাত ডোটা মেৰৌ তুমহি বন্ধায়ো তনকহি মাখন খাত।[২১]

অৰ্থাৎ কৃষ্ণই মাখন খোৱা বুলি তোমালোকেই বন্ধালা আৰু এতিয়া বৰ বৰ কথাকৈ মৰম দেখুৱাইছা।

অৰ্জুন ভঞ্জন নাটত কৃষ্ণৰ বন্ধন দেখি গোপবালকসকলে যশোদাক গালি পাৰি দুখ মনেৰে কৃষ্ণৰ কাষতে বহি থকাৰ নিচিনাকৈ সুৰদাসৰ দোহাত হলধৰে কৃষ্ণৰ বন্ধন দেখি কান্দিকাতি যশোদক বান্ধখুলি দিবলৈ কৈ কাষতে বহি পৰিছে।

অৰ্জুন ভঞ্জন নাটত শিশুকৃষ্ণৰ চৰিত্ৰটি ভগৱান আৰু মানৱ এই দুয়োটা ৰূপতে বিকশিত হৈছে। নাটখনিৰ আৰম্ভণিতে অপিচ শ্লোকত কৃষ্ণক বসুদেৱৰ গৃহত ভগৱানৰ অৱতাৰ বুলি কোৱা হৈছে। কৃষ্ণ 'চৰাচৰ গুৰু', 'ত্ৰিভুৱন মোহন' ৰূপ আৰু কৃষ্ণৰ চৰণৰ আশ্ৰয়েই 'ভকত ভয় ভঞ্জন' কৰে বুলিছে। গীত-সূত্ৰৰ উপৰিও কৃষ্ণৰ সংলাপতো ঐশ্বৰীক গুণ প্ৰকাশ পাইছে। কৃষ্ণই নিজে কৈছে — 'হামো কোটি ব্ৰহ্মাণ্ডক নায়ক, ব্ৰহ্মা আদি দেৱক পৰম দেৱতা।' আকৌ কৈছে— 'হামো ঈশ্বৰ লক্ষ্মীক নায়ক ইহাৰি গৃহে ভকতকি বশ্য হুয়া ৰৈছি।' কাৰ্যক্ষেত্ৰতো কৃষ্ণক যশোদাই ঘৰৰ সমস্ত ৰচীৰেও বান্ধি পৰা নাই। কৃষ্ণই নিজেহে বন্ধন লৈছে। যমলাৰ্জুন উভালি দুই অভিশপ্তক মুক্তি দিছে। নাট্যকাৰে বাৰে বাৰে কৃষ্ণৰ ঐশ্বৰিক গুণ মাহাত্ম্য ঘোষণা কৰিছে— 'ওহি গহন বন ছেদ মাজে ব্ৰহ্মক নিতান্তে বিচাৰ কৰিতে বুদ্ধি সহিতে সব শৰীৰ খীন ভেল, অব বেদ বচন বিচাৰ চাৰি গোৱাৰী যশোদাক ঘৰে সব উপনিষদ অৰ্থ ভগৱন্ত পৰমাত্মা ব্ৰহ্ম উৰুখলে নিশ্চয় বন্দী হুয়া থিক, তাহেক দেখহ চিনহ।' বুলি কৃষ্ণৰ নিৰ্মল ভকতি মাগি নাটৰ যৱনিক পেলাইছে।

মানৱ শিশুৰূপে কৃষ্ণ অতি অঘাইটং। ঘৰত দধি দুগ্ধ উভৈনদী হৈ থাকোতেওঁ চুৰ কৰি খায়, বানৰকো খুৱায়। লোক উক্তি এটি আছে— 'আধাপেটী ভাত আৰু মাতৃশোক একেই।' কৃষ্ণই গাখীৰ খাই থকা অৱস্থাতে মাকে কোলাৰপৰা নমাই দিছে সেই দুখেই অসহনীয় তাতে আকৌ ঠেকেচা মাৰি নমাইছে। সেয়ে কৃষ্ণই উৰহৰ খং ফটা কঁথাত তুলি পটা গুটি দলিয়াই মথনি মাথি ভাঙি পেলাইছে। শিশুৱে কৰা কামৰ পৰিণতি চিন্তা নকৰে। কৃষ্ণইও খঙতে ভাগিলেও ভাগক বুলি ভাঙিলে; কিন্তু মাকে জানো সুদাই এৰিব ? সেয়ে পলাই আছে।

পলোৱা বা লুকুৱাটো শিশুৰ প্ৰিয় স্বভাৱ। মাকে ধৰা পেলোৱাত দৌৰি পলাবলৈ যত্ন কৰিছে। সাৰিব নোৱাৰিব বুলি জানি কান্দি বৈ দিছে — এই সকলোবোৰ শিশুৰ সাৰ্বজনীন আচৰণ। দুখ আৰু ক্ষোভ যেতিয়া বেছি হয় শিশুৱে প্ৰতিশোধ নিজৰ ওপৰতে লয় গপ পাতে, হাত-ভৰি এচাৰে, মাটিত বাগৰে। কৃষ্ণইও বলে নোৱৰা উড়ালটোকে টানি লৈ গৈছে যি হয় হওক। ভাগ্য ভাল, হেঁচা মাৰি নধৰিলে গছ দুজোপাই ৰাখিলে— এনেদৰে ঝুমুৰাখনিত শিশুকৃষ্ণ চৰিত্ৰটিৰ এফাল লোক শিশুৰ আৰু আন ফাল ঐশ্বৰিক শিশুৰূপে মাধৱদেৱে চিত্ৰিত কৰিছে।

১.০২ চোৰধৰা ঝুমুৰাত শিশুকৃষ্ণঃ

"মাধৱদেৱৰ চোৰধৰা ঝুমুৰাখনি শিশুকৃষ্ণই গোৱালীৰ ঘৰত চোৰ-চাতুৰী কৰা এটি পৰিস্থিতিক লৈ ৰচিত। চৰিত পুথি মতে চোৰধৰা, পিম্পৰা গুচোৱা নাট ৰচনা কৰে সুন্দৰী দিয়াত থাকোঁতে অৰ্থাৎ ১৫৭০-৮০ খ্ৰীষ্টাব্দৰ ভিতৰত।"[২২] ঝুমুৰাখনিৰ কাহিনীৰ আৰম্ভণিতে মাধৱদেৱৰে অৰ্জুন ভঞ্জন নাটৰ 'অপিচ'টো মঙ্গলাচৰণ শ্লোক হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছে।

শিশুকৃষ্ণৰ বাল-চাতুৰী প্ৰকাশক ঝুমুৰা খনিৰ বিষয়বস্তু শ্ৰীমদ্ভাগৱত বা আন কোনো পুৰাণত নাই। ঝুমুৰাখনিত মাধৱদেৱে সন্নিৱিষ্ট কৰা বিল্বমংগলৰ কৃষ্ণ কৰ্ণামৃতৰ পৰা লোৱা স্তোত্ৰটো ঃ

কন্দুক্ৰীড়াবিগলিত ঘনস্বেদ শুদ্ধাননশ্ৰীঃ/কৈশ্চিৎদৃষ্টঃ কুৱলয়দলশ্যামলঃ কোহপিবালঃ।

পৃচ্ছত্যেবং পথি পথি যযৌ ব্যাকুলা নন্দপত্নী/তীৰে তীৰে তপনদুহিতুঃ কৃষ্ণমন্বেষয়ন্তি।[২৩]

অৰ্থাৎ ভটাগুটি খেলি খেলি ঘৰ্মাসিক্ত হৈ পৰা মন মুগ্ধ কৰা ধুনীয়া মুখখনেৰে পদুমৰ পাতৰ নিচিনা শ্যাম বৰণীয়া ল'ৰা এটি দেখিছিলানে বুলি পথিসকলক সুধি সুধি ব্যাকুল হৈ নন্দপত্নী যশোদাই যমুনাৰ পাৰে পাৰে কৃষ্ণক বিচাৰি গৈ আছিল।

এই স্তোত্ৰটিয়েই চোৰধৰা ঝুমুৰাখনিৰ মূল আধাৰ। শ্ৰীমদ্ভাগৱত পুৰাণ, হৰিবংশ পুৰাণ, সুৰ দাসৰ সুৰ সাগৰ, ভাসৰ বালচৰিত আদি গ্ৰন্থত কৃষ্ণই গোৱালিনীৰ ঘৰত মাখন চুৰকৰি খোৱাৰ কাহিনী আছে। কিন্তু যশোদাই বাটে বাটে কৃষ্ণক বিচাৰি ফুৰি এগৰাকী পথিকৰ যোগেদি বাতৰি পাই কৃষ্ণক গোৱালীপাৰাত বিচাৰি পোৱা আৰু কৃষ্ণক মিচাকৈ চোৰধৰা বুলি গোৱালীসকলক তিৰস্কাৰ কৰাৰ বৰ্ণনা ইবিলাকত নাই। নাৰায়ণ চন্দ্ৰ গোস্বামীয়ে উল্লিখিত শ্লোকটিকে ভিত্তি কৰি মাধৱদেৱে ঝুমুৰাখন সজাই পৰাই ৰচনা কৰিছে বুলি কৈছে যদিও "নাটখনত উল্লেখ থকা শ্লোকটো শ্ৰীকৃষ্ণ কৰ্ণামৃত গ্ৰন্থৰ নহয়"[২৪] বুলি কিয় ক'লে জনা নগ'ল।

ঝুমুৰাখনিৰ কাহিনী অনুসাৰে কৃষ্ণই এদিন গোৱালীৰ ঘৰত লৱণু চুৰ কৰি খাই থাকোতে গোৱালীয়ে দেখি দুৱাৰ বন্ধ কৰি চিঞৰ-বাখৰ কৰাত পাৰাৰ গোৱালীসকলো আহি উপস্থিত হ'ল। সকলোৱে কৃষ্ণক ৰাস্তালৈ উলিয়াই আনিলে। লৱনু চোৰৰ শাস্তি হিচাপে তেওঁলোকে কৃষ্ণক নৃত্য কৰিবলৈ ক'লে। চতুৰ কৃষ্ণই ছেগ বুজি এগৰাকী গোৱালীৰ মুখত লৱণু লাগি থকা হাতখন সানি লগৰীয়াসকলক চিঞৰিবলৈ ধৰিলে। লগৰীয়া গোপবালকসকল আহি পোৱাত কৃষ্ণই সাহস পাই গোৱালীসকলৰ চাদৰত ধৰি টানি ক'বলৈ ধৰিলে ধেপেচী সম্বোধন কৰি মাকৰ ওচৰলৈ লৈ যাব বুলি ক'লে। গোপীসকলে উপায় নেপাই কৃষ্ণক যাবলৈ দিলে। কিন্তু চলচাই চাপৰি বজোৱা কৃষ্ণই নিজে যি নাযায়েই, গোৱালীকো লৱণু নিদিলে যাবলৈ নিদিয়ে। উপায় নেপাই গোৱালিনীসকলে কৃষ্ণই নাচিলেহে লৱণু দিবলৈ ৰাজি হোৱাত কৃষ্ণই গোপীৰ মনোবাঞ্চা পুৰণ কৰি নাচি-বাগি লৱণু খাই থাকিল। আনফালে কৃষ্ণ ঘৰলৈ নহাত আকুলিত যশোদাই পথিকৰ সহায়ত নৃত্যস্থলিত উপস্থিত হ'লগৈ। মাকক দেখিয়েই সৰগ ঢুকি পোৱা যেন ভাবেৰে কৃষ্ণই কোলাত উঠি গাখীৰ খাই গোৱালীসকলে চোৰধৰাৰ ঘটনাটো কান্দি কান্দি বৰ্ণনা কৰিলে। পুত্ৰৰ চাতুৰী নুবুজি যশোদাই গোৱালীসকলক পাৰে মানে গালি পাৰিলে আৰু কৃষ্ণক কোলাত লৈ ঘৰলৈ আহিল। ঝুমুৰাখনিত শিশুকৃষ্ণ গাখীৰ খোৱা বয়সৰ ল'ৰা। কৃষ্ণৰ এই বয়সতে চোৰ-চাতুৰী খেলা অতুলনীয়। গোৱালীৰ ঘৰত মাখন চুৰ কৰি ধৰা পৰাৰ পাছত নিজকে নিৰ্দোষী কৰিবলৈ কৃষ্ণই যি উপায় অৱলম্বন কৰিছে, তাত কোনো অস্বাভাৱিকতা নাই। শিশুসুলভ যুক্তি তথা চাতুৰীৰেই কৃষ্ণই গোপীসকলকহে ওলোটাই জগৰত পেলাইছে। বিপদত লগৰীয়াৰ সহায় লোৱা, নিজক দোষমুক্ত কৰিবলৈ আনৰ গাত জগৰ জাপি দিয়া, মাকক এখনকে সাতখন কৰি কথা লগোৱা এইবিলাক শিশুৰ স্বাভাৱি প্ৰবৃত্তি। কৃষ্ণইও চোৰধৰা ঝুমুৰাত সেইখিনিকে কৰিছে। ঝুমুৰাখনিত কৃষ্ণৰ ঐশ্বৰিক গুণ-মাহাত্ম্যৰ কোনো প্ৰভাৱ নাই। এইজন কৃষ্ণই যে কোটি ব্ৰহ্মাণ্ডৰ ঈশ্বৰ হৈও নন্দৰ ঘৰত জন্ম লৈ সকলোকে আনন্দ প্ৰদান কৰিছে, নাট্যকাৰে সূত্ৰৰ যোগেদিহে এইকথা প্ৰকাশ কৰা হৈছে।

সাধাৰণতে চুৰ কৰা কাৰ্য সমৰ্থন বা অনুকৰণীয় আদৰ্শ

নহয়। ঝুমুৰাখনিত নায়ক চোৰজন কিন্তু গোৱালসকলৰ ৰজাৰ ঘৰৰ ল'ৰা, তেওঁলোকৰ ঘৰত দৈ, মাখন উভৈনদী। এটা চাৰি-পাঁচ বছৰীয়া শিশুৱে খায়নো কিমানহু তেন্তে গোৱালীৰ ঘৰত চুৰ কৰাৰ প্ৰয়োজন ক'ত! ইয়াৰ উত্তৰ সুৰদাসৰ এটি দোহাত পোৱা যায় ঃ

প্ৰথম কৰী হৰি মাখন চোৰী গোৱালিনী মন ইচ্ছা পুৰণ, আপু ভজে খোৰী/মনমে য়হে বিচাৰ কৰত হৰি ব্ৰজ ঘৰ ঘৰ সব জাউ/গোকুল জন্ম লিয়ৌ সুখ কাৰণ সবকৈ মাখন খাউ/[২৫]

অৰ্থাৎ গকুলৰ গোপীসকলৰ কৃষ্ণৰ ৰূপ-গুণ, চোৰ-চাতুৰী ইমানেই প্ৰিয় যে তেওঁলোকে কৃষ্ণক লগ পাবলৈকে ভাবি থাকে যে কৃষ্ণই আহি তেওঁলোকৰ ঘৰত মাখন চুৰি কৰি খাওক। সকলোকে আনন্দ দিয়ক। প্ৰকৃততে মাখন চুৰ কৰাটো এটা মাধ্যমহে; মনোৰঞ্জনৰ বাবেই এয়া কৃষ্ণৰ চোৰ-চাতুৰী। ঝুমুৰাখনিত কৃষ্ণৰ চুৰ কৰা কাৰ্যক যেনেদৰে টেঙৰালীয়ে ঢাকি ধৰিছে আনফালে যশোদাৰ পুত্ৰ স্নেহতকৈও কলহ প্ৰিয় স্বভাৱহে অধিক প্ৰকট হৈছে। বাণীকান্ত কাকতিয়ে এই প্ৰসঙ্গতে কৈছে ঃ

"লৱণু চুৰ কৰি খালে গোৱালীৰেই, আৰু শেষত গৈ জগৰো লাগিল গোৱালীৰ গাতে।"[২৬]

ঝুমুৰাখনিত শিশুকৃষ্ণ অনন্য চাতুৰী গুণৰ অধিকাৰী লোক শিশু।

১.০৩ পিম্পৰাগুচোৱা ঝুমুৰাত শিশুকৃষ ঃ

মাধৱদেৱৰ পিম্পৰাগুচোৱা ঝুমুৰাখনি সুন্দৰী দিয়াত থকাৰ সময়তে (১৫৭০-১৫৮০ খ্ৰীষ্টাব্দৰ ভিতৰত) ৰচনা কৰা। এইখনি ঝুমুৰাও চোৰধৰা ঝুমুৰাৰ নিচিনা শিশুকৃষ্ণৰ বালচাতুৰী প্ৰকাশক খণ্ড কাহিনীৰে ৰচিত। ঝুমুৰাখনি বিল্বমংগলৰ কৃষ্ণ কৰ্ণামৃত গ্ৰন্থৰ দুটি স্তোত্ৰৰ আধাৰত ৰচিত ঃ

"কস্ত্বং বাল কলানুজস্তমিহকিং মন্মান্দিৰাশংকয়া/বুদ্ধং তন্নৱনীত কুম্ভৱিৱৰে হস্তং কথং ন্যস্যসি।/কৰ্তুং তত্ৰ পিপিলিকাপনয়নং সুপ্তাঃ কিমুদ্বোধিতা/কলা বৎস গতিং বিবেক্তুমিতি সংজল্পন্ হৰিঃ পাতুব।।"[২৭]

আৰু—

"বদনে নৱনীত গন্ধৱাহং বচনে তস্কৰ চাতুৰী ধাৰী নম।/নয়নে কুহকা শ্ৰমং শ্ৰয়েহহং চৰণে কোমলতাং গুৱং কুমাৰম্।।"[২৮]

অৰ্থাৎ যাৰ মুখ মণ্ডলত লৱণুৰ গোন্ধ, কথাত চাতুৰী, চকুত চলনাৰ ভাৱ, চৰণত নৃত্যৰ ছন্দ আৰু সুকোমল-সুকুমাৰ সেইজন কৃষ্ণক বন্দনা কৰা হৈছে।

প্ৰথম স্তোত্ৰটোৰ কথাখিনিৰেই ঝুমুৰাখনিত কৃষ্ণ আৰু গোপীৰ কথোপকথন আৰম্ভ হৈছে ঃ

আমাৰ ঘৰত এইটো কোন? মোক চিনি পোৱা নাই? কেলে মই বলাইৰ ভায়েক। তুমি আমাৰ ঘৰলৈ কিয় আহিলা? মই বাট হেৰুৱাই আমাৰ ঘৰ বুলি আহিলোঁ। তুমি ঘৰ চিনি নেপাই আহিলা, পিছে লৱণুৰ কলাহত হাত দি আছা কিয়? অ' সেইটোহে বৰ ডাঙৰ দোষ পালা! এই পৰুৱাবোৰে লৱণু খাই আছে সেই কাৰণে পৰুৱা গুচাবলৈহে হাত দি আছোঁ। তুমি তেন্তে উপকাৰ কৰিছা ভাল কথা, শুই থকা ল'ৰাটো কিয় জগালা? ইয়াৰ সৈতে গৰু চৰাইছিলোঁ। মোৰ দামুৰীটো পোৱা নাই বাবে তাক সুধিবলৈ জগালোঁ — এনেদৰে ঝুমুৰাখনিত কৃষ্ণই গোৱালীৰ ঘৰত লৱণু চুৰ কৰি খাই থাকোঁতে ধৰা পৰিলত গোপীৰ লগত কথোপকথনেৰে ঝুমুৰাখনি আৰম্ভ হৈছে। ইয়াৰ পাছতে গোপীয়ে কৃষ্ণৰ মুখত লৱণুৰ গোন্ধ পোৱাৰ কথা কোৱাত কৃষ্ণই ওলোটাই গোপীয়ে নিজেই লোভ সামৰিব নোৱাৰি লৱণু খালে আৰু তেওঁৰ মুখৰপৰাহে গোন্ধ ওলাইছে; এতিয়া গিৰীয়েকৰ ভয়ত মিছাকথা কৈছে বুলি উভতি ধৰিলে। অৱশেষত গোপীয়ে লগৰ সকলোকো মাতি যশোদাৰ ওচৰত আপত্তি দিবলৈ গ'ল। যশোদাই কৃষ্ণক ভৱিষ্যতে তেনে নকৰিবলৈ কোৱাৰ লগতে 'তোমাৰ অপযশ কিমান সহিম' বুলি কোৱাতে জগৰ লাগিল। কৃষ্ণই এইবেলি মাকক এফালৰপৰা তিৰস্কাৰ কৰিবলৈ ধৰিলে যে—

কৃষ্ণই দুই কৰা মূল্যৰ গাখীৰৰ কলহটো ভাঙোতেই মাকে গৰুৰ পঘাৰে বান্ধিলে। যশোদাৰ সন্তান নথকাত কিমান তপ, যপ, ব্ৰত কৰিছিল কৃষ্ণ জন্ম হৈ সেই দুখ দূৰ কৰিলে। কিন্তু সেই কৃষ্ণকে মাকে দেখিব নোৱৰৰা হ'ব। পুত্ৰৰ মৰম বুজি নোপোৱা যশোদাই সকলো গুণ ঢাকি কৃষ্ণক লৱণু চোৰ নাম দিলে। ৰজাৰ পুত্ৰ হৈ বনত গৰু চৰাই সকলো দুখ-অপমান সহি থাকোতে কৃষ্ণহে বেয়া হ'ল। ইমানবোৰ দুখ সহি থকাতকৈ কংসৰ নগৰীলৈ গুচি গ'লেহে যশোদাৰ সকলো অহংকাৰ চূৰ্ণ হ'ব বুলি মাকক বিকুঠিবলৈ ধৰিলে। ইয়াতে ঝুমুৰাখনিৰ খণ্ড কাহিনীৰ অন্ত পৰিছে।

পিম্পৰাগুচোৱা ঝুমুৰাখনিত কৃষ্ণ আৰু গোপীৰ কথোপকথনখিনি বিল্বমংগলৰ স্তোত্ৰৰ; কিন্তু গোপীসকলে যশোদৰ আগত আপত্তি দিয়া কাৰ্য শ্ৰীমদ্ভাগৱত আধাৰিত। শ্ৰীমদ্ভাগৱতৰ দশম স্কন্ধৰ অষ্টম অধ্যায়ৰ ঊনত্ৰিশ, ত্ৰিশ আৰু একত্ৰিশ নং শ্লোকত গোপীসকলে কৃষ্ণৰ দুষ্টালিৰ বিষয়ে

যশোদাক আপত্তি দিয়াৰ বৰ্ণনা আছে। সুৰদাসৰ সুৰ সাগৰত কৃষ্ণই মাখন চুৰ কৰোঁতে ধৰাপৰি পৰুৱা গুচোৱাৰ কথা আছেঃ

"... দধি মে পৰি সেন্ত কী মৌপৈ চিন্টী সবৈ কঢ়ায়/ টহল কৰত ..... থাকে ঘৰ কী য়হ পতিসংগ মিলি সোই।..."[২৯]

অৰ্থাৎ মোক গাখীৰত পৰি থকা পৰুৱাবোৰ গুচাবলৈ কোৱা বাবেহে পৰুৱা গুচাই আছোঁ, তেওঁ গিৰীয়েকৰ লগত শুই আছেগৈ — এনেকৈ ৰখীয়া গোৱালীক কৃষ্ণই আভুৱা ভৰিছে।

কৃষ্ণই মাখন চুৰকৰা, বাচন ভঙা, বানৰকো খাবলৈ দিয়া আদি আমনিবোৰৰ কথা— গোৱালীসকলে যশোদাৰ ওচৰত আপত্তি দিয়াৰ বৰ্ণনাও সুৰদাসৰ দোহাত আছে। বিষ্ণু পুৰাণৰ পঞ্চম খণ্ডৰ ষষ্ঠ অধ্যায়ত কৃষ্ণৰ দুষ্টালিৰ বিষয়ে যশোদাক কেইবাগৰাকীও গোপীয়ে আপত্তি দিয়াৰ বৰ্ণনা আছে।[৩০] কোনোবাগৰাকীয়ে লৰণু চুৰ কৰি খোৱাৰ, কোনো গৰাকীয়ে পাত্ৰ ভঙাৰ, কোনো গৰাকীয়ে নষ্ট কৰি বান্দৰক দিয়া, কোনোগৰাকীয়ে কেঁচুৱাক জগাই দিয়াৰ যি আপত্তি কৰিছে, সেয়া ভাগৱত পুৰাণৰ লগত মিলা। ঝুমুৰাখনিতো অনুৰূপভাৱেই গোৱালীসকলে যশোদাক কৃষ্ণৰ বিপক্ষে আপত্তি দিছে।

পিম্পৰাগুচোৱা ঝুমুৰাত কৃষ্ণ অতি চতুৰ শিশু। কৃষ্ণৰ প্ৰত্যুৎপন্নমতি গুণৰ ওচৰত বয়স্ক গোৱালীৰো মুখৰ মাত হৰিছে। তাতে মাধৱদেৱে হাস্যৰসৰো সৃষ্টি কৰি গোপী-কৃষ্ণৰ কথোপকথন অধিক ক্ৰিয়াশীল কৰি তুলিছে। ঝুমুৰাখনিত শিশুকৃষ্ণ উপস্থিত বুদ্ধি সম্পন্ন, বাকপটু আৰু মাখন লুভীয়া। ইয়াৰ উপৰিও নিজৰ জগৰ আনৰ ওপৰত জাপি দি দোষমুক্ত হ'বলৈ যত্ন কৰা মিথ্যাবাদী আৰু চোৰ। ইয়াতেই প্ৰশ্নৰ উদয় হয় যে ইমানবোৰ বদগুণ থকাৰ পাছতো কৃষ্ণ কেনেকৈ আদৰ্শ শিশুচৰিত্ৰ হ'ব পাৰে! ইয়াৰ উত্তৰ হ'ব 'জলকীয়াৰ জলাই সোৱাদ'। কৃষ্ণই গাখীৰ মাখনৰ বাহিৰে কাৰো বেজী এটাও চুৰ কৰা নাই। চুৰ কৰি কেৱল নিজে খোৱা নাই। গোৱাল গোৱালীসকলোৰে বাবে কৃষ্ণ নিজৰ সন্তানতকৈ প্ৰিয়। তেওঁলোকে বাহিৰত কৃষ্ণৰ লগত কাজিয়া কৰিলেও ভিতৰি কৃষ্ণ আগমনৰ বাবে অপলক নেত্ৰে চাই থাকে। গোৱালিনীসকলে কৃষ্ণক মৰম কৰিবৰ বাবে কৃষ্ণৰ কথা শুনিবলৈ, নৃত্য চাবলৈকে ঘৰৰ দুৱাৰ মেলি থয়; যাতে কৃষ্ণ ভিতৰত সোমাই লৰণু খায়। তেনেজন শিশুকৃষ্ণক সামান্য চোৰ অপৰাধে, বা নিজক বচোৱাৰ বাবে ৰসালকৈ কোৱা দুই এটা মিছাকথাই স্পৰ্শকে কৰিব নোৱাৰে।

ঝুমুৰাখনিত কৃষ্ণ মানৱ তথা লোক শিশু। গোপ বালকসকলে যদিও কৃষ্ণক স্বামী বুলি কৈছে ইয়াৰ অৰ্থ ৰক্ষক বা দলপতি হে, ভগৱান নহয়। নাট্যকাৰে সূত্ৰৰ যোগেদিহে শ্ৰোতা- দৰ্শকক অৱগত কৰিছে যে এইজন কৃষ্ণই চৰাচৰ গুৰু, পৰম ঈশ্বৰ, গোপবেশে নন্দৰ ঘৰত লীলা প্ৰচাৰ কৰিছে। চৰিত্ৰৰ মুখত বা নাটকীয় কাৰ্য ৰূপায়ণত কৃষ্ণক ঈশ্বৰ ৰূপে দেখুওৱা নাই। ঝুমুৰাখনিত কৃষ্ণ লোক শিশু যদিও অসাধাৰণ লোকশিশু ৰূপে পৰিগণিত হৈছে।

১.০৪ ভূমিলেটোৱা ঝুমুৰাত শিশুকৃষ্ণ ঃ

মাধৱদেৱৰ ভূমিলোটোৱা ঝুমুৰাখনৰ কাহিনী অতি চুটি যদিও ক্ৰিয়াশীল। বিল্বমংগলৰ কৃষ্ণ কৰ্ণামৃত গ্ৰন্থৰপৰা ঝুমুৰাখনিত সন্নিৱিষ্ট কৰা শ্লোকটি ঃ

"নীতং নৱনৱনীতং কেনচ পীতং পয়ঃঞ্চ মে মুৰুলিঃ।/ ইতিসমুদীৰ্ঘ লুঠন্তং ভূমৌ বালং নমামি গোপালম।।"[৩১]

এই শ্লোকটিয়েই খণ্ড কাহিনীটিৰ মূল আধাৰ। ইয়াৰ বাহিৰে কৃষ্ণই দধিচুৰ কৰি ধৰাপৰাত মাটিত বাগৰি কান্দি দায় সৰাৰ কাহিনী শ্ৰীমদ্ভাগৱত বা আন ক'তো পোৱা নাই।

চোৰধৰা আৰু পিম্পৰাগুচোৱাৰ নিচিনাকৈ ভূমি লেটোৱা ঝুমুৰাখনিৰ কাহিনীও আৰম্ভ হৈছে শিশুকৃষ্ণই চুৰ কৰি মাখন খাই থকাৰ অৱস্থাৰ বৰ্ণনাৰে; পাৰ্থক্য ইয়াতেই যে ভূমি লেটোৱা ঝুমুৰাত কৃষ্ণই চুৰ কৰিছে নিজৰ ঘৰতে আৰু দায় সাৰিবলৈ মাটিত বাগৰা উপায় অৱলম্বন কৰিছে। এদিনাখন কৃষ্ণই ঘৰৰ ভিতৰত লৰণু খাই থাকোঁতেই মাক যশোদা অহাৰ গম পাই ধৰাপৰাৰ ভয়ত এটি অভিনৱ কৌশল অৱলম্বন কৰিলে। বাঁহীটো কঁকালৰ পাটৰ চুৰিয়াৰ খোচনিত লুকুৱাই লৰণু ভাণ্ডাৰটো অকতিয়াকৈ পেলাই কাষতে মাটিত বাগৰি কান্দিবলৈ ধৰিলে। যশোদাই ভিতৰ সোমাই কৃষ্ণই মাটিত বাগৰি কান্দি থকা দেখি স্নেহত আকুলিত হৈ তোমাৰনো কি হ'ব বুলি সুধিলে। কৃষ্ণই লৰণু ভাণ্ডটোত থোৱা লৰণুখিনি কোনোবাই খাই পেলালে আৰু বাঁহীটোও লৈ গ'ল বুলি মাকক আভুৱা ভাৰি আগতকৈও বেছি দুখ দেখুৱাই মাটিত বাগৰি কান্দিবলৈ ধৰিলে। আজলী যশোদাই পুত্ৰ স্নেহত বিগলিত হৈ কৃষ্ণক কাবৌ কাকুতি কৰি 'ময়ো ওলাই গ'লোঁ, পিতাৰাও ঘৰত নাছিল সকলো বান্দৰে খালে চাগে' বুলি কৃষ্ণক সান্ত্বনা দি ধূলা জাৰি কোলাত তুলি লৈ স্তনপান কৰালে। লগতে নতুন খীৰ ৰলণু দিব বুলি গোপীসকলক সাক্ষী কৰি কথা দিলে। যশোদাৰ কথাত চল পাই গাখীৰ খাই থকা কৃষ্ণই এই বেলি মাককহে উভতি

ধৰিলে, 'তুমি বাৰে বাৰে মিছা কথা কৈ মোক বঞ্চিত কৰা, এতিয়াই মোক লৰণু দিয়া'। যশোদাই গুৱালসকলে গাখীৰ দিলে তেওঁক দিব বুলি কোৱাত কৃষ্ণৰ চাতুৰি আৰু বাঢ়িল। লৰণু নিদিলে মাকক কেনিও যাবলৈ নিদিয়ে বুলি ৰিহাৰ আচলত ধৰি টানিবলৈ ধৰিলে। যশোদাই অৱশেষত হৰিৰ পূজাৰ কাৰণে থোৱা লৰণুকে আনি কৃষ্ণ দিয়াতহে শান্ত হৈছে।

ঝুমুৰাখনিত মাক আৰু পুতেক দুটি মাত্ৰ চৰিত্ৰ, পুতেক মাকৰ কোলাত উঠি গাখীৰ খোৱা বয়সৰ। অতি কম পৰিসৰতে নাট্য কাহিনী এনেকৈ ক্ষিপ্ৰভাৱে আগবঢ়াই নিয়া হৈছে যে সন্তানৰ ওচৰত মাকৰ শোচনীয় পৰাজয় হৈছে। চতুৰ কানাইৰ চাতুৰীৰ ওচৰত আজলী যশোদাজনীৰ অৱস্থাহে দুখলা হৈ পৰিছে। কৃষ্ণই নটবৰ ৰূপে মিছা অভিনয় কৰি নিজেই লৰণু খাই বেলেগ কোনোবাই খোৱা বুলি মাটিত বাগৰি কান্দি-কাটি মাকক অভুৱা ভৰিলে। পুত্ৰৰ চকুত চকুপানী, কান্দোনৰ উচুপনি কোনো মাকেই সহিব নোৱাৰে। তাতে আকৌ মাটিত বাগৰি কান্দি কৃষ্ণই যশোদাৰ আকুলতা আৰু বঢ়াইছে। সিমানৰ পাছতো বাঁহীটোও হেৰোৱা বুলি যশোদাক ইমানেই প্ৰভাৱিত কৰিছে যে হৰিৰ পূজাৰ বাবে থোৱা নতুন লৰণুকনো কৃষ্ণক খাবলৈ দিছে। মাকৰ বাবে সন্তান যে হৰিতকৈও মৰমৰ, ঝুমুৰাখনিত সেই সত্য উন্মোচিত হৈছে। কৃষ্ণৰ কান্দি ৰণ জিনা কৌশল গ্ৰাম্য শিশুৰ স্বভাৱজাত আচৰণ। ইয়াতে বুদ্ধিৰ সংযোগ কৰি কৃষ্ণ চাতুৰী ৰসৰ নটবৰ হৈ পৰিছে। মানৱীয় চেষ্টাৰে কৃষ্ণই যশোদাৰ নিচিনা মাতৃকো জয় কৰিছে সেয়ে কৃষ্ণ নায়ক।

মাধৱদেৱে এই কাহিনীৰ যোগেদি কৃষ্ণৰ ঐশ্বৰিক মাহাত্ম্যও কৌশলেৰে প্ৰকাশ কৰিছে। সমস্ত যজ্ঞ, তপ, যপৰ গৰাকী কৃষ্ণ; তেনেস্থলত হৰি পূজাৰ কি প্ৰয়োজনহু কাৰণ কৌটি ব্ৰহ্মাণ্ডৰ গৰাকী কৃষ্ণ ঘৰতে আছে। সেয়ে কৃষ্ণই হৰিৰ নৈবেদ্য গ্ৰহণ কৰিছে। অৱশ্যে এয়া নাট্য কাহিনীৰ আভ্যন্তৰীণ বা ভাৱাত্মক সংঘাতহে। আপাতত কৃষ্ণ চতুৰ লোক শিশু।

১.০৫ ভোজন বেহাৰ ঝুমুৰাত শিশুকৃষ্ণ ঃ

মাধৱদেৱৰ ভোজন বেহাৰ (ভোজন বিহাৰ) ঝুমুৰাখনিৰ খণ্ড-কাহিনীটোত শিশুকৃষ্ণই লগৰীয়াসকলৰ সৈতে একেলগে ভোজন কৰাৰ আনন্দ প্ৰকাশ কৰিছে। খণ্ড-কাহিনীটো মাধৱদেৱে শ্ৰীমদ্ভাগৱতৰ দশম স্কন্ধৰ দ্বাদশ অধ্যায়ৰপৰা গ্ৰহণ কৰিছে আৰু তাৰ লগত কিছু মৌলিক কথাৰ সংযোগ কৰিছে। গুৰু চৰিত কথাৰ ৭১৭ আৰু ৭৬৬ ছেদত ঝুমুৰাখনিৰ উল্লেখ আছে আৰু ১৫৮০—১৫৯০ খ্ৰীষ্টাব্দৰ ভিতৰতে মাধৱদেৱ বৰপেটাত থকা সময়তে এই ঝুমুৰাখনি ৰচনা কৰে।[৩২] হৰিচন্দ্ৰ ভট্টাচাৰ্যই ৰচনাকাল ১৫৫৭ খ্ৰীষ্টাব্দ [৩৩] বুলি অনুমান কৰিছে যদিও ইয়াৰ কোনো ভিত্তি উল্লেখ কৰা নাই।

ঝুমুৰাখনিৰ খণ্ড-কাহিনীটো আৰম্ভ হৈছে ৰাতিপুৱা যশোদাই কৃষ্ণক জগোৱা এটি ভটিমা গীতেৰে ঃ

প্ৰাত সময়ে ঃ জশোৱা জননী/মুখচুম্বিশ্যাম জগাৱনা কো/উঠ মেৰেলালঃ মদনগোপাল আৰে তেৰে গোৱাল বলাঅনো কো।।[৩৪]

অৰ্থাৎ ৰাতিপুৱা যশোদাই কৃষ্ণক জগাইছে যে তোমাৰ লগৰীয়াসকলে আহি মাতি আছে উঠা। ইয়াৰ লগতে যশোদাই কৃষ্ণক ৰুটি, মাখন, শিঙা-বেনুসকলো লৈ বৃন্দাবনলৈ গৰু চৰাবলৈ কৈছে। কৃষ্ণই শোৱাৰপৰা উঠিয়েই সাজি-কাচি বাঁহী বজাইছে আৰু বাঁহীৰ সুৰতে গোপবালকসকলে বুজি পাইছে যে আজি বৃন্দাবনত বনভোজ হ'ব। সেয়ে সকলোৱে নিজৰ নিজৰ ভোজন-সম্ভাৰ লৈ গৰুৰ জাকৰ পাছে পাছে আহিবলৈ ধৰিলে। কৃষ্ণইও একেলগে গৰুজাকৰ সৈতে বাঁহী বজাই বৃন্দাবলৈ যাত্ৰা কৰিলে।

বৃন্দাবনত গৰু চৰাই যমুনাৰ জল গো-বৎসসকলক খাবলৈ দি বিভিন্ন ফলে-ফুলে জাতিষ্কাৰ যমুনাৰ পাৰতে জিৰাবলৈ দিলে। কৃষ্ণই গোপবালকসকলক যমুনাৰ সুকোমল বালিত ভোজনৰ বাবে আহ্বান জনালে। কোনোবাই সিকিয়াত, কোনোবাই গছৰ পাতত কোনেৰে শিলৰ ওপৰতে থৈ অন্ন ভোজন কৰিবলৈ ধৰিলে। সকলোৱে ঘুৰি পাতি এনেকৈ বহিল যে সেয়াযেন পূৰ্ণ বিকশিত এপাহ পদুম হেতু মাজত বাওঁহাতত শিঙা-বেত আৰু কঁকালৰ খোচনিত বাঁহীটো থৈ বিভিন্ন কৌতুকেৰে সকলোকে আনন্দ দি সোঁহাতেৰে ভোজন কৰা কৃষ্ণ যেন পদুমৰ চকাহে। সকলোৱে আনন্দত হাঁহি-ধেমালিৰে ভোজন কৰি থাকোঁতেই বৰাগী নাৰদ আহি কৃষ্ণক স্তুতি কৰি নিবেদন কৰিলে যে তেওঁ সাত বৈকুণ্ঠ, পাতাল, অনন্তশয্যাতো আনকি ত্ৰিভুৱন বিচাৰিও হৰিক নেপালে। শেষত যমুৱাৰ বালিত পদচিহ্ন দেখি বিচাৰি পালেহি। নাৰদে কৃষ্ণৰ চৰণত ভকতি কৰি আশীৰ্বাদ বিচাৰিলে আৰু গোপ শিশুসকলক কাজিয়া নকৰি তেওঁলোকৰ খোৱাৰে অকণমান খাবলৈ খুজিলে। নাৰদে গোপশিশুসকলৰ খোৱা পাতৰপৰা অন্ন খাই কৃষ্ণৰ পদধূলি লৈ গমন কৰিলে।

গোপবালকসকলে বনভোজ (বালিভাত) খাই আনন্দ কৰি থকা অৱস্থাতে চিদামে চকু নিহালি দেখে গৰু গাই চোন এটাও নাই। তেতিয়া গৰুবোৰ ঘাঁহ বিচাৰি দূৰলৈ যোৱা বুলি

কৃষ্ণই সকলোকে ভোজন কৰি থাকিবলৈ কৈ গৰু বিচাৰি আনিবলৈ গ'ল। ইফালে ব্ৰহ্মাই কৃষ্ণৰ মহিমা চাবৰ বাবে গৰু-গাই সকলো চুৰ কৰি লৈ গ'ল। কৃষ্ণই বিচাৰি নাপাই যমুনাৰ বালিলৈ ঘুৰি আহি দেখে গোপবালক এজনো নাই। স্নেহত আকুলিত হৈ কৃষ্ণই কান্দিবলৈ ধৰিলে— 'অন্ন ভোজন আজু বৈৰি পৰমাদ ভেল মোৰ ভয়াসব কাহে গেল...।।' শেষত তেওঁ ধ্যান কৰি গম পালে যে ব্ৰহ্মাই সকলো চুৰ কৰি নিলে। কৃষ্ণ দুগুণ আকুলিত হ'ল। ইমানতে কাহিনীৰ অন্ত পৰিছে।

ঝুমুৰাখন খণ্ড কাহিনীটোৰ মূল ভাগৱত পুৰণাত দশমস্কন্ধৰ দ্বাদশ অধ্যায়ত প্ৰথম শ্লোকটোতে কোৱা হৈছেঃ

ক্বচিৎ বনাশায় মনোদধদ ব্ৰজাৎ/প্ৰাতঃ সমুত্থায় বয়স্যবৎসপান্।

প্ৰবোধয় ঞ্ছঙ্গৰবেন চাৰুণা/বিনিগতো বৎসপুৰঃ সৰে হৰি।।[৩৫]

অৰ্থাৎ এদিন কৃষ্ণই ৰাতিপুৱাৰ ভোজন বনত কৰাৰ ইচ্ছা কৰি বাঁহীৰ ধ্বনিৰেই যেন তেওঁৰ মনৰ কথা ক'লে গোপবালকসকলক গৰু-গাই লৈ বৃন্দাবনলৈ গ'ল। মাধৱদেৱৰ ঝুমুৰাত ইয়াকে যশোদাই প্ৰথমে কৃষ্ণক জগাওঁতে গোপবালকসকলে মাতিবলৈ আহিছে বুলি কৈছে— "আৰে তেৰে গোৱাল বলাঅনো কো।।[৩৬] আকৌ আনটো গীতত কৃষ্ণই বাঁহীৰ সুৰেৰে মাতিছে বুলিছে— "নিসি অবসানে বাংসিৰ নিসানে গ'/ডাকয় ছিৰি গোপাল।।"[৩৭] বিষ্ণুপুৰাণত আগদিনাই কৃষ্ণ আৰু গোপবালকসকলে আলোচনা কৰি থৈছিল বুলি কোৱা হৈছে।[৩৪] শ্ৰীমদ্ভাগৱত আৰু বিষ্ণু পুৰাণত বনভোজ খাবলৈ গৈ গোপশিশুসকলে বিবিধ আনন্দৰ খেল খেলাৰ বৰ্ণনা ঝুমুৰাখনিত এৰাই চলিছে। ইয়াৰ উপৰিও ভোজনস্থলীত নাৰদৰ উপস্থিতি, নাদৰে কৃষ্ণক পৰম ব্ৰহ্ম জ্ঞান কৰি কোৱা কথাখিনি আৰু গোপবালৰ পাতৰপৰা উচ্ছিষ্ট ভোজন কৰা কাহিনী নাট্যকাৰৰ নিজা সৃষ্টি। ঝুমুৰাখনিৰ যমুনাৰ পাৰত গোপ বালকসকলৰ ভোজন পৰ্বৰ বৰ্ণনা শ্ৰীমদ্ভাগৱতৰ দশম স্কন্ধৰ ত্ৰয়োদশ অধ্যায়ৰপৰা গ্ৰহণ কৰিছে।

সুৰদাসৰ দোহাত কৃষ্ণই বনত গৰু চৰাবলৈ গৈ গোপবালকসকলৰ লগত ভোজন আৰু আনন্দ কৰাৰ বৰ্ণনা ঝুমুৰাখনিৰ লগত মিলে ঃ

চৰাৱত বৃন্দাবন হৰি ধেনু গ্যাল সখা সব সঙ্গ লগাত্ৰ খেলত হৈ কৰি চৈনু/কোই গাৱত, কোই মুৰুলি বজাৱত, কোই বিষান কোই বেণু।/কোই নিৰতত কোই উঘতি তাৰ দৈ, জুৰী ব্ৰজ বালক সৈনু।।[৩৮]

আন এটি দোহাত ঃ

গ্যালান কৰ তৈ কৌৰ ছড়াৱত।/জুঠোলেত সবনি কে মুখ কৌ অপণে মুখ লৈ নাৱত।/ ষটৰস কে পকৱান ঘৰে সব তিনমে ৰুচি নাহি লৱেত।/হা হা কৰি কৰি মাগিলেত হৈ কহত মোহি অতি ভাৱত।[৩৯]

অৰ্থাৎ বৃন্দাবনত গৰু চৰাই থাকোঁতে গোপবালৰসকলৰ সৈতে গাইছে বেণু, বিষাণ, মুৰুৰি বজাইছে, নাচিছে, চিঞৰ-বাখৰ কৰিছে, হাত-চাপৰি বজাইছে আৰু ভাগৰি-জুগৰি শেষত বটগছৰ তলত ঘূৰণীয়াকৈ বহি তেওঁলোকে খাবলৈ অনা পিঠা, পৰমান্ন ভোজন কৰিছে। কৃষ্ণই সকলোৰে মাজত বহি খাইছে। কোনোৱে নিজৰ খাদ্য বেছি সোৱাদ বুলিছে কোনোজনে আনৰ খাদ্য থপিয়াই খাইছে, হাঁহিছে সকলোৱে আনন্দ কৰিছে।

মাধৱদেৱে গীত, সূত্ৰ আৰু নাৰদৰ যোগেদি কৃষ্ণক ঈশ্বৰৰূপে দেখুৱাইছে যদিও চৰিত্ৰ হিচাপে কৃষ্ণ আদৰ্শ শিশু চৰিত্ৰ। বন্ধু-বান্ধৱসকলোৰে মিলি ভোজন কৰাৰ প্ৰস্তাৱ কৃষ্ণই দিছে আৰু সকলোকে হাঁহি-ধেমালিৰে আনন্দও দিছে। বনভোজতকৈও গ্ৰাম্য সমাজত প্ৰচলিত 'বালিভাত' অভিধাটো ইয়াৰ পৰাই প্ৰচলিত হৈছে কাৰণ যমুনাৰ বালিত শিশুসকলে ভোজন কৰাৰ পৰম্পৰাৰে আজি কালিও গাঁৱৰ ল'ৰা-ছোৱালীয়ে বালিভাত (বনভোজ) খায়। দলপতি হিচাপে কৃষ্ণ দায়িত্বশীল। কাৰণ, গৰুবোৰ নাই দেখা বুলি চিদামে জনোৱাত কৃষ্ণই সকলোকে আনন্দেৰে ভোজন কৰি থাকিবলৈকৈ নিজে অনুসন্ধান কৰিবলৈ গৈছে। নাৰদে কৃষ্ণক ভগৱান হিচাপে স্তুতি প্ৰশস্তি গাওঁতেও কৃষ্ণৰ কোনো প্ৰতিক্ৰিয়া নাই। গোপবালক তথা সখিসকলৰ প্ৰতি কৃষ্ণ ইমানেই স্নেহশীল যে তেওঁলোকতকৈ কৃষ্ণ পৃথক হ'ব নিবিচাৰে, যাতে কোনেও হীনমন্যতাত ভুগিব লগা নহয়। সেয়ে কৃষ্ণই নাৰদক এটা শব্দৰেও আস্বস্ত কৰা নাই। নাৰদেও যেন লজ্জিত হৈহে গোপবালকসকলক কি কাজিয়া কৰি থাকা, মোকো কিছু অন্ন দিয়াঁ' বুলি অন্ন খাই আঁতৰি গৈছে। শেষত ব্ৰহ্মাই গো-বৎস আৰু গোপবালকসকলক নিলে বুলি গম পাই বন্ধুসকলৰ শোকত ভাগি পৰি কৃষ্ণই বিলাপ কৰিছে—

ঝুমুৰাখনিৰ কাহিনী আকস্মিকভাৱে পৰিসমাপ্তি ঘটিছে। ইয়াৰ পাছত কৃষ্ণই কি কৰিলে সেয়া ব্ৰহ্মামোহন ঝুমুৰাত সন্নিৱিষ্ট হৈছে। অৰ্থাৎ অৰ্জুন ভঞ্জনৰ কাহিনীয়ে ব্ৰহ্মামেহনতহে পূৰ্ণতা পাইছে।

১.০৬ ব্ৰহ্মামোহন ঝুমুৰাত শিশুকৃষ্ণ ঃ

মাধৱদেৱৰ ব্ৰহ্মামোহন ঝুমুৰাৰ কাহিনীভাগ শ্ৰীমদ্ভাগৱত

পুৰাণৰ দশমস্কন্ধৰ দ্বাদশ, ত্ৰয়োদশ আৰু চতুৰ্দশ অধ্যায়ৰপৰা লোৱা। অঘাসুৰ বধ, বনভোজ বা ভোজন বিহাৰ আৰু ব্ৰহ্মা মোহন এই তিনিটা কাহিনী ঝুমুৰাখনিত সন্নিৱিষ্ট হৈছে। মাধৱদেৱৰ ভোজন বেহাৰ নামেৰে এখন ঝুমুৰা থকাৰ পাছতো পুনৰ ব্ৰহ্মামোহন ঝুমুৰাত ভোজন বেহাৰৰ কাহিনী অন্তৰ্ভুক্ত হোৱাৰ প্ৰয়োজন নাছিল; কিন্তু ভোজন বেহাৰ ঝুমুৰাখনি অসম্পূৰ্ণ আৰু কৃষ্ণলীলাৰ কাহিনীৰ ক্ৰম অনুসাৰে ভোজন বেহাৰখনি ব্ৰহ্মামোহনততহে সম্পূৰ্ণ হয়।

চৰিতপুথি মতে মাধৱদেৱে বৰপেটাত থাকোঁতে (১৫৮০—১৫৯০ খ্ৰীষ্টাব্দৰ ভিতৰত) ভোজন বেহাৰ নাট ৰচনা কৰে।[৪০] কথাগুৰু চৰিতত এইখনি যাত্ৰাৰ অভিনয় কৰাৰো উল্লেখ আছে।[৪১] ব্ৰহ্মামোহন ইয়াৰ পাছৰ ৰচনা। ঝুমুৰাখনিৰ আৰম্ভণিতে সূত্ৰই কৈছে ঃ

"... সোহি শ্ৰীকৃষ্ণঃ ওহি সভা মধ্যে বেকত হয়াঃ অঘাসুৰ বধ ভোজন বিহাৰ ব্ৰহ্মা মোহন জাত্ৰা কৰবঃ... ।।"[৪২]

সূত্ৰৰ কথাখিনিয়ে প্ৰমাণ কৰে যে অঘাসুৰ বধ, ভোজন বেহাৰ আৰু ব্ৰহ্মামোহন — এই তিনিওটা কাহিনীৰ সংযোগততহে ব্ৰহ্মামোহন ঝুমুৰাখনি সম্পূৰ্ণ হৈছে। তাৰ পাছতে ভোজন বেহাৰৰ আৰম্ভণি গীতটিকেই সন্নিৱিষ্ট কৰি কাহিনী আৰম্ভ কৰিছে। মাধৱদেৱে চোৰধৰা ঝুমুৰাখনিৰ আৰম্ভণিতো অৰ্জুন ভঞ্জন নাটৰ শ্লোক সন্নিৱিষ্ট কৰিছে। কাহিনী অনুসাৰে শিশুকৃষ্ণই গোপবালকসকলৰ সৈতে বৃন্দাবনলৈ গৰু চৰাবলৈ যাওঁতে বাটতে অঘাসুৰে ভনীয়েক পুতনা বধৰ প্ৰতিশোধ ল'বলৈ খাপ লৈ আছিল। পৰ্বতৰ গুহা যেন তাৰ মুখেৰে গৰু-গাই সকলো সোমাই গ'ল। গোপবালকসকলে চিনি পালে যদিও কৃষ্ণৰ ইংগিত পাই তেওঁলোকে অঘাসুৰৰ পেটত সোমাল। তাৰপাছতে কৃষ্ণ সোমাই অঘাসুৰক খণ্ড খণ্ড কৰি কাটি-মাৰি পেলালে। ঝুমুৰাখনিত কোৱা হৈছে যে— (ইয়াৰ পাছত ভোজন বেহাৰ নাটৰ প্ৰথম গীতৰ শেষৰপৰা সেই নাটৰ তৃতীয় গীত বা সৰ্বশেহলৈ আটাইখিনি যোগ হ'ব।)[৪৩]

অৰ্থাৎ ভোজন বেহাৰ সম্পূৰ্ণ নাটখন ইয়াত অন্তৰ্ভুক্ত নহয়। শঙ্কৰদেৱৰ ৰাম বিজয় নাটৰ মাৰিচ-সুবাহু বধৰ কাহিনী বা পাৰিজাত হৰণৰ নৰকাসুৰ বধৰ কাহিনীৰ নিচিনাকৈ ভোজন বেহাৰৰ কাহিনীও গীতেৰেই সামৰিছে। তাৰ পাছতে ব্ৰহ্মাই এবছৰে গৰু-গোৱালক ৰাখিও কৃষ্ণক প্ৰভাৱিত কৰিব নোৱাৰি নিজে সকলো লৈ। বৃন্দাবনত উপস্থিত হৈছে। ইতিমধ্যে ব্ৰহ্মাই গৰু আৰু গোপবালকসকলক চুৰ কৰি নিয়াৰ পাছত কৃষ্ণই নিজে গৰু আৰু গোপবালকৰ ৰূপ ধৰি এক বছৰ কাল অতিবাহিত কৰিলে। ব্ৰহ্মাই আহি সকলো দেখি আচৰিত হ'ল আৰু ব্ৰহ্মা অধিক আৰু আচৰিত হ'ল যেতিয়া সকলো গোপ শিশুৱে চতুৰ্ভুজ ৰূপ ধাৰণ কৰিলে। ব্ৰহ্মা হংস যানৰ পৰা সৰি পৰিল। মাত-বোল হেৰাল। কৃষ্ণক মুহিব খুজি নিজে মোহিত হ'ল আৰু লাজ-অপমানেৰে জৰ্জৰিত হৈ নিজকে অতি সামান্য জ্ঞান কৰি কৃষ্ণক স্তুতি কৰিবলৈ ধৰিলে। ব্ৰহ্মাই ব্ৰহ্মলোক এৰি বৃন্দাবনত তৃণ হৈ জন্ম হোৱাই শ্ৰেষ্ঠ বুলি ব্ৰহ্মত্বও যে কৃষ্ণৰ ওচৰত মূল্যহীন সেই কথা নিজ মুখে বেকত কৰিলে।

কৃষ্ণই ব্ৰহ্মাক ক'লে যে তোমাৰ ভক্তিত তুষ্ট হ'লো, তুমি সোনকালে যোৱা। তাৰ পাছতে গোপবালকসকলে নিজ নিজ ভোজনৰ স্থানত উপৱিষ্ট হ'ল। সকলোৱে কৃষ্ণ নহালৈকে এগৰাহো নেখাওঁ বোলাত কৃষ্ণইও তেওঁলোকৰ লগত পূৰ্বৰ নিচিনাকৈ আনন্দৰে ভোজন কৰিবলৈ ধৰিলে। ভোজনৰ অন্তত সকলো আনন্দেৰে গকুললৈ আহিল। শিশুকৃষ্ণক বিপদত পেলাবলৈ গৈ ব্ৰহ্মাই নিজে সৰ্বস্ব হেৰুৱাই কৃষ্ণৰ চৰণত পৰি প্ৰাৰ্থনা কৰিবলগা হোৱা ব্ৰহ্মামোহনৰ এই কাহিনী এবছৰৰ পাছততহে ব্ৰজ বাসীয়ে গম পাইছে। কাৰণ ব্ৰহ্মাই গো-বৎস সকলো এবছৰ ৰাখিছিল আৰু এই সময়ছোৱাত কৃষ্ণই নিজে গো-বৎসৰ ৰূপ ধাৰণ কৰি বৰ্তাই ৰাখিছিল। ভোজন বেহাৰৰ আধা খোৱা অন্ন পুনৰ এবছৰৰ পাছত হে সম্পূৰ্ণকৈ খাইছে। শ্ৰীমদ্ভাগৱতত কৈছে—

এতৎ কৌমাৰজং কৰ্ম হাৰেৰাত্মাহি মোক্ষনম।/মৃত্যোঃ পৌগণ্ডকে বালা দৃষ্টোচুৰ্বিস্মিতা ব্ৰজে।।[৪৪]

অৰ্থাৎ এইযে ভগৱানে আত্মীয়সকলক মৃত্যুৰপৰা ৰক্ষা কৰিলে, সেয়া তেওঁৰ কুমাৰ কালৰ (৫ বছৰ বয়সৰ) ঘটনা আছিল আৰু ইয়াক তেওঁ পৌগণ্ড বয়সত (৬ বছৰত) ব্ৰজবাসীক জনাইছে। শ্ৰীমদ্ভাগৱতৰ কাহিনী অনুসাৰে গোপবালকসকলে এবছৰৰ পাছততহে ভোজন সম্পূৰ্ণ কৰিছে আৰু কৃষ্ণই ব্ৰজবাসীকো সমস্ত ঘটনা এবছৰৰ পাছততহে অৱগত কৰিছে। মাধৱদেৱেও ভোজন বেহাৰ ঝুমুৰাৰ কাহিনী অনুৰূপভাৱে অসম্পূৰ্ণকৈ এৰি পৰৱৰ্তী কালত ব্ৰহ্মামোহন ৰচনাৰে কাহিনী সম্পূৰ্ণ কৰাটো ইচ্ছাকৃত যেন লাগে।)

ব্ৰহ্মাই গো-বৎস চুৰ কৰি কৃষ্ণৰ ওচৰত ব্ৰহ্মত্ব হেৰুৱাই স্তুতি কৰাৰ কাহিনী হৰিবংশ আৰু বিষ্ণু পুৰাণত নাই। বিল্ব মংগলৰ স্তোত্ৰতো পোৱা নাযায়। সুৰ দাসৰ সুৰ সাগৰত অঘাসুৰ বধৰ এটি দোহা আছে ঃ

সুৰদাসৰ ব্ৰহ্মা মোহনৰ ঘটনাৱলী বৰ্ণনাৰেও এটি দোহা পোৱা যায় ঃ

ব্ৰহ্মা বালক বচ্ছ হৰে।/আদি অন্ত প্ৰভু অন্তৰ্জামী; মনসাতো জু কৰে। ... স্তুতি কৰও খৰে।[৪৫]

দোহাটিত কোৱা হৈছে যে ব্ৰহ্মাই গো-বৎস চুৰ কৰি এবছৰ ৰাখিছিল। অন্তৰ্জামী কৃষ্ণই সেই সেই গো-বালকৰূপী মায়াবী গো-বালক সৃষ্টি কৰি পেলালে। ব্ৰহ্মাই নিজৰ অপৰাধ উপলব্ধি কৰি কৃষ্ণৰ ওচৰত স্তুতি কৰিবলৈ ধৰিলে।

মাধৱদেৱৰ ঝুমুৰাত ব্ৰহ্মাৰ স্তুতি বিস্তৃত আৰু ভক্তি প্ৰকাশক। অৱশ্যে শ্ৰীমদ্ভাগৱত পুৰাণত একচল্লিশটি শ্লোকত ব্ৰহ্মাৰ কৃষ্ণ স্তুতি বৰ্ণনা কৰিছে। মাধৱদেৱে ইয়াৰ তুলনাত অতি সংক্ষেপে ভক্তি প্ৰকাশক ভাবে ব্ৰহ্মাৰ স্তুতি সন্নিৱিষ্ট কৰিছে, য'ত কৃষ্ণৰ ঈশ্বৰতকৈও মানৱ শিশু ৰূপটি বেছি বিকশিত হৈছে।

ঝুমুৰাখনিত কৃষ্ণ মানৱ শিশু হিচাপে অসাধাৰণ শক্তিধৰ। গোপবালকসকলৰ তেওঁ নায়ক অথচ সুহৃদ বান্ধৱ। কৃষ্ণৰ বাঁহীৰ সুৰতে তেওঁলোকে গম পাইছে যে সেইদিনা বনেভাজ হ'ব। কৃষ্ণ নাটবৰ আৰু ভোজন বিলাসী। গোৱালীৰ ঘৰত মাখন চুৰ কৰাৰ পৰা নিজৰ ঘৰত দধি ভাণ্ড ভঙালৈকে; তেওঁ কিন্তু অকলে নাখায়। বন্ধু-বান্ধৱৰ উপৰিও বানৰকো খুৱায়। সেই কৃষ্ণই বৃন্দাবনত যমুনাৰ বালিত বনভোজ পাতিছে। তাতে হাঁহি-নাচি খেলি বিভিন্ন অভিনয়েৰে কৃষ্ণই সকলোকে হৰ্ষুৱাই ভোজন কৰিছে। স্বভাৱতে কৃষ্ণ গোৱালসকলৰ ৰজাৰ ল'ৰা; ৰূপে গুণে সকলোতকৈ শ্ৰেষ্ঠ। সেই কৃষ্ণই কিন্তু নিজকে পৃথক নকৰি লগৰীয়াসকলৰ লগত এনেদৰে একাত্ম হৈ থাকে যে তেওঁলোকে কৃষ্ণক তেওঁলোকৰ মাজৰে এজন হিচাপেই ব্যৱহাৰ কৰে। গাইগুটীয়া বা আপোনপেটীয়া স্বভাৱ কৃষ্ণৰ নাই। শিশুৰ সৰ্বাঙ্গীন বিকাশৰ বাবে যি মুকলিমুৰীয়াা পৰিৱেশৰ প্ৰয়োজন, কৃষ্ণই বনভোজৰ আয়োজনেৰে তাকেই উন্মোচিত কৰিছে।

ব্ৰহ্মাই গৰু আৰু গোপবালকসকলক চুৰ কৰি নিয়াৰ পাছৰপৰা ঝুমুৰাখনিত কৃষ্ণক বিষ্ণুৰ পূৰ্ণ অৱতাৰ পৰম ব্ৰহ্ম ভগৱান ৰূপে প্ৰতিষ্ঠা কৰা হৈছে যদিও ইয়াৰ যোগেদি কৃষ্ণ ভক্তিৰ মাহাত্ম্য প্ৰচাৰতহে অধিক গুৰুত্ব দিয়া হৈছে। শ্ৰীমদ্ভাগৱতত চল্লিশটি শ্লোকত ব্ৰহ্মাই কৃষ্ণক স্তুতি কৰাৰ বৰ্ণনা কৰা হৈছে। বাৎসল্য ভক্তিৰ ৰসিক মাধৱদেৱে কিন্তু ঐশ্বৰিক কৃষ্ণতকৈ মানৱ শিশু ৰূপী কৃষ্ণকহে অধিক সুন্দৰকৈ সজাইছে।

উপসংহাৰ ঃ

১। মাধৱদেৱৰ ৰচনা বুলি প্ৰচলিত ন খন নাটৰ ভিতৰত ছখনহে মাধৱদেৱে ৰচনা কৰা নাট।

২। অৰ্জুন ভঞ্জনৰ বাহিৰে চোৰধৰা, পিম্পৰা গুচোৱা, ভোজনবেহাৰ, ভূমিলেটোৱা আৰু ব্ৰহ্মা মোহনখনিক ঝুমুৰা বোলা হয়।

৩। মাধৱদেৱৰ নাট— ঝুমুৰাৰ বিষয়বস্তু বিল্বমংগলৰ 'শ্ৰীকৃষ্ণ কৰ্ণামৃত' আৰু শ্ৰীমদ্ভাগৱত আধাৰিত।

৪। মাধৱদেৱৰ ঝুমুৰাৰ ভাষা কথিত অসমীয়া ভাষাৰ ওচৰচপা।

৫। নাট-ঝুমুৰাসমূহৰ যোগেদি শ্ৰীকৃষ্ণৰ চিৰ শিশুৰূপ প্ৰকাশ পাইছে।

৬। মাধৱদেৱৰ নাট-ঝুমুৰাত কৃষ্ণ সাধাৰণ মানৱ শিশু হৈও অসাধাৰণ। তেওঁ ঈশ্বৰৰ অৱতাৰ।

৭। কৃষ্ণই মানৱীয় আৰু ঐশ্বৰিক উভৈ প্ৰকাৰৰ লীলা প্ৰদৰ্শন কৰি গোকুল বৃন্দাবনৰ সকলোকে আনন্দ দিছে।

৮। ভকতিৰ বলেৰে যশোদাই ব্ৰহ্মক বান্ধিছে। গোপী-গোপবালক সকলোৱে পূণ্যৰ বলেৰেহে কৃষ্ণৰ সংগ পাইছে।

৯। বাল চাতুৰীৰে কৃষ্ণই সকলোকে মোহিত কৰিছে।

১০। শিশুকৃষ্ণৰ লীলা-মালা প্ৰচাৰৰ বাবে মাধৱদেৱে বাৎসল্য ভক্তিৰসেৰে সকলোকে মোহিত কৰি নাট্যকলাৰ যোগেদি একশৰণ হৰিনাম ধৰ্মৰ প্ৰচাৰ কৰিছে।

১১। শিশুৰ স্বভাৱজাত প্ৰবৃত্তি তথা শিশু মনস্তত্বৰ ওজা, চিৰকুমাৰ মাধৱদেৱৰ নাট-ঝুমুৰাত শিশু কৃষ্ণৰ চৰিত্ৰই অনন্য ৰূপ লাভ কৰিছে।

১২। মন-চকুৰ অগোচৰ বেদান্তৰ ব্ৰহ্মাক মাধৱদেৱে চাব পৰা, চুব পৰা আৰু মানৱীয় লীলাৰ সহচৰ ৰূপে গঢ় দিলে।

১৩। মাধৱদেৱে শিশুকৃষ্ণ ঐশবেৰিক ৰূপতকৈ সাধাৰণ মানৱ শিশুৰূপত অধিক সুন্দৰকৈ সজাইছে। ❑

অন্ত্যটীকা ঃ

১. নেওগ, মহেশ্বৰ। সম্পা. গুৰু-চৰিত কথা। ২০২১, ছেদ ৪৪৭, পৃ. ৩১৮
২. নেওগ, মহেশ্বৰ। সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ। ছেদ ৭৪৪, পৃ. ৪২১
৩. নেওগ, মহেশ্বৰ। সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ। ছেদ ৭৮৮, পৃ. ৪৩৬
৪. মেধি, কালিৰাম। অঙ্কাৱলী। লয়াৰ্চ বুকষ্টল, ১৯৯৭, পৃ. ৩৮০
৫. মেধি, কালিৰাম, সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ। পৃ. LXII-LXIV (Introduction
৬. শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। অসমীয়া নাট্য সাহিত্য। প্ৰতিমা দেৱী, ১৯৮৬, পৃ. ৬৩
৭. সেন, সুকুমাৰ। বাংলা সাহিত্যেৰ ইতিহাস। সাহিত্য অকাডেমি, ১৯৯৩, পৃ. ৬১
৮. শইকীয়া, নগেন। সম্পা. মহেশ্বৰ নেওগ ৰচনাৱলী। বাণী মন্দিৰ, ১৯৮৬, পৃ. ৫৬৫
৯. শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. ৬৫
১০. মেধি কালিৰাম। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. LXIV
১১. চন্দ্ৰ, দীপক। সম্পা. হৰিবংশ। নিউবেঙ্গল প্ৰেস প্ৰাঃ লিঃ কলিকতা, ২০২০, পৃ. ১১১
১২. মেধি, কালিৰাম। সম্পা. পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. ৩০২
১৩. কলিতা, নৰেন। বেলমঙ্গল কাব্য। গুৱাহাটী, অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, পৃ. ৮৭, স্তেত্ৰ ২২
১৪. মেধি, কালিৰাম। সম্পা. পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থচ, পৃ. ২৫৮
১৫. মেধি, কালিৰাম। সম্পা. সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ২৯২
১৬. মেধি, কালিৰাম। সম্পা. সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ২৯৪
১৭. মেধি, কালিৰাম। সম্পা. সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ২৯৮
১৮. মেধি, কালিৰাম। সম্পা. সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ২৫৬
১৯. বৰ্মা, ধীৰেন্দ্ৰ। সম্পা. সুৰসাগৰ। গুৰুনানক দেৱ বিশ্ববিদ্যালয়, দোহা ৬৬, পৃ, ১১২
২০. বৰ্মা, ধীৰেন্দ্ৰ। সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ ঃ দোহা ৬৪, পৃ. ১১৪
২১. বৰ্মা, ধীৰেন্দ্ৰ। সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ, দোহা , পৃ. ৭৯
২২. শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ। পৃ. ৬৪
২৩. কলিতা, নৰেন। বেলমঙ্গল কাব্য। গুৱাহাটী, অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০০৮, পৃ. ৬৪
২৪. গোস্বামী, নাৰায়ণচন্দ্ৰ। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ, ৬৬৮
২৫. বৰ্মা, ধীৰেন্দ্ৰ। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. দোহা ৪৩
২৬. নেওগ, মহেশ্বৰ। সম্পা. বাণীকান্ত ৰচনাৱলী, অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, গুৱাহাটী ঃ ১৯৯১, পৃ. ৪৩
২৭. কলিতা, নৰেন। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, স্তোত্ৰ. ২০, পৃ. ৮৬
২৯. বৰ্মা, ধীৰেন্দ্ৰ। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, দোহা. ২৫, পৃ. ১০৫
৩০. দাস, সুৰেন্দ্ৰকুমাৰ। বিষ্ণুপুৰাণ, গুৱাহাটী, বনলতা ঃ ২০১৯, পৃ. ২৪৩
৩১. কলিতা, নৰেন। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. ৮৭
৩২. নেওগ, মহেশ্বৰ। সম্পা. গুৰুচৰিত কথা। গুৱাহাটী ঃ চন্দ্ৰপ্ৰকাশ, ২০২১, পৃ. ৪১১—৪২২
৩৩. ভট্টাচাৰ্য, হৰিচন্দ্ৰ। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. ৪৬
৩৪. মেধি, কালিৰাম। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্ধ, পৃ, ৩৪৩
৩৫. পোদ্দাৰ, হনুমান প্ৰসাদ। শ্ৰীমদ্ভাগৱত মহাপুৰাণ। গীতা প্ৰেছ গোৰক্ষ পুৰ ঃ ২০১৫, পৃ. ১১৬১
৩৬. মেধি, কালিৰাম। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. ৩৪৩
৩৭. সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ৩৪৫
৩৮. দাস, সুৰেন্দ্ৰকুমাৰ। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. ২৫০
৩৯. বৰ্মা, ধীৰেন্দ্ৰ। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. ৮৯
৪০. শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. ৬৪
৪১. নেওগ, মহেশ্বৰ। সম্পা. গুৰুচৰিত কথা। গুৱাহাটী চন্দ্ৰপ্ৰকাশ, ২০২১, পৃ. ৪২২
৪২. মেধি, কালিৰাম। পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থচপৃ. ৪১
৪৩. মেধি, কালিৰাম। সম্পা. পূৰ্ব উল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ.
৪৪. পোদ্দাৰ, হনুমান প্ৰসাদ। সম্পা. পূৰ্বউল্লেখিত গ্ৰন্থ, পৃ. ১১৬৬
৪৫. বৰ্মা, ধীৰেন্দ্ৰ। সদ্যোক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ৬

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰাৰ 'স্বৰ্গাদপি' উপন্যাসত প্ৰতিফলিত অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসৰ প্ৰসংগ

দীনেশ বৰা

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসমীয়া সাহিত্যৰ এগৰাকী শক্তিশালী ঔপন্যাসিক হ'ল ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰা। ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰাই সাহিত্য ৰচনাৰ জৰিয়তে অসমৰ ইতিহাস চৰ্চালৈ গুৰুত্বপূৰ্ণ অৱদান আগবঢ়াইছে। সাহিত্য আৰু ইতিহাস দুয়োটাই সুকীয়া ক্ষেত্ৰ হ'লেও ইয়াৰ মাজত সম্বন্ধ লক্ষ্য কৰা যায়। সাহিত্য সৃষ্টিত সমাজ এখনৰ অতীত যাক ইতিহাস হিচাপে নামকৰণ কৰা হৈছে, ই গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰে। সমাজৰ অবিহনে সাহিত্যৰ অস্তিত্ব নাই আৰু এই সমাজৰে অন্তৰ্গত ব্যক্তি বা সমূহ আৰু সমাজ জীৱনক কেন্দ্ৰ কৰি ইতিহাস ৰচনা হৈছে। সেই সমাজৰ ইতিহাসৰ ঘটনা-পৰিঘটনাই সাহিত্যত স্থান লাভ কৰিছে। ১৮২৬ চনত মান সেনা আৰু বৃটিছৰ মাজত স্বাক্ষৰিত হোৱা ইয়াণ্ডাবু সন্ধিৰ জৰিয়তে অসমত ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাৰ পাতনি হয়। ১৮২৬ চনৰ পৰা দেশৰ স্বাধীনতা সময়লৈকে সুদীৰ্ঘ সময়ছোৱাৰ ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাত অসমৰ সামাজিক, ৰাজনৈতিক আৰু অৰ্থনৈতিক দিশত ব্যাপক ৰূপত পৰিৱৰ্তন লক্ষ্য কৰা গৈছিল। ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাই অসমৰ প্ৰশাসন ব্যৱস্থা নিজৰ আয়ত্বলৈ আনি সকলো দিশতে নিয়ন্ত্ৰণ আৰু আধিপত্য বিস্তাৰ কৰিবলৈ ধৰে। সাহিত্যই ইতিহাসকো প্ৰতিফলিত কৰাৰ বাবে অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসকো বিভিন্নজন সাহিত্যিকে তেওঁলোকৰ সাহিত্য কৰ্মত স্থান দিছে। অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসৰ প্ৰসংগক উপন্যাসত স্থান দিয়াৰ ক্ষেত্ৰত ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰা অন্যতম। এই গৱেষণা পত্ৰখনিত ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰাৰ স্বৰ্গাদপি উপন্যাসত প্ৰতিফলিত অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসক বিশ্লেষণ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

সাহিত্য, সমাজ, অসম, বৃটিছ , ঔপনিৱেশিক ইতিহাস

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়
গাঁও - দীঘলা গাঁও, ডাক - ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, পিন- ৭৮৬০০৪
থানা- ৰজাভেটা, ডিব্ৰুগড় জিলা
৯১০১৪৪১২৬৩
dineshborah2014@gmail.com

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

০.১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

বিশ্বৰ ইতিহাসলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে, ইতিহাসত এনে কিছুমান পৰিঘটনা সংঘটিত হৈছে যিবোৰ পৰিঘটনাৰ দ্বাৰা সমগ্ৰ বিশ্বৰ আধাসংখ্যকতকৈয়ো অধিক দেশ প্ৰভাৱিত হৈছিল। তেনে এক ঐতিহাসিক পৰিঘটনাই হ'ল উপনিৱেশ ব্যৱস্থা। এই ব্যৱস্থাত কোনো এখন দেশ বা এটা জনগোষ্ঠীয়ে আন এখন দেশ বা জনগোষ্ঠী এটাক তেওঁলোকৰ ক্ষমতা, আধিপত্যৰ জৰিয়তে বশ কৰা প্ৰথা জড়িত হৈ থাকে। ষোড়শ শতিকাৰ মানৰ পৰা বিশ্বৰ পৰিৱহনৰ প্ৰযুক্তিগত ক্ষেত্ৰখনত লাভ কৰা বিকাশৰ ফলত

ঔপনিৱেশিকতাবাদৰ নিৰ্ণায়ক পৰিৱৰ্তন ঘটিছিল আৰু দূৰৱৰ্তী স্থানবোৰত উপনিৱেশ স্থাপনৰ বাবে সহজ হৈ পৰিছিল। উপনিৱেশ স্থাপনৰ ইতিহাসলৈ যদি চোৱা যায় পোন প্ৰথমে ব্যৱসায়-বাণিজ্য, সম্পদ আহৰণৰ সংক্ৰান্ততেই এই উপনিৱেশবোৰ গঢ় লৈ উঠিছিল। উপনিৱেশৰ লগত জড়িত ঔপনিৱেশিকতাবাদ (Colonialism) শব্দটো ৰোমান শব্দ 'Colonia' শব্দৰ পৰা আহিছে আৰু ই কোনো ভূ-খণ্ডত গৈ কৃষিৰ লগত জড়িত হোৱা কাৰ্যক বুজায়। আধুনিক সময়ত ঔপনিৱেশিকতাবাদৰ অৰ্থ সম্প্ৰসাৰণ হয় আৰু ইয়াৰ জৰিয়তে নিজ দেশৰ অৰ্থনৈতিক লাভালাভৰ বাবে উপনিৱেশবোৰৰ পৰা সামগ্ৰী আৰু সম্পদৰ লুণ্ঠনেৰে পোনপটীয়াকৈ পুঁজিবাদী অৰ্থনীতি বিকাশৰ স্বৰূপক বুজাবলৈ লয়। ঔপনিৱেশিকতাৰ আলোচনাৰ প্ৰসংগত আনিয়া লুম্বাই (Ania Loomba) "ঔপনিৱেশিকতাবাদক অন্য মানুহৰ ভূমি আৰু সামগ্ৰীৰ ওপৰত নিয়ন্ত্ৰণ আৰু বিজয় বুলি সংজ্ঞায়িত কৰিছে।"[১] দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধ আৰু তাৰো পৰৱৰ্তী সময়ত বিশ্বত ঔপনিৱেশিক শাসন-শোষণ ব্যৱস্থা অৱসান হয়। ঔপনিৱেশিকতাৰ ইতিহাস আলোচনা কৰা প্ৰসংগত উপনিৱেশ সমূহত শাসনাধীন দেশখনে উপনিৱেশিতৰ ওপৰত প্ৰয়োগ কৰা সামাজিক, সাংস্কৃতিক, ৰাজনৈতিক আৰু অৰ্থনৈতিক প্ৰসংগসমূহৰ বিষয়ে জ্ঞাত হ'ব পাৰি। বেছিভাগ ক্ষেত্ৰতেই উপনিৱেশিক দেশসমূহে উপনিৱেশিকৰণ কৰা দেশসমূহৰ মানৱ আৰু অৰ্থনৈতিক সম্পদৰ শোষণ কৰি লাভৱান হোৱাটো লক্ষ্য ৰাখিছিল। কোনো এখন দেশ বা ভূ-খণ্ডৰ ওপৰত নিজৰ নিয়ন্ত্ৰণ আৰু আধিপত্য বিস্তাৰ কৰি সেই অঞ্চলক নিয়ন্ত্ৰাণাধীন দেশৰ সুবিধাৰ্থে ব্যৱহাৰ কৰা কাৰ্যক সাধাৰণতে ঔপনিৱেশিকতাবাদ বুলি কোৱা হৈছে। কোনো এটা ভূ-খণ্ড বা এখন দুৰ্বল দেশক বিভিন্ন উপায়েৰে ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাই নিজৰ নিয়ন্ত্ৰণলৈ আনি সেই দেশৰ ওপৰত সামাজিক, সাংস্কৃতিক, অৰ্থনৈতিক আৰু ৰাজনৈতিক নেতৃত্বতাৰ অনুশীলন চলায়। এই প্ৰক্ৰিয়াত উপনিৱেশিক দেশবোৰে বলপূৰ্বকভাৱে নিজৰ ধৰ্ম, ভাষা, সংস্কৃতি, ৰাজনৈতিক প্ৰথা থলুৱা জনসাধাৰণৰ ওপৰত জাপি দিবলৈ চেষ্টা কৰে। ঔপনিৱেশিকতাবাদৰ সমালোচক এমি চেইজাৰে (Aime Cesaire) উপনিৱেশিক (Colonizer) আৰু উপনিৱেশিত (Colonized)ৰ মাজৰ সম্পৰ্ক বিশ্লেষণ কৰি কৈছে যে, "উপনিৱেশিক আৰু উপনিৱেশিতৰ মাজত কেৱল জোৰ-জবৰদস্তিৰ শ্ৰম, ভয়, হেঁচা, আৰক্ষী, কৰ আৰোপন, চুৰি, বাধ্যতামূলক শস্য উৎপাদন, অবজ্ঞা, অনাস্থা, অহংকাৰ, আত্মসন্তুষ্টি, মানসিক চাপ, মগজুহীন অভিজাত শ্ৰেণী আৰু অৱদমিত জনসাধাৰণ আদিয়ে স্থান পায়। কোনো মানুহৰ সংযোগ অবিহনে, কিন্তু আধিপত্য আৰু বশৱৰ্তী সম্পৰ্কত উপনিৱেশিত মানুহ এজনক শ্ৰেণী কোঠাৰ পৰ্যৱেক্ষক, সেনাবাহিনী, উচ্চ শ্ৰেণীৰ উকীল, কাৰাগাৰৰ প্ৰহৰী, এজন দাস চালক আৰু থলুৱা মানুহক উৎপাদনৰ আহিলা হিচাপে পৰিগণিত কৰে।"[২] ঔপনিৱেশিক ইতিহাসৰ আলোচনাৰ প্ৰংসগত ঔপনিৱেশিকতাবাদ আৰু সাম্ৰাজ্যবাদক সমাৰ্থক ৰূপত ব্যৱহাৰ কৰা হয় যদিও এই দুয়োটাৰ মাজত মত-পাৰ্থক্য থকা দেখা যায়। সাম্ৰাজ্যবাদ শব্দটোৱে সাধাৰণতে কোনো এখন দেশত বসতি স্থাপন নকৰাকৈ সেই দেশৰ প্ৰশাসন চলোৱা কাৰ্যক বুজায়। সমালোচক এডৱাৰ্ড চাইদে (Edward Said) সাম্ৰাজ্যবাদ আৰু ঔপনিৱেশিকতাবাদৰ বিষয়ে কৈছে, "সাম্ৰাজ্যবাদৰ অৰ্থ হ'ল দূৰৰ মহানগৰৰ ভূ-খণ্ডত শাসন কৰা এটা আধিপত্যশীল কেন্দ্ৰৰ অনুশীলন, তত্ত্ব আৰু মনোভাৱ। ঔপনিৱেশিকতাবাদ সদায়ে সাম্ৰাজ্যবাদৰ পৰিণতি, যিয়ে দূৰৰ ভূ-খণ্ডত বসতি স্থাপনৰ লগত জড়িত।"[৩]

১৮২৬ খ্ৰীষ্টাব্দত মান সেনা আৰু ইংৰাজৰ মাজত স্বাক্ষৰিত হোৱা ইয়াণ্ডাবু সন্ধিৰ জৰিয়তে অসম প্ৰদেশৰ শাসনভাৰ ইংলেণ্ডৰ হাতলৈ যায়। দেশৰ স্বাধীনতা প্ৰাপ্তিলৈকে এই সময়ছোৱাত অসমত ইংৰাজে ঔপনিৱেশিক শক্তিৰ জৰিয়তে সামাজিক, ৰাজনৈতিক আৰু অৰ্থনৈতিক ব্যৱস্থা নিয়ন্ত্ৰণ কৰি মানুহৰ ওপৰত শোষণ, সম্পদ আহৰণ আদি কামত লিপ্ত হৈ থাকে। বিভিন্ন ধৰণৰ ইতিহাসৰ লগত সমাজ এখন বা পাঠক পৰিচয় হোৱাৰ ক্ষেত্ৰত ইতিহাসৰ গ্ৰন্থৰ উপৰিও সাহিত্যই বিশেষভাৱে সহায় কৰে। কোনো এখন দেশত ঔপনিৱেশিক সময়ছোৱাৰ সামাজিক ইতিহাস জনাত সাহিত্য এক উৎকৃষ্ট মাধ্যম। উপনিৱেশ, সাহিত্য আৰু জনসাধাৰণৰ বিষয়ে বিল এশ্বক্ৰফট্ আৰু সহযোগীসকলে Post-Colonial Studies : The Key Concept শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনত উল্লেখ কৰিছে যে, "আজিৰ পৃথিৱীত বাস কৰা তিনি-চতুৰ্থাংশতকৈ অধিক লোকৰ জীৱন গঢ় লৈ উঠিছে ঔপনিৱেশিকতাবাদৰ ভাগ-বতৰা অভিজ্ঞতাৰ পৰা। ৰাজনৈতিক আৰু অৰ্থনৈতিক ক্ষেত্ৰত ইয়াৰ গুৰুত্ব কিমান সেয়া সহজেই অনুমান কৰিব পাৰি, কিন্তু সমসাময়িক মানুহৰ কাঠামোত ইয়াৰ সাধাৰণ প্ৰভাৱ প্ৰায়ে কম দেখা যায়। সাহিত্যই এই ধাৰণাসমূহ প্ৰকাশ কৰা অন্যতম গুৰুত্বপূৰ্ণ উপায় আগবঢ়ায় আৰু সেয়া হৈছে তেওঁলোকৰ লেখাত, আৰু তেওঁলোকৰ অন্যান্য কলা যেনে- চিত্ৰকলা, ভাস্কৰ্য, সংগীত

আৰু নৃত্যৰ জৰিয়তে উপনিৰেশিক জনসাধাৰণে অনুভৱ কৰা দৈনন্দিন বাস্তৱতা সমূহ অতিশয় শক্তিশালীভাৱে অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হৈছে আৰু ই প্ৰভাৱশালী হৈ আছে।"[৪] ইতিহাসৰ প্ৰতি সচেতন লেখক ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰাই অসমৰ ভিন্ন ধৰণৰ ইতিহাসক উপন্যাসৰ মাজত প্ৰতিফলিত কৰিছে। গৱেষণা পত্ৰখনিত ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰাৰ স্বৰ্গাদপি উপন্যাসখনত প্ৰতিফলিত অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসৰ বিভিন্ন প্ৰসংগক বিশ্লেষণ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

- ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাত অসমলৈ হোৱা চাহ শ্ৰমিকৰ প্ৰব্ৰজনৰ বিষয়ে অনুসন্ধান কৰা।
- ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাত উপনিৱেশিতৰ দুখ-দুৰ্দশাৰ অৱস্থাৰ বিষয়ে বিচাৰ কৰা।
- উপনিৱেশিতৰ প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক (Anti-Colonial) সংগ্ৰামক প্ৰতিফলিত কৰা।

০.৩ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

অসমৰ ইতিহাসত ইংৰাজৰ ঔপনিৱেশিক শাসনে অসমৰ সমাজ জীৱনত গুৰুতৰ প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰিছিল। এই শাসনৰ ফলত অসমৰ স্বাধীনতাৰ বেলি মাৰ গৈছিল আৰু পূৰ্বৰ, ৰাজনৈতিক, অৰ্থনৈতিক ব্যৱস্থালৈ ব্যাপক পৰিৱৰ্তন আহি পৰিছিল। সমগ্ৰ অসমৰ জনতা ইংৰাজৰ বশৱৰ্তী হৈ পৰাত এনে ধৰণৰ পৰিৱৰ্তনে মানুহৰ জীৱনলৈ দুৰ্দশা কঢ়িয়াই আনে। ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাত উপনিৱেশিকৰ আধিপত্যবাদ, প্ৰাকৃতিক সম্পদৰ শোষণৰ দ্বাৰা ঔপনিৱেশিক অৰ্থনীতিৰ বিকাশ, সাধাৰণ মানুহে ভোগা দুৰ্দশা, দেশীয় জনগণক কৰা অত্যাচাৰ, ঔপনিৱেশিক জনতাই কৰা প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক সংগ্ৰাম, সেই সময়ৰ ৰাজনৈতিক বাতাৱৰণ আদিৰ বিষয়ে জ্ঞাত হ'বৰ বাবে বিষয়টি অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আছে।

০.৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ আৰু পদ্ধতি ঃ

'ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰাৰ স্বৰ্গাদপি উপন্যাসত প্ৰতিফলিত অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসৰ প্ৰসংগ' শীৰ্ষক বিষয়টিৰ অধ্যয়নৰ পৰিসৰত উপনিৱেশ ব্যৱস্থাত অসমলৈ চাহ-শ্ৰমিকৰ প্ৰব্ৰজন, উপনিৱেশকৰ অসমৰ প্ৰাকৃতিক আৰু মানৱ সম্পদৰ লুণ্ঠন, ঔপনিৱেশিক আমোলত মানুহে ভোগা দুখ-দুৰ্দশা, ঔপনিৱেশিক আধিপত্য, ঔপনিৱেশিকতাৰ অন্ত পেলাবলৈ কৰা প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক সংগ্ৰাম এই ঐতিহাসিক প্ৰসংগসমূহ আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। স্বৰ্গাদপি উপন্যাসখনৰ কাহিনীৰ সময় ১৮৫৯-১৯৩২ চনৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসৰ এইকেইটা প্ৰসংগক বিশ্লেষণ কৰা হৈছে। গৱেষণা পত্ৰখনি আলোচনা কৰিবলৈ কৰিবলৈ যাওঁতে ঐতিহাসিক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। লগতে গযেষণা পত্ৰখনিৰ প্ৰসংগটোকা তথা গ্ৰন্থপঞ্জী প্ৰস্তুত কৰোঁতে MLA Handbook ৰ অষ্টম সংস্কৰণৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৫ তথ্যৰ উৎস ঃ

আলোচনা কৰিবলগা বিষয়টিৰ বাবে মুখ্য উৎস হিচাপে ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰাৰ স্বৰ্গাদপি উপন্যাসখনক গ্ৰহণ কৰা হৈছে। গৌণ উৎসৰ ভিতৰত বিষয়ৰ লগত জড়িত ঔপনিৱেশিকতাবাদ সম্বন্ধীয় তাত্ত্বিক গ্ৰন্থ, অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাস সম্বন্ধীয় গ্ৰন্থ, প্ৰবন্ধ আদিৰ পৰা সহায় লোৱা হৈছে।

১.০ মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

অসমত বৃটিছৰ ঔপনিৱেশিক শাসন এক দীঘলীয়া পৰিক্ৰমাৰ ইতিহাস। ১৮২৬ খ্ৰীষ্টাব্দৰ পৰা দেশৰ স্বাধীনতা প্ৰাপ্তিলৈকে এক সুদীৰ্ঘ সময় অসম বৃটিছৰ ঔপনিৱেশিকতাৰ অধীনত আছিল। স্বৰ্গাদপি উপন্যাসখনে অসমৰ ঔপনিৱেশিক শাসনৰ এছোৱা ইতিহাসক প্ৰতিফলিত কৰিছে। উপন্যাসখন ঔপনিৱেশিক অসমৰ গোলাঘাট জিলা আৰু নুমলিগড় চাহ বাগানৰ পটভূমিত বিজু বাউৰী নামৰ মূল চৰিত্ৰটোক কেন্দ্ৰ কৰি ইয়াৰ কাহিনী বিকাশ হৈছে। বিজু বাউৰী অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসৰ বাস্তৱ চৰিত্ৰ। অসমৰ ইতিহাসৰ পাতত উপেক্ষিত হৈ থকা বিজু বাউৰীৰ স্বাধীনতাৰ সংগ্ৰামী সত্তাৰ লগতে নুমলীগড় বাগান প্ৰতিষ্ঠা সময় ১৮৫৯ চনৰ পৰা ১৯৩২ চনলৈকে অসমৰ ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাৰ স্বৰূপ উপন্যাসখনে পোহৰলৈ আনিছে।

ঔপনিৱেশিক অসমৰ অৰ্থনীতিৰ এটা উল্লেখযোগ্য দিশ হ'ল চাহ উদ্যোগ। অসমত বৃটিছৰ শাসন ব্যৱস্থা প্ৰণয়নৰ পৰৱৰ্তী সময়ত চাহ উদ্যোগে বিকাশ লাভ কৰে। বৃটিছে চাহ খেতি সূচনা কৰাৰ পাছত অসমত চাহ বাগানৰ সংখ্যা বাঢ়ি গৈছিল আৰু ইয়াৰ সমান্তৰালভাৱে বৃহৎ সংখ্যক শ্ৰমিকৰো প্ৰয়োজন হৈ পৰিছিল। কিন্তু সেই প্ৰয়োজনীয়তা থলুৱা শ্ৰমিকে পুৰাব পৰা নাছিল আৰু বিভিন্ন কাৰণত তেওঁলোকেও চাহ বাগানত কাম কৰিবলৈ অনিচ্ছা প্ৰকাশ কৰি আহিছিল। ১৮৫৫ চনৰ আশে-পাশে এই সমস্যাটো তীব্ৰ হৈ উঠে। এইটো নহয় যে, অসমৰ থলুৱা লোক সকল চাহ বাগানত কাম কৰিবলৈ উদাসীন আছিল, কিন্তু ৰাজ্যখনত প্ৰাপ্তবয়স্ক লোকৰ

তীব্ৰ নাটনি হৈছিল। তেতিয়াও অসমত মোৱামৰীয়া বিদ্ৰোহ, বাৰ্মিজ সেনাৰ আক্ৰমণ আৰু পাহাৰীয়া জনজাতিৰ অভিযানৰ প্ৰভাৱ পৰিছিল। [৫] এই পৰিস্থিতিত অসমত শ্ৰমিকৰ অভাৱ পূৰাবৰ বাবে ভাৰতৰ ভিন্ন প্ৰান্তৰ দৰিদ্ৰ, দুভিৰ্ক্ষ পীড়িত অঞ্চলসমূহৰ পৰা শ্ৰমিক আমদানি কৰিছিল। উপন্যাসখনত বৃটিছৰ ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাত কিদৰে অসমলৈ শ্ৰমিকৰ আমদানি হৈছিল তাৰ প্ৰসংগ প্ৰতিফলিত হৈছে। উপন্যাসখনত শিৱশংকৰ, উমা, কালিচৰণ আৰু দুখী বাউৰী সম্প্ৰদায়ৰ এইকেইটা চৰিত্ৰ সেই সময়ছোৱাৰ এনে প্ৰব্ৰজনৰ প্ৰতিভূ। এওঁলোকক পশ্চিম বংগৰ বাঁকুৰা জিলাৰ পুৰুলীয়া অঞ্চলৰ পৰা উপনিৱেশিকৰ দ্বাৰা সৃষ্ট আৰকাঠি (মধ্যস্থতাকাৰী) বনুৱা গোটৰ জৰিয়তে মিছা প্ৰলোভন আৰু বলপূৰ্বক ভাৱে প্ৰব্ৰজিত হৈছিল। কেৱল পশ্চিম বংগৰ পৰাই নহয় ঔপনিৱেশিক আমোলত ভাৰতৰ বিভিন্ন ঠাইৰ বিশেষকৈ অভাৱগ্ৰস্ত অঞ্চল সমূহৰ পৰা অসমলৈ শ্ৰমিকৰ প্ৰব্ৰজনৰ ঐতিহাসিক প্ৰংসগৰ চিত্ৰ উপন্যাসখনত প্ৰতিফলিত হৈছে ঃ

বাউৰী সম্প্ৰদায়ৰে কেৱল নহয়, সমতল বংগ পাৰ হৈ, ভাগীৰথী গংগা পাৰ হৈ, উৎকল, বিহাৰ বৰ্তমানৰ ঝাৰখণ্ডৰ সীমামূৰীয়া এলেকাৰ পৰা; বংগ, উৰিষ্যা, বিহাৰৰ বিস্তীৰ্ণ এলেকা বিয়পি থকা অৰণ্য আচ্ছাদিত আৰু প্ৰায় বৃষ্টিছায়া শুকান ৰাঢ়ৰ ধৰিত্ৰীৰ পৰা, বাউৰী সম্প্ৰদায়ৰ লোকসকলৰ উপৰিও অন্যান্য বহুতো সম্প্ৰদায়ৰ হেজাৰ হেজাৰ লোকে জন্মভূমিৰ লগত চিৰতৰে সম্পৰ্ক ছেদ কৰি অসমলৈ গুচি আহিছিল। তেওঁলোক আহিছিল অসমত খোলা চাহ বাগিচাবোৰত বনুৱাৰ কাম কৰিবলৈ। [৬]

আৰকাঠি বা বনুৱা গোট আৰু গিৰমিট প্ৰথা ঔপনিৱেশিক শাসন যন্ত্ৰৰ সৃষ্টি। গিৰমিট প্ৰথা হ'ল ঃ "বাগিছাত কাম কৰিবলৈ অনা মজদুৰসকলক চুক্তিৱদ্ধ কৰা এক প্ৰক্ৰিয়া। এনে গিৰমিটৰ ম্যাদ শেষ হ'লে অৱশ্যে মজদুৰসকলে নিজা ঠাইলৈ ঘূৰি যাব পাৰিছিল। কিন্তু বাস্তৱ ক্ষেত্ৰত সেইটো হৈ উঠা নাছিল।" [৭] গিৰমিট প্ৰথা আৰু আৰকাঠিৰ জৰিয়তেও বৃটিছ সকলে শ্ৰমিকৰ অভাৱ পুৰাবলৈ ভাৰতৰ বিভিন্ন প্ৰান্তৰ পৰা আদিবাসী লোক সকলক বলপূৰ্বকভাৱে অসমলৈ প্ৰব্ৰজন কৰিবলৈ বাধ্য কৰিছিল। প্ৰথমাৱস্থাত এইলোক সকলক জনসাধাৰণৰ পৰা বিচ্ছিন্ন কৰি চাৰি দেৱালৰ মাজত আৱদ্ধ কৰি ৰাখিছিল। অতি ভিতৰুৱা ঠাইবোৰৰ পৰা আৰকাঠি সকলে লগোৱা গুণ্ডাৰ জৰিয়তে মানুহ গোপনে বন্দী কৰি অসমলৈ মানুহ চালান দিছিল। উপন্যাসখনত ঃ

হাবিতলীয়া বাটত লগ পোৱা অকলশৰীয়া মানুহ, লাগে তেওঁ পুৰুষ বা মহিলাই হওক, ল'ৰা ছোৱালীয়ে হওক, এই ভেৰোণীয়া মানুহবোৰে ধৰি আনিছিল গোপনে। আনি ডিপুবোৰৰ গোপন কুঠৰীত বন্দী কৰি ৰাখিছিল। তাৰ পাছত সুবিধা বুজি এই বন্দীসকলক গোপনে চালান কৰা হৈছিল অসমৰ বাগিচালৈ। কেৱল চাহ বাগিচালৈকে নহয়, অসমৰ হাবিত কাঠ কটা, ফৰেষ্টৰ কন্টেক্টৰ, দুৰ্গম অঞ্চলত বাট-ঘাট বন্ধাৰ ঠিকা পোৱা ঠিকাদাৰ ইহঁতকো আৰকাঠিয়ে এনে মানুহ আনি যোগান ধৰিছিলেহি। [৮]

ঔপনিৱেশিক শাসন কালত অসমলৈ মানুহৰ প্ৰব্ৰজনৰ ক্ষেত্ৰত দেখা যায় যে, কিছুমান মানুহ স্ব-ইচ্ছাই অথবা এটা মিছা প্ৰলোভনতে নিজ নিজ ঠাই এৰি আহিছিল। যিসকল দ্ৰৱিদ্ৰ শ্ৰেণীৰ লোক জমিদাৰৰ ওচৰত বন্ধা আছিল বা যিসকল জমিদাৰৰ বন্ধাৰ শাৰীত নাম উঠা নাছিল সেইসকলে অনাগত দিনত জমিদাৰৰ পৰা আহিব পৰা প্ৰত্যাহ্বানৰ বাবে আৰকাঠিৰ প্ৰলোভনত ভোল গৈছিল। অসমৰ দৰে ঠাইত আকাল, ভোক এইবোৰ নাই বুলি কৈ সামান্য আগধন দি অসমলৈ প্ৰব্ৰজন কৰিবলৈ প্ৰৰোচিত কৰিছিল। স্ব-ইচ্ছাই হোৱা প্ৰব্ৰজনৰ ক্ষেত্ৰত দেখা যায় যে সকলা ঠাইতে জমিদাৰী ব্যৱস্থাত সাধাৰণ খেতিয়কৰ অৱস্থা আছিল অতি শোচনীয়। পশ্চিম বংগৰ বাঁকুৰা জিলাৰ বাউৰী সম্প্ৰদায়ৰ মানুহখিনি জমিদাৰৰ দাস আছিল আৰু মাটি সমূহত জমিদাৰৰ অধিকাৰ সাব্যস্ত হৈছিল। এনে পৰিস্থিতিত খেতিৰ সৰহভাগ ফচল জমিদাৰে ভাগ পাইছিল। বছৰটোলৈ খাবলৈ নোযোৱা এনে মানুহখিনিয়ে বাকী সময়খিনিত জমিদাৰৰ ওচৰত হাত পাতিব লগা হৈছিল। এই সুযোগ গ্ৰহণ কৰি জমিদাৰ সকলেও দৰিদ্ৰ, ক্ষুৰ্ধাতুৰ, মাটিবিহীন মানুহখিনিৰ ওপৰত নানা ধৰণৰ শোষণ অব্যাহত ৰাখিছিল। বিনা পাৰিশ্ৰমিকতদিনৰ পিছত দিন কাম কৰিবলগা হৈছিল। এইসকল লোক কেৱল জীয়াই থাকিবৰ বাবেই জমিদাৰ, জোতদাৰৰ ওচৰত আজীৱন ঋণী হৈ দাসৰ দৰে কাম কৰিবলৈ বাধ্য হৈছিল। উপন্যাসখনত এটা গুৰুত্বপূৰ্ণ চৰিত্ৰ দুখী বাউৰী দেউতাক জমিদাৰৰ ওচৰত ঋণী আছিল আৰু সেই সূত্ৰে দুখী বাউৰীয়ো জমিদাৰৰ ওচৰত ত্ৰিশ বছৰৰ বাবে ঋণী হয়। দুখী বাউৰীয়ে এনেধৰণৰ বিনা পাৰিশ্ৰমিকৰ বেগাৰ খটাৰ পৰা মুক্তি পাবলৈ স্ব-ইচ্ছাই আৰকাঠিৰ জৰিয়তে অসমলৈ প্ৰব্ৰজন কৰিছে। উপনিৱেশ ব্যৱস্থাত ঔপনিৱেকি শক্তি আৰু জমিদাৰ শ্ৰেণীৰ শ্ৰেণী চৰিত্ৰ সমপৰ্যায়ৰ আছিল।

এই দুয়োটা শ্ৰেণীয়ে মানৱ সম্পদক শোষণ কৰি নিজৰ সম্পদ বৃদ্ধিত বেছি মনোনিৱেশ কৰিছিল। উপন্যাসখনত উপনিৱেশক আৰু জমিদাৰে দৰিদ্ৰ মানুহখিনিৰ ওপৰত কৰা শোষণ আৰু এনে পৰিস্থিতিত সেই ঠাই ত্যাগ কৰি অসমলৈ প্ৰব্ৰজন হোৱা প্ৰসংগ প্ৰকাশ পাইছে এনেদৰে ঃ

আমাৰ বাউৰী মানুহবোৰে অতীজতে খেতিয়ে কৰিছিল। নিজৰ মাটিত জমিদাৰ জোতদাৰৰ মাটিত, খেতিয়েই কৰিছিল। ... লাহে লাহে মাটিবোৰ চব জমিদাৰৰ হাতলৈ গ'ল, অৰণ্যত গ'ল অৰণ্যৰ অধিকাৰ। গোৰা চাহাব দেশত আহি গোটেইখন তচনচ কৰি পেলালে। জমিদাৰৰ প্ৰতাপ আৰু বাঢ়ি আহিল। এফালে দুৰ্ভিক্ষই মানুহবোৰক এনেকুৱা কৰিলে যে সিহঁতে আৰকাঠিয়া চালানত আহি বাগিচাত সোমালেহি।[৯]

ঔপনিৱেশিকতাবাদৰ শ্ৰেণী চৰিত্ৰই আছিল যি ভূ-খণ্ডক তেওঁলোকে শাসন কৰে সেই ভূ-খণ্ডৰ ওপৰত আধিপত্য বিস্তাৰ কৰি সকলো বস্তুৰ ওপৰত নিয়ন্ত্ৰণ সাব্যস্ত কৰা। আধিপত্য বিস্তাৰৰ বাবে তেওঁলোকে দুৰ্বল, প্ৰান্তীয় মানুহৰ ওপৰত ক্ষমতাৰ দ্বাৰা আধিপত্য বিস্তাৰ কৰি শোষণ ব্যৱস্থাটোক প্ৰাকৃতিক কৰি তোলে। উপনিৱেশকে পুঁজিপতি শ্ৰেণী স্বাৰ্থৰ জৰিয়তে অসমৰ প্ৰাকৃতিক সম্পদ আৰু মানৱ সম্পদক শোষণ, লুণ্ঠন কৰি নিজৰ সম্পদ বৃদ্ধিত মনোনিৱেশ কৰিছিল। এই ক্ষেত্ৰত উপনিৱেশিকৰ উপনিৱেশ আৰু উপনিৱেশিতৰ প্ৰতি সহানুভূতিশীল ধাৰণা নাছিল। এফালৰ পৰা অৰণ্য ধ্বংস কৰি চাহ বাগিচা স্থাপন কৰিছিল। মূল্যবান গছ-বন কাটি তেওঁলোকৰ স্বাৰ্থৰ বাবে ব্যৱহাৰ কৰিছিল। চাহ বাগিচা স্থাপন কৰিবৰ বাবে যিসকল শ্ৰমিকক ব্যৱহাৰ কৰিছিল বা যিসকল বাগিচাৰ কৰ্মত নিয়োজিত আছিল সেই শ্ৰমিকৰ ওপৰতো সামান্য অজুহাততেই নানা অত্যাচাৰ চলাইছিল। শ্ৰমিকসকলে যাতে কেৱল উপনিৱেশিকৰ স্বাৰ্থৰ হকে কাম কৰিব পাৰে তাৰ বাবে উপনিৱেশকে বিশেষ মনোযোগ দিছিল। বাগিচাত কৰ্মৰত শ্ৰমিকবোৰক বাহিৰৰ পৃথিৱীখনৰ পৰা আঁতৰত ৰাখিছিল। সিহঁতৰ জীৱন ৰাতিপুৱা কলঘৰৰ কামজাৰীৰ চাইৰেণেৰে আৰম্ভ হয় আৰু কাম ছুটী চাইৰেণত শেষ হৈছিল। উপনিৱেশ ব্যৱস্থাত চাহ বনুৱাসকলে ঔপনিৱেশিক অৰ্থনীতিৰ উৎপাদকৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা লৈছিল আৰু উৎপাদিত সামগ্ৰীৰ ফল ঔপনিৱেশিক শক্তিয়ে ভোগ কৰি উপনিৱেশিক দেশৰ উন্নতিত অৰিহণা যোগাইছিল। ইয়াৰ বাবে ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাই উপনিৱেশিতৰ ওপৰত নানা ধৰণৰ শোষণ অব্যাহত ৰখা দেখা যায়। এনে পৰিস্থিতিত উপনিৱেশিতৰ জীৱন দুৰ্বিসহ হৈ উঠিছিল। উপন্যাসখনত উপনিৱেশৰ ৰক্ষকে সাধাৰণ মানুহখিনিৰ ওপৰত কৰা অত্যাচাৰৰ বৰ্ণনা পোৱা যায় —"হয়, হয় এই চাহাবটোৱেই বাগানত কাম কৰা বনুৱাবোৰক বৰ বেয়া ব্যৱহাৰ কৰে। বাগান বঢ়াবলৈ নতুন মাটি খোলাৰ সময়ত মানুহবোৰক চিঞৰ-বাখৰ কৰি গালি-গালাজ পাৰে, সামান্য ইফাল-সিফাল হ'লেই চাহাবটোৱে হাতত লৈ থকা চাবুকেৰে বনুৱাসকলক নিৰ্দয়ভাৱে কোবায়।"[১০]

উপনিৱেশিতৰ ওপৰত ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাৰ আধিপত্যৰ ফলত জনগণৰ শোষণ, অত্যাচাৰৰ বাবে প্ৰতিবাদ কৰা সাহস নাছিল। তেওঁলোকে এই শোষণ, অত্যাচাৰক বিনা দ্বিধাই গ্ৰহণ কৰি লৈছিল। উপনিৱেশকে স্বাৰ্থ অনুসৰি উপনিৱেশিতৰ ওপৰত নীতি-নিয়ম, আইন-কানুন প্ৰয়োগ কৰিছিল। উপন্যাসখনত বিজু বাউৰী শিশু চৰিত্ৰটোৱে ৰাস্তাত আহি থকা ইংৰাজ চাহাবক চালাম নকৰাৰ বাবেই ইংৰাজ চাহাবৰ শাৰীৰিক আক্ৰমণৰ সন্মুখীন হ'বলগা হৈছে। চাহবাৰী পাতিবৰ বাবে হাবি ভাঙোতে গছৰ গুৰিত জুই লগোৱাৰ বাবে ইংৰাজ চাহাবৰ দ্বাৰা কালীচৰণ শাৰীৰিক আক্ৰমণৰ সন্মুখীন হৈছে। ৰাস্তাত চোটা চাহাবক চালাম নকৰাৰ বাবে চাবুকেৰে মাৰ খোৱাৰ বাবে বাগানৰ মানুহখিনিয়ে বিজু বাউৰীকহে দোষাৰূপ কৰিছে। এই অন্যায়ৰ বাবে ইংৰাজৰ চাহাবজনৰ প্ৰতি প্ৰতিবাদ কৰিবৰ বাবে সাহস গোটাব পৰা নাই। ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাই এনেদৰে উপনিৱেশিতৰ ওপৰত আধিপত্য বিস্তাৰ কৰি আছে যে বিভিন্ন অন্যায় সহি উপনিৱেশিকৰ স্বাৰ্থৰ হকে কাম কৰিবলৈ বাধ্য। উপন্যাসখনত—"তেওঁলোকে অতি সাধাৰণভাৱে চাহাবে চাবুক চলোৱা কথা আলোচনা কৰিছিল— ঠিক এটা নিত্য নৈমত্তিক ঘটনা আলোচনা কৰাৰ দৰেই। বহু সময়ত তেওঁলোকে দোষ কৰা বনুৱাজনকহে ওভতাই দোষ দিছিল— সি তেনেকুৱা কৰিব নালাগে নহয়, নাপায় তেনে কৰিব। কৰাৰ বাবেহে মাৰ খাইছে। এৰা, মাৰখোৱাটো তেওঁলোকৰ বাবে স্বাভাৱিক প্ৰক্ৰিয়া আছিল।"[১১]

উপনিৱেশকে সম্পদ লুণ্ঠনৰ ক্ষেত্ৰত উপনিৱেশিতৰ স্বাৰ্থক আওকান কৰিছিল। বাগানৰ অস্বাস্থ্যকৰ পৰিৱেশ, অত্যাধিক শ্ৰমৰ ফলত প্ৰথমাৱস্থাত বিভিন্ন বেমাৰত পৰি বহুতো চাহ শ্ৰমিকৰ মৃত্যু মুখত পৰিছিল। চাহ বাগান মোকলাওতে বনৰীয়া জীৱ-জন্তুৰ আক্ৰমণ, অসমত হোৱা কলাজ্বৰৰ ফলত বাগানবোৰত বহুতো শ্ৰমিকৰ মৃত্যু হয়। এই ক্ষেত্ৰত উপনিৱেশকে বনুৱাৰ মৃত্যুক লৈ বেছি চিন্তিত নাছিল। চিকিৎসাৰ অভাৱে মানুহক মৃত্যুমুখত পোলাইছিল।

উপন্যাসখনত নুমলিগড় চাহ বাগান প্ৰতিষ্ঠাকালত শ্ৰমিকৰ মৃত্যুৰ প্ৰসংগ উল্লেখ পোৱা যায়ঃ "প্ৰথমে অহা মানুহবোৰ পাঁচ-দহ বছৰহে বাচি থাকিল বোলে। সিঁহতে আহি বৰ কষ্ট কাম কৰিব লাগিছিল। চাৰিওফালে হাবি আৰু জলাহ আছিল। পোক-ডাঁহ, সাপ-সুপটো আছেই, কিমান কিচিম কিচিম বেমাৰ আছিল। মেলেৰিয়া, ওলাউঠা, কিমান বেমাৰ।" ১২

অসমৰ ঔপনিৱেশিক সময়ছোৱাত ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ বিভিন্ন কাৰ্যসূচীৰ জৰিয়তে প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক চেতনা জাগ্ৰত হৈছিল। উপনিৱেশ ব্যৱস্থাই তেওঁলোকৰ অৰ্থনীতি সবল কৰিবৰ বাবে উপনিৱেশিতৰ মাজত মাদক দ্ৰব্যৰ প্ৰচলনেৰে এক অৰাজক পৰিস্থিতি সৃষ্টি কৰিছিল। ব্যৱসায়-বাণিজ্যৰ পৰা আৰম্ভ কৰি সকলো দিশ উপনিৱেশিকৰ নিয়ন্ত্ৰণাধীন হোৱাৰ বাবে অসমত কানি ব্যৱসায়ৰ জৰিয়তে ঔপনিৱেশিক অৰ্থনীতি টনকিয়াল কৰিছিল। এই ব্যৱস্থাত কানি খাই মানুহ সৰ্বশ্ৰান্ত হোৱাত এই ব্যৱসায় বন্ধ কৰিবৰ বাবে কংগ্ৰেছ দলে ৰাজনৈতিক পৰ্যায়ত বাধা আৰোপ কৰে। সেই সময়ছোৱাত সমগ্ৰ ভাৰততে ঔপনিৱেশিক নীতি বিৰুদ্ধে কংগ্ৰেছ দলে মহাত্মা গান্ধীৰ নেতৃত্বত সংগ্ৰাম অব্যাহত ৰাখিছিল। অসমতো ইয়াৰ প্ৰভাৱ পৰা দেখা যায়। অসমৰো বিভিন্ন ঠাইত কংগ্ৰেছ ভলন্টিয়াৰ সকলে মহাত্মা গান্ধীৰ নেতৃত্বত বৃটিছৰ বিৰুদ্ধে আৰম্ভ কৰা ১৯২০ চনৰ অসহযোগ আন্দোলন আৰু ১৯৩০ চনৰ আইন অমান্য আন্দোলনতো অংশ গ্ৰহণ কৰিছিল। অসহযোগ আন্দোলনৰ প্ৰভাৱত ভাৰতৰ অন্যান্য প্ৰান্তৰ দৰে অসমীয়া মানুহেও বৃটিছৰ বিৰুদ্ধে অসহযোগ কৰা সিদ্ধান্ত লৈ চৰকাৰী চাকৰি, স্কুল-কলেজ এৰি আন্দোলনত জঁপিয়াই পৰিছিল। উপন্যাসখনত ঔপনিৱেশিক শক্তিক ভাৰতৰ পৰা বিদায় দিবৰ বাবে কংগ্ৰেছৰ ভলন্টিয়াৰসকলে ঔপনিৱেশিকতা বিৰোধী সংগ্ৰামৰ বাবে ৰাইজৰ মাজত প্ৰচাৰ চলাইছিল—

চাহাবে আমাৰ দেশত কি কৰিছে। কানি, মদ এই বৰবিহ মেলি দেশখন বিষালি কৰি পেলাইছে। .... আৰু চাহাবে কৰিছে কি? এই আবকাৰী কানি, আবকাৰী মদৰ পৰা হোৱা হোৰে টকা লাভ কৰি শুহি নিছে। ৰাইজ, স্বাধীন হ'বলৈ হ'লে মানুহ হ'বলৈ হ'লে, আমি এই মহা বিহ এৰিব লাগিব। আমাৰ দেশত এইবোৰ যাতে চলিব নোৱাৰে তাৰ বাবে নিজে এইবোৰক বৰ্জন কৰাৰ উপৰিও এইবোৰ যাতে চলাব নোৱাৰে তাৰ বাবে কানিৰ মহল, মদৰ মহল এইবোৰত পিকেটিং কৰিব লাগিব। সত্যাগ্ৰহ কৰিব লাগিব। ১৩

উপন্যাসখনত প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক চেতনা বিজু বাউৰী চৰিত্ৰটোৰ জৰিয়তেও প্ৰতিফলিত হৈছে। সৰুৰে পৰা ইংৰাজ চাহাবসকলৰ বাগানৰ শ্ৰমিকসকলৰ প্ৰতি কৰা অত্যাচাৰৰ কথা ককাক, বাপেকৰ পৰা শুনি বিজু বাউৰী ভিতৰি ভিতৰি ক্ষোভিত হৈ আছিল। ডাঙৰ হৈ নিজে বাগানৰ শ্ৰমিকৰূপে আত্মপ্ৰকাশ কৰাত প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক চেতনা ৰাজনৈতিক পৰ্যায় পায়। চোটা চাহাবক অন্যান্য ল'ৰা-ছোৱালীৰ দৰে চালাম নকৰা কাৰ্যতে বিজু বাউৰীৰ প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক চেতনাৰ প্ৰাৰম্ভিকতা অন্তৰ্নিহিত হৈ আছিল। পৰৱৰ্তী সময়ত কংগ্ৰেছৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত হয় আৰু কংগ্ৰেছৰ এজন ভলন্টিয়াৰ ৰূপে বাগিচাৰ শ্ৰমিকৰ মাজত মহাত্মা গান্ধীৰ আদৰ্শ আৰু স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ বাণী প্ৰচাৰৰ জৰিয়তে মানুহৰ মাজত প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক চেতনা জগাবলৈ চেষ্টা কৰে। প্ৰথমাৱস্থাত কানি আৰু মদৰ মহলত পিকেটিং কৰাৰ জৰিয়তে ৰাজনৈতিকভাৱে এই চেতনা বৰ্হিপ্ৰকাশ ঘটায়। সেই সময়ত অসমত কানিৰ ব্যাপক প্ৰচলনে ইংৰাজে অসমৰ মানুহক অকামিলা কৰি তুলিছিল। কানিৰ প্ৰকোপত অসমত বহুতো পৰিয়ালৰ লাওলোৱা অৱস্থাৰ সৃষ্টি হৈছিল। ঘৰৰ সা-সম্পত্তি কানিৰ নামত শেষ হৈ গৈছিল। মেটমৰা মানুহ একোঘৰ কম সময়ৰ ভিতৰতে কানিৰ প্ৰভাৱে দৰিদ্ৰতাৰ অৱস্থালৈ ঠেলি দিছিল। পাৰিবাৰিক জীৱনৰ উপৰিও সমাজ জীৱনতো কানিৰ বৰবিহে সমাজধ্বংস কৰাত আগভাগ লৈছিল। কংগ্ৰেছৰ সত্যাগ্ৰহীসকলৰ আলোচনাই ঔপনিৱেশিক অসমৰ গ্ৰাম্য সমাজ ব্যৱস্থাত পেলোৱা কানিৰ প্ৰভাৱৰ বিষয়ে আভাস পাব পাৰিঃ "কানিয়ে আমাৰ ইয়াত জাত বিজাত একো বাদ দিয়া নাই। এখন গাঁৱত কিমান ঘৰত যে কানিৰ খোলা পাতি লৈছে মানুহে তাৰ লেখ-জোখ নাই। প্ৰতিটো চুবুৰীতে একোখন একোখন কানিখোলা আছে। .... সংসাৰৰ কানীয়াবোৰ আহি এই কানিখোলাত ভিৰ কৰিবহি।" ১৪

কিন্তু কানিৰ প্ৰচলন চাহ বাগিচাৰ ভিতৰত বন্ধ আছিল। চতুৰ উপনিৱেশকে জানিছিল যে, কানিৰ প্ৰচলন বাগিচাত আৰম্ভ হ'লে বা বনুৱাই কানিৰ নিচাত ধৰিলে বাগিচাৰ কামলৈ অৱহেলা কৰিব। এনেস্থলত চাহ উদ্যোগত বৃহৎ লোকচানৰ সন্মুখীন হোৱা সম্ভাৱনালৈ চায় বাগানৰ অঞ্চলত কানি নিষিদ্ধ কৰিছিল। কিন্তু বাগানৰ ওচৰে-পাজৰে মদৰ ব্যাপক প্ৰচলন আছিল। প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক সংগ্ৰাম সমগ্ৰ ভাৰত বৰ্ষ জুৰি সবলভাৱে আত্মপ্ৰকাশ কৰাত বনুৱাৰ মাজত স্বাধীনতা সংগ্ৰাম, মহাত্মা গান্ধীৰ আদৰ্শ প্ৰচাৰ হোৱালৈ লক্ষ্য ৰাখি ইংৰাজ আৰু বাগান কৰ্তৃপক্ষই বাহিৰৰ মানুহ বাগানৰ কলনিৰ ভিতৰত নিষিদ্ধ কৰি দিছিল। বাহিৰৰ মানুহ আহি যাতে বনুৱা মানুহক

স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত কৰিব নোৱাৰে তাৰ বাবে হিন্দুস্থানী চিপাহীৰ দ্বাৰা পহৰা দিয়া ব্যৱস্থাও কৰা হৈছিল।

বনুৱা মাজত প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক সংগ্ৰামৰ প্ৰচাৰৰ ক্ষেত্ৰত বিজু বাউৰীয়ে উপনিৱেশৰ ৰক্ষক বাগানৰ চৰ্দাৰৰ পৰা বাধাও পাইছিল। পৰৱৰ্তী সময়ত ঔপনিৱেশিক শক্তিৰ দ্বাৰা বিজু শাৰীৰিক আক্ৰমণৰো সন্মুখীন হয়। কিন্তু বিজু স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ ক্ষেত্ৰত থমকি নৰল। কংগ্ৰেছৰ এজন সত্যাগ্ৰহী হিচাপে দেশৰ স্বাধীনতাৰ হকে, কানি, মদ নিবাৰণৰ বাবে কাম কৰি গৈ থাকিল। বিজু বাউৰীয়ে বাগানৰ সমনীয়া বনুৱা সাধনক ঔপনিৱেশিক শাসন-শোষণৰ পৰা মুক্তি লাভ কৰিবলৈ কিদৰে মানুহ আগবাঢ়ি যাব লাগিব সেই বিষয়ে উল্লেখ কৰিছে ঃ "এই দেশটো স্বাধীন কৰিবলৈ আমি ইয়াত গান্ধীজীয়ে দেখুৱা পথেৰে আগবাঢ়ি যাব লাগিব। স্বৰাজ, বগা চাহাবৰ পৰা আমি স্বৰাজ আনিব লাগিব। সেইটোহে আটাইতকৈ মূল কথা।" [১৫] পৰৱৰ্তী সময়ত আন্দোলন কৰা বাবে পুলিচৰ দ্বাৰা গ্ৰেপ্তাৰ হয় আৰু যোৰহাটৰ জে'লত বন্দী হৈ থাকে। জে'লত থকা অৱস্থাতে টান নৰীয়া পৰাত স্বাস্থ্যৰ অৱনতি ঘটে। সু-চিকিৎসাৰ বাবে জে'লৰ কৰ্তৃপক্ষই বিজু বাউৰীৰ আগত চৰ্ত ৰাখি উন্নত চিকিৎসা আগবঢ়োৱা প্ৰলোভন দিছিল যদিও তেওঁ মান্তি নহ'ল। কাৰণ মহাত্মা গান্ধীৰ অহিংস আন্দোলনত বিশ্বাস ৰখা বিজুৱে নিজৰ স্বাৰ্থৰ কাৰণে স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ দৰে মহৎ কাৰ্য এটাক বিশ্বাসঘাটকতা নকৰিলে। কৰ্তৃপক্ষৰ ফালৰ পৰা বহুবাৰ চেষ্টা কৰা পাছতো উপনিৱেশৰ ৰক্ষকৰ ওচৰত হাৰ নামানিলে। শেষত সেই নৰীয়াতে চাহ বনুৱা, পিছলৈ কংগ্ৰেছ কৰ্মী, স্বাধীনতা সংগ্ৰামী বিজু বাউৰীৰ যোৰহাট জে'লত মৃত্যু ঘটে।

ঔপনিৱেশিক অসমত স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ ক্ষেত্ৰত কংগ্ৰেছ দলৰ ভলন্টিয়াৰ সকলে অসমৰ চুকে-কোণে মানুহৰ মাজত জনসচেতনতা সৃষ্টি কৰি প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক সংগ্ৰামৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত কৰিছিল। বিজু বাউৰীও নিৰঞ্জন চাহু নামৰ কংগ্ৰেছৰ ভলন্টিয়াৰ জনৰ সংস্পৰ্শৰ দ্বাৰাই পৰৱৰ্তী সময়ত স্বাধীনতা সেনানী ৰূপত আত্মপ্ৰকাশ কৰিছিল। উপন্যাসখনত সেই সময়ত অসমৰ গাঁৱে-ভূঞে ঔপনিৱেশিক শাসনৰ পৰা মুক্ত হ'বৰ বাবে সংগ্ৰামত লিপ্ত হোৱা আৰু ভলন্টিয়াৰ সকলে ৰাইজৰ আগত সংগ্ৰামী মতাদৰ্শ প্ৰচাৰেৰে স্বাধীনতা আন্দোলনৰ ৰাজনৈতিক চেতনা জাগ্ৰত কৰি তুলিছিল। উপন্যাসখনতঃ "গতিকে ৰাইজ সকলোৱে মনৰ দ্বিধা, দ্বেষ সকলো ত্যাগ কৰি স্বাধীনতা আন্দোলনত জঁপিয়াই পৰিব লাগে। দেশ মাতৃক পৰাধীনতাৰ পৰা মুক্ত কৰিব লাগে। আজি দেশ মাতৃৰ শ্ৰেষ্ঠ সন্তানসকলে সমস্ত ত্যাগ কৰিম বুলি সংকল্প কৰি লৈ ওলাই আহিছে। আমিও ওলাব লাগে। মাউখে উটিলে গুৰি পৰুৱাৰো মৰণ নাই যি আমাক গোলামিৰ শিকলিৰে বান্ধি ৰাখিব।" [১৬]

স্বাধীনতা আন্দোলনত ভাৰতীয় জাতীয় কংগ্ৰেছ দলৰ আদৰ্শৰ প্ৰতি ধাৱমান হৈ ঔপনিৱেশিক অসমৰ জিলাই জিলাই কংগ্ৰেছৰ নেতা, ভলন্টিয়াৰসকলে বিভিন্ন কাৰ্যসূচী হাতত লৈছিল। ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ স্বাৰ্থত বিভিন্ন ঠাইৰ মানুহে ইংৰাজৰ পৰা নানা অত্যাচাৰৰো সন্মুখীন হ'বলগা হৈছিল। গোলাঘাটৰ জনসাধাৰণে কংগ্ৰেছ আৰু মহাত্মা গান্ধীৰ আদৰ্শৰ দ্বাৰা অনুপ্ৰাণিত হৈ ঔপনিৱেশিকতা বিৰোধী সংগ্ৰামখনত দলে-বলে যোগ দিছিল। ছাত্ৰ সমাজ, উকীল, শিক্ষক, মিলিটেৰী আৰু বাগানৰ চাকৰিয়ালসকলে চাকৰি ত্যাগ কৰি অসহযোগ আন্দোলনত অংশগ্ৰহণ কৰিছিল। ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰামত উপন্যাসখনে সেই সময়ত গোলাঘাটবাসীৰ ভূমিকাৰ ইতিহাসকো প্ৰতিফলিত কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে। উপন্যাসখনত মহাত্মা গান্ধীৰ ভাষণৰ দ্বাৰা অনুপ্ৰাণিত হৈ শংকৰ বৰুৱাই বাগানৰ চাকৰি এৰি আন্দোলনত যোগদান কৰিছে। ঔপনিৱেশিক সময়ছোৱাত সৰ্বভাৰতীয় পৰ্যায়ত সংঘটিত হোৱা প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক ঘটনাই অসমৰ মানুহৰ চেতনাটো প্ৰভাৱ পেলাইছিল। অসহযোগ আন্দোলন, চৌৰাচৌৰিৰ ঘটনা, বিদেশী বস্তু বৰ্জন, স্বদেশী বস্তু উৎপাদন,আইন অমান্য আন্দোলন, কংগ্ৰেছৰ দাণ্ডি যাত্ৰা আদি বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। বৃটিছৰ ১৯৩০ চনৰ লোণ আইন ভংগ কৰিবলৈ মহাত্মা গান্ধীয়ে গুজৰাটৰ সৰৰমতী আশ্ৰমৰ পৰা দাণ্ডি যাত্ৰা আৰম্ভ কৰিছিল। এই যাত্ৰাত গোলাঘাটৰ কেশৱ সোণোৱাল, কনক দাস নামৰ দুজন কংগ্ৰেছৰ ভলন্টিয়াৰে সুদূৰ গুজৰাটত গৈ অংশগ্ৰহণ কৰিছিল। উপন্যাসখনত — "সেই যাত্ৰাৰ পৰা উভতি অহাৰ পাছত গোলাঘাটত মুক্তি যুঁজাৰুসকলৰ মাজত এক বিপুল উৎসাহ-উদ্দীপনাৰ সৃষ্টি হৈছিল। জাকে জাকে মানুহ সোণোৱালক লগ কৰিবলৈ আহিছিল, জানিব বিচাৰিছিল সেই ঐতিহাসিক যাত্ৰাৰ কথা। সেইদিনা বিজু আৰু বিদ্যাৰতীও আহিছিল সেই কাহিনী শুনিবলৈ।" [১৭]

ঔপনিৱেশিক সময়ছোৱাত প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক সংগ্ৰামখনত মহিলাসকলেও পুৰুষৰ সমানেই মাদক দ্ৰব্য বিৰোধী সংগ্ৰামৰ লগতে স্বাধীনতা আন্দোলনৰ বিভিন্ন কাৰ্যসূচীবোৰত অংশগ্ৰহণ কৰিছিল। উপন্যাসখনত বিজু

বাউৰীৰ পদাংক অনুসৰণ কৰিয়ে তেওঁৰ পত্নী বিদ্যাৰতী বাউৰীয়েও এনেধৰণৰ আন্দোলনত অংশ গ্ৰহণ কৰিছে আৰু পৰৱৰ্তী সময়ত কংগ্ৰেছৰ সক্ৰিয় কৰ্মী হিচাপে স্বাধীনতা সংগ্ৰামত অৱতীৰ্ণ হৈছে। মহিলাসকলে বিভিন্ন সময়ত কংগ্ৰেছৰ ভলন্টিয়াৰৰ দ্বাৰা অনুষ্ঠিত শোভাযাত্ৰা, মেল-মিটিংবোৰত উপস্থিত আছিল আৰু এই আন্দোলনৰ প্ৰতি সঁহাৰি জনাইছিল। তেওঁলোকে স্বদেশী আন্দোলনত হাতে-কামে লাগি এই আন্দোলনৰ মূলমন্ত্ৰ ৰক্ষা কৰিছিল। কানি, মদ নিবাৰণৰ বাবে চাহ বাগানৰ উপৰিও বাগানৰ বাহিৰৰ অঞ্চলৰ কানি, মদৰ মহলৰ সন্মুখত পিকেটিং কৰি এইবোৰ বন্ধ কৰিবৰ বাবে প্ৰতিবাদ কৰা আভাস উপন্যাসখনে দিছে। বিদ্যৰতীয়েও প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক চেতনাৰ দ্বাৰা বিজু বাউৰীৰ দৰেই সভাত ভাষণ দি মানুহক স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ বাবে সচেতন কৰি তুলিছিল। দুবাৰকৈ বিদ্যাৰতী আন্দোলন কৰাৰ বাবে গ্ৰেপ্তাৰ হৈছিল আৰু কাৰাদণ্ডও বিহা হৈছিল। শেষৰ বাৰ গ্ৰেপ্তাৰ হৈ যোৰহাটৰ পৰা কাছাৰ জে'ললৈ স্থানান্তৰ হৈছিল। বিদ্যাৰতী বাউৰীৰ উপৰিও গোলাঘাটৰ লভিতা সোণোৱাল, নৰমী সোণোৱাল আৰু দ্বাৰিকী দাসক কানি বিৰোধী আন্দোলন, মদৰ মহলত পিকেটিং কৰাৰ অপৰাধত ঔপনিৱেশিক শক্তিয়ে গ্ৰেপ্তাৰ কৰি জে'ল হাজোতলৈ প্ৰেৰণ কৰা প্ৰসংগ উপন্যাসখনত উল্লেখ পোৱা গৈছে।

২.০ উপসংহাৰ ঃ

বৃটিছৰ ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাই অসমৰ ইতিহাসত দীৰ্ঘ সময়জুৰি সমাজ, ৰাজনীতি আৰু অৰ্থনীতিত প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰিছিল। যুগে যুগে ইতিহাস চৰ্চাত সাহিত্যই বিশেষ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰি আহিছে। পৰম্পৰাগত ইতিহাস চৰ্চাত মূল সুঁতিৰ ইতিহাসৰ পৰা উপেক্ষিত হৈ থকা বিজু বাউৰী এই ঐতিহাসিক চৰিত্ৰটোৰ ভাৰতৰ স্বাধীনতাৰ বাবে কৰা সংগ্ৰামৰ কাহিনীয়ে স্বৰ্গাদপি উপন্যাসৰ কাহিনী। বিজু বাউৰীক কেন্দ্ৰ কৰি কাহিনী বিকাশ হ'লেও উপন্যাসখন জীৱনীমূলক উপন্যাস নহয়। সাহিত্যই ইতিহাসৰ বৃহৎ বৃত্তান্তসমূহৰ উপৰিও ক্ষুদ্ৰ বৃত্তান্তসমূহ আৰু ইয়াৰ লগত জড়িত মানৱীয় কাৰ্যকলাপৰ বিৱৰণীও প্ৰতিফলিত কৰে। ইতিহাস কেৱল বিজয়ী জাতিৰ ইতিহাস নহয় ইতিহাস প্ৰান্তীয় শ্ৰেণীৰো। অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসৰ প্ৰান্তীয় শ্ৰেণীৰ অন্তৰ্গত চাহ শ্ৰমিকসকল, উপনিৱেশিত জনগণ আৰু তেওঁলোকৰে অন্তৰ্গত বিজু বাউৰীৰ সংগ্ৰামী সত্তাৰ মূল্যায়ন অবিহনে অসমৰ ঔপনিৱেশিক আমোলৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ ইতিহাস অসম্পূৰ্ণ।

৩.০ সিদ্ধান্ত ঃ

'ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰাৰ স্বৰ্গাদপি উপন্যাসত প্ৰতিফলিত অসমৰ ঔপনিৱেশিক ইতিহাসৰ প্ৰসংগ' শীৰ্ষক বিষয়টি বিশ্লেষণৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰাপ্ত সিদ্ধান্তসমূহ এনেধৰণৰঃ

(ক) কোনো এখন দেশ বা ভূ-খণ্ড এটাৰ জনসাধাৰণৰ ওপৰত শাসন, ক্ষমতা, বল প্ৰয়োগ আৰু জোৰ-জুলুমৰ দ্বাৰা ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাই নিজ দেশৰ স্বাৰ্থ সিদ্ধি কৰে। অসমৰ ঔপনিৱেশিক শাসন ব্যৱস্থাটো এই প্ৰক্ৰিয়া লক্ষ্য কৰা গৈছিল। কেৱল উৎপাদনৰ দিশটোক গুৰুত্ব দি অসমৰ প্ৰাকৃতিক, মানৱ সম্পদ লুণ্ঠন কৰি উপনিৱেশিক দেশৰ অৰ্থনীতিৰ ভেটি টনকিয়াল কৰিছিল।

(খ) ঔপনিৱেশিক শাসন ব্যৱস্থাত সাধাৰণ মানুহৰ দুৰ্দশা আছিল তথৈবচ। সকলো দিশতে ঔপনিৱেশিক শাসকৰ নিয়ন্ত্ৰণাধীন হোৱাৰ বাবে মানুহে ব্যক্তি স্বাধীনতাৰ লগতে ৰাজনৈতিক, অৰ্থনৈতিক স্বাধীনতা হেৰুৱাইছিল। এই ব্যৱস্থাই উপনিৱেশিতৰ সুখ-অনুভূতি, দুখ-দুৰ্দশাক গুৰুত্ব দিয়া নাছিল।

(গ) ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাত চাহ উদ্যোগৰ বিকাশৰ বাবে উপনিৱেশ ৰক্ষকসকলে ভাৰতৰ বিভিন্ন ঠাইৰ পৰা অসমলৈ শ্ৰমিকৰ আমদানি কৰিছিল। যিসকল পৰৱৰ্তী সময়ত অসমত স্থায়ীভাৱে থাকি অসমৰ বায়ু-পানীৰ লগত এক হৈ এই ঠাইকে নিজৰ মাতৃভূমি বুলি স্বীকাৰ কৰি লৈছিল।

(ঘ) ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাত প্ৰব্ৰজিত শ্ৰমিকসকলৰ ওপৰত বাগানৰ কৰ্তৃপক্ষৰ শোষণ আছিল অতি অমানৱীয়। শক্তিহীন, ক্ষমতাহীন, দুৰ্বল এই প্ৰান্তীয় শ্ৰেণীৰ ওপৰত অত্যাধিক শ্ৰম আৰু নিৰ্যাতনৰ দ্বাৰা সম্পদ আহৰণৰ ক্ষেত্ৰত মনোনিৱেশ কৰিছিল। বাহিৰৰ পৃথিৱীখনৰ পৰা আঁতৰত ৰাখি এইসকল শ্ৰমিকক কেৱল উৎপাদনৰ আহিলা হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছিল।

(ঙ) ঔপনিৱেশিকতাবাদৰ শাসন-শোষণৰ বিৰুদ্ধে সমগ্ৰ ভাৰতৰ লগতে অসমৰ জনসাধাৰণৰো প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক চেতনা গঢ় লয়। মানুহে বুজি উঠিছিল যে প্ৰতি-ঔপনিৱেশিক চেতনাৰ জৰিয়তেহে ঔপনিৱেশিক ব্যৱস্থাৰ পৰা মুক্ত হ'ব পৰা যাব। সেইবাবে কংগ্ৰেছ দলৰ নেতৃত্বত মানুহে বৃটিছৰ পৰাধীনতাৰ পৰা মুক্ত হ'বলৈ স্বাধীনতাৰ পোষকতা কৰি বিভিন্ন ধৰণৰ ঔপনিৱেশিকতা বিৰোধী সংগ্ৰামত অৱতীৰ্ণ হোৱা দেখা যায়। ❑

প্ৰসংগ সূত্ৰ ঃ

১. "Colonialism can be defined as the conquest and control of other land and goods".Ania Loomba, Colonial ism/ Post-colonialism, p.20

২. "Between colonizer and colonized there is room only for forced labor, intimidation, pressure, the police taxation, theft, rape, compulsory crops, contempt, mistrust, arrogance, self-complacency, swinishness, brain less elites, degraded masses. No human contact, but relations of domination and submission which trun the colonizing man into a classroom monitor, an army sergeant, a prison guard, a slave driver and the indigenous man into an instrument of production". Aime Cesaire. Discourse on Colonialism, p.42

৩. "Imperialism means the practice, the theory, and the attitudes of a dominating metropolitan centre rulling a distant territory; Colonialism which is almost always a consequence of imperialism, is the implanting of settlments on distant territory". Bill Ashcroft et. all, Post-Colonial Studies: The Key Concept, p.40

৪. "More than three-quarters of the people living in the world today have had their lives shaped by the shared experience of colonialism. It is to see how important this has been in the political and economic spheres, but its general influence on the perceptual frameworks of contemporary peoples is often less evident. Literature offers one of the most important ways in which these new perceptions are expressed and it is in their writing, and through their other arts such as painting, sculpture, music and dance that the day-to- day realities experi enced by colonised peoples have been most powerfully encoded and so profoundly influential". Apollo Amoko, 'Race and Postcoloniality', Simon Malpas and Paul Wake (Ed.) Critical and Cultural Theory, p.132

৫. "By around 1955, the problem became very acute. It was not only that the local pepole of Assam were unwilling to work in the tea gardens,but there was acute shortage of adult population in the state. Assam at that time was still experiencing the effect of Moamaria rebellion, the Burmese invasion and the raids of the hill tribes". R.K Kar, 'Anthropo-Historical Perspectives of the Tea Labourers: With Special Reference to North-East India'.Sarthak Sengupta (Ed.). The Tea Labourers of North-East India, p.3

৬. ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰা, স্বৰ্গাদপি, পৃ.৫

৭. লোহিত কুমাৰ বৰা, অসমৰ চাহ জনগোষ্ঠীৰ সমাজ আৰু সংস্কৃতি, পৃ. ২৫

৮. ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰা, উল্লিখিত, পৃ.৭

৯. উল্লিখিত, পৃ.১০৩

১০. উল্লিখিত, পৃ.৯

১১. উল্লিখিত, পৃ.১০

১২. উল্লিখিত, পৃ.৮৩

১৩. উল্লিখিত, পৃ.১২৪

১৪. উল্লিখিত, পৃ.১৩৬-৩৭

১৫. উল্লিখিত, পৃ.১৩৭

১৬. উল্লিখিত, পৃ.১২৬

১৭. উল্লিখিত, পৃ.১৮৩

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

অসমীয়া ঃ

কুৰ্মী, সুশীল. অসমৰ চাহ শ্ৰমিকৰ অৱদান. অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, প্ৰথম সংস্কৰণ ২০০৭

বৰা, ধ্ৰুৱজ্যোতি. স্বৰ্গাদপি. অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, প্ৰথম প্ৰকাশ ২০১৪

বৰা, লোহিত কুমাৰ. অসমৰ চাহ জনগোষ্ঠীৰ সমাজ আৰু সংস্কৃতি, কৌস্তভ প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ ২০০৬

বৰুৱা, সাগৰ. ভাৰতৰ স্বাধীনতা আন্দোলনত অসম. জাগৰণ সাহিত্য প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ ২০১৩

শৰ্মা, দেবব্ৰত (সম্পা.). ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্ৰামত অসমৰ আদিবাসী চহিদ বিজু বাউৰী আৰু তেওঁৰ পত্নী-পুত্ৰ বিদ্যাৰতী বাউৰী- লীলী বাউৰী. একলব্য প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ ২০১২

ইংৰাজী ঃ

Ashcroft, Bill et. all, Post-Colonial Studies: The Key Concept.Routledge, Second Edition   2007

Cesaire, Aime. Discourse on Colonialism. Monthly Review Press 2000

Kakati, Barnali. Social Demography of colonial Assam. EBH Publishers 2022

Loomba, Ania. Colonialism/Post-colonialism. Routledge, Third Edition 2015

Malpas, Simon and Paul Wake (Ed.) Critical and Cultural Theory. Routledge, Reprint 2017

Sengupta, Sarthak (Ed.). The Tea Labourers of North East India. Mittal Publication, 2009

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

প্ৰাচীনত্বৰ আলোকত ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষা ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

ফেন্সী চুতীয়া
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
বিশ্বভাৰতী শান্তিনিকেতন
বোলপুৰ, পশ্চিমবঙ্গ-৭৩১২০৪
৬০০০৯৫৯৪৬৩
chutiafancy1@gmail.com

ড° সংগীতা শইকীয়া
সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
বিশ্বভাৰতী শান্তিনিকেতন
বোলপুৰ, পশ্চিমবঙ্গ-৭৩১২০৪
৯৪৭৫৬৬৮৬৬৪
sangitasantiniketan@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

ওড়িআ আৰু অসমীয়া এই দুয়োটা ভাষা নব্য ভাৰতীয় আৰ্য ভাষা। ভাৰতবৰ্ষৰ সংবিধানৰ দ্বাৰা স্বীকৃত ভাষাসমূহৰ ভিতৰত ওড়িআ আৰু অসমীয়া অন্যতম। ভাষাবিদসকলৰ মতে এই দুয়োটা ভাষাই খ্ৰীঃ নৱম-দশম শতিকাত বিকাশ লাভ কৰিছিল যদিও ইয়াৰ প্ৰাচীন ৰূপ তাতোকৈ কেইবাশ বছৰ পুৰণি। শিলালেখ, তাম্ৰলিপি আদিত দুয়োটা ভাষাৰে প্ৰাচীন ৰূপ ৰক্ষিত হৈ আছে। যিয়ে প্ৰমাণ কৰে যে ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষাই খ্ৰীঃ নৱম-দশম শতিকাতকৈ আগতে বিকাশ লাভ কৰিছিল। এই আলোচনাত প্ৰত্নলেখৰ তথ্যৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি ভাষা দুটাৰ প্ৰাচীনত্ব নিৰূপণ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

ওড়িআ, অসমীয়া, ভাষা, প্ৰাচীনত্ব

১.০০ অৱতৰণিকা ঃ

ইণ্ডো-ইউৰোপীয় ভাষা পৰিয়ালৰ অন্তৰ্গত ইণ্ডো-ইৰাণীয় শাখাৰ ভাৰতীয় আৰ্য ভাষাৰ পৰা উদ্ভুত অসমীয়া আৰু ওড়িআ নব্য ভাৰতীয় আৰ্যভাষাসমূহৰ ভিতৰত অন্যতম স্বতন্ত্ৰ ভাষা। একেমূলীয় ভাষা হোৱা হেতুকে দুয়োটা ভাষাক ভগ্নীস্থানীয় ভাষা বুলি কোৱা হয়। ভাষাবিদ গ্ৰীয়াৰ্চন, সুকুমাৰ সেন, সুনীতি কুমাৰ চট্টোপাধ্যায়, বাণীকান্ত কাকতি আদিয়ে মাগধী প্ৰাকৃতৰ পৰা ক্ৰমে বিকাশ লাভ কৰি অসমীয়া, ওড়িআ, বাংলা আদি ভাষাৰ জন্ম হৈছে বুলি মতপোষণ কৰিছে। গ্ৰীয়াৰ্চনৰ মতে মাগধী প্ৰাকৃতৰ প্ৰাচ্য মাগধী শাখাই দক্ষিণলৈ গতি কৰাৰ ফলত সেই অঞ্চলৰ ওড্ৰৰ পৰা ওড়িআ ভাষা আৰু উত্তৰ-পূবলৈ গতি কৰাৰ ফলত কামৰূপীৰ পৰা অসমীয়া ভাষাৰ সৃষ্টি হয়।

"Magadha Apabhramsa, in fact, may considered as spreading out Eastwards and Southwards in three directions. To the north East it developed into Northern Bengali and Assamese, to the South into Oriya, and between the two into Bengali. Each of these three descendants is equally directly connected with the common immediate Parent."[১]

একেমূলীয় হোৱাৰ বাবে দুয়োটা ভাষাৰে উদ্ভৱ আৰু বিকাশৰ সময়সীমা সমসাময়িক হোৱাটোৱেই স্বাভাৱিক।

১.০১ অধ্যয়নৰ লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্য ঃ

এই অধ্যয়নৰ লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্য হ'ল—

(ক) প্ৰত্নলেখত ৰক্ষিত হৈ থকা ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰাচীন ৰূপ নিৰূপণৰ দ্বাৰা দুয়োটা ভাষাৰে প্ৰাচীনত্ব নিৰূপণ কৰা।

(খ) ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষাৰ লিখন পৰম্পৰাৰ ধাৰাবাহিক ইতিহাস সম্পৰ্কে আলোকপাত কৰা।

১.০২ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে তুলনামূলক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

২.০০ মূল বিষয়বস্তুৰ আলোচনা ঃ

২.০১ ওড়িআ ভাষা ঃ

ওড়িশাৰ প্ৰধান ভাষা ওড়িআ ভাৰতৰ সংবিধানৰ অষ্টম অনুসূচীৰ অন্তৰ্গত এটি উল্লেখযোগ্য সংবিধান স্বীকৃত ভাষা হোৱাৰ উপৰিও ভাৰত চৰকাৰৰ সাংস্কৃতিক মন্ত্ৰণালয়ৰ দ্বাৰা প্ৰদত্ত ধ্ৰুপদী ভাষাৰ মৰ্যাদা প্ৰাপ্ত এটি ভাষা। ধ্ৰুপদী ভাষাৰূপে স্বীকৃতি লাভ কৰাৰ অন্তৰালৰ মূল কথাটোৱেই হ'ল ওড়িআ ভাষাৰ প্ৰাচীনতম ইতিহাস আৰু ওড়িআ ভাষা-ভাষীসকলৰ ভাষিক দায়বদ্ধতা। শেহতীয়া অধ্যয়নত প্ৰকাশ পোৱা তথ্য অনুসৰি ওড়িআ ভাষা ২৫০০ বছৰ পুৰণি এটি ভাষা। *"Odia which has sustained a developmental history of 2500 years of Language development and more then 1500 years of literary development"* [২]

ওড়িআ ভাষাৰ সুদীৰ্ঘ ঐতিহ্য আৰু পৰম্পৰা আছে। ওড়িআ ভাষাৰ ক্ৰমবিকাশৰ ইতিহাসক চাৰিটা স্তৰত ভগোৱা হৈছে। *“প্ৰত্ন ওড়িআ, উপনিৱেশ পূৰ্ব যুগৰ ওড়িআ (খ্ৰীষ্টিয় ১১শ-১৮শ), উপনিৱেশ যুগৰ ওড়িআ (খ্ৰীষ্টিয় ১৮০৩-১৯৪২), আৰু উপনিৱেশ পৰৱৰ্তী যুগৰ ওড়িআ (খ্ৰীষ্টিয় ১৯৪২ৰ পৰা বৰ্তমানলৈ)।”* [৩]

প্ৰত্ন স্তৰৰ ওড়িআ ভাষাক কথিত আৰু লিখিত দুটা ভাগত ভগাব পাৰি। শিলালিপি, তামৰ ফলি আদিত সংৰক্ষিত ৰূপটোৱে এই স্তৰক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। *“সত্যনাৰায়ণ ৰাজগুৰুৱে ১০৫১ খ্ৰী. লিখিত বুলি অনুমান কৰা গণ্ডিবেঢ় গাঁৱত প্ৰাপ্ত অভিলেখখনকেই উড়িআ ভাষাৰ নিদৰ্শন থকা প্ৰাচীন অভিলেখ বুলি মন্তব্য দিছে। এই শিলালিপিখন এটা বৌদ্ধমূৰ্ত্তিৰ পাদদেশত লিখা হৈছিল।”* [৪] কিন্তু ২০১৪ চনত ওড়িআ ভাষাই ধ্ৰুপদী ভাষা ৰূপে স্বীকৃতি লাভ কৰাৰ পাছতে ওড়িআ ভাষাৰ প্ৰাচীনত্ব সম্পৰ্কে নতুন তথ্য পোহৰলৈ আহিছে। দেৱীপ্ৰসন্ন পাটনায়ক আৰু সুব্ৰত কুমাৰ প্ৰোস্তীয়ে “Classical Odia” গ্ৰন্থত উল্লেখ কৰা অনুসৰি খ্ৰী.পূ. তৃতীয় শতাব্দীত অশোকৰ ৰাজপৃষ্ঠপোষকতাত খোদিত শিলালেখসমূহত ওড়িআ ভাষাৰ প্ৰাচীন ৰূপৰ নিদৰ্শন পোৱা যায়। এই প্ৰত্নলেখসমূহৰ ভিতৰত জৌগড় শিলালিপি (খ্ৰীঃপূৰ্ব তৃতীয় শতাব্দী) প্ৰাচীন। জৌগড় শিলালিপিত ৰক্ষিত হৈ থকা ওড়িআ ভাষাৰ প্ৰাচীনতম শব্দবোৰ হ'ল—

"dâkhami (looking), manisha (man), âtha (eight), râjina (king), bahmuna (brahmin), sineha (love), sahasa (thousand), mita (friend), hoiti (have), âja (today), ei (its), osadha (medicine), 'kichhi' (something),'tini' (three), 'pachha' or pichha (back), 'panati' or pananâti (great grandson), 'alibi' or lipi (script) and 'lieu' or nahebu (won't be), budhâ (oldman), badhi (large), tambâ (copper), pani (vagitable), se (he), hâti (elephant), siri (sri), puta (son), kale (do), sata (truth), nilathây (nothing) etc." [৫]

উল্লেখযোগ্য যে, ওড়িআ ভাষাই প্ৰাচীনত্ব বহনকাৰী নিদৰ্শনৰূপে গণ্য কৰা জৌগড় শিলালিপিত উল্লিখিত এই শব্দবোৰৰ মূল সংস্কৃত আৰু এই শব্দবোৰৰ বহুকেইটা শব্দ অসমীয়া ভাষাতো কেতিয়াবা হুবহু ৰূপত আৰু কেতিয়াবা সামান্য ধ্বনি পৰিৱৰ্তিত ৰূপত এতিয়ালৈকে ব্যৱহাৰ হৈ আহিছে। যেনে—

(১) dakhâmi (দেখা), (২) manisha (মনিচ/নৰ মনিচ), (৩) âtha (আঠ), (৪) râjina (ৰাজন/ৰজা), (৫) bahmuna (বামুণ/ব্ৰাহ্মণ), (৬) sineha (চেনেহ), (৭) sahasa (সহস্ৰ), (৮) tini (তিনি), (৯) pachha or pichha (পাছ/পিছ), (১০) nahebu (নহ'ব), (১১) budhâ (বুঢ়া/বুৰা), (১২) badhi (বৰ), (১৩) tambâ (তাম), (১৪) hâti (হাতী) (১৫) siri (শ্ৰী), (১৬) puta (পুত/পুত্ৰ), (১৭) sata (সৎ/সত্য) (১৮) Se (সেই), (১৯) mita (মিতা), (২০) kicchi (কিছু), (২১) âja (আজি) ইত্যাদি। অসাধাৰণ মিলযুক্ত জৌগড় শিলালিপিৰ এই শব্দসমূহ অসমীয়া ভাষাৰো নিদৰ্শন ৰূপে গ্ৰহণ কৰিব পৰা যায়। গতিকে, ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষাৰ জন্মকাল সমসাময়িক বুলি আমি নিশ্চিতভাৱে নিৰ্দ্ধাৰণ কৰিব পাৰোঁ। পৰৱৰ্তী সময়ৰ হাতীগুম্ফা শিলালিপি (প্ৰথম শতিকা), উদয়গিৰি আৰু খণ্ডগিৰি শিলালিপি (প্ৰথম শতিকা), তৃতীয়

শতিকাৰ মহাৰাজা গণভদ্ৰ ভদ্ৰকালি শিলালিপি, ভৌমকাৰ বা গঙ্গবংশীয় ৰজাসকলৰ দ্বাৰা খোদিত অভিলেখবোৰ, ধৰ্মৰাজ সুমণ্ডলৰ লেখনি, মাধৱবৰ্মাৰ নিবিনা তাম্ৰশাসন, অনন্তদেৱ বৰ্মাৰ মঞ্জুষা তাম্ৰশাসন আদিত প্ৰাচীন ওড়িআ ভাষাৰ নিদৰ্শন পোৱা যায়।

প্ৰত্নলেখত ব্যৱহৃত ওড়িআ ভাষাই ক্ৰমবিকাশৰ দ্বিতীয়টো স্তৰত সাহিত্যিক ভাষাৰ মৰ্যাদা লাভ কৰিলে। বৎসা দাসৰ কলসাচৌতিষা, পঞ্চদশ শতিকাত সৰলাদাসৰ দ্বাৰা ৰচিত মহাভাৰত, ষোড়শ শতিকাত পঞ্চসখা যুগৰ বলৰাম দাসৰ দক্ষিণা ৰামায়ণ, জগমোহন ৰামায়ণ, বট অৱকাশ, অৰ্জুনগীতা, গীতাসাৰ, অচ্যুতানন্দৰ হৰিবংশ, শূন্যসংহিতা, বিপ্ৰচালক, মউৰাণী মন্ত্ৰ, অনন্ত পোই, যশোৱন্ত দাসৰ শিৱ স্বৰোদয়, প্ৰেমভক্তি ব্ৰহ্মগীতা, চৌৰাশী আজ্ঞা, হেতুউদয় ভাগৱত, শিশু অনন্ত দাসৰ অলংকাৰ শৰদ, ভৱযুক্তিদায়ক গীতা, ভজন তত্ত্ব, ভৱিষ্য পুৰাণ, বৈষ্ণৱ পুৰাণ, জগন্নাথ দাসৰ ওড়িআ ভাগৱত, তুলাভিনা, গজস্তুতি, গুপ্তভাগৱত, নিত্য চিন্তামণি, প্ৰেমসুধামৃত, ৰীতি যুগৰ (১৬৫০-১৮৮০) শ্ৰেষ্ঠ কবি উপেন্দ্ৰভঞ্জৰ বৈদেহীস্ব বিলাস, ৰাসলীলা, ব্ৰজলীলা, সুভদ্ৰা পৰিণয়, লাৱণ্যৱতী, প্ৰেম সুধানিধি আদি সাহিত্যৰাজিয়ে ওড়িআ ভাষা সাহিত্যৰ বিকাশৰ গৌৰৱময় ঐতিহ্য বহন কৰে।

ওড়িআ ভাষাৰ ক্ৰমবিকাশৰ তৃতীয়টো স্তৰ "উপনিৱেশ যুগৰ ওড়িআ (খ্ৰী. ১৮০৩-১৯৪২) ভাষাক সমৃদ্ধ কৰি ৰাখিছে পুৰুষোত্তম ৰাম, মৃত্যুঞ্জয় বিদ্যালয়ঙ্কাৰ, মধুসূদন ৰাও, ৰাধানাথ ৰায়, ফকীৰমোহন সেনাপতি আদিয়ে। ১৮০৪ চনত পণ্ডিত পুৰুষোত্তম ৰাম আৰু মৃত্যুঞ্জয় বিদ্যালয়ঙ্কাৰে মিছনেৰীসকলৰ আগ্ৰহত ওড়িআ ভাষাৰ প্ৰথম ছপা পুথি 'বাইবেল' ছপা কৰি উলিয়ায়। ভাষাচৰ্চাৰ ক্ষেত্ৰখনত পুৰুষোত্তম ৰামৰ "A Grammar of the Orissa Language" (১৮০৪) শীৰ্ষক ব্যাকৰণখন ওড়িআ ভাষালৈ অনবদ্য অৱদান। ইয়াৰোপৰি মধুসূদন ৰাওৰ হেমমালা, প্ৰণয়ৰ অদ্ভুত পৰিণাম, ৰাধানাথ ৰায়ৰ কেদাৰগৌৰী, চন্দ্ৰভাগা, নন্দকিশোৰ, উষা-পাৰ্বতী, যযাতি কেশৰী আদি, ফকীৰমোহন সেনাপতিৰ আত্মজীৱনী আত্মজীৱন চৰিত্ৰ, ৰেৱতী, লছমনিয়া আদি চুটিগল্পই ওড়িআ ভাষাৰ তৃতীয় স্তৰক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে।

ওড়িআ ভাষাৰ ক্ৰমবিকাশৰ চতুৰ্থ স্তৰক (১৯৪২ চনৰ পৰা বৰ্তমানলৈকে) "উপনিৱেশ পৰৱৰ্তী যুগৰ ওড়িআ" বুলি অভিহিত কৰা হৈছে। সীতাকান্ত মহাপাত্ৰৰ শব্দৰ আকাশ (১৯৭১), সমুদ্ৰ (১৯৭৭), অনেক শৰৎ (১৯৮১) কাব্যগ্ৰন্থ, ৰাজেন্দ্ৰ কিশোৰ পাণ্ডাৰ কাব্যগ্ৰন্থ গণদেৱতা (১৯৭৫), বহুব্ৰীহি (১৯৯১), হৰপ্ৰসাদ দাসৰ বংশম (২০১৫), গোপীনাথ মহান্তীৰ উপন্যাস অমৃৰ্ত সন্তান (১৯৪৭), পৰাজা (১৯৪৫), কল্পনা কুমাৰী দেৱীৰ উপন্যাস অচিনা ৰামভূমি (২০০৯) আদি গ্ৰন্থই বৰ্তমানৰ ওড়িআ ভাষা সাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰি ৰাখিছে।

২.০২ অসমীয়া ভাষা ঃ

ভাৰতৰ পূব প্ৰান্তত ব্যৱহৃত অসমীয়া ভাষা স্বকীয় ভাষিক বৈশিষ্ট্য আৰু সাহিত্যিক সমলেৰে চহকী। ২৪০০ বছৰৰো অধিক প্ৰাচীন ঐতিহ্যৰে সমৃদ্ধ এই ভাষা সমগ্ৰ অসমৰ প্ৰধান ভাষা। *"অসমীয়া সাম্প্ৰতিক পৃথিৱীৰ সাত সহস্ৰাধিক জীৱিত ভাষাৰ ভিতৰত অন্যতম সমৃদ্ধ আৰু বৈচিত্ৰ্যপূৰ্ণ ভাষা। চীনা (সন্মিলিত), স্পেনিছ, ইংৰাজী আদি বহু সমৃদ্ধ ভাষাতকৈ ভাষা-ভাষী সংখ্যাৰ দিশেৰে পৃথিৱীৰ ভাষা তালিকাত আমাৰ ভাষাই পাছৰফালে অৱস্থান কৰিলেও (সম্প্ৰতি ১৫.৪ নিযুত ভাষা-ভাষীৰ সংখ্যাৰে ৬৭ নং স্থানত) দেৱভাষা সংস্কৃত, গ্ৰীক, হাংগেৰিয়ান, ছুইডিছ, চেক, নৰবেজিয়ান আদি বিকাশৰ শীৰ্ষস্থান আৰোহণ কৰা ভাষাতকৈ বহু ওপৰত অৱস্থান কৰি আছে।"* [৬]

বৰ্তমানলৈকে প্ৰাপ্ত তথ্য অনুসৰি ২৪০০ বছৰৰো অধিক আগৰে পৰা প্ৰাগজ্যোতিষপুৰ বা কামৰূপ অঞ্চলত এক শক্তিশালী লিখিত পৰম্পৰাৰ প্ৰচলন আছিল। মহাস্থান খণ্ডৰ শিলালেখ (খ্ৰী.পূ. তৃতীয় শতিকা), ধোপগুৰি শিলালিপি (আনুমানিক খ্ৰী.পূ. তৃতীয় শতিকা) আদি অসমত প্ৰাগ্‌ঐতিহাসিক কালৰে পৰা প্ৰচলিত হৈ অহা লিখিত পৰম্পৰাৰ স্বাক্ষৰ বুলি নিশ্চিতভাৱে অনুমান কৰিব পাৰি। মহাস্থান খণ্ডৰ শিলালেখখন ১৯৩১ চনৰ ৩০ নৱেম্বৰত বৰ্তমান বাংলাদেশৰ বগ্ৰাজিলাৰ মহাস্থান নামৰ ঠাইত উদ্ধাৰ হোৱাৰ বাবে স্বাভাৱিকতে এই ফলিখনত উল্লেখ থকা বঙলা আৰু অসমীয়া ভাষাৰ সৈতে সাদৃশ্য থকা শব্দকেইটাক বঙলা পণ্ডিতসকলে বঙলা ভাষাৰ শব্দ বুলি দাবী কৰে যদিও প্ৰকৃতাৰ্থত এই শব্দকেইটা অসমীয়া ভাষাৰহে প্ৰাচীন ৰূপ। কাৰণ মহাস্থান খণ্ডৰ শিলালেখ উদ্ধাৰ হোৱা বগ্ৰাজিলা প্ৰাচীন কামৰূপৰ অন্তৰ্ভুক্ত আৰু পৰৱৰ্তীকালত নিকটৱৰ্তী চুবুৰীয়া অঞ্চল আছিল। মহাস্থান খণ্ডৰ শিলালেখত উল্লেখ থকা শব্দকেইটাক অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰাচীন ৰূপ বুলি গণ্য কৰাৰ যুক্তিসমূহ এনেধৰণৰ—

(ক) ইতিহাসবিদ ইডেন পাৰ্গিটাৰে প্ৰাচীন অসমৰ বিস্তৃতি সম্পৰ্কে আগবঢ়োৱা উক্তি অনুসৰি—

"Pragjyotisha must have comprised the country along both sides of the Brahmaputra from the Himalayans down to Tippera, that is the modern districts of Jalpaiguri, Coochbehar, Goalpara, Rangpur, Bogra, Maimansingh, Dacca, Tippera and part of Pabna and also probably East Nepal." [৭]

অৰ্থাৎ জলপাইগুৰি, কোঁচবিহাৰ, ৰঙপুৰ, বগ্ৰা, মৈমনসিংহ, পাবনা, ঢাকা আদি প্ৰাগজ্যোতিষপুৰৰ অন্তৰ্গত আছিল।

(খ) ৰায়বাহাদুৰ দীনেশ চন্দ্ৰ সেনে 'মৈমনসিংহ গীতিকা' গ্ৰন্থৰ পাতনিত কৈছে যে, *"খ্ৰীষ্টীয় চতুৰ্থ শতাব্দীতে পূৰ্বে মৈমনসিংহ গুপ্ত-সম্ৰাটগণের অধীন ছিল। তৎপরে এই প্ৰদেশ গুপ্ত-শাসন হইতে স্বতন্ত্ৰ হইয়া প্ৰাগজ্যোতিষপুরের অন্তৰ্গত হইয়াছিল। কামৰূপের শাসনে এই দেশ এক সময়ে হিন্দুধৰ্ম্মের একটি প্ৰধান কেন্দ্ৰে পরিণত হয়।"* [৮]

(গ) Encyclopedia Britanica তথ্য অনুসৰি *"Bogra officially called Bogura, formerly Bogura city, North-Western Bangladesh. It lies on the west Bank of the karotoya river"* [৯] অৰ্থাৎ বগ্ৰাজিলা কৰতোয়া নদীৰ পশ্চিম পাৰে অৱস্থিত। উল্লেখনীয় যে বিভিন্ন প্ৰাচীন সংস্কৃত গ্ৰন্থাদিত উল্লেখ থকা অনুসৰি কৰতোয়া নদীলৈকে কামৰূপৰ বিস্তৃতি আছিল। কালিকাপুৰাণত উল্লেখ আছে যে—

"কৰতোয়া নদী পূৰ্ব্বং যাবদ্দিক্কৰবাসিনীম।
ত্ৰিংশদ যোজনবিস্তীৰ্ণং যোজনৈকে শতায়তম।।" [১০]

আনহাতে যোগিনীতন্ত্ৰৰ ব্যাখ্যা অনুসৰিও প্ৰাচীন অসমৰ পশ্চিম সীমা কৰতোয়া নদী পৰ্যন্ত বিস্তৃত আছিল।

"কৰতোয়া সমাশ্ৰিত্য যাব দিক্কৰবাসিনী
উত্তৰস্যাং কঞ্জুগিৰি কৰতোয়াতু পশ্চিমে।" [১১]

ইডেন পাৰ্গিটাৰ, দীনেশ চন্দ্ৰ সেন, Encyclopedia Britanica, কালিকাপুৰাণ, যোগিনীতন্ত্ৰত উল্লেখ থকা তথ্য অনুসৰি মহাস্থান শিলালেখ উদ্ধাৰ হোৱা বগ্ৰাজিলা প্ৰাচীন অসমৰ অন্তৰ্গত আৰু নিকটতম প্ৰতিবেশী চুবুৰীয়া অঞ্চল আছিল। চুবুৰীয়া অঞ্চলৰ সৈতে সামাজিক, ৰাজনৈতিক, অৰ্থনৈতিক, সাংস্কৃতিক আদি কাৰণত হোৱা সঘন আহ-যাহ, সাংস্কৃতিক আদান-প্ৰদানৰ জৰিয়তে ভাষিক আদান-প্ৰদানো হয়। এটা অঞ্চলৰ ভাষাই আন এটা চুবুৰীয়া অঞ্চলৰ ভাষা-ভাষীসকলক প্ৰভাৱিত কৰে। প্ৰাচীন অসমৰ অন্তৰ্গত অথবা চুবুৰীয়া অঞ্চল বগ্ৰাজিলাৰ সৈতে হোৱা সঘন আহ-যাহ তথা সাংস্কৃতিক আদান-প্ৰদানৰ ফলশ্ৰুতিত প্ৰত্ন অসমীয়া ভাষাৰূপ মহাস্থান খণ্ডৰ শিলালিপিত স্বাভাৱিকতে সোমাব পাৰে।

তদুপৰি খ্ৰী.পূ. তৃতীয় শতিকাত অসমীয়া, বাংলা, মৈথিলীয়ে নিৰ্দিষ্ট ভাষাৰূপে স্পষ্ট ৰূপত গঢ় লৈ নুঠিলেও উত্তৰ পূৰ্বাঞ্চল বিশেষকৈ প্ৰাগজ্যোতিষ বা কামৰূপ অঞ্চলত আৱিস্কৃত বিশাল সংখ্যক শিলালিপিয়ে এই অঞ্চলত শক্তিশালী লিখিত পৰম্পৰা প্ৰচলনৰ প্ৰমাণ দিয়ে। মহাস্থান লিপি প্ৰাকৃত ভাষাত লিখিত হ'লেও ইয়াত উল্লিখিত কেইটামান শব্দৰ পৰা এই ফলিখন অসমীয়া শব্দ সংৰক্ষিত এতিয়ালৈকে আৱিস্কৃত প্ৰাচীনতম ফলি বুলি নিশ্চিতভাৱে ক'ব পাৰি।

মহাস্থান খণ্ডৰ পাঠ্যাংশ এনেধৰণৰ—

"[a].nena Savagiyânam t[e]lad[i]nasa dumam dina S[u-
mâte Sulakhite Pumdanagalate etam
nivahipayisati[.] Savagiyânam ca [di]ne
dhâniyam nivahisati[.] Dagatiyây[i]ke pi a[gi-]
[tiyâ]yikasi sustiyâyikasi pi gamda[kehi]
[kâkani]yikehi esa kothâgâle kosam" [১২]

এই ফলিত উল্লেখ থকা অসমীয়া শব্দকেইটা হ'ল— তেল, ধান, গণ্ডা আৰু কোঠাগাল (কোষ্ঠাগাৰ)।

ইয়াৰোপৰি ২০১৩ চনত জাগীৰোড অঞ্চলৰ ধোপগুৰি পাহাৰৰ ঘগুৰা ডোঙত উদ্ধাৰ হোৱা ধোপগুৰি শিলালিপিয়েও (খ্ৰী.পূ. তৃতীয় শতিকা) অতি কমেও ২৪০০ বছৰৰ পৰা অসমত প্ৰচলিত শক্তিশালী লিখিত পৰম্পৰাৰ প্ৰমাণ দাঙি ধৰে।

"ধোপগুৰি শিলালিপিৰ" ৩টা আখৰ খ্ৰী.পূ. পঞ্চম শতিকাৰ পিপ্ৰাৱাস্তুপৰ টেকেলীত লিখা আখৰৰ লগত একে। বাকী ৭টা আখৰ অশোকৰ ৰাজাজ্ঞাৰ আখৰৰ লগত মিলে। পিপ্ৰাৱাস্তুপৰ সময় খ্ৰী.পূ. পঞ্চম শতিকা আৰু অশোকৰ গিৰণাৰ প্ৰশস্তিৰ সময় খ্ৰী.পূ. তৃতীয় শতিকা। চিনাক্তকাৰিৰ পৰা আখৰ কেইটাৰ বেছি সংখ্যক আখৰ অশোকৰ গিৰণাৰ প্ৰশস্তিৰ লগত সাদৃশ্য থকাৰ বাবে এই লিপিৰ সময় খ্ৰী.পূ. ৩য় শতিকা বুলি নিৰ্দ্ধাৰণ কৰা হৈছে।" [১৩]

পৰৱৰ্তী সময়ত খোদিত হোৱা খ্ৰীঃ চতুৰ্থ শতিকাৰ 'নগাজৰি খনিকৰ গাঁৱৰ শিলালিপি, পঞ্চম শতিকাৰ উমাচল লিপি, ষষ্ঠ শতিকাৰ ভূতিবৰ্মাৰ বৰগংগা লিপি, সপ্তম শতিকাৰ ভাস্কৰ বৰ্মাৰ নিধনপুৰ তামৰ ফলি আৰু ডুবি তামৰ ফলি, ত্ৰয়োদশ শতিকাৰ কানাই বৰশীবোৱা শিলালিপি আদিত

অসমীয়া ভাষাৰ স্বকীয় ৰূপ দেখিবলৈ পোৱা যায়। প্ৰত্নলেখত ব্যৱহৃত হৈ অহা অসমীয়া ভাষাই খ্ৰী. ত্ৰয়োদশ-চতুৰ্দশ শতিকাত সাহিত্যিক ভাষা ৰূপে এটি সু-সংহত ৰূপ লাভ কৰে। হেম সৰস্বতীৰ 'প্ৰাদ চৰিত' (খ্ৰী. চতুৰ্দশ শতিকা) গ্ৰন্থ অসমীয়া সাহিত্যৰ প্ৰথম নিদৰ্শন। হেম সৰস্বতীৰ সমসাময়িক মাধৱ কন্দলীয়ে বাল্মীকি ৰামায়ণ অসমীয়ালৈ অনুবাদ কৰে। উল্লেখনীয় যে, মাধৱ কন্দলীৰ ৰামায়ণখন ভাৰতৰ প্ৰান্তীয় ভাষাসমূহত ৰচিত ৰামায়ণৰ ভিতৰত দ্বিতীয় আৰু উত্তৰ ভাৰতৰ প্ৰান্তীয় ভাষাসমূহৰ ভিতৰত প্ৰথম। খ্ৰী. পঞ্চদশ শতিকাত শংকৰদেৱৰ হাতত অসমীয়া ভাষা সাহিত্যৰ স্বৰ্ণযুগ আৰম্ভ হয়। গীত পদ নাট আদি ৰচনাৰে তেওঁ মধ্যযুগীয় অসমীয়া সাহিত্যক মহিমামণ্ডিত কৰি গৈছে। খ্ৰী. ষষ্ঠদশ শতিকাৰ শেষ ভাগত অসমীয়া ভাষা সাহিত্যত এক পৰিৱৰ্তনৰ সূচনা হয়। এই সময়তে ভট্টদেৱৰ হাতত অসমীয়া সাহিত্য চৰ্চাৰ মাধ্যম পদ্যৰ পৰা গদ্যলৈ ৰূপান্তৰ ঘটে। ভট্টদেৱে গদ্যত কথা ভাগৱত, কথা গীতা আৰু কথা ৰত্নাৱলী ৰচনা কৰি অসমীয়া গদ্য সাহিত্যক প্ৰতিষ্ঠিত কৰে। এই ক্ষেত্ৰত ইতিহাসবিদ প্ৰফুল্ল চন্দ্ৰ ৰায়ে কথা গীতা পঢ়ি আগবঢ়োৱা মন্তব্য প্ৰণিধানযোগ্য। তেওঁ কৈছিল — *"যি সময়ত ইংলেণ্ডৰ হকাৰ আৰু লাটিমাৰৰ ৰচনাৰ বাহিৰে জগতৰ আন কোনো সাহিত্যই উন্নতি লাভ কৰিব পৰা নাছিল, সেই সময়তে ষোল্ল শতিকাত অসমীয়া গদ্য সাহিত্যই উন্নত অৱস্থাত ভৰি দিছিল।"*১৪ খ্ৰীষ্টীয় ১৮১৩ ত আত্মাৰাম শৰ্মাৰ বাইবেলৰ অনুবাদ আৰু ছাপাশালত কৰা প্ৰকাশে অসমীয়া ভাষা সাহিত্যক আধুনিক ৰূপ প্ৰদান কৰে।

৩.০০ ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষাৰ তুলনা ঃ

ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষা ভাৰতীয় আৰ্য ভাষাৰ অন্তৰ্গত। দুয়োটা ভাষাৰ প্ৰাচীন নিদৰ্শনে প্ৰমাণ কৰে যে, ভাষাবিদসকলে ভাষা দুটাক নব্য ভাৰতীয় আৰ্য ভাষা বুলি উল্লেখ কৰিছে যদিও দুয়োটা ভাষাৰে প্ৰাচীন ৰূপ তাতোকৈ বহুশ বছৰ পুৰণি। ভাষাবিদ দেৱীপ্ৰসন্ন পাটনায়কে 'Classical Odia' গ্ৰন্থত উল্লেখ কৰা অনুসৰি ওড়িআ ভাষাৰ প্ৰাচীনতম ৰূপ ৰক্ষিত হৈ আছে খ্ৰীঃপূৰ্ব তৃতীয় শতিকাৰ জৌগড় শিলালিপি, প্ৰথম শতিকাৰ হাতীগুম্ফা শিলালিপি আদিত। একেদৰে অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰাচীনতম ৰূপ ৰক্ষিত হৈ আছে খ্ৰী.পূ. তৃতীয় শতিকাৰ 'মহাস্থান খণ্ড'ৰ শিলালেখ, আৰু ধোপগুৰি শিলালিপি, চতুৰ্থ শতিকাৰ 'নগাজৰি খনিকৰ গাঁও শিলালিপি, পঞ্চম শতিকাৰ 'উমাচল লিপি' আদিত। সাহিত্যিক ভাষাৰূপে ওড়িআ ভাষাই পঞ্চদশ শতিকাত সৰলাদাসৰ 'মহাভাৰত' আৰু অসমীয়া ভাষাই চতুৰ্দশ শতিকাত হেমসৰস্বতীৰ 'প্ৰহ্লাদ চৰিত' গ্ৰন্থৰ জৰিয়তে প্ৰতিষ্ঠা লাভ কৰে। এইখিনিতে উল্লেখনীয় যে, ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষাৰ কিছুমান উমৈহতীয়া সাহিত্যিক সম্পদ আছে। যিবোৰ অপভ্ৰংশ স্তৰতে ৰচিত। এনে সাহিত্যিক সম্পদসমূহৰ ভিতৰত খ্ৰীঃ অষ্টম শতিকাৰ পৰা দ্বাদশ শতিকাৰ মাজৰ সময়ছোৱাত বৌদ্ধ সিদ্ধাচাৰ্যসকলে ৰচনা কৰা চৰ্যাপদ উল্লেখনীয়। গতিকে ভাষিক আৰু সাহিত্যিক নিদৰ্শনেৰে দুয়োটা ভাষা সমানে প্ৰাচীন।

ভাষাবিদসকলে দুয়োটা ভাষাৰে মূল মাগধী প্ৰাকৃত বুলি কৈছে যদিও ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষাত এনে কিছুমান বৈশিষ্ট্য আছে, যিয়ে ভাষা দুটা সুকীয়া ভাষাৰূপে প্ৰতিষ্ঠা কৰাত নিৰ্ণায়ক ভূমিকা গ্ৰহণ কৰে। অসমীয়া ভাষাৰ ক্ষেত্ৰত দেখিবলৈ পোৱা সংস্কৃতৰ পৰা পৃথক বৈশিষ্ট্যৰাজিয়ে প্ৰাচীন কামৰূপত কামৰূপী প্ৰাকৃত নামেৰে এটি অন্য প্ৰাকৃতৰ অৱস্থিতিৰ উমান দিয়ে।

৩.০১ ওড়িআ ভাষাৰ সুকীয়া বৈশিষ্ট্য ঃ

(ক) ওড়িআ ভাষা সংস্কৃতৰ পৰা জন্মা ভাষা নহয়। সংস্কৃত আৰু প্ৰাকৃত উভয়ৰে দ্বাৰা ওড়িআ ভাষা প্ৰভাৱিত।১৫

(খ) ওড়িআ ভাষাৰ ব্যাকৰণ সংস্কৃত ভাষাতকৈ পৃথক।

(গ) ওড়িআ ভাষাত বিশিষ্ট স্বৰধ্বনিৰ সংখ্যা ৬ টা। অ, আ, ই, উ, এ আৰু ও। ইয়াৰ পৰিৱৰ্তে সংস্কৃতত ১৩ টা।

(ঘ) 'ঈ' আৰু 'উ' ধ্বনিৰ স্বতন্ত্ৰ প্ৰয়োগ ওড়িআ ভাষাত দেখিবলৈ পোৱা নাযায়।

(ঙ) 'ঋ' ধ্বনিক ওড়িআ ভাষাত 'ৰু' বা 'ৰি' ৰূপে উচ্চাৰণ কৰা হয়।

(চ) ওড়িআ ভাষাত বিশিষ্ট ব্যঞ্জন ধ্বনিৰ সংখ্যা ৩১ টা। ক, খ, গ, ঘ, চ, ছ, জ, ঝ, ট, ঠ, ড, ঢ, ড়, ঢ়, ণ, ত, থ, দ, ধ, ন, প, ফ, ব, ভ, ম, য়, ৰ, ল, ল (মূৰ্দ্ধণ্য), স, হ। ইয়াৰ পৰিৱৰ্তে সংস্কৃতত বিশিষ্ট ব্যঞ্জনধ্বনিৰ সংখ্যা ৩৩ টা।

(ছ) ওড়িআ ভাষাত 'ঙ', 'ঞ' আৰু 'য়' ধ্বনি স্বতন্ত্ৰভাৱে উচ্চাৰণ নহয়। 'ঙ' ধ্বনি তৎসম শব্দ কিছুমানত ব্যৱহাৰ হয় আৰু 'ঞ'ৰ ধ্বনি কেৱল যুক্তাক্ষৰত প্ৰয়োগ হয়। 'য়' ধ্বনিৰ উচ্চাৰণ 'জ'ৰ দৰে হোৱা পৰিলক্ষিত হয়।

(জ) ওড়িআ ভাষাত শব্দৰ পদাংশত অধিক চাপ পৰে বাবে এই ভাষাৰ উচ্চাৰণ আন মাগধীমূলীয় ভাষাতকৈ পৃথক।

(ঝ) ওড়িআ ভাষাত 'মানে' শব্দ মানুহৰ বহুবচন ৰূপ বুজাবলৈ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। গ্ৰীয়াৰ্ছন আৰু সুনীতি কুমাৰ চেটাৰ্জীৰ

মতে এই ৰূপ ওড়িআ ভাষাৰ এক সুকীয়া বৈশিষ্ট্য।[১৬]

৩.০২ অসমীয়া ভাষাৰ সুকীয়া বৈশিষ্ট্য ঃ

(ক) অসমীয়া ভাষাৰ ব্যাকৰণ সংস্কৃত ভাষাতকৈ পৃথক।

(খ) অসমীয়াত বিশিষ্ট স্বৰধ্বনি ৮ টা। অ, অ', আ, ই, উ, এ', এ, ও। কিন্তু সংস্কৃতত বিশিষ্ট স্বৰধ্বনি ১৩ টা।

(গ) অসমীয়া বিশিষ্ট ব্যঞ্জন ধ্বনি ২৩ টা। ক, খ, গ, ঘ, ঙ, চ, জ, ত, থ, দ, ধ, ন, প, ফ, ব, ভ, ম, ৰ, ল, ৱ, স, হ, য়। কিন্তু সংস্কৃতত ৩৩ টা।

(ঘ) অসমীয়া শ, ষ, স ধ্বনিৰ উচ্চাৰণৰ প্ৰভেদ নাই। সংস্কৃত বা আন ভাৰতীয় ভাষাৰ দৰে এই ধ্বনি কেইটা S/Sh ৰূপে উচ্চাৰিত নহয়। এই ধ্বনিকেইটা অসমীয়া ভাষাত 'স' (X) উচ্চাৰিত হয়। এনে বিশেষত্ব আন ভাষাত দেখিবলৈ পোৱা নাযায়।

উদাহৰণ— শৰ, শৰাই, ষাঁড়, সাপ, সাৰ, সকলো আদি উচ্চাৰণত 'স' (X) উচ্চাৰণ হয়।

(ঙ) অসমীয়া ভাষাত তালব্য, দন্ত্য আৰু মূৰ্দ্ধণ্য ধ্বনিসমূহ দন্ত্যমূলীয় হিচাপে উচ্চাৰিত হয়। কিন্তু লিখিত ৰূপত তালব্য 'চ', দন্ত্য 'ত' আৰু মূৰ্দ্ধণ্য 'ট' ধ্বনি ব্যৱহাৰ হয়।

যেনে— চাকি, চৰাই, তৰা, তামোল, টকা আদি।

(চ) অসমীয়া ভাষাত সকৰ্মক আৰু অকৰ্মক ক্ৰিয়া অনুযায়ী কৰ্তাৰ পিছত প্ৰথমা বিভক্তি যোগ হয়। বঙলা, ওড়িআ আদি ভাষাত এই বৈশিষ্ট্য দেখিবলৈ পোৱা নাযায়। এয়া অসমীয়া ভাষাৰ এটি সুকীয়া ৰূপ।

যেনে—

অসমীয়া ঃ ৰামে কাম কৰিছে।
বঙলা ঃ ৰাম কাজ কৰছে।
ওড়িআ ঃ ৰাম কাম কৰুছি।

(ছ) অসমীয়া ভাষাত লিঙ্গ আংশিক ব্যাকৰণগত বিষয়। কিন্তু হিন্দী, বঙলা, ওড়িআ আদি ভাষাত লিঙ্গ আংশিকভাৱে ব্যাকৰণগত বিষয়। ইয়াৰোপৰি অসমীয়া ভাষাত বচন ব্যাকৰণগত বিষয় নহয়।

(জ) অসমীয়া ভাষাত দ্বিবচন নাই। কিন্তু সংস্কৃতত আছে।

(ঝ) সংস্কৃত ভাষাত পূৰ্ব প্ৰত্যয় ২০ টা (প্ৰ, পৰা, অপ, সম, নি, অব, অনু, নিৰ, দুৰ, বি, অধি, সু, উৎ, পৰি, প্ৰতি, অভি, অপি, অতি, উপ, আ)। এই উপসৰ্গ কেইটাৰ বাহিৰেও অসমীয়া ভাষাত অ, আ, আও, অনা, উ, বে, গৰ, কাৰ, বদ, বৰ আদি উপসৰ্গৰ ব্যৱহাৰ আছে।

(ঞ) শব্দভাণ্ডাৰৰ ক্ষেত্ৰত মনকৰিবলগীয়া কথাটো হ'ল যে— অসমীয়া ভাষাত সংস্কৃত বা আন আৰ্য ভাৰতীয় মূলৰ ভাষাত নথকা বিশাল সংখ্যক শব্দ আছে। তদুপৰি কালবাচক, দশাবাচক, সম্বন্ধবাচক বহু পৃথক শব্দৰূপ, ধাতুৰূপ ইত্যাদি অসমীয়া ভাষাত পোৱা যায়। যিবোৰ সংস্কৃত, ওড়িআ আদি কোনো ভাষাৰ সৈতে নিমিলে। এই শব্দৰূপবোৰ অসমীয়া ভাষাৰ স্বকীয়তা নিৰ্ণায়ক ৰূপ।

৪.০০ সামৰণি ঃ

"প্ৰাচীনত্বৰ আলোকত ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষা ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীৰ্ষক আলোচনাৰ অন্তত দেখিবলৈ পোৱা গ'ল যে ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষাৰ ভাষিক ইতিহাস বহু প্ৰাচীন। গতিশীলতা ভাষাৰ প্ৰধান বৈশিষ্ট্য। প্ৰত্যেকটো গতিশীল ভাষাই সময়ৰ সোঁতত ইয়াৰ পাৰিপাৰ্শ্বিক পৰিৱেশৰ প্ৰভাৱত পৰিৱৰ্তিত ৰূপ লাভ কৰে। ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষাও ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। খ্ৰীঃপূঃ চতুৰ্থ শতিকাৰ পৰা ক্ৰমবিকাশৰ বিভিন্ন স্তৰ অতিক্ৰম কৰি খ্ৰীঃ নৱম-দশম শতিকাত আন নব্য ভাৰতীয় ভাষাৰ দৰে ওড়িআ আৰু অসমীয়া ভাষাৰো বিকাশ সাধন হয়। বৰ্তমান একবিংশ শতিকাত পদাৰ্পণ কৰি দুয়োটা ভাষাই স্বতন্ত্ৰ আৰু মৰ্যাদা সম্পন্ন ভাষাৰূপে নিজ নিজ ক্ষেত্ৰত প্ৰতিষ্ঠা লাভ কৰিছে।

ওড়িআ ভাষাৰ দৰে অসমীয়া ভাষাৰো ভাষিক আৰু সাহিত্যিক ইতিহাস সু-প্ৰাচীন যদিও বৰ্তমানলৈকে অসমীয়া ভাষাই ধ্ৰুপদী ভাষাৰ স্বীকৃতি লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হোৱা নাই। ওড়িআ ভাষাই ধ্ৰুপদী ভাষাৰ মৰ্যাদা লাভ কৰাৰ পাছতে অসমীয়া ভাষাৰো ধ্ৰুপদী স্বীকৃতি লাভৰ সম্ভাৱনীয়তা বৃদ্ধি পাইছে। "Classical Odia" শীৰ্ষক প্ৰতিবেদনখনৰ প্ৰস্তুতকৰ্তা ভাষাবিদ সুব্ৰত কুমাৰ প্ৰোস্তীয়ে অসমীয়া ভাষাই ধ্ৰুপদী স্বীকৃতি লাভৰ সম্ভাৱনীয়তা ব্যক্ত কৰি "Evolution of Odia Language Its Struggle for Existance and Excellence" নামৰ প্ৰৱন্ধত কৈছে যে, *"Like the Six Classical Languages, now other mainstream Languages viz. Bengali, Assamese and Marathi should also be given classical status. Extensive research should be undertaken in all mainstream Language."* [১৭] সেয়েহে অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰাচীনত্ব আৰু অসমীয়া ভাষাত অন্তৰ্নিহিত ধ্ৰুপদী বৈশিষ্ট্যৰাজি সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাৰ যথেষ্ট থল আছে। ❑

প্ৰসঙ্গ সূত্ৰ আৰু প্ৰসঙ্গ টীকা ঃ

১) Grierson, G.A. Linguistic Survey of India (Vol-I). p.126
২) Pattanayak, D.P. Classical Odia. p.154
৩) ibid, p.3
৪) ফুকন পাটগিৰি, দিপ্তী (সম্পা.)। আধুনিক ভাৰতীয় আৰ্য ভাষা , পৃ. ৭৯
৫) Pattanayak, D.P. Classical Odia. p.55
৬) শইকীয়া, সংগীতা। অসমীয়া ভাষাই কেতিয়া লাভ কৰিব ধ্ৰুপদী ভাষাৰ মৰ্যাদা। অসমীয়া প্ৰতিদিন, ২০১৭, ৭ জানুৱাৰী।
৭) Pargiter, F.E. Ancient Countries in Eastern Indian. Journal of Asiatic Society of Bengal. (Vol-LXVI). p.154
৮) সেন, দীনেশ চন্দ্ৰ। মৈমনসিংহ গীতিকা। পৃ. ১১।
৯) https://www.Britanica.com/place/Bogra.
১০) ভট্টাচাৰ্য্য, দেৱেন্দ্ৰনাথ। (অনু.) কালিকাপুৰাণ। পৃ. ৬৪৩।
১১) — — —। (অনু.) যোগিনীতন্ত্ৰম। পৃ. ১৩০।
১২) Bhandarkar, D.R. Mauryan Brahmi Inscription of mahasthan. Epigraphic Indica, (XXI). p.83
১৩) বৰদলৈ, ভাস্কৰ ঃ ধোপগুৰি শিলালিপিৰ সময়। দৈনিক অসম, দেওবৰীয়া চ'ৰা, ২৭ মাৰ্চ, ২০২২
১৪) হাজৰিকা, বিশ্বেশ্বৰ । অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী, প্ৰথম খণ্ড, পৃ. ৬২৬
১৫) It is not offshoot only of Sanskrit but also of Prakrit. It has been influenced by both Sanskrit and Prakrit.
দ্ৰষ্টব্য ঃ Pattanayak, D.P. Classical Odia. p.53
১৬) A morph mâne is used to Indicate plurality form only for human. As stated by G.A Grierson and Dr. S.K. Chatterjee, It is unipue in odia. for Example– pilamâne (children), manisamâne (men), mahilâmâne (women), jhiamâne (girls), debtâmâne (gods) etc.
দ্ৰষ্টব্য ঃ Classical Odia. p.53
১৭) https://magazines.odisha.gov.in/Orissareview/2016/April/engpdf/21-24.pdf

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

কাকতি, বাণীকান্ত ঃ *অসমীয়া ভাষাৰ গঠন আৰু বিকাশ*। গুৱাহাটী, বীণা লাইব্ৰেৰী, ২০০২, প্ৰকাশিত
গোস্বামী, উপেন্দ্ৰনাথ ঃ *অসমীয়া ভাষাৰ উদ্ভৱ সমৃদ্ধি আৰু বিকাশ*। গুৱাহাটী ঃ বৰুৱা এজেঞ্চি, ২০০২, প্ৰকাশিত
গৌড়, বৰ্ণালী শৰ্মা ঃ *ওড়িআ সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ আভাস*। গুৱাহাটী ঃ পূৰ্বাঞ্চল প্ৰকাশ, ২০১৯, প্ৰকাশিত
ঠাকুৰ, নগেন ঃ *পৃথিৱীৰ বিভিন্ন ভাষা*। গুৱাহাটী ঃ জ্যোতি প্ৰকাশন, ২০১৪, প্ৰকাশিত
ঠাকুৰ, নগেন ঃ *পালি-প্ৰাকৃত-অপভ্ৰংশ ভাষা আৰু সাহিত্য*। গুৱাহাটী ঃ কে.এম,পাব্লিচিং, ২০১৩, প্ৰকাশিত
পাঠক, ৰমেশ ঃ *অসমীয়া ভাষাৰ ইতিহাস*। গুৱাহাটী ঃ অশোক বুক ষ্টল, ২০০৮, প্ৰকাশিত
পাটগিৰি, দীপ্তি ফুকন (সম্পা.) ঃ *আধুনিক ভাৰতীয় আৰ্য ভাষা*। গুৱাহাটী ঃ অসম পাবলিচিং কোম্পানী, ২০১৭, প্ৰকাশিত
বৰুৱা, ভীমকান্ত ঃ *অসমীয়া ভাষা*। ডিব্ৰুগড় ঃ বনলতা, ১৯৯৭, প্ৰকাশিত
শৰ্মা, মুকুট (সম্পা) ঃ *হেংদাং*। বীৰ লাচিত দিৱসৰ স্মাৰক গ্ৰন্থ। গুৱাহাটী ঃ ভাষা পাব্লিকেশ্যন, ২০০২, প্ৰকাশিত

ইংৰাজী গ্ৰন্থ ঃ

Grierson, G.A. : *Linguistic Survey of India (Vol-I).* Calcutta : Government of India Central Publication Branch, 1927. Print.
Jones, Wm. ed. *Journal of the Asiatic Society of Bengal (Vol-LXVI).* Calcutta : Asiatic Society Baptist Mission Press, 1897. Print.
Pattanayak, D.P & Subrat Kumar Prusty : *Classical Odia.* Bhubaneswar : Kis Foundation, 2013. Print.

लेखकों से निवेदन

- द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशन हेतु पत्रिका की प्रकृति के अनुरूप भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक लेख आमंत्रित हैं।
- अनूदित रचनाओं के संदर्भ में मूल लेखक की अनुमति/स्वीकृति अनिवार्य है।
- लेखक अपनी रचनाएँ केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक हिंदी यूनिकोड में 13 प्वाइंट में टंकित कराकर पत्रिका के ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com पर अथवा स्पष्ट अक्षरों में लिखकर समिति कार्यालय के पते (मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-781032, असम) पर भेजें।
- अस्वीकृत रचनाएँ लौटाई नहीं जाएँगी। अत: भेजी गई रचना की प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- लेखक अपनी रचना के साथ अपना नाम, पदनाम, मोबाइल नं., ई-मेल, पूरा पता सहित एक पासपोर्ट साइज फोटो अवश्य भेजें।
- शोधपत्र की न्यूनतम शब्द-सीमा 2000 और अधिकतम 3000 होनी चाहिए और सार 150 से 200 शब्दों के भीतर होना चाहिए।
- असमीया भाषा में लिखे गए लेख को पेजमेकर फारमेट में गीतांजलि फंट, 12 प्वांइट में टाइप कराकर भेज सकते हैं।
- शोधपत्र के लेखन में एमएलए शैली का अनुपालन करना होग।
- शोधपत्र में क्रमश: शीर्षक, सार, प्रस्तावना, उद्देश्य, संसाधन/सामग्री, प्रविधि/पद्धति, क्षेत्र, मूल विषयवस्तु का विश्लेषण, परिणाम/उपलब्धियाँ, निष्कर्ष और उद्धृत कार्य शामिल होंगे।
- शोधपत्र की मौलिकता हेतु रचना के साथ घोषणा-पत्र संलग्न किया जाना आवश्यक है।
- लेखक अपनी तथ्यात्मक सटीकता के लिए पूरी तरह जिम्मेदार हैं।

द्विभाषी राष्ट्रसेवक का सदस्यता प्र-पत्र

यहाँ से काटिए

नाम : ....

पदनाम : ....

पूरा पता : ....
: ....

ई-मेल : .... मोबाइल : ....

RTGS का विवरण : ....

सदस्यता शुल्क

व्यक्तिगत		*संस्थागत*	
प्रति अंक	: रु. 100/-	प्रति अंक	: रु. 150/-
वार्षिक	: रु. 1000/-	वार्षिक	: रु. 1,500/-
आजीवन सदस्य	: रु. 10,000/-		

निर्धारित शुल्क मनीऑडर/डी.डी. के द्वारा असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के नाम से समिति कार्यालय के पते पर भेजा जा सकता है। ऑनलाइन शुल्क निम्न विवरण के अनुसार भेजें :-

Name of Beneficiary	: Asom Rastrabhasha Prachar Samiti
A/c No.	: 551802010004619
Name of Bank & Branch	: Union Bank of India, Hatigaon Chariali, Dispur-781038
IFS Code	: UBIN0555185

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें -

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया, मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, डाक : इंद्रपुर, जिला : कामरूप महानगर, गुवाहाटी-781032 (असम), मो. 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

POSTAL REGISTRATION NO. GH/127/2022-24 ❖ Date of Publication : 30th September, 2024 ❖ RNI No. ASSBIL/2009/31008

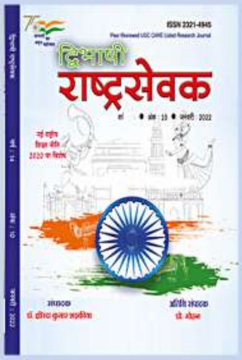

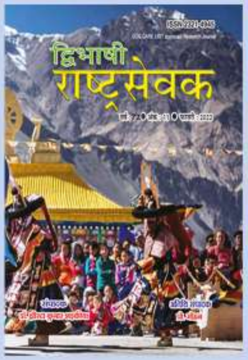

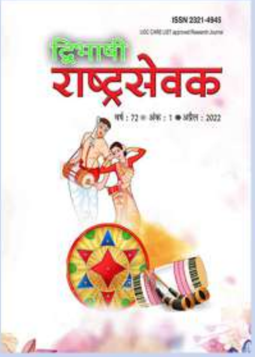

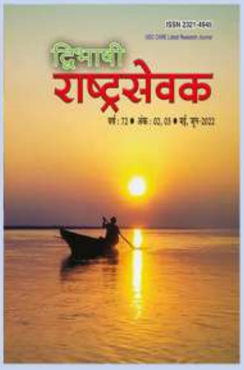

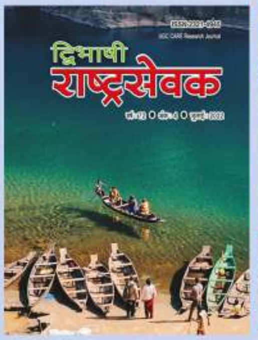

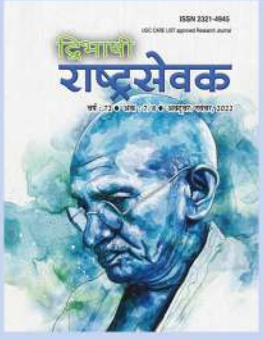

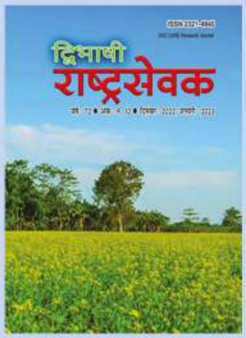

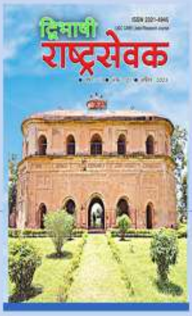

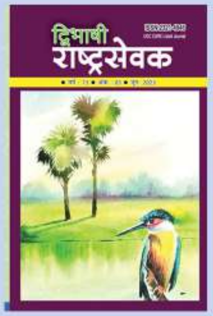

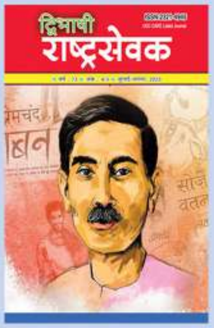

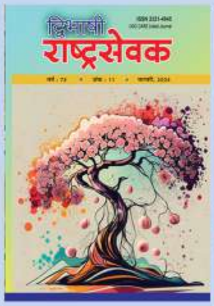

एक हृदय हो भारत जननी
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी–781032

arpsguwahati.com rastrasewak51@gmail.com 9101541395/9101541380